॥ ओ३म् ॥

ज्ञान [मासिक]

११वें वर्ष का
प्रथम अङ्क
मई १९७८

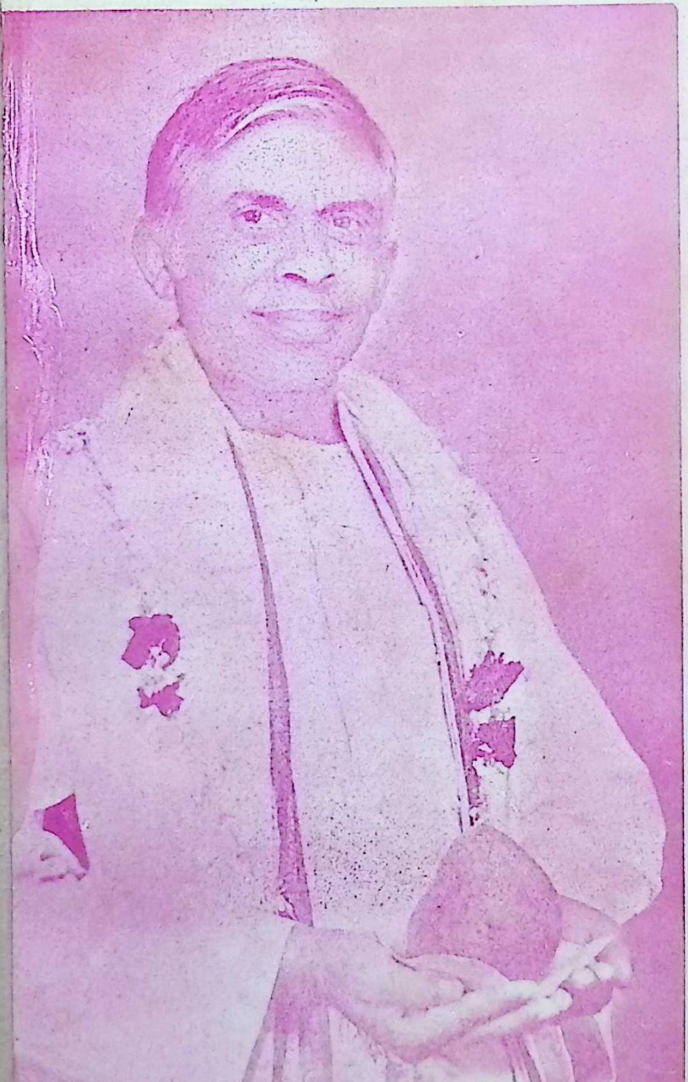

र्यसमाज के गौरव : स्व० पं० रामनारायण शास्त्री

आदर्श आर्य दम्पत्ति—

श्री शिवशंकर जी व उनकी धर्मपत्नी

आपने वेद मंदिर के द्वार निर्माण हेतु अपने पूज्य पिता जी की ओर से ५००१) की राशि प्रदान की है। संस्थान आभारी है।

—अध्यक्ष

सम्पादकीय—

एक दशक पूर्ण : ११वें वर्ष में प्रवेश

आपके अपने 'जन-ज्ञान''का एक दशक पूर्ण हुआ। एक पत्र के जीवन में १० वर्ष अत्यन्त महत्व रखते हैं। यह दस वर्ष : दस दिन के समान बीत गए। अभी कल की सी ही बात तो है जब केवल १००) की महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की पूंजी से ''जन-ज्ञान'' आरंभ किया गया था।

१००) उस महापुरुष ने दिए थे, जिसकी तुलना नहीं, उनका आशीर्वाद बल ही तो था जिसके परिणाम स्वरूप १००) से आरंभ यात्रा ने दस वर्ष में ५० लाख से ऊपर का साहित्य प्रसारित करने की शक्ति प्रदान की।

इतिहास लिखने के लिए जिस बलिदानी मार्ग की आवश्यकता होती है उस पथ पर ''जन-ज्ञान'' चलने का प्रयत्न करता रहा है। उसके विचार निर्भय और दूरदर्शिता से परिपूर्ण रहे हैं।

तूफान, आंधी, विरोध सभी आए पर ''जन-ज्ञान'' के प्यार ने उन्हें विफल कर दिया। जन-मानस का अपरिमित स्नेह—गुरुजनों का आशीर्वाद हमें मिलता रहा है जिसके बल से हम यह यात्रा करने में समर्थ हुए हैं।

जन-ज्ञान के रूप में आरंभ एक लघु प्रयास आज दयानन्द संस्थान और वेद मंदिर के माध्यम से आर्यसमाज का सर्वाधिक गतिशील संघटन बन चुका है। सत्य-कर्म-उत्साह की त्रिवेणी ने उसे तीर्थ बना दिया है।

सभी का प्यार मिला है, हम बढ़े हैं, फिर भी मंजिल लक्ष्य बहुत दूर है। धरती पर छाए अंधकार को दूर करने के लिए वेद-सूर्य की आवश्यकता है पर अभी तो हम केवल जुगनू ही बन सके हैं। फिर भी विराट की सीमाओं का निमंत्रण स्वीकार करने का साहस हमने संजाया है। अन्तिम परिणाम तो प्रभु के ही हाथ में है।

गीत की भाषा में कल्पना हमें आती नहीं, योजनाओं का सुखद वितान तान लुभाने की स्थिति भाती नहीं। हम केवल कर्म में आस्था रखते हैं। वही हमारी शक्ति और पूंजी है।

कर्म करता आपका ''जनज्ञान'' बढ़ रहा है। देव दयानन्द के दिव्य स्वप्न पूर्ण करने का व्रत लेकर हम संघर्ष कर रहे हैं। बातों के शूर नहीं, कर्म हेतु,

समर्पित प्राणों की आहुति यदि यह पवित्र यज्ञ पा सके तो हम समझेंगे लक्ष्य समीप आ रहा है।

आओ वन्धु... **सीस उतारो भुईं धरो**
ता पर राखो पांव।
प्राण दान जो दे सको,
लक्ष्य पूर्ति हो जाय।

देश 'विश्व' मनुष्य समाप्त हो रहा है। राग-द्वेष की छलना और स्वार्थ की लपटों ने सभी कुछ ग्रस लिया है। त्याग का मार्ग स्वर्ग की सीढ़ी बनकर आपको निमंत्रण दे रहा है।

जन-ज्ञान आपका है। आशीर्वाद दीजिए, स्नेह और दुलार दीजिए ताकि हम आगे बढ़ सकें। क्रांति, परिवर्तन, नव-निर्माण के लिए चलो चलें, एक ऐसा नीड़ बनाएं, जहां प्यार हो, शांति हो, त्याग हो, सब दुःख, सब सुख, सब मिल कर बांट लें ताकि धरती स्वर्ग बन जाए।

११वें वर्ष में प्रवेश करते हुए हमें आपका आशीर्वाद मिलेगा।

प्रभु की छाया में

सुमेधा

राजधानी में विश्व का गौरव

वेद मंदिर

बन रहा है।

यज्ञशाला का निर्माण पैसे की
कमी से रुक गया है—
आप अपनी सहायता आज ही भेजें।

अध्यक्ष :

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

जन-ज्ञान जीवन के १० वर्ष पूर्ण होने पर आपका अभिनन्दन करता है

इसे अपना प्यार दीजिए :

सहयोग दीजिए—

३१ मई तक एक नया सदस्य बनाकर भेजिए
और ....एक अपना शुल्क कुल ४०)

हम आप को :

दयानन्द चित्र दर्शन मूल्य २०)

व समग्र क्रांति पं० बुद्धदेव विद्यालंकार
काया कल्प लिखित
मूल्य १)५०

२१)५० का साहित्य उपहार अपनी ओर से केवल ३) को V. P. से भेज देंगे।

१—नए सदस्य का शुल्क २०)

२—अपना शुल्क २०)

सदस्य संख्या अवश्य लिखें। ४०) भेजें।

हम आपका एक वर्ष आगे का शुल्क आप के खाते में जमा कर लेंगे।

कुल ४०) M.O. से भेजिए—और २१)५० का उपहार लीजिए।

जन-ज्ञान [मासिक]

शहीद लेखराम नगर वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

दूरभाष ८०१२२१

तुम सा नहीं देखा

सचमुच तुम सा नहीं देखा

दयानन्द जैसा और कौन था ?
उस सा दिव्य—महान् और योगी—

साधु टी. एल. वास्वानी

की महान् अमर गाथा

TORCH BEARER

का हिन्दी अनुवाद

ज्योतिर्मय

महर्षि दयानन्द के प्रति श्रद्धा हो तो इसे कम से कम १०० व्यक्तियों तक पहुंचाइए

मूल्य १)५० : १००) सैंकड़ा

दयानन्द-संस्थान
वेद मन्दिर, दिल्ली-११००३६

११वें वर्ष का प्रवेशांक —

महर्षि दयानन्द

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

जन – ज्ञान

[मासिक]

सम्पादक
कु० सुमेधा
दूरभाष : ५६६६३६
पता
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१-नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-५
वार्षिक शुल्क २०)
विदेश मे ६ पौंड
(विमान से)

४ पौंड : समुद्री डाक से
(आजीवन ३०१)

एक प्रति : २ रुपये
वर्ष ११ : अंक १
ज्येष्ठ सम्वत् २०३५
यह अंक: मूल्य ५)

चलो—चलें ईश्वर से मिलने—

जो हम सब का प्राण है। अन्न प्राण है शरीर के लिए। ईश्वर प्राण है आत्मा के लिए।

—भोजन बिना जैसे देह व्याकुल हो जाती है वैसे ही ईश्वर बिना आत्मा आकुल रहता है।

तुम कहते हो वह सर्वत्र है। फिर उसे खोजते हो, यह कैसी नादानी है। ढूंढा उसे जाता है, जो कहीं हो और कहीं न हो। पर जो सर्वत्र है उसे खोजना क्या बुद्धिमत्ता है?

वह मेरा प्रियतम—आत्मा का प्राण ईश्वर सर्वत्र है तो फिर मैं उसे क्यों खोजूं ······ वह तो है ही सर्वत्र— इसलिए—

जब जरा गर्दन झुकायी देख ली सूरत उसी की।
जब स्वयं को जान पाए, जान ली सूरत उसी की।

महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रंथ सत्यार्थ-प्रकाश में लिखा है कि—

जब जीवात्मा शुद्ध होके परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है—उस को उसी समय दोनों—[आत्मा व परमात्मा] प्रत्यक्ष होते हैं।

परमात्मा—ईश्वर आत्मा के आनन्द का कारण है। बिना उस के आत्मा आनन्द अनुभव नहीं कर सकता। हमें मनुष्य जन्म मिला ही इस लिए है कि हम परमात्मा से मिल सकें।

आप स्वयं सोच लीजिए कि आप के जीवन में कहीं कोई अभाव तो नहीं। सब कुछ होते हुए भी आप कुछ अशान्ति तो अनुभव नहीं करते।

यदि वस्तुत: आप अपने जीवन में कुछ घुटन अनुभव करते हों तो अपने जीवन में परमात्मा से मिलने की चाह—भावना उत्पन्न कीजिए। वह मिलेगा, तो आप अपने को बहुत ऊंचा—महान् और आनन्द से परिपूर्ण अनुभव करेंगे।

ईश्वर से मिलना हमारा अपना स्वार्थ है। वह हमारा लक्ष्य है, प्राण है। शक्ति और आनन्द का स्रोत है। वह नहीं तो कुछ भी नहीं, वह है तो कुछ न होने पर भी हम सब कुछ हैं।

अपने भीतर प्रभु से मिलने की चाह उत्पन्न करो। अपने सब कर्मों को करते हुए ऐसा जीवन बनाओ, जैसा मां की—प्रभु की गोद में आप बैठे हों। उसे पाकर आपका जीवन आनन्द—का भण्डार बन जाएगा।

नया मोड़ दीजिए जीवन को—आनन्द सुधारस धार बहाइए—और सत्य-शान्ति आनन्द के संगम में स्नान कर ऊंचे उठिए, हमारी मंगल कामनाएं आप के साथ है—आशीर्वाद —राकेशरानी

समग्र क्रांति क्या है ?

आज के नेताओं का समग्र क्रांति का नारा अधूरा-एकांगी है-

फिर समग्र क्रांति क्या है ?

आर्य विद्वान् पं० बुद्धदेव विद्यालंकार
द्वारा निर्दिष्ट
समग्र क्रान्ति का मार्गदर्शन

काया-कल्प

में पढ़िए। काया-कल्प राष्ट्र को नया मार्गदर्शन देगा—

बांटिए : पढ़िए : मंगाइए

मूल्य १)५० : १०० सैकड़ा

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-२६

मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ~

संगठन–सूक्त

संगठन ही शक्ति है, विघटन मृत्यु है, इसलिए आओ, सारे विवाद, स्वार्थ जला कर सब एकता की डोर में बंध जाएं।

हमारा लक्ष्य एक हो, हमारा कर्म एक हो, मंजिल एक हो, मार्ग एक हो, तो फिर धरती पर कौन हमारे समक्ष सक्षम होगा।

स्वार्थं हम सभी का है, ऋषि दयानन्द का काम, इस स्वार्थ के लिए हमारा संघर्ष हो, विजय हमारी वन्दना करेगी।

ग्रामों तक पहुंचो, घरों में पहुंचो और जला दो वह सब कुछ, जो हानिप्रद है, अधर्म है, पाप है।

आत्मा को ज्योतिर्मय बनाओ, प्राणों को दीप्त करो. संध्या से, प्रभु मिलन से शक्ति प्राप्त कर नयी परंपराएं स्थापित करो।

क्राँति के लिए, परिवर्तन के लिए, उमंग, उत्साह और साहस से अपना अभिषेक करो। मस्तक पर तिलक लगा प्रखरभाव से आगे आओ।

हमारा जीवन अल्प समय के लिए है। यह देह सदा नहीं रहेगी, इसलिए इसके मोह में पड़ जीवन को नष्ट मत करो।

प्यार, एकता, संगठन और लक्ष्यसिद्धि के लिए क्रांति, समग्र क्रांति आमूल परिवर्तन करने का व्रत लेकर "ओ३म्" ध्वज संभालो।

असुरों का संहार और देवों की रक्षा हमारा धर्म है। पाखंडों पर प्रहार हमारा कर्त्तव्य है। अज्ञान का विध्वंस हमारा जीवन है।

आपके आत्मा को जगाना चाहता हूं। आपके मानस को उठाना चाहता हूं। आपकी घृणा और द्वेष को स्वयं पीकर आपके मन में प्यार की गंगा बहाना चाहता हूं।

आपसे मुझे प्यार है, इसलिए आपसे कहता हूं कि आप भी सबसे प्यार करें। प्यार इतना बढ़े कि अनेकता का नाम भी कहीं न रह जाए।

देव दयानन्द का सपना आप ही तो पूरा करेंगे संगठित होकर।

शराब,

भ्रष्टाचार,

गुंडागर्दी,

साम्प्रदायिकता

इन चार को मिटाने के लिए अब हमने युद्ध घोषणा कर दी है। यह आर्यसमाज का सामाजिक कार्यक्रम है।

आर्ययुवक जो राजनीति की बात करते हैं, वे वीर जो शासन में सुधार चाहते हैं, वे नौजवान जो क्रांति का सपना देखते हैं, आज हमारी पुकार सुनें और सर्वत्र आर्य सेना सजाएं।

हम इन चार मूलभूत बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकेंगे। इसके लिए हम शासन से भी लड़ेंगे और समाज विरोधी तत्वों से भी। मौत को गले लगाकर भी हम इन महानाशकारी जहरीले विषधर को समाप्त करेंगे।

स्थान-स्थान पर "**भारत रक्षा समितियां बनायी जाएं**। प्रबल प्रयत्न कर पूरे बल से इन चारों के विरुद्ध जनमत जागृत किया जाए। पोस्टर, प्रदर्शन, जलूस, सभाएं, सत्याग्रह सभी का प्रयोग इस अहिंसात्मक युद्ध में हम करेंगे।

हमें विश्वास है कि विजय हमारी होगी।

आर्य वन्धुओं! आर्य समाज के अधिकारियो! हिन्दू संगठन के कर्णधारों सब एक होकर राष्ट्र रक्षा समितियों की स्थापना कर काम में लग जाओ।

दयानन्द संस्थान और जन-ज्ञान के अधिकारियों ने हमें इस महान् कार्य में पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया है। अन्य संगठनों का भी सहयोग और आशीर्वाद हमें मिलेगा और हम विजयी होंगे यह हमारा दृढ़ विश्वास है।

परमपिता परमात्मा हमें शक्ति दे कि हम लक्ष्य पूर्ण कर धर्म की, सत्य की रक्षा कर सकें, सभी से आशीर्वाद मांग रहे हैं।

जनसभाएं कीजिए

आर्य समाजों के अधिकारी सर्वत्र जन सभाओं की व्यवस्था करें। वर्ष में १२ जन सभाएं की जाएं जिनमें आर्य समाज के आध्यात्मिक स्वरूप को प्रखर रूप से मुखरित किया जाए।

जन सभाओं पर व्यय कम से कम हो, जो भी व्यय हो वह प्रचार के लिए मनादी, इश्तिहार, स्टेज पर हो। वक्ताओं का प्रवन्ध यथासंभव अपने समीप से किया जाए,--या प्रांतीय सभाओं से सहयोग लिया जाए।

भवनों से बाहर निकलो, मैदान में आओ और युग को अपने साथ लेकर बढ़ने का संकल्प लो।

ऐसी अग्नि प्रज्वलित करो कि पाप-अधर्म, भ्रष्ट आचरण उसमें जल कर स्वाहा हो जाएं।

कर्म क्षेत्र में क्रांतिदूत बन कर आओ। धर्म क्षेत्र में विजय प्राप्त करो। जनता के मन तक पहुंचो। जनमानस का स्नेह सहयोग आपको अवश्य मिलेगा। ऐसा हमारा विश्वास है।

वार्षिक अवकाश में

जो आर्य बन्धु प्रचार में रुचि रखते हैं वे अपना ग्रीष्मावकाश का समय प्रचार में लगाएं।

ईसाई प्रभावित क्षेत्रों में जाएं। सारी व्यवस्था संस्थान करेगा। साहित्यादि भी वितरण का प्रबंध करेगा।

आप अपना समय दीजिए और ग्रामों में पर्वतों में, पिछड़े क्षेत्रों में वैदिक प्रचारक बन कर पहुंचिए।

धरती को पाप शून्य करना है। अज्ञान नष्ट कर अधर्म मिटाना है। इसके लिए आप स्वयं भगवान बनें।

प्रत्येक व्यक्ति अपना कर्त्तव्य पहचाने। छात्र, अध्यापक राष्ट्र का मार्ग दर्शन करें। वेद के प्रचार की भावना से कृष्ण के अनुयायी एक बार फिर सुदर्शन चक्र संभालें, यह समय की मांग है।

घर को सुधारने के लिए

आप अपने बच्चों को अच्छा बनाना चाहते हैं? जनता पर अपना अच्छा प्रभाव डालना चाहते हैं तो इसका एक मात्र मार्ग है प्रतिदिन यज्ञ-संध्या करना।

आप आरंभ कीजिए, दोनों समय न कर सकें तो एक समय कीजिए पर कीजिए अवश्य।

छोटे-बड़े, घर-बाहर के व्यक्ति यदि प्रतिदिन एक साथ बैठकर यज्ञ करेंगे तो आपके परिवार का कायाकल्प हो जाएगा। आपका घर स्वर्ग बन जाएगा।

अधिक समय नहीं लगेगा केवल २०-२५ मिनट, बस आपको अनुभव होगा कि आप असाधारण हो रहे हैं। आपका घर अन्यों से भिन्न है बहुत सुन्दर।

सत्संग में भी प्रति सप्ताह एक साथ भाग लें। अपने बच्चों को, मित्रों को साथ लेकर सत्संग में जाएं।

यह सब बहुत छोटी-छोटी बातें है, पर इनके प्रभाव बहुत दूरगामी होंगे । आप आज इन पंक्तियों को पढ़ते हुए तो कल्पना भी नहीं कर सकते ।

क्या आप आरंभ करेंगे ?

मम्मी-डैडी मुर्दाबाद
पैन्ट-टाई मुर्दाबाद
अंग्रेजियत मुर्दाबाद
भारत माता जिन्दाबाद ।

अंग्रेज चले गए, पर हम स्वयं अंग्रेज बन गये । १८४७-१९४७ के १०० वर्षों में विदेशी सभ्यता उतनी नहीं उभरी जितनी इन २५-३० वर्षों में । हर बच्चा मम्मी-डैडी बोलता है । अम्माँ पिताजी को तो मार दिया गया है ।

पैंट बिना सभ्यता नहीं आती । अंग्रेजी बोले बिना अनपढ़ रहते हैं और घरों में हर प्रथा विदेशी आवरण ओढ़ कर पनप रही है ।

गुंडागर्दी, डाके, भ्रष्टाचार की जड़ में है केवल फैशन, अंग्रेजियत । खर्चे बढ़ा लिए, दिखावा बढ़ गया और खर्च पूरा करने के लिए अवैध उपाय अपनाने आवश्यक हो गए ।

आप स्वयं भी सभी कुछ जानते हैं पर कुछ बोलते नहीं, आखिर क्यों ?

समय आ गया है जब मम्मी-डैडी शब्द और इनके पीछे छिपी नाशकारी परंपरा को मिटाने के लिए हमें कमर कस कर तैयार होना होगा ।

मेरा पागलपन : कर्त्तव्य : परिणाम

मेरा मस्तिष्क विकृत हो चुका है (आज की दृष्टि से) । संसार के वर्तमान प्रवाह के साथ चलने के लिए मैं तैयार नहीं, उसे बदलने की इच्छा है ।

देख रहा हूं पाप सफल हो रहे हैं और सत्य मर रहा है । क्या सत्य का मरण अकारण है ? सत्य क्यों हारे, इसके पीछे उसके उपासकों की अकर्मण्यता ही तो मूल कारण नहीं है ।

मेरा चिन्तन मुझे सत्य को जीवित रखने के लिए संघर्ष की प्रेरणा कर रहा है । आज तक जो सोचा वह पूरा किया । सपना कभी अधूरा नहीं रहा । लोग कहते थे कि वेद कोई पढ़ता नहीं और आज स्थिति यह है कि कोई छपाने का प्रबंध कर दे तो एक लाख प्रतियाँ प्रति माह निकल सकती हैं । प्रयत्न से सर्वत्र वेद के प्रति जिज्ञासा पैदा हो गई है ।

हम भारत भूमि को अनार्य-असुर शक्तियों से शून्य कर देना चाह रहे हैं। इसके लिए वेद मंदिर में बैठ गए हैं। जंगल में नगर छोड़कर वेद का स्वर गुंजाने के लिए केन्द्र बनाया है।

प्रश्न उठता है कि क्या यह सपना अधूरा रहेगा ? क्या पैसे के अभाव में सारी योजनाएं नष्ट हो जाएंगी। हमारा मन कहता है, नहीं, सफलता मिलेगी, जनमानस भूखे रहकर भी १-१ ईंट देकर भी वेद मंदिर पूर्ण कराएगा, वेद मंदिर दयानन्द का सपना पूरा करेगा। वेद मंदिर संप्रदायवादों को समूल नष्ट करेगा।

वेद मंदिर अधर्म को उखाड़ेगा, अज्ञान को मिटाएगा, अभाव के विरुद्ध युद्ध करेगा।

वेद मंदिर आपका है। सपना मेरा है—पागलपन मेरा है, पर इसे जीवन आप देंगे, वेद भक्त देंगे। यज्ञशाला द्वार और भवन केवल प्रतीक हैं। इस मंदिर में प्राणों को जलाकर जीवन देने वाले जीवित शहीद प्रतिष्ठित करने पर ही यह वेद मंदिर बनेगा।

फाँसी पर चढ़ना सहज है, जीवित जलना, तिल-तिल जलना कठिन है। हम स्वयं तो निरंतर जल ही रहे हैं पर ऐसे साथी भी चाहते हैं जो शहादत का जाम पीकर पागलपन के लक्षण अपने मस्तिष्क में उत्पन कर सकें।

धरा-धाम को स्वर्ग बनाना, जलते रह कर भी मुस्काना
आगे-आगे बढ़ते जाना, लक्ष्य हमारा सब कुछ पाना।

प्राण ! आप भी प्रभु पुत्र हैं। सोचिए और जंगल में बैठकर दयानन्द की अलख जगाने वाले ब्राह्मण को अपना सहयोग दीजिए ! आपका स्नेह सहयोग मिलेगा, विश्वास रखिए हम समय की गति को बदल देंगे। हम धरती को स्वर्ग बना देंगे। नई विधा से नए चरण से हम जो करना चाहते हैं, उसमें आप भी अपना योगदान देंगे ही, यह विश्वास हमारी सफलता का उद्घोष है।

आप के मन से !

मरने का दिन आया है,
इस लिए जीने की तैयारी करो।
समय बलवान है बहुत,
उस से डरो नहीं, सामना करो।

वह झुक जाएगा, और तुम्हारा होगा,
तुम्हारे साथ दौड़ेगा, गीत गाएगा।
इस लिए शक्ति संग्रह करो,
और समय को अपना अनुचर बनाओ।

क्रन्दन की भाषा भूल जाओ,
रुदन के स्वर भूल जाओ ।
कायरता, निराशा जला कर, हे ! वीर,
अब विजय देवी की माला ग्रहण करो ।

कांपते हुए दुर्वल मर जाएं, अच्छा है,
आज जो जीतता है, बस वही सच्चा है ।
सत्य तभी सत्य है जब बलिदान देकर,
हम उस सत्य को चमकाते हैं ।

कफन बांध कर, रक्तार्पण करने वाले वीर !
सौगन्ध तुम्हें—गौ—गंगा - गायत्री की ।
सौगन्ध तुम्हें प्रताप - हकीकत के रक्त की,
४७ में बहे लाखों शरीरों के खून की ।

अब मरने की नहीं जीने की बारी है,
जीवन लाचारी नहीं, एक सबल स्वर है ।
ऐसा स्वर जो हार को जीत में ढाल सकता है,
हिमालय उठा कर समुद्र में उछाल सकता है ।

मेरे प्राण ! कृष्ण-राम के नाम पर संकट है।
वेद-शास्त्र-धर्म सब को मिटाने के लिए,
असुर दल बढ़ता चला आता है।

मैं तुम्हें बुलाता हूं—इस लिए हे ! वीर,
कि तुम मर कर भी अमर हो जाने की कसम खाओ,
लहू देकर भी माँ का सुहाग बचाने की कसम खाओ !
मरोगे खाट पर सड़कर, तो क्या होगा ?
मरोगे—दुश्मन के हाथों से, तो क्या होगा ?
जब सब कुछ जल जाएगा, मेरी माँ का,
तो जी कर भी कहो, तो जीवन का क्या होगा ?

इस लिए कहता हूं, खड़े हो जाओ, धर्म जलता है,
खड़े हो जाओ, हे कृष्ण ! गौएं कट रही हैं आज,
बुझ रही गीता—की आवाज धरती से,
खड़े हो अर्जुन, उठा गांडीव हाथों में ।
सम्भालो ओ३म् का झण्डा, उठालो ओ३म् का झण्डा,
जहां भी वस चले—वहां लगा दो ओ३म् का झण्डा ।

● ★ ●

मेरा विश्वास

मैं
तुम्हारे प्यार के लिए
तरसता रहा हूं।
तुम्हारे स्वप्न देखकर
चलता रहा हूं।
इसी आशा से लेता रहा हूं श्वास,
कभी तो आओगे तुम,
मुझे आकर थाम लोगे,
और,
मेरे सपनों को साकार बनाने के लिए
अरमानों के महल सजाने के लिए,
अपने प्राणों का अर्घ्य देकर,
मेरे प्यार का प्रतिदान दोगे।
चंदा की चांदनी में,
जब दुनियां पता नहीं,
किस लोक में रहती है,
मैं भी निर्जन में डोलता रहा हूं।
किसी मदहोश की तरह,
पागलपन के उन्मादी झोकों में,
एक नयी रोशनी दिखाने की तमन्ना
वह सब तुम्हारे मन तक,
क्यों नहीं पहुंचा यही सोच रहा हूं।
जीवन के ५० वर्ष बीत गए,
अब कितने पल बाकी हैं,
यह नहीं मालूम,
मेरा प्यार अधूरा ही रहेगा क्या ?
कोई शमा पर मरने के लिए,
क्यों नहीं तैयार—
यह शायद मेरी कमजोरी है,
लगता है प्यार अधूरा है।
था—और रहेगा,
क्योंकि कोई हमदम न मिला,
कोई साथ न चला—
मैं चलता जा रहा हूं।
वहां से, मंजिल आ गयी है—
मैं तुम्हें बुलाने या दुलारने
नहीं आऊंगा—
पर मेरा प्यार सदा तुम्हें
पुकारता रहेगा।
यह मेरा विश्वास है—

—भारतेन्द्र नाथ

संस्थान समाचार

दयानन्द संस्थान का सब कार्य भली प्रकार चल रहा है। सुप्रसिद्ध संन्यासी स्वामी अखिलानन्द जी सरस्वती [जो बार-२ सार्वदेशिक सभा के मन्त्री रहे हैं और वर्षों तक उत्तर प्रदेशिय सभा में रह चुके हैं। पूर्व नाम बाबू काली चरण जी] ने संस्थान में रूप से रहना स्वीकार कर लिया है। संस्थान के निर्देशक के रूप में आप सभी कार्यों का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

—वैशाखी पर यज्ञ

वेद मन्दिर में वैशाखी का पर्व धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर स्वामी अखिलानन्द जी सरस्वती, प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० शिव कुमार शास्त्री, सार्वदेशिक सभा के नव-निर्वाचित प्रधान मन्त्री श्री ओम प्रकाश त्यागी, आचार्य पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित, आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री, के प्रवचन हुए। कु० सुमेधा व श्री लीलाधर शर्मा की कविताएं हुयीं। नगर व ग्राम के नागरिकों ने सोत्साह यज्ञ में भाग लिया।

स्वामी जगदीश्वरानन्दजी भारत पहुंच रहे हैं

फिजी और आसपास के क्षेत्रों में वैदिकनाद वजा कर सुप्रसिद्ध वैदिक संन्यासी स्वामी जगदीश्वरानन्दजी महाराज जुलाई १९७८ में भारत लौट रहे हैं।

आर्यसमाज द्वारा चलाए जा रहे राष्ट्र रक्षा आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए स्वामीजी से शीघ्र भारत पधारने की प्रार्थना की गयी थी, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया है।

वेद भाष्य : घर घर पहुंचाएं

वेद भाष्य दो जिल्दों में कवर सहित १२५) में देते रहने का निश्चय किया गया है। वेद के पोस्टर भी तैयार कराए गए हैं। जिन्हें बिना मूल्य आप पत्र लिख कर मंगा सकते हैं।

पुराने वेदभाष्य

जिन सदस्यों को भी अभी तक वेदभाष्य नहीं पहुंचे हैं। वे पत्र लिख कर मंगा लें। लगभग सभी को भेजे जा चुके हैं किन्तु जिन्हें अभी तक भी न मिला है वे वेद मंदिर दिल्ली-३६ को पत्र लिखकर मंगा लें। वहाँ का फोन नं० ८०१२२१ है।

वैशाखी पर यज्ञ

नई दिल्ली, १४ अप्रैल। आज संसार जिन अनेक अभावों और अन्यायों से संत्रस्त है, उसका एकमात्र कारण जीवन में सुख की प्राप्ति के संबध में भ्रान्त धारणा का उद्‌भव है। वास्तविक सुख क्या है, यह वेद का पावन ज्ञान ही मानव मात्र के समक्ष उजागर करता है। वेद का उपदेश किसी जाति, संप्रदाय अथवा वर्ग विशेष के लिए नहीं अपितु मानव-मात्र के कल्याण के लिए है।"

उपरोक्त विचार दयानन्द संस्थान द्वारा वेद मन्दिर, इब्राहीमपुर में आयोजित वैशाखी समारोह में सुप्रसिद्ध आर्य सन्यासी स्वामी अखिलानन्द ने व्यक्त किए। आपने वेद प्रचार और प्रसार की ठोस योजना बनाने पर जोर दिया।

प्रसिद्ध आर्य विद्वान् प० शिव कुमार शास्त्री भूतपूर्व संसद सदस्य ने अपने भाषण में वैशाखी पर्व की साँस्कृतिक महत्ता पर प्रकाश डाला।

इस अवसर पर प० लक्ष्मीदत्त दीक्षित एवम् सार्वदेशिक सभा के मंत्री श्री ओम प्रकाश त्यागी संसद सदस्य एवम् प्रि० लक्ष्मीदत्त दीक्षित तथा पं० भारतेन्द्रनाथ आदि के भी भाषण हुए। कु० सुमेधा ने समारोह में भक्ति गीत भी सुनाए।

वैशाखी पर्व के अवसर पर आयोजित यज्ञ में आसपास के ग्रामों के ग्रामीण भी भारी संख्या में सम्मिलित हुए।

उत्सवादि के लिए

विवाह संस्कार, मुण्डन, नामकरण आदि संस्कारों के लिये एवं आ० स० के उत्सवों पर वेद प्रवचन, उपनिषद् प्रवचनों के लिये संस्थान की ओर से आप श्री पं० अभिविनय भारथी १० पश्चिमी पटेल नगर नई दिल्ली-८ से संपर्क करें।

फोन : ५८३३४३

नया पता : शास्त्रीजी का

भूतपूर्व संसद् सदस्य पं० शिव कुमार शास्त्री का नया पता है—

सी (२) ३५-३६ मलकागंज, दिल्ली-७। फोन : २२६६६५

—सुप्रसिद्ध विद्वान् व विचारक स्वामी अखिलानन्दजी सरस्वती आजकल वेद मंदिर दिल्ली-३६ में रह रहे हैं। उनका लाभ उठाने के इच्छुक उनसे संपर्क करें। फोन : ८०१२२१

आर्यसमाज तीव्र आंदोलन करेगा—

हिन्दू मात्र को संगठित कर
अराष्ट्रीय तत्वों की समाप्ति का संकल्प

आज देश में अराष्ट्रीय तत्त्व फिर सिर उठा रहे हैं। विदेशी पादरी पिछड़े क्षेत्रों में लाखों व्यक्तियों को ईसाई बनाकर ईसालैंड बनाने का कुचक्र रच रहे हैं।

मुसलमान एक बार फिर नए पाकिस्तान की नींव डालने का निश्चय कर बैठा है। उनकी जहरीली योजनाएं सब जगह तेजी से चल रही हैं।

संभल का कांड सारी हिन्दू जाति के लिए एक चुनौती बन गया है ' राम-कृष्ण ऋषि मुनियों की परंपरा पर संकट मंडरा रहा है और वीर-प्रताप, शिवा के वंशज सो रहे हैं।

इतिहास में सबसे बड़ी संकट की घड़ी आज हमारे सिर पर खड़ी है। हमारे नेताओं को पद-चुनाव-भाषण से अधिक और कुछ नहीं सूझता। एम. पी. बनने के लिए सत्य को मिटाया जा रहा है।

किन्तु ऋषि दयानन्द का आर्यसमाज भारत की इस दुर्दशा को मौन दर्शक बनकर देखने के लिए तैयार नहीं।

अंत: इस परिपत्र द्वारा हम सभी आर्यसमाजों से निवेदन करते हैं कि वे अपने पूरे बल से अपने-अपने क्षेत्र में सक्रिय हो जाएं।

आवश्यक निर्देश

१—सर्वत्र अराष्ट्रीय तत्त्वों के विरोध में भारत रक्षा समितियों की स्थापना की जाए।

२—गुण्डा गर्दी, भ्रष्टाचार शराब और सांप्रदायिकता के विरुद्ध युद्ध घोषणा की जाए।

३—यह ध्यान रखें कि आपके क्षेत्र में कोई भी किसी हिन्दू का धर्म परिवर्तन न कर सके।

४—आसाम, गुजरात, आंध्र, केरल, मद्रास आदि में करोड़ों रुपया लगाकर धर्म परिवर्तन हो रहा है। सेवा के नाम पर देश द्रोह का विष फैलाया जा रहा है। हमें सब तरह से सावधान रहना है।

भारत हमारा है हम इस की रक्षा करेंगे। ईसालैंड बनाने वालों से सावधान देश द्रोही सांप्रदायिकों से सावधान। हिन्दू धर्म की रक्षा भारत की रक्षा है।

संकल्प लेकर उठो। सिर पर कफन बांध कर उठो। मां भारत की रक्षा के लिए, गौ-गायत्री वेद की सुरक्षा के लिए आगे बढ़ो।

देश धर्म और प्राचीन महान् परंपरा को बचाने के लिए हम आपको कर्म क्षेत्र में बढ़ने का निमंत्रण दे रहे हैं— —भारतेन्द्र नाथ (संयोजक)

अखिल भारतीय भारत रक्षा समिति—

१५६७ हरध्यान सिंह मार्ग नई दिल्ली-५

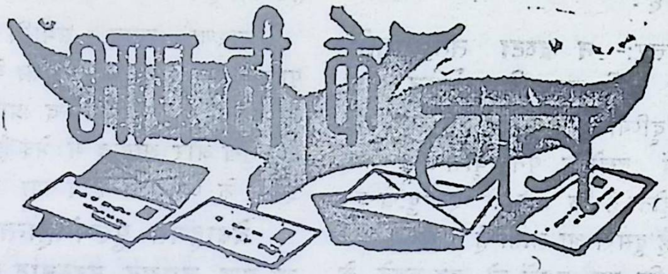

सम्पादक महोदया, सप्रेम नमस्ते !

जनवरी १९७८ का जन-ज्ञान प्राप्त हुआ । धन्यवाद ! अच्छे शिक्षाप्रद लेख है पढ़कर प्रसन्नता हुई । पृष्ट १०३ पर "आप ही के पत्र" शीर्षक नामक लेख छपा है । लेखक है श्री गोर्वधन सेवलेनी लगता है मेरे विद्वान बन्धु चिन्ता और चिन्तन को एक ही मान बैठे हैं । आप से ठोस प्रमाण प्राप्त कर अपने विचार में परिवर्तन करना चाहते है या नहीं तो अपने विचार छापने का आग्रह करते हैं । एक प्रकार से उनके विचार छप ही चुके, किन्तु तथ्य वैसा है नहीं । पत्र के निचले परिच्छेद से उत्तर लिखता हूं शायद आप को पसन्द आए ।

चिन्ता सुख की जननी नहीं ।

सांख्य सूत्र (१) अथ त्रिविध दु:ख अत्यन्त निवृति अत्यन्त पुरूषार्थ ।

आधिदैविक, आधिभौतिक; आध्यातिमक इन तीन प्रकार से प्राप्त दु:खों से अत्यन्त छुटकारा मिल जाय वही अत्यन्त पुरूषार्थ अर्थात् मोक्ष है । हमारा मुख्य प्रयोजन दुखों से छुटकारा पाना है ।

ध्यान देने की बात यह है कि यदि सुख किसी तरह प्राप्तव्य होता तो सूत्र रचना अन्य प्रकार से होती । इस सूत्र से यही सिद्ध होता है कि दुख ही प्राप्तव्य है और वही त्याज्य है । अर्थात् उसी से हमें छुटकारा पाना है दु:ख की अनुपस्थिति में प्राणी मात्र सुख का अनुभव करता रहता है ।

प्रमाण:- आप चार घण्टे किसी आसन पर बैठ जाईए । यदि आप अनभ्यस्थ है तो आपके पैर और कमर में पीड़ा उत्पन्न हो जाएगी । आप दु:ख अनुभव करने लगेगें । अब उठ जाईए पैर को झटकार दीजिए थोड़ा सा मालिश कर दीजिए पीड़ा समाप्त हो जाएगी और आप सुख अनुभच करने लगेंगे । अब आप विचार कीजिए दु:ख आया और नहीं गया । बैठने के पहले हमें सुख था और बाद में सुख ही है । इसलिए दु:ख से बचने और उसे मार भगाने का उपदेश किया गया है । प्रत्येक विषयों में इस का विस्तार करके विद्वान जन समझ लें ।

दु:खों को भगाने या उससे छुटकारा

पाने के उपाय जो हम कर रहे है क्या पर्याप्त है ?

उत्तरः- **न द्रष्टा तत् सिद्धि निवृते अपि अनुवृति दर्शनात्।** जो उपाय दृष्टिगोचर हैं वे पर्याप्त कदृ नहीं हैं, क्यों दुखों के पुनरावृत्ति से यह सिद्ध होता है कि जैसे ही एक दुःख दूर होता है दूसरा आ जाता है। विचारणीय यह है कि हम दुःखों को दूर करने के कौन-कौन से उपाय करते हैं। विद्वान जनों ने सारे उपायों को दो श्रेणियों में विभक्त कर दिया है। (१) धनार्जन (२) यज्ञ और योग। अब प्रश्न यह है कि इन दो उपायों से दुःख दूर नहीं होता तो क्या हमें इन उपायों को नहीं करना चाहिए ?

उत्तरः—**प्रात्य हि कक्षु प्रतिकार का प्रतिकार चेष्टनात् पुरुषार्थत्वं।**

क्षुधा पूर्ति के लिए भोजन करते है। पुनः क्षुधा सताती है पुनः भोजन करते हैं, यह क्रम सदा चल रहा है। इसी प्रकार अन्य दुःखों को दूर करने का प्रयत्न करते रहना पुरूषार्थ है। अब स्पष्ट हो गया कि हम जो कुछ कर रहे हैं दुःखों से छुटकारा पाने का उपाय अर्थात् पुरूषार्थ है। पुरूषार्थ करते समय विचारों की दौड़ धूप तो होगी ही। विना विचार कर निर्णय किए कार्य सिद्धि नहीं होगी और न तो दुःखों से छुटकारा ही होगा। अतः सोचना विचारना चिन्ता से भिन्न है। दुःखों को भगाते रहिए आप सुखी रहेंगे। चिन्ता करने की आवश्कता नहीं क्योंकि चिन्ता सुख की जननी नहीं है। सुख से हाथ धोने की बात तो दूर है यदि पुरूषार्थ को हृदयंगम कर लें तो, संसार हेय नहीं है।

धारणा, ध्यान, समाधि अत्यन्त पुरूषार्थ के साधन हैं चिन्ता के नहीं। ईश्वर के ध्यान में आनन्द प्राप्त होता है। सुख और आनन्द में भेद हैं। देखिए ईश्वर के ध्यान में ऋषि क्या कहते हैं।

वेदाहमेत पुरूषंमहान्तम् आदित्य वर्ण तमसह हरस्ताद्। त्वमेव दिदित्वा अतिमृत्युमेति नान्य पन्था विद्यतोऽयनाय।

अन्धकार के परे प्रकाश स्वरुप उस परम पुरूष को देख रहा है। आपको जान कर ही मृत्यु से पार हुआ जाता है, इससे भिन्न कोई अन्य रास्ता नहीं है। और सुनिए :—**पूषन्नेकर्ष यम सूर्य प्रजापत्य ब्यूह रशीमन समूह तेजो यते रूपं कल्याणतमं तते पश्यामि यो असाअसौ पुरुषः सो अहमस्मि !**

पोषणकर्ता प्रभु आप अकेले दृष्टा हैं। प्रकाश देने वाले हैं। प्रजापालक भी हैं। दया कर के अपने रश्मियों को बटोर लीजिए। प्रार्थना सुन ली जाती है तब ऋषि पुनः कहते हैं। यह जो तेज स्वरूप, कल्याणाप्रद सदा शिव तेरा स्वरूप उसे मैं देख रहा हूं। यह जो प्राणों में पुरुष हैं है वही मैं हूं। यहाँ ऋषि को तूअपना ज्ञान हो जाता है। यह क्षणिक और चिन्ता नहीं है!

उजाला अंधेरा का दृष्टान्त देते हैं आगे और पीछे का भी उल्लेख है। एक ही के देखने का निषेध करते हैं। दोनों का महत्व है। दृष्टान्त तो ठीक है और आप के दृष्टान्त से ही सिद्ध हो जाता है

कि चिन्ता मुक्ति होती है। सो कैसे ? सुनिए अन्धेरा और उजाला दोनों विपरीत स्वभाव हैं। एक देश और एक ही काल में दोनों की उपस्थिति नहीं होती अगर हो जाय तो अन्धेरे की मृत्यु हो जाती है। इसी प्रकार चिन्ता और निश्चिन्तता में क्यों नहीं मानते। एक साथ उपस्थिति नहीं होती है। अगर हो जाय तो एक की मृत्यु हो जाती है। इस के लिए ही भगवान को व्यवस्था करनी पड़ी। अथ० वेद में एक मन्त्र है जिसका अर्थ है उषादेवी अपनी बहिन रात्रि की मृत्यु न हो जाय इस भय से जितना जगह सामने लेती है, दया करके अपने पीछे उतनी ही जगह छोड़ती है। भावार्थ यह है कि हम आर्य बन्धु भिन्न स्वभाव होते हुए भी मिल कर चलें या रहें। पृथ्वी गोल है यह भी सिद्ध होता है। जिस प्रकार की यह व्यवस्था है ठीक उसी प्रकार की व्यवस्था हमारे चितों में है। चिन्ता कोई वस्तु नहीं है। इच्छा, राग, द्वेष, सुख, दुख, हर्ष, क्रोध, बिम्ब, बन्ध, चिन्तन, चिन्ता, प्रमाद, शोक आदि ५५ गुण चित्त के हैं। निरोध भी उन्हीं में से एक है। यदि यह गुणा अपने उभार में रहे तो प्रत्येक पर विजय हो जाती है। इसके लिए प्रयत्न करते रहना चाहिए। चित्त के गुणों को हम, आप मिटा नहीं सकते यह काम परम पिता परमेश्वर का है। यदि दया करके ज्ञान दे और मोक्ष हो जाय तभी चित्त से सम्बन्ध छूटेगा नहीं तो प्रलयकाल में अपने आप छूट जायेगा। तो प्रश्न होता है हम क्या करें ? रोग होता है तो उसका प्रतिकार हम क्या करते हैं ? औषधि सेवन कर उसका उपचार करते हैं। चिन्ता भी एक प्रकार का मानसिक रोग है। जब चित्त में इसका उभाड़ हाता है तो मनुष्य को धुला धुला कर मारती है। शरीर कृषित और चित्ता होने लगता है। भोजन रुचिकर नहीं लगता, काम काज में प्रवृति कम होती है। देखिए यह देवी क्या लिखती हैं।

लकड़ी जल कोयला भई,
कोयला जल भई राख।
मैं पापिन ऐसी जली,
कोयला भइ न राख॥

यदि आप विद्वान बन्धु अपने आप को ऐसे ही चिन्ताग्नि में जलता हुआ अनुभव करते हो तो आप चिन्ताग्रस्त हैं यदि नहीं तो आप पुरुषार्थ कर रहे हैं। प्रसन्न रहिए। चिन्तन, सोचना, विचारना ये चिन्ता से भिन्न है। देखिए वेद क्या बताता है।

ओ३म् "वायुरनिलतमृतमथेद
भस्मातः शरीरम्।
ओ३म् क्रतो स्मर कृतं स्मर कृतो
स्मर कृतं स्मर॥

प्राण और करण आत्मा के साथ सर्गकाल तक रहने वाले हैं आत्मा अमर है। ओ३म् का विचार करो, क्या क्या किए हो उसका विचार करो, क्या क्या करना है उसका विचार करो। सोचो, समझो और करो अब इस मन्त्र के अर्थ विचारने चित्त में दाह या दुःख तो नहीं होता। क्योंकि सोचना, विचारना, स्मृति ये चिन्ता से भिन्न हैं। तो फिर चिन्ता है क्या ? सुनिए।

चिता से चिन्ता अर्धनकार बढ़ी है ।

चिता हम उसको कहते हैं,
जो मुर्दे को जलाती है ।
बड़ी है इसलिए चिन्ता जो,
जिन्दे को जलाती है ॥

पहले हम यह जान लें कि हम कर्म क्यों स्वीकार करते हैं, तो आगे की बात स्पष्ट हो जावेगी । भूख और प्यास ऐसा दुःख है जो हमें कर्म स्वीकार कराता है । तभी वेद में ईश्वर ने आज्ञा दे दी ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरेः ॥

कर्म करते हुए १०० वर्ष जीने की इच्छा करें । क्योंकि उन्हें मालूम था कि जीव पृथ्वी पर जाते ही उपरोक्त दुःखों से सन्तप्त होगा । प्रारम्भ में थोड़ी व्यवस्था भी कर दिए । जब हम कर्म करने के योग्य हुए तो अपनी योग्यता के अनुसार कर्मो में प्रवृत्त हो गए हम बिना विचारे कर्मों में प्रवृत्त नहीं हुए । सम्पादक जी ! पहले ही विचार कर ली होगी कि हमें क्या क्या करना होगा । वे सारी बातें स्मृति में जमा हो गई होंगी । सम्पादन कार्य के दौरान वही स्मृति उभर उभर कर एक के बाद दूसरे कार्य सम्पन्न कराती रहेगी । अभ्यास हो जाने पर अन्तःकरण और सुगमता से कार्य सम्पादन करने लगेंगे । थोड़ी भी कठिनाई नहीं आएगी । किसी भी कार्य में मन की एकाग्रता होने पर अन्य विषय दूर रहते हैं । कक्षा में जो विद्यार्थी एकाग्रचित होकर गुरु के पढ़ाए हुए विषय को सुनते हैं वे पढ़ाए हुए पाठ को ग्रहण कर लेते हैं । जो शरीर से कक्षा में है और मन से सिनेमा देख रहे हैं । वे नहीं ग्रहण कर पाते । कार्य में हम व्यस्त इसलिए नहीं होते कि कार्य की हमें चिन्ता रहती है, बल्कि करना कर्तव्य हो जाता है । धनार्जन मुख्य है ।

बिना विचारे जो करे सो पीछे पछताय ।
मरने पर गधा बने लाद-लाद मर जाय ॥

यहां चिन्ता की कोई बात नहीं है । चिन्तन करने का उपदेश तो है । निषिद्ध कर्मों को छोड़ कर विहित कर्मों का चिन्तन करना चाहिए । क्योंकि जो जैसा चिन्तन करता है वैसा ही हो जाता है । अच्छा चिन्तन करेगा अच्छा बनेगा, बुरा चिन्तन करेगा बुरा बनेगा । किन्तु चिन्ता करने का उपदेश कहीं नहीं किया गया है ।

अब हमें निवेदन यह करना है कि चिन्तन की भी चिन्ता न करें । लोक में चिन्ता का वैसे ही प्रयोग होने लगा है जैसे भात पकाने का । बहुत कम लोग ऐसा कहते हैं कि चावल पका रहा हूं । किसी भी कर्म में इच्छा, उहापोह पूर्वक विचार पश्चात् निर्णय तथा साधन, प्रयत्न और क्रिया इतने ही की आवश्यकता है । क्रिया समाप्ति में कर्म भी समाप्त हो जाता है । फल है, सुख, दुःख हानि, लाभ, अच्छा, बुरा जो हमें कर्म के पहले ही ज्ञात था । तो पुनःचिन्ता क्यों ?

मेरे विद्वान् बन्धु आप स्वयं विचारें कि आप को सम्पादक महोदया को पत्र लिखने के पहले कितनी भारी चिन्ता करनी पड़ी थी । लेखन काल में आप

पूर्वोक्त लेखक महोदय के लेख का चिन्तन किए थे कि चिन्ता तथा व्यस्त थे कि अनयमना तो आपको अपना उत्तर मिल जाएगा।

मेरा आर्य्य बन्धुओं, माताओं, बहनों से सादर अनुरोध है कि सुबह नित्य क्रिया के बाद सन्ध्या पर बैठे तो गायत्री मन्त्र पर जब पहुंचे तो मन्त्र का जप करते हुए थोड़ा ध्यान कर लिया करें पश्चात् आप दो मिनट में यह विचार कर लें कि आज हमें क्या २ करना है। आप सारा दिन ऐसा अनुभव करेंगे कि आपका सारा काम सुचारु रूप से सम्पन्न हो रहा है। मन प्रसन्न रहेगा। पुन: शाम को भी ऐसे ही करें। निद्रा अच्छी लगेगी। स्वप्न भी होगा तो शुभ स्वप्न ही होगा। जब आदत पड़ जाएगी तो बिना उसके रहा नहीं जाएगा।

(१) निषेध—जब कोई बुरे विचार उठें, उसको रोकना।

(२) विपरीत भावना—ठीक उल्टा विचारने से निरोध हो जाएगा।

(३) ईश्वर प्राणीधान—ईश्वर विषयक ग्रन्थों का अध्ययन। लाभप्रद है।

विशेष व्याख्या देखिए 'योग दर्शन।'

अब मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि चिन्ताग्रस्त व्यक्ति आज ही चिन्ता मुक्त हो जाए तथा—

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैव
तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगमं ज्योतिषाँ ज्योतिरेकं
तन्मे मन: शिव संकल्पमस्तु॥
ओइम् शान्ति: शान्ति: शान्ति:

आदरणीया बहन राकेश रानी जी
सप्रेम नमस्ते।

आशा है अनुकृपा से आप आनन्द मंगल होंगी। देखिए आपका और मेरा व्यक्तिगत परिचय तो नहीं हुआ। मैं आपके जन-ज्ञान मासिक पत्र को पढ़ती रहती हूं। उसे पढ़कर मुझे ऐसा लगा कि महर्षि को पहचानने वाले अभी भी विश्व में मौजूद हैं।

आज आर्यों की दशा बड़ी शोचनीय हो गई है हर आर्य जोकि अपनी कुर्सी को छोड़ना नहीं चाहता और नव युवकों को आगे आने में बड़ी रुकावटें डालता है। आपकी सार्वदेशिक के निकाले हुए **दयानन्द-दिव्य दर्शन** नाम के ग्रंथ को मैंने भी पढ़ा और उसमें जो महर्षि के चित्र हैं वह बिलकुल कार्टून और बड़े भद्दे हैं। मैंने तो उसी समय कह दिया था कि यह स्वामी जी के चित्र बड़ी मूर्खता से बनाए गये हैं। आर्य जनता को इस पर आक्षेप उठाकर यह पुस्तक जहां-२ बिक्री की है वापस लेकर इसे बेचना बंद कर देना चाहिए। संसार इसे देखकर हमारे स्वामीजी की हंसी उड़ायेगा।

श्री सम्पादकजी, सप्रेम नमस्ते।

जन-ज्ञान फरवरी ७८ के 'मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूं' इस शीर्षकान्तर्गत प्रकट किए गए विचार श्री भारतेन्द्रनाथजी की आर्यसमाज के प्रति तड़प के परिचायक है। सर्वसाधारण आर्य भी यही चाहता है कि आर्यसमाज कार्यक्षम बने। पर कुछेक संकीर्ण विचारवाले आर्यसमाजी आर्यसमाज और दयानन्द के तत्वज्ञान का प्रचार होने नहीं देते। वे स्वयम् तो कुछ

नहीं कर पाते अन्यों के कार्यों में भी रोड़े अटकाते हैं। और आश्चर्य तो यही कि ऐसे ही अविद्वान आर्य समाज के नेता चुन कर आए कई जगह दिखायी देते हैं। कई आर्य विद्वान तो यज्ञ और वेद के कार्यों को अनावश्यक मानते हैं।

एक गैर आर्यसमाजी के नाते मैं पूछता हूं आर्यसमाज जो अकार्यक्षम बना हुआ है इसको रखने की आवश्यकता ही क्या है? गत इतिहास सुनहरा है। पर वर्तमान में वह क्या है? उसका वार्षिक कोई प्रोग्राम भी नहीं। ऐसी अवस्था में इसे जीवित रखना एक भूल है। और यदि इसे जीवित रखना है तो आत्म-विश्वास एवं नए उत्साह से कार्यरत हो जाना चाहिए। पर क्या वह जी उठेगा?

कई आर्यसमाजी जातिवादी और सांप्रदायिक है। उन्होंने अपने पूर्वाश्रमी जाति को, सम्प्रदाय को भुलाया नहीं। यदि अन्तरजातीय विवाहित कोई दम्पती है या उसकी सन्तान है तो उसे कोसने में आर्य समाजी सर्वप्रथम रहता है। आर्यसमाजियों के कई घर मैंने देखे हैं जहां कोई वैदिक संस्कार दृष्टिगोचर नहीं होते। सप्ताह में एक बार भी आर्यसमाजी सपरिवार वेद मन्दिरों में नहीं आते। उनकी वेद पर सच मानें तो श्रद्धा ही नहीं। कितने लोगों के घरों में वेद है। कितने लोग इसे पढ़ते हैं। कितने आर्यसमाजी हैं जो आर्य पत्र पत्रिकाएं मंगाते हैं ताकि आर्य विचारधारा घर में सदा वर्तमान रहे। आर्यसमाज के कई मन्दिर उसी गांव में आर्यसमाजियों के रहते हुए बन्द रहते हैं। वहां सडांस बदबू रहती है। यह ऐसा क्यों? इसके विपरीत मस्जिदें, चर्च मन्दिर, गुरुद्वारे साफ सुथरे हैं। उन्हें पायेदार बनाकर आकर्षक बनाया जाता है। गिलाजत दिखायी नहीं देती। उन स्थानों का उपयोग होता रहता है।

प्रिय भारतेन्द्रनाथजी! यदि आप दयानन्द का कार्य करना चाहते हैं तो आर्यसमाज को भुला दें। आप आत्म विश्वास रखें और कार्य करते रहें तो आपको गैर आर्यसमाजी आशातीत साथ देंगे। आर्यसमाज को लेकर चलना चाहेंगे तो आप अच्छी प्रकार समझ लें कि अपने अमूल्य जीवन का अमूल्य समय बरबाद कर रहे हैं। दयानन्द मानवजाति के उद्धारक थे। यह कार्य आप आगे चलाएं आज जातिवाद, साम्प्रदायिकता, स्पृश्यता-स्पृश्यता उच्च-नीचता, भ्रष्टाचार फैल रहे हैं। शासन, जातिवाद और साम्प्रदायिकता को संरक्षण और बढ़ावा दे रहा है। भ्रष्टाचार, पाखंड और सामाजिक बुराइयों और संकीर्णताओं के विरुद्ध संघर्ष चालू करो। विजय तुम्हारे हाथ है।

भगवान राम आर्य नान्देड़

आदरणीय पंडित भारतेन्द्रनाथजी

सप्रेम नमस्ते स्वीकार करें।

पंडित जी मार्च माह का मासिक "जन-ज्ञान" आपके आशीर्वाद से मुझे प्राप्त हुआ। साथ ही आपका ४९वां जन्म तिथि के बारे में ज्ञात हुआ इसलिए मैं आपके शतायु होने के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूं। तभी आर्यसमाज का जो कार्य है सफल हो सकता है इसलिए आपने जो कदम उठाए हैं, सबमें विजयी हुए है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के बारे में जो आपने लिखा है

वह मेरी बुद्धि से बाहर है। आपका वर्णन करने के लिए मेरी बुद्धि असमर्थ है। इसलिए आपने जो काम किए हैं, पूरा आर्य जगत आपकी उपमा कर रहा है। आशा करते हैं आप आर्य समाज को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करेंगे।

चन्दर राम आर्य इलाहाबाद

प्रिय भारतेन्द्रनाथजी, सप्रेम नमस्ते।

संसार के प्रसिद्ध विद्वानों की दृष्टि में ईश्वर नामक पुस्तक मिली। पढ़कर हृदय अत्यंत संतुष्ट और प्रसन्न हुआ। आपने आर्य साहित्य के प्रचार में अद्वितीय कार्य किया है। ईश्वर आपको स्वस्थ व दीर्घायु करें। श्री क्षितीश कुमारजी वेदालंकार को मेरी ओर से बहुत धन्यवाद कह दीजिए। उन्होंने बड़ा उपयोगी कार्य किया है। इस ग्रंथ का प्रचार हिन्दी भाषियों में तो घर-घर हो जाना चाहिए। मैं भी लोगों में इसे मंगाने का प्रचार करूंगा।

बहूरानी पण्डिता राकेशरानी को तथा बच्चों को हार्दिक आशीर्वाद।

बिहारीलाल शास्त्री बरेली

आदरणीय पंडितजी, सप्रेम नमस्ते।

ईश्वर वैज्ञानिकों की दृष्टि में के प्रकाशन के लिये आप और पं० क्षितीश कुमार वेदालंकार दोनों ही बधाई के पात्र हैं बहुत समय के बाद इतनी सुन्दर पुस्तक इस गम्भीर और आवश्यक विषय पर प्रकाशित हुई है। आस्तिक वाद का इससे अच्छा प्रमाण आज के वैज्ञानिक युग में नहीं हो सकता है आशा है आप इसे अच्छे कागज पर अलग से छापकर आर्य विचारधारा का प्रचार एवं प्रसार करने में सहायता करेंगे। प्रकाशन के लिये हार्दिक बधाई।

डा० कृष्णबल्लभ पालीवाल दिल्ली

आदरणीय बहन जी, सप्रेम नमस्ते,

यहां सब कुशल पूर्वक हैं और आपकी कुशलता की कामना करते हैं। इसी बीच आपके कई पत्र आये परन्तु मैं उनका उत्तर न दे सकी। आप वेद मन्दिर के शुभ निर्माण में लगी हैं इसे पढ़कर अत्यधिक खुशी होती है। ईश्वर करे आपको इतना साहस धैर्य तथा योग्यता प्रदान करे कि आप ऐसे पुण्य कार्य को पूर्ण करने में योग्यता प्रदान करे। एक एक ज्ञान दर्शन पुस्तक मेरे लिये बुढ़ाना भेज देना डा० भवानीलाल भारतीय द्वारा रचित एक योग दर्शन भी बुढ़ाना ही भेज देना।

जन-ज्ञान का ईश्वर विशेषांक मिला बहुत ही सुन्दर जिसे पढ़कर मन को अत्यधिक ज्ञान मिला और हृदय गद्गद् हो गया।

बालारानी बुढ़ाना

प्रिय सुमेधा जी, नमस्कार।

'जनज्ञान' मासिक का मार्च १९७८ विशेषांक मिला। अंक बहुत अच्छा बना है। विज्ञान के नाम पर अपने धर्म व ईश्वर पर अनास्था में गर्व कराने वाले लोगों को सम्यक् दृष्टि प्रदान कराने में यह बहुत मादक-कार्य करेगा ऐसा निश्चित है। बधाई।

विद्यार्थी परिषद कार्यालय अमृतसर

जीवन-ज्योति

—अशोक कुमार

मेरे प्रेरणास्त्रोत—

स्व० पं० राम नारायण शास्त्री

लेखनी सहसा ये शब्द लिखते हुए रोती है कि विहार के आर्य समाज के प्राण, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के स्तम्भ पं० राम नारायण शास्त्री जी अव इस संसार में नहीं रहे। लोग इन्हें आदर से शास्त्री जी कह कर पुकारा करते थे। अभी-अभी २३ नवम्वर को हुए पं० प्रकाशवीर शास्त्री संसद सदस्य की घातक मृत्यु के वार को आर्यसमाज वर्दाश्त नहीं कर पा रहा था कि सहसा एक और झटका लगा। २३ जनवरी को पं० रामनारायण शास्त्री की मृत्यु से आर्य समाज के दो स्तम्भ, विद्वान, हिन्दी साहित्य के अनन्य सेवक, भारतीय संस्कृति के महान् उन्नायक, सरस्वतीपुत्र, ओजस्वी वक्ता महज दो महीने के अन्दर हम संसार में अपनी कृति और स्मृति को छोड़कर चला जायेगा। यह कोई स्वप्न में भी नहीं सोचा था। आप दोनों ने आर्यसमाज के क्षेत्र में एक ओजस्वी वक्ता के रूप में अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त की थी।

लगता है अव आर्यसमाज के पतझड़ के दिन आ गये हैं। हमारे वीच से क्रमश: विद्वान् उपदेशक, कार्यकर्त्ता, पथ प्रदर्शक सभी निकलते जा रहे हैं। जिनकी न तो क्षतिपूर्ति ही हो पा रही है और न निकट भविष्य में इस रिक्तता की पूर्ति होने की कोई सम्भावना ही दीख पड़ रही है। सम्पूर्ण १९७७ एवं १९७८ का आरम्भिक काल आर्य जगत के लिये इतना महान् घातक सिद्ध होगा यह कभी सोचा भी नहीं था। पूज्य स्वामी सोमानन्द जी महाराज के मृत्योपरान्त लगभग एक वाढ़ सी आ गयी है। हमारे वीच से क्रमश: महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी, अमर कवि प्रकाशचन्द्र कविरत्न, स्वामी ब्रह्म मुनि परिव्राजक, पं० प्रकाशवीर शास्त्री एवं पं० राम नारायण शास्त्री जी के निधन ने तो लगभग आर्यसमाज को झकझोर सा दिया है। आज आर्यसमाज की मनोदशा एक घायल शिकार सदृश है जो शिकारी के पहले वार को अभी झेल ही नहीं पाया हो कि तत्क्षण उस पर दूसरा वार और फिर लगातार वार होता चला जाता है।

इन्हें नवयुवक हृदय सम्राट कहूं या आर्यजगत का प्राण कहूं, वक्तृतकर्त्ता का स्वामी कहूं या निरन्तर समाज सेवा में

रत तपस्वी कहूं। आपका जीवन त्याग तपस्या की शानदार मिसाल रही है। मेरी लेखनी में उतनी शक्ति नहीं की उस महान् आत्मा के प्रति कुछ लिख पाऊं। किसी ने ठीक ही कहा है कि —

बलिदानों का इतिहास नहीं,
काली स्याही लिख पाती है।
उसके लिखने के लिये सदैव,
खून की नदी बहायी जाती है॥

फिर भी उस महान् आत्मा के प्रति उसके ही द्वारा दी गयी लेखनी से कुछ शब्द लिखकर श्रद्धा के दो सुमन अर्पित कर रहा हूं जिसने मुझ जैसे एक साधारण आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता को अपना पुत्रवत् स्नेह और वात्सल्य प्रेम दे कर आर्यसमाज की बहुमुखी दिशाओं का यथावत् ज्ञान दिया था। तथा लेखन, भाषण, मंच संयोजन व एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में काम करने की कला उन्होंने ही सिखलायी थी। जब कि मेरे पिता श्री जनकलाल गुप्त जी ने मुझे आर्यसमाज की प्रारम्भिक शिक्षा दी थी। उनका जीवन त्रिवेणी का एक संगम था जहां धर्म, भारतीय संस्कृति और राजनीति की तीव्र धारायें आकर मिलती हैं।

आपका जन्म २४ जनवरी १९२५ को पटना जिलान्तर्गत मौकामा के चिन्तामणीचक ग्राम में पिता श्री लालजीत शर्मा के घर हुआ था। बिहार खेतिहर आन्दोलन के जन्मदाता स्वामी सहजानन्द सरस्वती के चरणों में प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा हुई तदोपरान्त गुरुकुल वैद्यनाथधाम में था। पं० महेश जी के आचार्यत्व में हुई। आप गुरुकुल के छात्र जीवन में ही १९४० के महान् क्रान्तिकारी नेता मानवेन्द्रनाथ राय के सम्पर्क में आये। एक तेजस्वी छात्र के रूप में १९४१ में गुरुकुल वैद्यनाथ धाम से शास्त्री की उपाधि प्राप्त की। १९४२ में गुरुकुल वैजनाथ धाम से विद्यारत्न एवं बिहार हिन्दी विद्यापीठ देवघर से साहित्य भूषण की उपाधि प्राप्त की। १९४२ में ही भारत छोड़ो आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया एवं जेल की यातनायें सहीं। अपने छात्र जीवन से ही आर्यसमाज, राष्ट्रसेवा व देश की स्वतन्त्रता संग्राम के कार्यकलापों में भाग लेना प्रारम्भ किया था। १९४३ में बंगाल संस्कृत एसोशिएशन में काव्यतीर्थ की परीक्षा पास करने के उपरान्त बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना में उपदेशक नियुक्त हुए तथा उपदेशक के रूप में बिहार एवं सम्पूर्ण भारतवर्ष के कोने-कोने में वेद प्रचारार्थ भ्रमण किया जो मृत्यु के पूर्व तक चलता रहा। इतना कार्यव्यस्त रहने के बावजूद भी इन्हें विद्या के प्रति असीम आसक्ति पुनः १९४६ में विहार संस्कृत समिति पटना से साहित्याचार्य की उपाधि प्राप्त थी। २१ जुलाई १९४८ को पटना निवासी श्री मोतीलाल आर्य जी की पुत्री श्रीमती ईश्वरी आर्याजी से विवाह हुआ। मन वचन कर्म से आर्य का परिचय तो उन्होंने अन्तर्जातीय विवाह करके दिया। १९५० में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा संचालित हिन्दी महाविद्यालय प्रयाग से साहित्यरत्न की उपाधि प्राप्त की। २ फरवरी १९५२ को बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के स्थापना काल से ही क्षेत्रीय कार्यकर्त्ता के रूप में सरकारी सेवा पर कार्यारम्भ किया। आगे चलकर परिषद् के क्षेत्रीय अनुसंधान

पदाधिकारी और निर्देशक नियुक्त होकर आपने आर्यसमाज के साथ ही साथ राष्ट्र भाषा हिन्दी की जो सेवा की है उसे राष्ट्र कदापि भुला नहीं सकेगा। आप हस्तलिखित पांडुलिपियों के संशोधन के विशेषज्ञ माने जाते थे। प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थशोध विभाग के प्रभारी के रूप में आपने छः खण्डों में प्राचीन हस्त-लिखित पोथियों का विवरण, श्री हरि-चरित्र, राम जन्म संतर्काव, दरिया ग्रन्थावली, संतमत सरगम, सम्प्रदाय आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन किया। राष्ट्रभाषा परिषद् से १२ खण्डों में प्रकाशित होने वाला बिहार के साहित्यिक इतिहास के निर्माण में आपकी सेवायें स्मरणीय रहेगी। आप ऐसे साहि-त्यकार थे जिन्होंने साहित्य का बुनियादी कार्य किया। भाषा परिमार्जन और संगठन के माध्यम से हिन्दी की सेवा की परिषद् के गठनकाल से ही अब तक इनके माध्यम से हिन्दी की और सेवायें की वह स्तुत्य हैं।

लगातार १९५६ से १९५९ तक आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के मन्त्री पद पर रहे। बिहार आर्यप्रतिनिधि सभा बिहार के उप प्रधान तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के उपमन्त्री एवं सदस्य के रूप में कई वर्षों तक रहे। उस समय इन्होंने हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में भाग लिया। १९५८ में पंजाब हिन्दी रक्षा आन्दोलन में पं० प्रकाशवीर शास्त्री का सहयोग कंधा से कंधा मिलाकर दिया शास्त्री जी के इस आन्दोलन में कार्य को देखकर बहुतों ने बिहार के आर्यसमाज को पं० रामनारायण शास्त्री के नाम से जाना जिसने बिहार के आर्यसमाज का अलख देश के कोने-कोने में जगाये रखा। १९६१ के पटना आर्य महासम्मेलन की सफलता का सारा श्रेय इन्हीं को जाता रहा।

१९६२ में कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय दरभंगा से पाली साहित्य में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। १९६३ में पटना मण्डल के आयुक्त द्वारा आयोजित प्रशिक्षण केन्द्र में 'हिन्दी प्रशिक्षक के रूप में भाग लिया। १९६९ में आगरा विश्व विद्यालय के भाषा ज्ञान विद्यापीठ से भाषा सर्वेक्षण प्रशिक्षण लिया। भागलपुर विश्वविद्यालय बिहार के पी० एच० डी० के शोध प्रवन्धक के परीक्षक नियुक्त हुए।

आप जन्मजात नेता, राष्ट्रभक्त हिन्दी सेवक, आर्यसमाजी थे। आपका समस्त जीवन, जींवन का एक-एक क्षण आर्ससमाज को अर्पित था। आप उन आर्यसमाजियों में से थे जिनकी काया के कण-कण में आर्यसमाज एवं समाज सेवा समाया हुआ था। आपने आर्यसमाज सेवा और हिन्दी साहित्य कीं सेवा का जो व्रत लिया था उसे आपने पूरी शान से अपने जीवन के अन्तिम समय तक निभाया। आर्यसमाजी टकसालों से निर्मित सिक्के अपनी चमक नहीं खोते हैं। उसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमें शास्त्री जी के जीवन में देखने को मिलता है।

भगवान ने जितना छोटा कद दिया था उतना ही अधिक साहस, और उत्साह दिया था। छोटा सा कद, दुबला पतला शरीर, सिर पर साफा न लम्बी-लम्बी

मूछें परन्तु शेरों जैसी ऊंची आवाज। उनकी भाषण प्रतिभा पर बड़े-बड़े विद्वान अचम्भित रह जाते थे। जनता पर कन्ट्रोल करने में यह छोटा-सा व्यक्तित्व बड़ा ही प्रभावशाली था अपनी ओजस्विकता और वक्तृत कला से सारी सभा को बांधकर रखना इनकी खास विशेषतायें थीं। क्या मजाल था कि इनके भाषणक्रम में एक भी श्रोता उठकर चला जाये।

जब भारत के प्रान्त-प्रान्त में आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह मनायी जा रही थी और यह विशाल प्रान्त बिहार जो सदैव ही सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक चेतना की प्रसार भूमि रही हो, मौनव्रत लिये चुप थी। उस समय शास्त्री जी ने ही बरौनी में बिहार प्रान्तीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दीसमारोह करने का भार अपने दुर्बल कंधों पर उठाया था और बिहार की भूमि पर शताब्दी समारोह की धूम मचाई थी। उस सम्मेलन के अधिकारी के रूप में मुझे उनकी गौरव गरिमा एवं कार्य संचालन को निकट से देखने का अवसर मिला था। शास्त्री जी अपने दुर्बल शरीर के साथ ही मधुमेह, रक्त चाप, हृदयरोग आदि विभिन्न रोगों के शिकार थे। परन्तु अपने जीवन की परवाह किये बिना समारोह की सफलता में दिन रात व्यस्त रहते थे। जिसके फलस्वरूप पूर्णत: शारीरिक एवं मानसिक क्षीणकाय हो चुके थे। फिर भी हम लोगों को संघर्ष एवं संकल्प की शिक्षा दे रहे थे। मानों वह बड़े से बड़े कष्ट में भी हम लोगों को कर्त्तव्य पथ से विचलित न होने का पाठ पढ़ा रहे थे। किसी भी कार्यकर्त्ता में क्या शक्ति है वह क्या कर सकता है किसके लिये क्या-क्या सहायता एवं प्रोत्साहन दी जाय इसका सही मूल्यांकन शक्ति आपके अन्दर थी। किसी व्यक्ति को अपना बनाना या उसके अनुकूल अपने को बदलना शास्त्री जी का महान् गुण था।

यह थी उनकी विभिन्न समारोहों व आन्दोलनों के संयोजन व नेतृत्व करने की कार्यक्षमता। इस प्रकार बरौनी शताब्दी समारोह की सफलता के उपरान्त दानापुर एवं पटना में शताब्दी समारोह करवाकर बिहार के आर्यसमाज को एक प्रकाश दिया था।

अब हमारे समक्ष ऐसे अनेक अवसर आऐंगे जबकि आर्यसमाज व हिन्दी साहित्य को उनका अभाव खटकेगा। आप एक कुशल संगठक व प्रवन्धक थे। वस्तुत: आप अपने आप में एक संस्था थे जिनका सम्बन्ध विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, शैक्षणिक सांस्कृतिक व राजनैतिक संस्थाओं से था। जिनकी उन्नति में आप सदा अग्रसर रहते थे। आप हिन्दी राष्ट्रभाषा परिषद, आर्यसमाज, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, जनसंघ, जनता पार्टी, विद्यार्थी परिषद्, छात्र संघर्ष समिति, छात्र संघ, सरस्वती शिशु मन्दिर तथा अनेकानेक विभिन्न संस्थाओं से सम्बन्धित रहकर पटना की जनता की जो सेवाएं की हैं वह उन लोगों को भलीभांति ज्ञात है जिनका सम्पर्क पटना से रहा है। बिहार में जनसंघ के स्थापना काल में गठित प्रथम बिहार प्रादेशीय जनसंघ कार्यकारिणी समिति के सदस्य निर्वाचित हुए थे। बिहार में आर्यवीर

दल तथा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संस्थापक सदस्य थे। सरकारी सेवा में रहने के बावजूद भी आपने लोकनायक जयप्रकाश नारायण के सम्पूर्ण क्रान्ति में केवल भाग ही नहीं लिया अपितु इनका सम्पूर्ण परिवार भूमिगत नेताओं के भोजन व आवास तक की व्यवस्था करता था। कई बार सरकारी छापे भी इनके घर पर पड़े थे। परन्तु इन सारे कार्यों से ये कभी विचलित नहीं हुए थे।

आपके लिये क्या-क्या कहा जाय और क्या-क्या लिखा जाय। कुल मिला कर कम ही होंगे। जीवन को अधिकाधिक दूसरों के लिये उपयोगी बनाये रखना उनके जीवन की अनूठी उपलब्धि थी। आप अपने लिये नहीं अपितु दूसरों के लिये जिये। ऐसे लोग तो आज खोजने पर भी नहीं मिलेंगे जो दुनिया भर का काम करे और अपने परिवार के लिए कुछ न करे। तभी तो वे अपने परिवार के कार्य से ज्यादा महत्व दूसरों के कार्यों के सम्पादन करने में ही व्यतीत करते थे। सभी के लिये आपका तन, मन, धन परिवार. पर हमेशा खुला था। इसका पता तो इसी बात से चलता है कि मरने की रात्रि में भी लगभग १० बजे तक दूसरों के कार्यों में व्यस्त थे। शास्त्री जी प्राय: कहा करते थे कि—"**व्यक्ति का शरीर दूसरों की मदद करने के लिये मिला है। अपना-अपना निजी कार्य तो प्रत्येक मनुष्य करता है। जो दूसरों के दुखों को समझ कर उसके दुःख में मदद कर सके वही मनुष्य सच्चा मनुष्य है।**"

१५ जनवरी १९७८ को बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् पटना के निदेशक के रूप में पदभार ग्रहण किया था। अभी आपके निर्देशक पद की स्वीकृती की स्याही भी नहीं सूख पायी थी कि २३ जनवरी १९७८ की धुंध और कोहरे में डूबी अंधेरी वह काली रात जिसमें प्रात: होने के पूर्व ही हम लोगों के लिये रात बन गयी जिसने हम से हमारे प्यारे शास्त्री जी को छीनकर सदा-सर्वदा के लिये काल के ग्रास में दे दिया और वह शमां सदा-सदा के लिये बुझ गई। जो अपने आतंक से पटना वासियों को लगातार आतंकित कर रही थी। वह शेर जो कभी घन्टों दहाड़ा करता था आज मौन साधे अपने महा प्रयाण की ओर प्रशस्त हो रहा था।

आपका जन्म ठीक आज से ही ५२ वर्ष पूर्व आज के ही दिन हुआ था। इनके निधन से हिन्दी का एक साहित्यकार, निष्ठावान, समाज सेवी देश का महान् आर्यवीर, हिन्दी प्रेमी, समाज सेवक समर्पित राष्ट्र भगत उठ गया वे आर्य समाज के सबल स्तम्भ थे। उनके निधन से समाज की एक बहुमूल्य निधि खो गयी है। आप आर्यसमाज कें गगनमंडल के उन चमकते नक्षत्रों में से एक हैं। जिनकी आभा से आर्य समाज का गगन मंडल देदीप्यमान हो रहा है और भविष्य में भी होता रहेगा। वे हमारे दिलों पर जो यादगार छोड़ गये हैं वह कभी मिट नहीं सकेगी। अब उनका पार्थिव शरीर हमारे बीच में नहीं रहा परन्तु उनकी सुकृति का पुतला सदैव हमें प्रेरणा देता रहेगा। आप जैसे महान् त्रिभूमि के गुणों और कार्यकलापों को इन दो

चार पृष्ठों में समेटा नहीं जा सकता है जिन्होंने अपना होश सम्भालते ही अपना सर्वस्व आर्यसमाज, हिन्दी साहित्य समाज सेवा के लिये न्योछावर कर दिया। उनका निर्वाण ही महोत्सव है। किसी के शब्दों में—

शहीदों की चिताओं पर,
लगेंगे हर बरस मेले।

वतन पै मरने वालों का
यही बाकी निशाँ होगा॥

इस तरह शास्त्री जी के निधन से वस्तुतः एक युग का अवसान हुआ है। आर्यसमाज और हिन्दी साहित्य की जो अप्राणीय क्षति हुई है उनकी पूर्ति निकट भविष्य में हुई असम्भव-सी प्रतीत होती है। परम पिता परमात्मा उनकी दिवंगत आत्मा को परम शान्ति प्रदान करे यही मेरी कामना और प्रार्थना है। इनके बचे शेष कार्यों को यदि हम सब पूरा कर सकें तो उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि हो सकेगी।

गुरुकुल कांगड़ी बचाओ !

गुरुकुल कांगड़ी बचाओ, यह हमारी मांग हैं। हमें संस्थान के अध्यक्ष का आदेश हुआ है कि हम भविष्य में किसी के भी विरोध में कुछ न लिखें। इसलिए इस समस्या का विश्लेषण न करते हुए हम केवल यह प्रार्थना करते हैं कि गुरुकुल को बचाओ !

गुरुकुल कांगड़ी बचना चाहिए, अन्यथा कुछ भी न बचेगा। इस सम्बन्ध में अच्छा यही है कि सब कुछ गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक मण्डल को सौंप दिया जाए।

वहां जो कुछ हो रहा है वह शर्मनाक है। प्रत्येक आर्य के लिए यह एक चुनौती है। अनशन हुआ, मोरार जी बीच में पड़े, पर सब व्यर्थ हुआ।क्या सारा आर्य जगत् श्रद्धानन्द की फुलवारी को जलने देगा ? क्या यह हमारे लिए डूब मरने की बात नहीं होगी ? अपना कर्त्तव्य स्वयं सोचिए।

आवश्यकता पड़ी तो सारे देश के लाखों व्यक्ति वहां एक साथ इकठ्ठे होकर गुरुकुल की व्यवस्था गुरुकुल के स्नातकों को सौंपने पर विचार करेंगे।

१२५) सैकड़ा : सत्यार्थ-प्रकाश मंगाएं

जो भी सत्यार्थ-प्रकाश का प्रचार चाहें और यह प्रण करें कि वे मुनाफा नहीं लेंगे, उन्हें १२५) सैकड़ा में सत्यार्थ-प्रकाश भेजेंगे। १०० से अधिक नहीं मिलेगा।

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

सुन्दर फरनीचर का प्रगतिशील नाम

डिलाईट

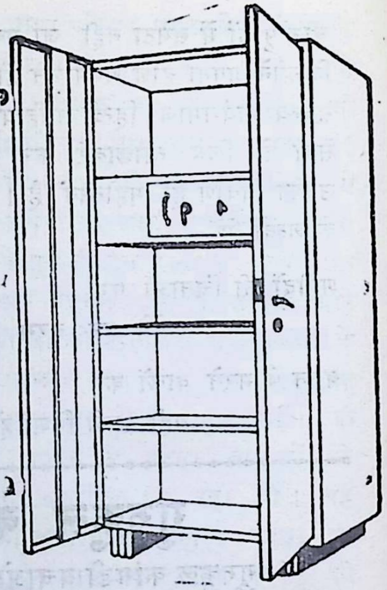

वर्षा उपवन व और कार्यकुशलता के कारण आज डिलाईट पक्की अलमारियां और फर्नीचर सारे भारत में प्रसिद्ध हैं क्योंकि यह देखने में सुन्दर, मजबूत टिकाऊ और पक्के रंगों में उपलब्ध हैं। मकान हो या घर, विवाह हो या कोई शुभ अवसर, यह सबकी शोभा बढ़ाता है।
आप भी आज डिलाईट फरनीचर खरीद कर अपने घर, आफिस व दुकान की शोभा बढ़ावें और आनन्द पावें।

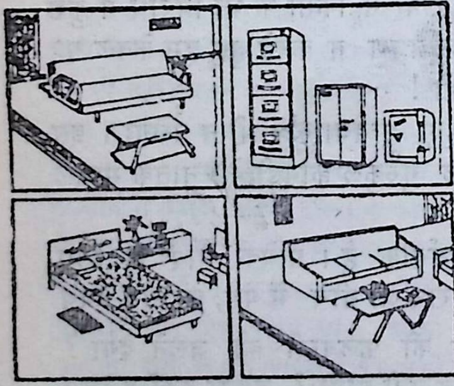

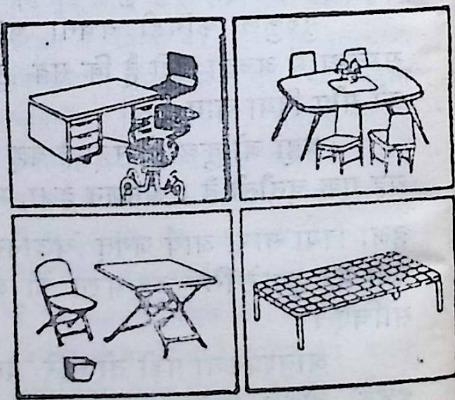

डिलाईट सेफ वक्स

कुतुब रोड, दिल्ली-६. फोन 511380

विक्रेता

१. कार्टेज स्टोर, २० विनय नगर मार्कीट, नई दिल्ली।
२. काश्मीर क्राकरी हाऊस, लक्कड़ बाजार, लुधियाना।
३. मित्तल ब्रादर्स, सिरकी बाजार, भटिण्डा। ४. निहालचन्द गोपालदास, अबोहर।
५. महेन्द्रा ब्रादर्स, कोर्ट रोड, मोगा।
६. जेम सेल्स कार्पोरेशन, सेक्टर ७-सी दु० नं० ३०, मध्य मार्ग, चण्डीगढ़।
७. हरयाणा आयरन एण्ड स्टील इण्डस्ट्रीज, बाजार हिसारिया, सिरसा।
८. लीला इलैक्ट्रिक कं०, ७० कोतवाली रोड, श्री गंगानगर (राज०)।
९. राणा इण्डस्ट्रीज, लाडपुरा बाजार, कोटा (राज०)।
१०. आदर्श इलक्ट्रिक एण्ड जनरल सप्लायर्ज, नैकोली, नीमच (म० प्र०)।
११. ओवरसीज ट्रेड एजेन्सीज, केसरगंज, अजमेर।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार की
औषधियां प्रयोग करें

गुरुकुल कासारि

खांसी की अपूर्व गुणकारी औषधि

उपयोग किसी भी कारण से हुई खांसी, नजला, जुकाम आदि में लाभदायक है। सेवन विधि दिन में तीन बार छोटी चम्मच लेकर उंगली से चाटें।

आंखों के अनेक रोगों के लिए

भीमसेनी सुरमा

चयवनप्राश

उत्तम स्वादिष्ट रसायन
शरीर को बलिष्ठ और कान्तिमय बनाता।

**शारीरिक क्षीणता एवं फेफड़ों के लिए प्रसिद्ध
आयुर्वेद रसायन**

पो. गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (सहारनपुर)

**शाखा कार्यालय—६३, गली राजा केदारनाथ
चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६ फोन नं० २६१४३७**

दिल्ली में जनता प्रशासन :

प्रमुख उपलब्धियां

ग्रामीण विकास : १.४५ करोड़ रुपये तकावी वितरित।

* पीने के पानी की योजना ४५ लाख रुपये।
* ९२ ट्यूबवैल कनैक्शन दिये गये : ५०० शीघ्र दिये जायेंगे।

हरिजन कल्याण : हरिजनों को छात्रवृत्तियां : ७०.५० लाख रुपये।

* हरिजनों को मकान बनाने के लिए अनुदान : २४.५० लाख रु०।
* हरिजन छात्र-छात्राओं के लिए छात्रावास : मुफ्त आवास तथा भोजन।

श्रम कल्याण : श्रमिक वर्ग के ट्रेड युनियन अधिकारों की बहाली।

* औद्योगिक शान्ति : उत्पादन में वृद्धि।
* श्रमजीवी वर्ग की शिकायतों के शीघ्र निपटान की व्यवस्था।
* श्रमिकों के लिए मनोरंजन के साधनों में वृद्धि : अधिक श्रमिक गृहों की स्थापना।

शिक्षा : १६,५०० छात्रों के लिए तकनीकी शिक्षा प्रशिक्षण।

* निर्धन छात्र-छात्राओं को मुफ्त वर्दियां तथा पुस्तकें।
* ५७.७३ लाख रुपये की छात्रवृत्तियां।
* १००० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापनाधीन।

चिकित्सा : शाहदरा तथा हरिनगर में ५००-५०० बिस्तरों के दो अस्पताल : २२ करोड़ रुपये;

* आधुनिक नेत्र अस्पताल के लिए एक करोड़ रुपया।
* देहाती क्षेत्रों में १००-१०० बिस्तरों के सात अस्पताल व १८ डिस्पैंसरियां।

उद्योग : अनधिकृत क्षेत्रों में २४,००० औद्योगिक इकाइयों के लिए लाइसैंस।

* ५.२४ करोड़ रुपये की लागत से टूल-रूम तथा प्रशिक्षण केन्द्रों का निर्माण।
* नरेला में ६२० एकड़ क्षेत्र में औद्योगिक बस्ती की योजना तैयार।
* २८ सामुदायिक विकास केन्द्र : ५,६०० व्यक्तियों को रोजगार।

आवास : गृह निर्माण के लिए आवास बोर्ड बनाने का निर्णय।

* प्रति वर्ष एक लाख मकानों के निर्माण का लक्ष्य।
* पुनर्वास कालोनियों में बिजली के कनैक्शन तथा अतिरिक्त सुविधाएं।
* चार साल में पूर्ण नशाबन्दी : प्रथम चरण आरम्भ।

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रसारित

समाज-व्यवस्था

ओ३म्

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित

समाज-व्यवस्था

लेखक

डॉ० प्रशान्त कुमार वेदालंकार

एम० ए० पी-एच० डी०

हंसराज महाविद्यालय

(दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली)

प्रकाशक

दयानन्द संस्थान

वेद मन्दिर दिल्ली-३६

प्रकाशक

पंडिता राकेश रानी अध्यक्ष

दयानन्द संस्थान वेद मन्दिर

दिल्ली-३६

दूरभाष ऽ ८०१२२१

दिल्ली कार्यालय—

दयानन्द संस्थान, १५६७, हरध्यान सिंह मार्ग,

करौल बाग नई दिल्ली।

दूरभाष : ५६६६३९

मूल्य

10.00 रुपये पुस्तकालय संस्करण

संपादक

सुमेधा

लेखक

डॉ० प्रशान्त कुमार वेदालंकार,

प्रथम संस्करण : चैत्र सुदि प्रतिपदा संवत् २०३५

मुद्रक

भाटिया प्रेस,

गुरुनानक गली, गांधीनगर, दिल्ली-110031

प्राक्कथन

अनेक बार इस विषय पर विवाद होता देखा गया है कि महर्षि दयानन्द धार्मिक क्षेत्र के महापुरुष थे या समाजोद्धारक नेता ? किन्तु जिन्होंने महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व व कृतित्व का गहन अध्ययन किया है वे जानते हैं कि यह विवाद निरर्थक है । क्योंकि महर्षि दयानन्द के मत में सच्चे धर्म में समाजोत्कर्ष की क्षमता होती है । और समुन्नत समाज सदा धर्म की पवित्र भावनाओं से अनुप्राणित होता है। सच्चा धार्मिक व्यक्ति ही समाज की सेवा करने व उस में व्याप्त कुरीतियों को नष्ट करने की क्षमता रखता है। दूसरी ओर सच्चा समाज-सुधारक अनिवार्यतः एक धार्मिक पुरुष होगा । धर्म ही उसे निःस्वार्थ रूप से समाज सुधार की प्रेरणा व शक्ति देता है। धर्म और समाज में कार्य विरोध नहीं है । वस्तुतः महर्षि दयानन्द धार्मिक और सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों के विचारक व उद्धारक महापुरुष थे ।

प्रस्तुत पुस्तक में महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित समाज व्यवस्था का प्रतिपादन है । महर्षि द्वारा प्रतिपादित सम्पूर्ण समाज व्यवस्था वर्णाश्रम धर्म पर अवलम्बित है । पुस्तक में तीन अध्याय हैं—(१) वर्ण-व्यवस्था (२) आश्रम व्यवस्था । (३) गृहस्थाश्रम व नारी । गृहस्थाश्रम विषयक अधिक सामग्री होने तथा महर्षि की नारी विषयक धारणा का विस्तार पूर्वक विवेचन करने के कारण यह तीसरा अध्याय निर्मित हुआ है । यों भी गृहस्थाश्रम के सभी आश्रमों में ज्येष्ठ (महत्वपूर्ण) होने तथा नारी के के समाज का अर्द्धांग होने के कारण इनके लिए एक पृथक् अध्याय अपेक्षित था ।

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित समाज व्यवस्था का अध्ययन करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यदि इस व्यवस्था का आधुनिकीकरण कर के इसे वर्तमान भारत पर लागू कर दिया जाये तो वर्तमान काल के इस अराजक युग में भी यह सामाजिक उत्कर्ष करने में सफल सिद्ध होगी ।

वर्तमान काल की मूल समस्या है—व्यक्ति की भोगों के प्रति अमिट पिपासा । अनन्त भोग करने के उपरान्त भी वह अतृप्त रह जाता है । भोग की असीम वृत्ति का ही यह दुष्परिणाम हुआ है कि अपनी भूख को को शान्त करने के लिए उसने अपने सजातीय मनुष्य-बन्धु के ही कौर को छीनकर उसे भूख से बिलखने के लिए छोड़ दिया है । इस दुष्वृत्ति के ही कारण एक ओर मनुष्य समाज में भयंकर आर्थिक असमानता है तथा दूसरी ओर उसमें घोर मानसिक अशान्ति उत्पन्न हो गई है ।

महर्षि दयानन्द ने मुख्य रुप से आश्रम व्यवस्था द्वारा और गौण रूप से वर्ण व्यवस्था में भी इसी समस्या पर विजय प्राप्त की है। आज आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए मनुष्य की अधिकृत सामग्री कानून द्वारा नियन्त्रण की चर्चा की जाती है। किन्तु आश्रम व्यवस्था में व्यक्ति के भोग के काल को सीमित करके इस समस्या को हल किया गया है। यदि मनुष्य की भोग की वृत्ति नष्ट न हुई तो सौ कानूनी नियन्त्रण भी उसे भोग से रोक नहीं सकते। वह चोरी व धूर्तता से भोग करने की पद्धति का आविष्कार कर लेगा। आश्रम प्रणाली में व्यक्ति के भोग का काल २५ से लेकर ५५-६० वर्ष तक की आयु तक निर्धारित करके प्रत्येक को इस आयु में भोग करने के अवसर प्रदान करने की योजना बनाई है। ५५-६० वर्ष की आयु के उपरान्त व्यक्ति भोग करने की शक्ति नहीं रहने पर भी वर्तमान दूषित समाज व्यवस्था के कारण वह उनके चिपटा रहता है। उसका दु:खी मन कुछ और अधिक असमानता में दूसरी और उसके शारीरिक मानसिक ह्रास के रूप में दिखलाई देता है। इसके विपरीत आश्रम प्रणाली के अनुसार इस आयु में सभी मनुष्य संसार का त्याग करके अपने शारीरिक व मानसिक सामर्थ्य की न केवल रक्षा करते हैं, वरन् उसमें वृद्धि भी करते हैं। घर, परिवार व संसार को छोड़ने से सांसारिक समस्याएँ अत्यन्त न्यून हो जाती हैं। वेकारी की समस्या उत्पन्न नहीं होती। मकान की समस्या का समाधान हो जाता है। जल की कमी व वायु प्रदूषण वर्ण की समस्या तब नहीं रहती। व्यक्ति द्वारा भी श्रम से अर्जित धन उन्हें पूरा हो जाता है।

घर बार छोड़कर वनों और पर्वतों की उपत्यकाओं में या नदी के तट पर सादे घर व आश्रम बनाकर रहने से वे एक ओर सांसारिक कलह से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। तथा दूसरी ओर समाज व राष्ट्र के लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य का सम्पादन करते हैं। वह महत्वपूर्ण कार्य है—राष्ट्र के प्रत्येक बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा। इनके पास ८-१० वर्ष के बालक-बालिकाएं आ आकर २४-२५ वर्ष की आयु तक अध्ययन करते हैं। बालक का शिक्षा काल तक घरेलू व सांसारिक भोगमय दूषित वातावरण से दूर रहना उनके शारीरिक, बौद्धिक व मानसिक विकास के लिए आवश्यक है। इन आश्रमों में व्यय अत्यन्त न्यून होता है। अपनी आवश्यकता की वस्तुयें, मकान और वस्त्र का वे स्वयं उत्पादन करते हैं, और आवश्यकता होने पर अपने घरों व समाज तथा राष्ट्र से अनुदान के रूप में भी प्राप्त करते हैं। आश्रम-व्यवस्था वानप्रस्थियों (वृद्धों) और ब्रह्मचारी और (विद्यार्थियों) को बिना श्रम के आहार करने की आज्ञा नहीं देती वरन इन आश्रमों (शिक्षालयों) को आत्मनिर्भर होने का संदेश देती है। आश्रम प्रणाली में प्रत्येक बालक का घर छोड़कर गुरु के कुल में निवास करके शिक्षा प्राप्त करना अनिवार्य है।

महर्षि दयानन्द वर्णव्यवस्था जन्म पर आधारित न मानकर के गुण व कर्म पर आधारित मानते हैं। उनकी व्यवस्था है कि उक्त गुरुकुलों में सभी वर्गों और वर्णों के

बालक-बालिकाएँ आ आकर समान रूप से अध्ययन करें। उनके वस्त्र, निवास स्थान व भोजन पूर्णतः साध्य हों। २५-३० वर्ष की आयु तक समान वातावरण में अध्ययन करने के उपरान्त जो बालक जो योग्यता प्राप्त करे उसी के अनुसार उसे वर्ण मिले। आज हमारे देश में जाति और वर्णों की समस्या अत्यन्त भयानक रूप से समुपस्थित है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के ३० वर्षों के उपरान्त की इस समस्या का कुछ भी समाधान नहीं हो सका है। यदि हम महर्षि की व्यवस्था के अनुसार अछूत कही जाने वाली प्रत्येक जाति के बालकों की शिक्षा की सुव्यवस्था कर सकें तो यह समस्या स्वतः ही समाप्त हो जाएगी। अछूत समस्या का अब तक समाधान न होने का एक बहुत बड़ा कारण है अब तक उनके लिए किसी सुन्दर वातावरण में शिक्षा की व्यवस्था का न होना है।

आज हरिजन समस्या का समाधान उन्हें विशेषाधिकार देकर किया जाता है। महर्षि के मन में हरिजनों के लिए विशेषाधिकार में सर्वोत्कृष्ट पद्धति उनकी सन्तान को किसी शुद्ध वातावरण में शिक्षा प्रदान करने के रूप में थी। यदि हरिजन बन्धु पूर्ण रूप से शिक्षित हो जाएं तो तथाकथित सवर्णों के मन में उनके प्रति घृणा की भावना का कोई मूल्य नहीं रह जाता। सांसारिक भाषा का प्रयोग करूं तो ऐसी की ऐसी सवर्णों की हरिजनों के शिक्षित हो जाने पर घृणा उन्हें ही खा जाएगी। यहां यह उल्लेखनीय है कि वर्ण व्यवस्था के जन्म पर आधारित न होने तथा कार्य व गुण पर आधारित होने के कारण विशेषाधिकारों का उपयोग उन लोगों के लिए वंचित होना चाहिए जो गत एक-दो पीढ़ियों से समुन्नत हो चुके हैं। महर्षि द्वारा प्रतिपादित वर्ण-व्यस्था का स्वरूप ही हरिजन समस्या का समाधान कर सकता है।

यही स्थिति स्त्रियों के विकास की है। उनके लिए भी अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करके, उनका उत्कर्ष करना आवश्यक है। स्त्री व गृहस्थाश्रम के प्रसंग में महर्षि दयानन्द ने परदा, दहेज आदि कुरीतियों को दूर करने आदि प्रश्नों के साथ गृहस्थ में भी ब्रह्मचर्य धारण करने का परामर्श देकर प्रकारान्तर से परिवार नियोजन की समस्या का भी समाधान प्रस्तुत किया है। महर्षि यह भी चाहते थे कि उत्पन्न प्रत्येक बालक का विकास समान रूप से हो। इसके लिए उन्होंने धनी परिवार की स्त्रियों को गरीब परिवार की धायी रखने का परामर्श दिया है। धाय को सब प्रकार के उत्कृष्ट व पौष्टिक भोजन देने का भी उन्होंने निर्देश दिया है। इससे धनी परिवार की स्वास्थ्य सुरक्षा के साथ धात्री व उसके बच्चों को पोषक आहार और आवश्यकता पढ़ने पर उपहार देने की भी व्यवस्था कर दी है। बाल विवाह का विरोध करके तथा विधवा विवाह का समर्थन करके उन्होंने स्त्री जाति के अभिशप्त जीवन से मुक्ति प्रदान की है।

आज के इस संक्रान्ति काल में देश के सामाजिक व राजनीतिक नेता किसी

सुविचारित समाज व्यवस्था के अभाव में चिन्तित प्रतीत होते हैं। मैं उनको महर्षि की इस व्यवस्था पर निष्पक्ष रूप में विचार करने के लिए यह पुस्तक देता हूँ। इस व्यवस्था का आधार वेद व वेदों पर आधारित वैदिक साहित्य में उल्लिखित समाज व्यवस्था ही वैदिक ऋषियों और मनीषियों ने संसार का भोग करने के उपरान्त निर्द्वन्द्व वातावरण में बैठकर यह वैज्ञानिक व्यवस्था प्रस्तुत की थी। मुझे विश्वास है कि इस व्यवस्था के मूल सिद्धान्तों के आधार पर बनायी गयी व्यवस्था आज की पूर्ण रूप से उपयोगी सिद्ध होगी।

अपने पाठकों के हाथ में यह प्रस्तुत करते हुए मैं यह चाहता हूं कि वे केवल ज्ञानवृद्धि की दृष्टि से इसका पारायण न करें। वरन् वर्तमान काल में इस व्यवस्था को लागू करने की सम्भावनाओं पर विचार करने की दृष्टि से इसका अध्ययन और मनन करें। यदि वे इस पुस्तक के पढ़ने से उत्पन्न प्रश्नों व समस्याओं पर मुझसे विचार विमर्श करेंगे तो मुझे बहुत अधिक प्रसन्नता होगी।

—डा० प्रशान्तकुमार वेदालंकार

१-१-२०३५

[सदस्य महानगर परिषद्]

[७२ रूपनगर दिल्ली]

१

वर्ण-व्यवस्था

—दयानन्द ने अस्पृश्यता व अछूतपन के अन्याय को सहन नहीं किया और उनसे अधिक उनके अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक दूसरा कोई नहीं हुआ।

—रोम्यां रोला (फ्रेंच लेखक)

—आर्यसमाज के प्रवर्त्तक वर्तमान जाति-भेद की पूर्णता और उनकी हानियों के विरुद्ध अपने अनुयायियों को तैयार करने के अतिरिक्त और कुछ भी न करते तो भी वह भारत के बड़े नेता के रूप में अवश्य सम्मान पा जाते। —प्रो. डॉ. विण्टरनिट्ज़

कुछ पाश्चात्य और उनके अनुकरण पर कुछ भारतीय विद्वानों ने भारतीय वर्ण-व्यवस्था को गलत रूप में प्रस्तुत कर उसका भयंकर रूप से विरोध किया है। वस्तुतः इसमें दोष उन विद्वानों का ही नहीं है। मध्यकाल से हमारे ही देश में भारतीय संस्कृति की अनेक स्वस्थ परम्पराओं में जो दोष उत्पन्न हुए उनमें वर्ण-व्यवस्था भी बच न सकी। विशेष रूप से हमारे देश के ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए वर्ण-व्यवस्था को जन्म पर आधारित करके उसका स्वरूप विकृत कर दिया था। भारतीय संस्कृति के उपासक अनेक महापुरुषों ने भी वर्ण-व्यवस्था के उस विकृत अंश पर प्रहार किया है। साथ ही उन्होंने वर्ण-व्यवस्था के ठीक स्वरूप को हमारे सम्मुख रख कर उसको फिर से जीवन में अपनाने की प्रेरणा भी प्रदान की है। पाश्चात्य विद्वानों ने जानबूझ कर अथवा अज्ञानवश प्राचीन वैदिक साहित्य को पढ़कर भी उसको ठीक रूप में प्रस्तुत नहीं किया। उन्होंने भारतवर्ष के लोगों में परस्पर फूट उत्पन्न करने के लिए कभी शूद्रों को तो कभी द्राविड़ों को इस देश का मूल निवासी बताया तथा आर्यों को बाहर से आया सिद्ध किया। आजकल कम्युनिस्ट भी दलित वर्ग में इस प्रकार के विचारों को फैलाकर उनमें द्वेष के बीज बो रहे हैं।

वर्ण-व्यवस्था की ठीक व्याख्या करने वालों में महर्षि दयानन्द सरस्वती का नाम सर्वोपरि है। उन्होंने न केवल ज्ञान के विस्तार की दृष्टि से भारतीय समाज की इस व्यवस्था की ठीक प्रकार से व्याख्या की, वरन् इसके आधार पर वर्तमान समाज का सर्वांगीण विकास भी करना चाहा।

वर्ण-व्यवस्था पर सबसे बड़ा आरोप है कि यह मनुष्य की मनुष्य से भेदबुद्धि उत्पन्न करता है। दयानन्द सबसे पूर्व इसी आरोप पर प्रहार करते हैं। उनका कहना है कि यह विशेष जानना चाहिए कि प्रथम मनुष्य जाति सबकी एक है, सो भी वेदों से सिद्ध है।[1] दयानन्द ने सृष्टि-विद्या विषय में मनुष्यमात्र को एक ही परमात्मा से उत्पन्न बताया है।[2] किन्तु अपने-अपने कर्मों के कारण मनुष्यों के स्वभाव, रुचि और योग्यता में भेद उत्पन्न हो जाता है। इस भेद के कारण मनुष्यों के दो वर्ग हैं—एक आर्य और दूसरा दस्यु। इस सम्बन्ध में उन्होंने कई प्रमाण उपस्थित किये हैं। दयानन्द का कथन है कि **"ये विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवो"** (ऋ० १/५१/८) आदि मन्त्र से परमेश्वर उपदेश करता है कि जीव तू आर्य अर्थात् श्रेष्ठ और दस्यु अर्थात् दुष्ट स्वभाव-युक्त डाकू आदि नामों से प्रसिद्ध मनुष्यों के ये दो भेद जान ले। इसी प्रकार **"उत शूद्रे उत आर्ये"** (अथर्व० १६/६२/१) आदि मन्त्र से भी आर्य—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और अनार्य अर्थात् अनाड़ी, जो कि शूद्र कहाते हैं—ये दो भेद जाने गये हैं। **'असुर्या नाम ते लोका:** (यजु० ४०/३) इस मन्त्र से भी देव और असुर अर्थात् विद्वान् और मूर्ख ये दो भेद जाने जाते हैं। इन्हीं दोनों के विरोध को देवासुर संग्राम कहते हैं। पाश्चात्य विद्वानों ने आर्य और दस्यु शब्द जातिवाचक माने हैं। जबकि दयानन्द का मत है कि वेद में श्रेष्ठ मनुष्य को आर्य और दुष्ट मनुष्यों को दस्यु कहा है। समाज में श्रेष्ठ और दुष्ट दोनों ही प्रकार के मनुष्य रहते हैं। सच तो यह है कि एक ही मनुष्य में सात्विक, राजसिक और तामसिक वृत्तियाँ होने के कारण वह कभी आर्य और कभी दस्यु होता है। इन दोनों विरोधी वृत्तियों के कारण—व्यक्ति में भी और समाज में भी संघर्ष होता रहता है।

जब बच्चे का जन्म होता है तब वह अज्ञानी होता है। गर्भस्थ-स्थिति में अपने माता-पिता के संस्कार अवश्य पड़ते हैं, पर ये जन्म के समय—केवल स्वास्थ्य को छोड़कर—प्रकट नहीं होते। सामान्य रूप से सभी बच्चे अज्ञान व भूख आदि दोषों से ग्रस्त होते हैं। शिक्षा द्वारा प्रत्येक बच्चे को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनाने का प्रयत्न किया जाता है। यदि वह शिक्षा व संस्कारों से वंचित रह जाय तो उसमें दुष्ट वृत्तियाँ विकसित हो जाती हैं और वह दस्यु कहलाता है। अतः महर्षि का यह निश्चित मत है कि यदि हमने मनुष्यों में परस्पर भेद-बुद्धि समाप्त करनी है तो प्रत्येक बालक को शिक्षा के

---

१. ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वर्णाश्रमविषय पृ० २३४

२. वही, पृ. ११५-१३५

समान अवसर उपलब्ध कराने चाहिएँ।[1] उनका मत है कि यदि कोई व्यक्ति अपने बालक को शिक्षित न करे तो वह राज्य द्वारा दण्डित होना चाहिए।

महर्षि दयानन्द के मत में २५-२८ वर्ष की आयु तक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलना चाहिए। किन्तु शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर उपलब्ध करने के उपरान्त भी यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति का समान रूप से विकास हो जाय।[2] शिक्षाकाल में व्यक्ति को ज्ञानवान् बनाने के साथ सच्चरित्र व धार्मिक बनाने का प्रयत्न भी किया जाता है। कुछ व्यक्ति ज्ञानवान् नहीं बन पाते और कुछ धार्मिक नहीं हो पाते। अज्ञानी व अधार्मिक—दोनों प्रकार के व्यक्तियों को वेद में दस्यु, अनार्य अथवा शूद्र कहा गया है। शेष जो ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होते हैं, वे भी अपने-अपने संस्कार, रुचि आदि के भेद से तीन वर्गों में विभक्त हो जाते हैं। कुछ ब्राह्मण बनते हैं, कुछ क्षत्रिय तथा कुछ वैश्य।

यहाँ यह और अधिक स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जन्मकाल से लेकर शिक्षाकाल तक व्यक्ति का कोई वर्ण नहीं होता। शिक्षा प्राप्त करते हुए व्यक्ति—चाहे वह जन्म से किसी भी वर्ण का हो, अपनी रुचि के अनुसार जिस पाठ्यक्रम-विशेष में दक्षता प्राप्त कर लेता है व जिस प्रकार की सात्विक, राजसिक व तामसिक उसकी प्रवृत्ति होती है वही उसका वर्ण हो जाता है।

इस प्रकार अपने वर्ण का चुनाव व्यक्ति स्वयं करता है और इस चुनाव में वह अपने गुरु की भी सहायता लेता है। वस्तुतः इसे वर्ण कहते ही इसलिए हैं कि व्यक्ति इसका स्वयं वा गुरु की सहायता से चुनाव करता है। महर्षि ने 'वर्णो वृणोतेः' (निरुक्त २।३) को उद्धृत करके लिखा है कि इनका नाम वर्ण इसलिए है कि जैसे जिसके गुणकर्म हों, वैसा ही उसको अधिकार देना चाहिए। इस प्रकार उनका स्पष्ट अभिमत है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र—ये चार भेद गुण कर्मों से किये गए हैं।[3]

(क) अक्तूबर १८७५ को महर्षि सतारा में थे। वहाँ उन्होंने उपदेश दिया कि वर्णभेद गुण पर निर्भर है, न कि जन्म पर। और अपने कथन की पुष्टि में मनुस्मृति के कुछ श्लोक पढ़े। इस पर एक मनुष्य ने कहा कि मनुस्मृति में अन्य श्लोक इसके विरुद्ध भी हैं। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि वह प्रक्षिप्त हैं। —महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र, भाग-१, बाबू देवेन्द्रनाथ, पृ० ३५१

---

१. देखिए, मेरी 'शिक्षा व भाषा नीति' पुस्तक, पृ.

२. तुलना करें—

वितरति गुरुः प्राज्ञे शिक्षां यथैव तथा जड़े, न तु खलु तयोर्ज्ञाने शक्तिं करोत्य-पहन्ति वा।
भवति हि पुनर्भूयान्भेदःफलं प्रति तद्यथा, प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः।
—उत्तररामचरित पृ. ५७

३. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वर्णाश्रमविषय, पृ. २३३-२३४

(ख) सन् १८७७ में लाहौर में भाषण करते हुए महर्षि ने कहा था—वर्ण-व्यवस्था गुण कर्मानुसार है, जन्म पर निर्भर नहीं है। ब्राह्मण वह है जो ब्राह्मण के कर्म करे अन्यथा वह शूद्र है। मनुष्यों का इसी जन्म में वर्ण परिवर्तन हो सकता है, शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शूद्र हो सकता है। (ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, (भाग-२) घासीराम पृ० ४०)

(ग) सितम्बर सन् १८८० में काशी में एक दिन एक मनुष्य ने वर्ण-व्यवस्था को जन्मजात सिद्ध करने के उद्देश्य से महाभाष्य का यह श्लोक प्रस्तुत किया—

विद्यातपश्च योनिश्च एतद् ब्राह्मण्यकारकम्।
विद्यातपोभ्यां यो हीनो जात्या ब्राह्मण एव सः॥ महाभाष्य ४।१।४८।

दयानन्द ने इसके खण्डन में मनु का यह श्लोक प्रस्तुत किया—

यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः।
यश्च विप्रोऽनधायानस्त्रयस्ते नाम बिभ्रति॥ मनु २।१५७

—ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र, भाग-२, पृ० २३१

(घ) महर्षि दयानन्द वर्ण-व्यवस्था को गुणकर्मानुसार मानकर एक ओर उच्च वर्ण के व्यक्ति को प्रेरित करते हैं कि वह अपने को गुणी व योग्य बनाने में पूर्ण संलग्न रहे, अन्यथा उसे अपने से नीचे वर्ण में जाना होगा, दूसरी ओर वे शूद्र को भी प्रेरित करते हैं कि वह योग्य बनकर उच्चवर्ण प्राप्त कर ले।

वे लिखते हैं यह गुणकर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं को सोलहवें वर्ष और पुरुषों को पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिए।[1]

पुरुष सूक्त के 'ब्राह्मणोस्य०' आदि मन्त्र की व्याख्या—

इससे पूर्व कि हम चारों वर्णों के गुणकर्मों पर विचार करें, इस प्रसंग में एक अत्यन्त विवादास्पद ऋचा की म० दयानन्द द्वारा की गयी व्याख्या को जान लेना आवश्यक है। पहले प्रश्न किया गया है :

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरूपादा उच्येते। —ऋग्वेद ३१/१०

अर्थात सर्वशक्तिमान् परमेश्वर में बहुत प्रकार का सामर्थ्य है। इस पुरुष (सर्वव्यापक परमात्मा) के मुख अर्थात् मुख्य गुणों से इस संसार में क्या उत्पन्न हुआ है? बल, वीर्य, शूरता और युद्ध आदि विद्यागुणों से इस संसार में कौन पदार्थ उत्पन्न हुआ है? व्यापार आदि मध्यम गुणों से किसकी उत्पत्ति हुई है। मूर्खपन आदि नीच गुणों से

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास

किसकी उत्पत्ति होती है ? इन चारों प्रश्नों के उत्तर ये हैं कि :

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्‌भ्यां शूद्रोऽजायत ।। मनु० ३१११

इस पुरुष की आज्ञा के अनुसार जो विद्या सत्यभाषणादि उत्तम गुण और श्रेष्ठ कर्मों से ब्राह्मण वर्ण उत्पन्न होता है वह मुख्य कर्म और गुणों के सहित होने से मनुष्यों में उत्तम कहाता है और ईश्वर ने बल पराक्रम आदि पूर्वोक्त गुणों से युक्त क्षत्रिय वर्ण को उत्पन्न किया है। खेती व्यापार और सब देशों की भाषाओं को जानना तथा पशु-पालन आदि मध्यम गुणों से वैश्य वर्ण सिद्ध होता है। जैसे पग सबसे नीचे अंग है, वैसे मूर्खता आदि नीच गुणों से शूद्रवर्ण सिद्ध होता है।[1]

कुछ के मत में इसका यह अर्थ है कि ब्राह्मण ईश्वर के मुख, क्षत्रिय बाहू, वैश्य ऊरु और शूद्र पगों से उत्पन्न हुआ है। इसलिए जैसे मुख न बाहू आदि और बाहू आदि न मुख होते हैं, इसी प्रकार ब्राह्मण न क्षत्रियादि और क्षत्रियादि न ब्राह्मण हो सकते हैं। दयानन्द कहते हैं कि इस मन्त्र का अर्थ जो तुमने किया वह ठीक नहीं। क्योंकि यहाँ पुरुष अर्थात् निराकार व्यापक परमात्मा की अनुवृत्ति है। जब वह निराकार है तो उसके मुखादि अंग नहीं हो सकते, जो मुखादि अंग वाला हो वह पुरुष अर्थात् व्यापक नहीं और जो व्यापक नहीं वह सर्वशक्तिमान्, जगत् का स्रष्टा, घर्त्ता प्रलयकर्त्ता, जीवों के पुण्य पापों की जान के व्यवस्था करने वाला, सर्वज्ञ, अजन्मा, मृत्युरहित आदि विशेषण वाला नहीं हो सकता। इसलिए इसका यह अर्थ है कि जो (अस्य) पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में मुख के सदृश सबमें मुख्य उत्तम हो वह ब्राह्मण 'बाहुवबलं बाहुर्वै वीर्यम्'[2] के अनुसार बल वीर्य का नाम बाहु है, वह जिसमें अधिक हो वह क्षत्रिय कटि के अधो और जानु के उपरिस्थभाग का ऊरु नाम है, जो सब पदार्थों और सब देशों में बल से जावे आवे, प्रवेश करे वह वैश्य और जो पग के अर्थात् नीच अंग के सदृश मूर्खत्वादि गुणवाला है वह शूद्र है। अन्यत्र शतपथ-ब्राह्मणादि में भी इस मन्त्र का ऐसा ही अर्थ किया है। जैसे—यस्मादेते मुख्यास्तस्मान्मुखतोह्य सृज्यन्त[3]—इत्यादि जिससे ये मुख्य हैं इससे मुख से उत्पन्न हुए ऐसा कथन संगत होता है। अर्थात् जैसा मुख सब अंगों में श्रेष्ठ है वैसे पूर्ण विद्या और उत्तम गुण कर्म स्वभाव से युक्त होने से मनुष्य जाति में उत्तम ब्राह्मण कहाता है। जब परमेश्वर के निराकार होने से मुखादि अंग ही नहीं हैं तो मुख आदि से उत्पन्न होना असम्भव है जैसा कि वन्ध्या स्त्री के पुत्र का विवाह होना ! और जो मुखादि अंगों से ब्राह्मण आदि उत्पन्न होते तो

---

१. (क) ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका. सृष्टिविद्या विषय, पृष्ठ १२५-१२६
(ख) यजुर्वेद ३१/११ 'ग' छान्दोग्य उप० ४/४/४-५

२. देखिए शत० ६/२/३/३३, १३/१/११/५, ५/३/६/१७

३. तुलना शत ६/१/१/१०. तै. सं. ७/१/१/१/४

उपादान कारण के सदृश ब्राह्मणादि की आकृति अवश्य होती। जैसे मुख का आकार गोलमोल है वैसे ही उनके शरीर का भी गोलमोल मुखाकृति के समान होना चाहिए। क्षत्रियों के शरीर भुजा के सदृश, वैश्यों के ऊरु के तुल्य और शूद्रों के शरीर पग के समान आकार वाले होने चाहियें। ऐसा नहीं होता। और जो कोई तुमसे प्रश्न करेगा कि जो मुखादि से उत्पन्न हुए थे उनकी ब्राह्मणादि संज्ञा है परन्तु तुम्हारी नहीं, क्योंकि जैसे और सब लोग गर्भाशय से उत्पन्न होते हैं वैसे तुम भी होते हो। तुम मुखादि से उत्पन्न न होकर ब्राह्मणादि संज्ञा का अभिमान करते हो इसलिए तुम्हारा कहा अर्थ व्यर्थ है?[१]

वस्तुतः यह मन्त्र चारों वर्णों के कर्त्तव्यों का सूचक है। ब्राह्मण मुख के समान उपदेष्टा है; क्षत्रिय भुजा के समान राष्ट्र का रक्षक है जिस प्रकार शरीर के किसी भी अंग पर प्रहार अथवा कष्ट हो, भुजा अथवा हाथ वहीं पहुंच कर उस प्रहार व कष्ट को रोकने का प्रयत्न करता है उसी प्रकार क्षत्रिय भी राष्ट्र के किसी भी भाग पर हुए आक्रमण व कष्ट को रोकने के लिए आगे पहुंच कर रोकता है। वैश्य ऊरु के समान राष्ट्र का आधार है। सम्पूर्ण शरीर ऊरु पर अवस्थित है, राष्ट्र भी वणिक् व वाणिज्य पर ही अवलम्बित रहता है। शूद्र पैरों के समान सेवा का कार्य करता है। पैरों का शरीर में महत्त्वपूर्ण स्थान है। विना पैरों के आंख, नाक, कान, हाथ उदर आदि सभी अंगों की शक्ति समाप्तप्राय हो जाती है। वे बिना पैरों की सहायता के कहीं भी जा नहीं सकते। शूद्र बुद्धिशून्य भले हो, पर उसका समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान है। भोजन व वस्त्र, निर्माण, केशकर्तन, बढ़ई, मकान निर्माण, सफाई का काम आदि यदि शूद्र वर्ण करना बन्द कर दे तो बाकी वर्ण स्वच्छता व सुविधापूर्वक जी न सकें। इस प्रकार राष्ट्र में शूद्रों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन्हें उपेक्षित और नीच मानना मूर्खता है।

जन्म से वर्णव्यवस्था का खंडन—म० दयानन्द का स्पष्ट अभिमत है कि वर्ण-व्यवस्था गुण कर्म के अनुसार है, जन्म के अनुसार नहीं। अर्थात् यह अनिवार्य नहीं है कि ब्राह्मण का पुत्र ब्राह्मण ही हो। यदि ब्राह्मण का पुत्र ज्ञान प्राप्त नहीं कर

---

१. (क) सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास,

(ख) तुलना करें—उस पुरुष का मुख, अर्थात् मुख्य स्थान अर्थात् विद्वान् ज्ञानवान् जो है ब्राह्मण है। शतपथ ब्राह्मण में बाहु अर्थात् वीर्य से ऐसा अर्थ दिया है इससे स्पष्ट है कि जो वीर्यवान वह क्षत्रिय, ऐसी व्यवस्था होती है। व्यावहारिक विद्या में जो चतुर, वह वैश्य। अब पद्भ्यां शुद्रोऽजायत—इस स्थल पर इसका अर्थ नीच मानकर मूर्खत्वादि गुणों से शूद्र होता है ऐसा मानकर उन्हें नीच कहना किस प्रकार चलेगा? 'यानि तीर्थानि सागरे तानि ब्राह्मणस्य दक्षिणे पदे' इस स्थल पर पद की कितनी भारी योग्यता है, यह तुम्हें विदित ही है। इस विचार से शूद्र अर्थात् मूर्ख ऐसा ही अर्थ होता है—उपदेश मंजरी, चौथा प्रवचन' पृ ३१-३३।

सका, या वृत्तियों से अनुदार अथवा नीच रहा तो वह शूद्र भी हो सकता है। मनु ने लिखा है :

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च ॥ मनु १०/६५

जो शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाए। वैसे ही जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य कुल में उत्पन्न हुआ हो और उसके गुण कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाए, वैसे क्षत्रिय या वैश्य के कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण या शूद्र के समान होने से ब्राह्मण और शूद्र भी हो जाता है। अर्थात् चारों वर्णों में जिस जिस वर्ण के सदृश जो-जो पुरुष वा स्त्री हो वह उसी वर्ण में गिनी जावे।

धर्मचर्यया जघन्यो वर्णः पूर्व-पूर्व वर्णमापद्यते जाति परिवृत्तौ।
अधर्म चर्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं जघन्यं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ ॥
आपस्तम्ब धर्मसूत्र /२/५/११/१०-११

धर्माचरण से निकृष्ट वर्ण अपने से उत्तम-उत्तम वर्ण को प्राप्त होता है और वह उसी वर्ण में गिना जावे कि जिस-जिस के योग्य होवे। वैसे अधर्माचरण से पूर्व अर्थात् उत्तम वर्ण वाला मनुष्य अपने से नीचे-नीचे वाले वर्ण को प्राप्त होता है और उसी वर्ण में गिना जावे।

जैसे पुरुष जिस-जिस वर्ण के योग्य होता है वैसे ही स्त्रियों की भी व्यवस्था समझनी चाहिए। इससे क्या सिद्ध हुआ कि इस प्रकार होने से सब वर्ण अपने-अपने गुणकर्म स्वभावयुक्त होकर शुद्धता के साथ रहते हैं। अर्थात् ब्राह्मण कुल में कोई क्षत्रिय वैश्य और शूद्र के सदृश न रहे। और क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्र वर्ण भी शुद्ध रहते हैं अर्थात् वर्ण संकरता प्राप्त न होगी। इससे किसी वर्ण की निन्दा वा अयोग्यता भी न होगी।

गुणकर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था मान लेने पर यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि किसी के एक ही पुत्र व पुत्री हो वह दूसरे वर्ण में प्रविष्ट हो जाए तो उसके मां-बाप की सेवा कौन करेगा और वंशच्छेदन भी हो जाएगा। इसकी क्या व्यवस्था होनी चाहिए ? महर्षि का उत्तर है कि न किसी की सेवा का भंग और न वंशच्छेदन होगा। क्योंकि उनको अपने लड़के-लड़कियों के बदले स्ववर्ण के योग्य दूसरे सन्तान विद्या-सभा और राजसभा की व्यवस्था से मिलेंगे, इसलिए कुछ भी अव्यवस्था न होगी। यह गुणकर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिए।

महर्षि दयानन्द ने वर्ण-व्यवस्था का जन्मानुसार घोर विरोध करते हुए लिखा कि

किसी का पिता दरिद्र हो और उसका पुत्र धनाढ्य होवे तो क्या अपने *पिता* की दरिद्रावस्था के अभिमान से धन को फेंक देवे, क्या जिसका पिता अन्धा हो उसका पुत्र भी अपनी आँखों को फोड़ लेवे ? जिसका पिता कुकर्मी हो क्या उसका पुत्र भी कुकर्म को ही करे ? नहीं, नहीं, किन्तु जो-जो पुरुषों के उत्तम कर्म हों उनका सेवन और दुष्ट कर्मों का त्याग कर देना सबको अत्यावश्यक है। देखो जिसका पिता श्रेष्ठ उसका पुत्र दुष्ट और जिसका पुत्र श्रेष्ठ उसका पिता दुष्ट तथा कहीं दोनों श्रेष्ठ वा दुष्ट देखने में आते हैं। इसलिए तुम लोग भ्रम में पड़े हो। मनु ने कहा कि :

येनास्य पितरो याता येन याता पितामहाः।
तेन यायात्सतां मार्गं तेन गच्छन्न रिष्यते ॥ मनु० ४/१७८

जिस मार्ग से इसके पिता, पितामह चले हों उस मार्ग में सन्तान भी चले। परन्तु जो सत्पुरुष पिता, पितामह हों उन्हीं के मार्ग में चलें, और जो पिता, पितामह दुष्ट हों तो उनके मार्ग में कभी न चलें। क्योंकि धर्मात्मा पुरुषों के मार्ग में चलने से दुःख कभी नहीं होता।

जो कोई रजवीर्य के योग से वर्णाश्रम व्यवस्था माने और गुण कर्मों के योग से न माने तो उससे पूछना चाहिए कि जो कोई अपने वर्ण को छोड़ नीच अन्त्यज अथवा कृश्चियन, मुसलमान हो गया हो उसको भी ब्राह्मण क्यों नहीं मानते ?[1] यहाँ यही कहोगे कि उसने ब्राह्मण के कर्म छोड़ दिए इसलिए वह ब्राह्मण नहीं है। महर्षि ने सन् १८८० में काशी में एक दिन एक मनुष्य ने दयानन्द जी से जाति भेद का प्रसंग उठाया था। दयानन्द ने कहा कि ब्राह्मणादि वर्ण जन्मगत नहीं हो सकते। यदि ऐसा हो तो एक ब्राह्मण के दो पुत्रों में से एक ईसाई और एक मुसलमान हो जाय तो क्या फिर भी वह ब्राह्मण ही माने जाएगे ? यदि नहीं माने जाएंगे तो जन्म से ब्राह्मणत्व कहाँ रहा ? इससे यह सिद्ध होता है कि जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुण कर्म स्वभाव वाला होवे तो उसको भी उत्तम वर्ण में, और जो उत्तम वर्णस्थ होके नीच कर्म करे तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिए।

प्रश्नकर्त्ता के इस प्रश्न का कि क्या जिसके माता-पिता ब्राह्मण हों वह ब्राह्मण होता है और जिसके माता-पिता अन्य वर्णस्थ हों उनका सन्तान कभी ब्राह्मण हो सकता है ? दयानन्द ने उत्तर दिया कि हाँ, बहुत से हो गये, होते हैं और होंगे भी। जैसे छांदोग्य उपनिषद् में जाबाल ऋषि अज्ञातकुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय वर्ण और मातंग ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गये थे। एक अन्यस्थल पर भी

---

१. तुलना कीजिए---जब कोई ब्राह्मण अपने सदाचरण को छोड़ यवनादिकों के समान आचरण करने लग जाता है तो उसका ब्राह्मणत्व कहाँ जाता है ? इससे सिद्ध हुआ कि केवल जन्मसिद्ध ही ब्राह्मणत्व नहीं, किन्तु आचारसिद्ध है। (उपदेश मंजरी, चौथा प्रवचन, पृ० ३३)।

महर्षि ने लिखा है कि जानश्रुति और जाबाल ये नीच कुल के थे। जाबाल ऋषि की कथा छान्दोग्योपनिषद् में कही हुई है। उसकी माता व्यभिचारिणी थी, परन्तु गुरु के पास जाकर जाबाल सत्य बोला, इतने ही कथन से गुरु प्रसन्न होकर उससे कहने लगा कि जाबाल तुमने सत्य भाषण किया। तू ब्राह्मण है। ऐसा कहकर उसे ब्राह्मणत्व दिया।[1] जानश्रुति रैक्य मुनि के पास पढ़ा था।

अन्त में वर्णव्यवस्था को गुण कर्मानुसार मानने में महर्षि का निम्नलिखित कथन महत्वपूर्ण है—जिस-जिस पुरुष में जिस-जिस वर्ण के गुण कर्म हों उस-उस वर्ण का अधिकार देना। ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं। क्योंकि उत्तम वर्णों को भय होगा कि जो हमारी सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जाएंगे और सन्तान भी डरते रहेगे कि जो हम उक्त चाल-चलन और विद्या युक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।

एक दिन गंगाप्रसादजी ने स्वामी-चरणों में उपस्थित होकर निवेदन किया कि महाराज ! मैंने बहुत बड़ी जनसंख्या को जनेऊ धारण कराये हैं। स्वामी जी ने उसके इस कार्य की आशीर्वाद सहित स्तुति करते हुए कहा कि यज्ञोपवीत देते ही जाते हो या किसी के उतारते भी हो ? उसने विनय की 'भगवन् ! कभी जनेऊ उतारा भी जाता है ?" स्वामीजी ने कहा, "हाँ, जो जन धर्म कर्महीन हो जाएँ उनके यज्ञोपवीत उतार देने चाहिएँ।" अर्थात् वे भले ही ब्राह्मण के घर में उत्पन्न हुए हो पर अब शूद्र हो गए हैं। उन्हें यज्ञोपवीत धारण करने का कोई अधिकार नहीं है। महर्षि दयानन्द वर्ण-व्यवस्था को गुण कर्मानुसार बनाने के लिए कृतसंकल्प थे। (स० प्रकाश पृ. १५५)

१६ अप्रैल १८८१ को चौबे कन्हैयालाल जी को एक पत्र में महर्षि ने लिखा—

मुसलमानादि अन्य मत वाले वैदिक मत में आवें तो वे जिस वर्ण के गुण और कर्म युक्त हों उसी वर्ण में रह सकते हैं। विवाह और खानपानादि व्यवहार भी अपने समान वर्ण के साथ करें। आजकल के आर्य लोग उनके साथ उक्त व्यवहार नहीं करेंगे, इसलिये अपने ही लोगों में करें और मत वैदिक रखें। इसमें किसी प्रकार की हानि नहीं हो सकती। इससे भी यही सिद्ध होता है कि गुण कर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था मान लेने पर कोई व्यवहारिक कठिनाई नहीं आएगी। (पत्र विज्ञापन, पृ० २८७)

अप्रैल १८८२ में लाला जीवनदास जी के एक पत्र के उत्तर में महर्षि ने लिखा :

जो आप लोगों में यज्ञोपवीत होता और धरावट अर्थात् विधवा को पुनः

---

१. (क) उपदेश मंजरी, चौथा प्रवचन, पृ० ३१-३२; छां० उप० ४।२।३ में जानश्रुति की तथा ४।४। १-५ में जाबाल की कथा है।

(ख) सत्यार्थप्रकाश पृ० ३३६।

दूसरे के घर में बैठाना नहीं होता तो शूद्र वर्ण में गणना आप लोगों की नहीं। अब यह बिचारना चाहिये कि (सूद) लोग क्षत्रिय हैं अथवा वैश्य। जो राजधर्म राज्य करना आपके पुरुष शौर्यादि गुणयुक्त युद्ध में कौशल वाले हुए हों तो क्षत्रिय और वैश्य के व्यापारादि कर्म और गुण हों तो वैश्य समझना चाहिये। अब आप लोग ही इसका निश्चय कर लीजिये। और जो कभी (सूत) शब्द बिगड़ के सूर हो गया हो तो आप अवश्य क्षत्रिय वर्ण हैं। स्पष्ट है कि वे गुणकर्म के अनुसार ही वर्णों के विभाजन के पक्ष में थे। (पत्र-विज्ञापन, पृ० ३२७)

सन् १८६९ में कन्नोज में रामप्रसाद जी के पूछने पर दयानन्द ने कहा कि कायस्थ वैश्य हैं। अपने को चित्रगुप्त का वंशीय बताते हैं और गुप्त शब्द वैश्य लोगों के लिए ही प्रयुक्त होता है। परन्तु आजकल ये लोग अधिकांश मांस-मदिरा का सेवन करने लग गये हैं। इसे छोड़ दे तो फिर उत्तरोत्तर उन्नत हो सकते हैं।[1] दयानन्द चाहते थे कि लोग अपने वर्ण को पहचानें और तदनुकूल गुणों व कर्मों को धारण करें।

शूद्र के ब्राह्मण बनने की विधि

प्रश्नकर्त्ता ने पूछा—भला जो रजवीर्य से शरीर हुआ है, वह बदलकर दूसरे वर्ण के योग्य कैसे हो सकता है? दयानन्द ने उत्तर दिया—रजवीर्य के योग से ब्राह्मण शरीर नहीं होता किन्तु;

स्वाध्यायेन जपैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मयं क्रियते तनुः॥ मनु—२।२८॥

अर्थात् पढ़ने-पढ़ाने, विचार करने-कराने, नानाविध होम के अनुष्ठान, सम्पूर्ण वेदों को शब्द, अर्थ, सम्बन्ध, स्वरोच्चारण सहित पढ़ने-पढ़ाने, पौर्णमासी इष्टि आदि के करने, पूर्वोक्त विधि पूर्वक धर्म से सन्तानोत्पत्ति, ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, वैश्व देव यज्ञ और अतिथि यज्ञ, अग्निष्टोमादि यज्ञ, विद्वानों का संग, सत्कार, सत्यभाषण, परोपकारादि सत्कर्म और सम्पूर्ण शिल्प विद्यादि पढ़ के दुष्टाचार छोड़ श्रेष्ठाचार में वर्तने से यह शरीर ब्राह्मण का किया जाता है।[2]

महर्षि ने स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुतेः—स्त्री और शूद्र न पढ़ें—यह श्रुति है, का उत्तर देते हुए लिखा कि सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुएं में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुई है, किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के २६वें अध्याय के दूसरे मंत्र में है।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याᳪ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय॥

---

१. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ. २८२

२. सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास पृ० ८६।

परमेश्वर कहता है कि जैसे मैं सब मनुष्यों के लिए इस कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का उपदेश करता हूँ वैसे तुम भी किया करो। यहाँ कोई ऐसा प्रश्न करे कि किन शब्दों से द्विजों का ग्रहण करना चाहिए क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है, स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं। इसके उत्तर में महर्षि लिखते हैं कि देखो, परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अपने भृत्य वा स्त्रियाँदि और अति शूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़-पढ़ा और सुन-सुनाकर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों को त्याग करके दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त हों।···दयानन्द ने प्रश्न किया कि क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है? कि वेदों के पढ़ने-सुनने का शूद्रों के लिए निषेध और द्विजों के लिए विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने.सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्न आदि पदार्थ सब के लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं और जहाँ कहीं निषेध किया है, उसका यह अभिप्राय है कि जिसको पढ़ने-पढ़ाने (२५-३० वर्षों की आयु तक शिक्षा संस्था में रहने) से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है। उसका पढ़ना-पढ़ाना व्यर्थ है।[1] १६ अप्रैल १८८१ को चौबे कन्हैयालाल जी को महर्षि ने अपने एक पत्र में लिखा—संध्योपासन और गायत्र्यादि नित्यकर्म द्विजों अर्थात् तीनों वर्णों के लिए एक ही हैं। तीनों वर्ण गुण, कर्मों से माने जाएंगे, जन्म से नहीं। शूद्र—जो विद्यादि गुणों से हीन हैं, इस कारण से उसे संध्योपासन नहीं आ सकता। इसलिए वेद के किसी मन्त्र को याद करके जपा करें। इस प्रकार यह तो हो सकता है कि कोई व्यक्ति पढ़ ही न सके, पर उसे पढ़ने का अधिकार ही नहीं, यह महर्षि को स्वीकार्य नहीं[2]। उनका स्पष्ट अभिमत है कि जो पढ़ने-पढ़ाने से शिक्षा प्राप्त कर ले, वह अपनी योग्यता व रुचि के अनुसार वैश्य, क्षत्रिय व ब्राह्मण कुछ भी बन सकता है। भले ही उसने शूद्र के घर में जन्म लिया हो।

कुछ पौराणिक बन्धु आज भी शास्त्रीय आधार पर शूद्रों का वैदिक शास्त्रों के अध्ययन का विरोध करते हैं। पर महर्षि दयानन्द ने व उनके अनुकरण पर अन्य

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास, पृ० ७४-७५।

(क) तुलना करें: जो मूर्खत्वादि गुण वाला हो वह शुद्र होता है—सत्यार्थ प्रकाश चतु० समुल्लास।

(ख) जो विद्याहीन हो, जिसको पढ़ने से भी विद्या न आ सके, शरीर से पुष्ट, सेवा में कुशल हो वह शूद्र होता है। —संस्कार विधि—(गृहस्थाश्रम प्रकरण)

२. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ० २८७।

अनेक विद्वानों ने प्राचीन शास्त्रों से अनेक ऐसे प्रमाण दिये हैं, जिनसे प्रमाणित होता है कि शूद्रों को भी वेदादि के अध्ययन का पूर्ण अधिकार था। कुछ प्रमाण देखिए—

—ब्रह्म वै स्तोमानां त्रिवृत् पंचदशो, विशः सप्तदश शौद्रोवर्ण एकविंशः। (ऐत० ब्रा० ८।१) ब्राह्मण नव, क्षत्रिय पन्द्रह, वैश्य सत्रह, और शूद्र इक्कीस अग्निष्टोम करे, इससे सिद्ध हुआ कि शूद्र को यज्ञ द्वारा वेदाध्ययन का अधिकार है।

—ऐ० ब्रा० २।३ से स्पष्ट है कि ऋ० १०।३ ३०—४० का मन्त्र द्रष्टा ऋषि कवष ऐलूष शूद्र था।

—एहीति ब्राह्मणस्यागत्यद्रवेति वैश्चस्य च राज न्यवन्धोऽन्याचाद्यावेति शूद्रस्य। (शत० १।१। १।४।११)—अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वेदमंत्रों से यज्ञ की हवि को शुद्ध करें।

—अथर्वणस्य वेदस्य शेष इत्युपदिशन्ति (आपस्तम्ब ध० सू० ११।१९) अर्थात् स्त्री और शूद्र को वेद पढ़ना चाहिए।

—हविष्कृदेहीति ब्राह्मणस्य हविष्कृदागहीति राजन्यस्य हविष्कृदा—द्रवेति वैश्यस्य हविष्कृदाधावेति शूद्रस्य प्रथमं वाव सर्वेणाम्। (आप० श्रौतसूत्र १.९)—यज्ञ के विधान में पूर्वोक्त पृथक्-पृथक् मन्त्रों से चारों वर्ण विशुद्ध करें, इससे शूद्र को वेदाधिकार का होना सिद्ध होता है।

—आचान्तोदकाय गौरिति नावित स्त्री ब्रूयात्। मुंचगावरुणपाशात्। (गौभिलीय सू० ४।१०) इस सूत्र से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त मंत्र नाई को सुनाने का विधान है। इससे भी शूद्र को वेदश्रवण का अधिकार सूचित होता है।

—तथैवावृता निषादस्थपर्ति याजयेत् (आप० श्रौ० सू० ९।९४) इस सूत्र से स्पष्ट है कि अति निषाद (शूद्र) से यज्ञ कराने का विधान है। सावित्री पुरोनुवाक्या से स्पष्ट है कि गायत्री मंत्र का शूद्र को अधिकार है।

—फलार्थत्वात्कर्मणः शास्त्रं सर्वाधिकारं स्यात् (पूर्व मीमांसा ६।१) विद्याध्ययन तथा यज्ञ आदि कर्म मनुष्य मात्र को फल देते हैं, चाहे पढ़ने या यज्ञ करने वाला ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वा अन्त्यज हो। जो विद्या पढ़ेगा, उसको विद्या आवेगी। जो यज्ञ करेगा वह उसका फल पावेगा और उसका उस पर शुभ प्रभाव पड़ेगा।

—शूद्राणामदृष्ट कर्मणामुपनयनम् (पार० गृ० २।६०) जो शूद्र दुष्ट कर्म करने वाला न हो तो उसका उपनयन संस्कार करना चाहिए।

—आपस्तम्ब (सू० १, ५०।५) से स्पष्ट है कि दुष्ट कर्म करने वाले ब्राह्मणादि का उपनयन नहीं करना।[1]

---

१. विस्तार के लिए देखें : पुरुषार्थ प्रकाश, स्वामी विश्वेश्वरानन्द व स्वामी नित्यानन्द द्वारा कृत। जयदेव ब्रदर्स बड़ौदा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि शिशु चाहे ब्राह्मण का हो, क्षत्रिय का हो, वैश्य का हो या शूद्र का—सभी समान हैं। सभी को शिक्षा-प्राप्ति का समान अवसर मिलना चाहिए। महर्षि की पष्ट घोषणा है कि राज नियम और जाति नियम होना चाहिए कि पांचवे अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजें वे दण्डनीय हों।[1] २५ वर्ष की आयु तक गुरु के सान्निध्य में रहने के उपरान्त जिन्होंने अपने को इस योग्य बना लिया है (भले ही वह शूद्र का लड़का हो) कि वे ज्ञान के क्षेत्र का निःस्वार्थ वृत्ति से विस्तार कर सकें (ब्राह्मण), राष्ट्र की रक्षा के लिए अपने प्राणों की विना परवाह किये कटिबद्ध हो सकें (क्षत्रिय) अथवा विविध व्यवसाय स्थापित करने में सक्षम हो जाएं (वैश्य) वे तो अपना विकास स्वयं करने में समर्थ हैं। किन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जो गुरु के सांनिध्य में रहने के उपरान्त भी किसी प्रकार की विशेष योग्यता प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं। वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य किसी की भी सन्तान हो सकते हैं—सब शूद्र हैं। शूद्रेणहि वेदेन जायते (मनु २/१७२, वशिष्ठ ३/१०२)

गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था के संचालन के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक बच्चे को शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर मिले। अछूत कही जाने वाली जातियों के बच्चों की शिक्षा का तो राज्य को विशेष प्रबन्ध करना चाहिए। यह विशेष प्रबन्ध उन जातियों के कुछ प्रतिशत छात्रों की निःशुल्क शिक्षा-व्यवस्था से अथवा योग्यता न होते हुए भी उनको किसी शिक्षणालय में प्रवेश दिला देने मात्र से नहीं हो जाता। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें कम-से-कम १६ वर्षों तक घर के दूषित एवं अशैक्षणिक वातावरण से पृथक् करके सुन्दर एवं शैक्षणिक वातावरण में रखने का प्रबन्ध किया जाए। उनके साथ ऊँची कही जाने वाली जातियों के बच्चे भी रहते हों। उनको एक-सा भोजन दिया जाए तथा एक-सी ही सबके पास पुस्तकें हों। शिक्षक उन सबसे एक-सा ही व्यवहार करें।

इस समय हमारे देश में इस प्रकार का सबको समान वातावरण देने के स्थान पर उच्च वर्ग के बच्चों के लिए तो अनेक पब्लिक स्कूल खुले हैं जहां का वातावरण अत्यन्त सफेद किन्तु शिक्षा अत्यन्त मंहगी है। जब एक निर्धन हरिजन छात्र धनी छात्र को प्रतिदिन सुन्दर वस्त्र पहने कार पर बैठकर पढ़ने जाते देखता है तो उसके मन में स्वभावतः अपने स्कूल एवं अपने वस्त्रों के प्रति और अन्ततः अपनी स्थिति के प्रति घृणा जागृत होती है, जिसका परिणाम यह होता है कि उसका चित्त पढ़ाई में नहीं लग पाता। वह हीन भावना से ग्रस्त हो जाता है, जिससे वह अपना विकास करने में अक्षम रहता है। दूसरी ओर तथाकथित उच्च वर्ग के छात्र में अहंकार का उदय होता

१. सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

। हैइस प्रकार घृणा की खाई तथा अहंकार के पर्वत से दोनों वर्गों की दूरी और अधिक हो जाती है। यदि हम दलित जातियों की सचमुच उन्नति चाहते हैं तो हमें महर्षि द्वारा निर्दिष्ट भारत की प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का आधुनिकीकरण करके, उसे अपनाना होगा। महर्षि द्वारा लिखित आर्यसमाज के दस नियमों में नवम नियम कि—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए—के अनुसार प्रत्येक को उन्नति के समान अवसर देने चाहिएं।

शिक्षा द्वारा यदि शूद्र का पुत्र विद्वान् हो जाए और ब्राह्मण का पुत्र अविद्वान् (मूर्ख) रह जाए तो दोनों का वर्ण परिवर्तन हो जाएगा। इसी आधार पर महर्षि ने निम्नलिखित कथन का घोर खण्डन किया है

पतितोऽपि द्विष्ठः श्रेष्ठो न च शूद्रो जितेन्द्रियः।
निर्दुग्धा चापि गौः पूज्या न च दुग्धवती खरी।—पाराशर

जो दुष्ट कर्मकारी द्विज को श्रेष्ठ और श्रेष्ठ कर्मकारी शूद्र को नीच माने, तो इससे अधिक पक्षपात, अन्याय, अधर्म दूसरा अधिक क्या होगा? क्या दूध देने वाली वा न देने वाली गाय गोपालों को पालनीय होती है? वैसे कुम्हार आदि को गदही पालनीय नहीं होती। यह दृष्टान्त विषम है, क्योंकि द्विज और शूद्र मनुष्य जाति, गाय और गदही मिल जाती है। कदाचित् पशु जाति से दृष्टान्त का एक देश दृष्टान्त में मिल भी जावे तो भी इसका आशय उपयुक्त होने से ये श्लोक विद्वानों के माननीय कभी नहीं हो सकते।[1]

शिक्षा का पूर्ण अवसर प्रदान करने पर सभी के शिक्षित हो जाने की संभावना है। परिणामस्वरूप राष्ट्र में शूद्रों की संख्या बहुत कम रह जाएगी। केवल कुछ निर्बुद्धि व्यक्ति ही शूद्र होंगे।

ब्राह्मण

महर्षि दयानन्द ने ब्राह्मण के कर्त्तव्यों-कर्मों का वर्णन मनुस्मृति व गीता में निम्नलिखित श्लोकों के आधार पर किया है—

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्॥ (मनु १।८८)

मनु के अनुसार ब्राह्मण को (१) पढ़ना। (२) पढ़ना। (३) यज्ञ करना। (४) कराना। (५) दान देना और (६) लेना—ये ६ कर्म हैं। परन्तु इनमें 'प्रतिग्रहः प्रत्यवरः' (मनु १०।१०९) अर्थात् प्रतिग्रह (लेना) नीच कर्म है।

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ० १२१

इनके अतिरिक्त ९ कर्म व गुण गीता ने निर्दिष्ट किये हैं—

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥

गीता १८/४२

(७) **शम**—मन से काम की इच्छा भी न करनी और उसको अधर्म में कभी प्रवृत्त न होने देना।

(८) **दम**—श्रोत्र और चक्षु आदि इन्द्रियों को अन्यायाचरण से रोककर धर्म में चलाना।

(९) **तप**—सदा ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय होके धर्मानुष्ठान करना।

(१०) **शौच**—**अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।**
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति॥

मनु ५/१०९

जल से बाहर के अंग, सत्याचार से मन, विद्या और धर्मानुष्ठान से जीवात्मा और ज्ञान से बुद्धि पवित्र होती है। भीतर राग द्वेषादि दोष और बाहर के मलों को दूर कर शुद्ध रहना अर्थात् सत्यासत्य के विवेक-पूर्वक सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग से निश्चय पवित्र होता है।

(११) **क्षान्ति**—अर्थात् निन्दा-स्तुति, सुख दुःख, शीतोष्ण, क्षुधा, तृषा, हानि-लाभ, मानापमान आदि हर्ष, शोक छोड़ के धर्म में दृढ़ निश्चय रहना।

(१२) **आर्जव**—कोमलता, निरभिमान, सरलता, सरल स्वभाव रखना, कुटिलतादि दोष छोड़ देना।

(१३) **ज्ञान**—सब वेदादि शास्त्रों को सांगोपांग पढ़के पढ़ाने का सामर्थ्य, विवेक, सत्यासत्य का निर्णय, जो वस्तु जैसी हो अर्थात् जड़ को जड़, चेतन को चेतन जानना और मानना।

(१४) **विज्ञान**—पृथ्वी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों को विशेषता से जानकर उनसे यथायोग्य उपयोग लेना।

(१५) **आस्तिक्य**—कभी वेद, ईश्वर, सूक्ति, पूर्वपरजन्म, धर्म, विद्या, सत्संग, माता-पिता, आचार्य और अतिथियों की सेवा को न छोड़ना और निन्दा कभी न करना—ये १५ कर्म और गुण ब्राह्मण वर्णस्थ मनुष्यों में अवश्य होने चाहियें।

आधुनिक शब्दावली में कहा जा सकता है कि ब्राह्मण अपना जीवन अनेक

कार के ज्ञान-विज्ञानों के संग्रह, नये-नये आविष्कारों व सत्यादि धर्म को अपने जीवन का अंग बनाके प्रचार और प्रसार में लगा रहा है। उसका जीवन अनेक आदर्शों पर अवलम्बित होता है। वह सदाचार की साक्षात् मूर्ति होता है।

क्षत्रिय :

महर्षि दयानन्द ने क्षत्रियों के कर्त्तव्य कर्म मनु व गीता के आधार पर निर्दिष्ट किये हैं—

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः॥ मनु १।८९
शौर्य तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रकर्म स्वभावजम् ॥गीता १८।४३

(१) **न्याय से प्रजा की रक्षा :** अर्थात् पक्षपात छोड़ के श्रेष्ठों का सत्कार और दुष्टों का तिरस्कार करना, सब प्रकार से सबका पालन करना।

(२) **दान :** विद्याधर्म की प्रवृत्ति और सुपात्रों की सेवा में धनादि पदार्थों का व्यय करना।

(३) **इज्या :** अग्निहोत्रादि यज्ञ करना व कराना।

(४) **अध्ययन :** वेदादि शास्त्रों का पढ़ना तथा पढ़वाना और

(५) **विषयों में अप्रसक्ति :** विषयों में न फंसकर जितेन्द्रिय रह के सदा शरीर और आत्मा में बलवान् रहना।

ये ५ कर्म व गुण मनु ने निर्दिष्ट किये हैं तथा इनके अतिरिक्त—

(६) **शौर्य :** सैंकड़ों सहस्रों से भी युद्ध करने में अकेले को भय न होना।

(७) **तेज :** सदा तेजस्वी अर्थात् दीनता रहित प्रगल्भ दृढ़ रहना।

(८) **धृति :** धैर्यवान् होना।

(९) **दाक्ष्य :** राजा और प्रजा सम्बन्धी व्यवहार और सब शास्त्रों में अति चतुर होना।

(१०) **युद्ध :** में भी दृढ़ निःशंक रहके उससे कभी न हटना, न भागना अर्थात् इस प्रकार से लड़ना कि जिससे निश्चित विजय होवे, आप बचे, भागने से वा शत्रुओं को धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना।

दान : दानशीलता रखना (इसका उल्लेख मनु ने भी किया है।)

(११) **ईश्वर भाव :** पक्षपातरहित होके सबके साथ यथायोग्य बर्तना, विचार के देखके प्रतिज्ञा पूरी करना, उसको कभी भंग होने न देना—

ये ग्यारह क्षत्रिय वर्ण के कर्म और गुण हैं। अभिप्राय यह कि क्षत्रिय अपना जीवन अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष में व्यतीत करता है। क्षत्रिय सेना, पुलिस व प्रबन्ध सम्बन्धी कार्य करता है।

वैश्य : वैश्यों के कर्त्तव्य-कर्म महर्षि दयानन्द ने मनु के निम्नलिखित श्लोक के आधार पर निर्दिष्ट किये हैं :

पशूनाँ रक्षणंदानमिज्याध्ययनमेव च।
वाणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च ॥ मनु १/९०

(१) पशु रक्षा : गाय आदि पशुओं का पालन-वर्द्धन करना।
(२) दान : विद्या धर्म की वृद्धि करने-कराने के लिए धनादि का व्यय करना।
(३) इज्या : अग्निहोत्रादि यज्ञों का करना।
(४) अध्ययन : वेदादि शास्त्रों का पढ़ना।
(५) वणिक् पथ : सब प्रकार के व्यापार करना।
(६) कुसीद : एक सैंकड़े में चार, छः आठ, बारह, सोलह व बीस आनों से अधिक ब्याज और मूल से दूना अर्थात् एक रुपया दिया हो तो सौ वर्ष में भी दो रुपये वर्ष से अधिक न लेना और न देना (सम्पूर्ण बैंकिग व्यवस्था।)
(७) कृषि (खेती करना) : ये वैश्य के गुण-कर्म हैं।

३ जून १८८१ को महर्षि ने बम्बई में एक भाषण में देशोन्नति के विषय में कहा था कि इस समय हमारे देशवासियों को वाणिज्य-व्यापार में प्रवृत्त होना चाहिये। कनौजिये ब्राह्मण पलटनों में भरती होकर काबुल आदि देशों में जाते हैं परन्तु वाणिज्य के उद्देश्य से देशान्तर में नहीं जाते।[1]

वर्ण-व्यवस्था द्वारा राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को एक निश्चित दिशा देकर उसे नियन्त्रण में किया जाता है। अर्थोत्पादन का सम्पूर्ण दायित्व और अधिकार वैश्य को देकर बाकी वर्णों के निर्वाह का भार उन्हीं पर सौंप दिया गया है। परिणामस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति धन कमाने के चक्कर में नहीं पड़ता। प्रत्येक व्यक्ति के अर्थोत्पादन में लग जाने से अनावश्यक प्रतिस्पर्द्धा हो जाने के कारण अव्यवस्था फैल जाती है। जिन लोगों की वृत्ति ज्ञानोत्पादन व शक्ति प्रदर्शन में है, वे भी अर्थ के चक्कर में फंसकर अपनी मूलवृत्ति का नाश तो कर ही लेते हैं, साथ ही जिनकी वृत्ति धनोत्पादन में है, उनके मार्ग में भी रोड़ा अटकाते हैं। वर्ण-व्यवस्था पर आधारित अर्थनीति की निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं :

---

१. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, भाग—२, पृ २८७

सम्पत्ति का उत्पादन उद्योगपति या जमींदार (वैश्य) के धन, भूमि और बुद्धि तथा श्रमिक व किसान (शूद्र) के श्रम के साथ व्यापारी (वैश्य) के व्यापार से होता है। सम्पत्ति को सम्भाल कर रखने की बुद्धि क्योंकि वैश्य में है, इसलिए उसी का उस पर अधिकार रखा जाता है। पर उस पर राज्य का ऐसा नियन्त्रण होता है कि वह उसका दुरुपयोग नहीं करता। यह बात उसके अनिवार्य कर्त्तव्यों में है कि वह श्रमिक के जीवनोपयोगी साधनों, उसकी सन्तान की पूर्ण शिक्षा व विवाह, उसकी रोग के आक्रमण से रक्षा आदि पर पूर्ण व्यय करे। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह राजा द्वारा दण्ड का अधिकारी होता है। श्रमिक की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उपरान्त वह राज्य को पर्याप्त कर देता है। जिससे राज्य-कार्य व राष्ट्र में शिक्षा का पूर्ण विस्तार होता है।

(ख) वर्ण-व्यवस्था व्यक्तिगत स्वामित्व के सिद्धान्त को स्वीकार करके उसे अधिकाधिक धनोत्पत्ति के कार्य में संलग्न करती है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि बिना व्यक्तिगत स्वामित्व के व्यक्ति किसी भी कार्य को पूर्ण मनोयोग से नहीं करता। व्यक्तिगत स्वामित्व के कारण ही पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा उत्पन्न होती है और इससे उत्पादन अधिक बढ़ता है।

(ग) किन्तु वर्ण-व्यवस्था में सम्पत्ति पर व्यक्तिगत स्वामित्व का सिद्धांत स्वीकार करने पर भी, सम्पत्ति के दुरुपयोग का उसे कोई अधिकार नहीं दिया गया। वह सम्पत्ति उसकी तभी तक है, जब तक कि वह उस का सदुपयोग कर रहा है। उसने शिक्षा की समाप्ति पर सम्पत्ति का सदुपयोग करने की प्रतिज्ञा की हुई होती है। उसका गुरु व आचार्य व अन्य मान्य संन्यासी गण उसकी वृत्ति पर निरन्तर दृष्टि रखते हैं कि वह अपनी सम्पत्ति का किस प्रकार उपयोग करता है और साथ ही राज्य भी उस पर दृष्टि रखता है कि वह उसका किस प्रकार उपयोग कर रहा है। उसके लिए यह आवश्यक है कि सम्पत्ति का राष्ट्रोपयोगी कार्यों—शिक्षा के विकास, चिकित्सालय आदि के निर्माण में करे। सच्चे वैश्य धर्म का पालन करने वाले व्यक्तियों में सम्पत्ति का सदुपयोग करने में भी प्रतिद्वन्द्विता आरम्भ हो जाती है। कौन अधिक से अधिक सम्पत्ति अर्जित करके उसका अधिक से अधिक दान करता है, यह सारा समाज देखता है। इस प्रतिद्वन्द्विता से हमें अधिकाधिक दान की प्रेरणा प्राप्त होती है। सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था इसी के दान से संचालित होती है। वैसे चिकित्सालय, पुस्तकालय, धार्मिकस्थल, धर्मशाला इन्हीं के दान से खुलते हैं।

वर्ण-व्यवस्था के गुण कर्मानुसार होने के कारण यह आवश्यक नहीं है कि वैश्यपुत्र ही उसके अर्थोत्पादन के साधनों पर अधिकार रखे। परिणाम-स्वरूप वे पिता के धन का दुरुपयोग नहीं कर पाते। आज पुत्रों द्वारा पितृ-अर्जित धन को नष्ट कर डालने की समस्या बहुत बड़ी है। वर्ण-व्यवस्था के अनुसार सम्पत्ति का स्वामित्व उसका

सदुपयोग करने वाले को ही मिलता है। उसके पुत्र को प्राथमिकता अवश्य दी जाती है, पर यदि वह अयोग्य है तो यह अधिकार उसे नहीं दिया जाता।

शूद्र : शूद्र के कर्त्तव्यकर्म महर्षि ने मनु के निम्नलिखित श्लोक के आधार पर निर्दिष्ट किए हैं :

एकमेव हि शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया ॥ मनु० १/९१

शुद्र को योग्य है कि निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा यथावत् करना और उसी से अपना जीवन-निर्वाह करना। यही एक शूद्र का कर्म व गुण है।

सन् १८७३ में महर्षि आरा में थे। वहाँ एक भाषण में उन्होंने कहा—वर्ण का निर्भर कर्म और चरित्र पर है।·· पहले ब्राह्मण पाचक का कार्य नहीं करते थे, पाक कर्म सेवा-कर्म है और सेवा शूद्र का कार्य है। पहले समय में पाक-कर्म शूद्र ही किया करते थे, पीछे से पुराण बनाने वालों ने प्रथा को उठाकर अनिष्ट कर दिया।[1] वस्तुतः आज भी शूद्र ही पाक कर्म कर रहे हैं। अन्तर केवल यह है कि वे कहते अपने को ब्राह्मण हैं।

विशेष रूप से शूद्र भोजन निर्माण का कार्य करे। महर्षि ने आपस्तम्ब २/२/३/४ के 'आर्याधिष्ठा वा शूद्राः संस्कर्त्तारः स्युः' के आधार पर लिखा है कि आर्यों के घर में शूद्र अर्थात् मूर्ख स्त्री-पुरुष पाकादि सेवा करें, परन्तु वे शरीर वस्त्र आदि से पवित्र रहें। जब रसोई बनावें तब मुख बांध के बनावें, क्योंकि उनके मुख में उच्छिष्ट और निकला हुआ श्वास भी अन्न में न पड़े। आठवें दिन क्षौर और नखच्छेदन करावें। स्नान करके पाक बनाया करें। आर्यों को खिलाके आप खावें।

महर्षि दयानन्द ने इस प्रश्न का कि शूद्र के छुए हुए पके अन्न के खाने में जब दोष लगाते हैं तो उनके हाथ का बनाया कैसे खा सकते हैं ? का उत्तर देते हुए लिखा कि यह बात कपोलकल्पित झूठी है, क्योंकि जिन्होंने गुड़, चीनी, घृत, दूध, पिसान, शाक, फल, मूल खाया उन्होंने जानो सब जगत् भर के हाथ का बनाया और उच्छिष्ट खा लिया। क्योंकि जब शूद्र, चमार, भंगी, मुसलमान, ईसाई आदि लोग खेतों में से ईख को काटते छीलते, पीलकर रस निकालते हैं तब मलमूत्रोत्सर्ग करके उन्हें बिना धोए हाथों से छूते, उठाते, धरते, आधा साढा चूंस रस पीके आधा उसी में डाल देते और रस पकाते समय उस रस में रोटी भी पकाकर खाते हैं। जब चीनी बनाते हैं तब पुराने जूते कि जिसके तले में विष्ठा, मूत्र, गोबर, धूली लगी रहती है उन्हीं जूतों से उसको रगड़ते हैं। दूध में अपने घर के उच्छिष्ट पात्रों का जल डालते, उसी में घृतादि रखते

---

१. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र, भाग—१, पृ. २१३, बाबू देवेन्द्रनाथ

और आटा पीसते समय भी वैसे ही उच्छिष्ट हाथों से उठाते और पसीना भी आटे में टपकता जाता है इत्यादि; और फल-मूल-कन्द में भी ऐसी ही लीला होती है। जब इन पदार्थों को खाया तो जानो सबके हाथ का खा लिया।[1]—अभिप्राय यह कि होटलादि में सर्वथा भ्रष्ट भोजन करने वाला व्यक्ति यदि यह कहे कि मैं शूद्र (अछूत) के हाथ का छुआ नहीं खाऊँगा, उसका यह दम्भ मूर्खतापूर्ण है। दयानन्द का कथन है कि शूद्र साफ-सुथरा रहकर पाकादि काम भी कर सकता है। दयानन्द से किसी ने कहा कि फल, मूल, कन्द और रस इत्यादि अदृष्ट में दोष नहीं मानते। दयानन्द ने उपहास करते हुए कहा—वाह जी वाह, सत्य है कि जो ऐसा उत्तर न देते तो क्या घूड़ राख खाते, गुड़-शक्कर मीठी लगती, दूध-घी पुष्टि करता है। इसलिए यह मतलब सिन्धु क्या नहीं रचा है? अच्छा जो अदृष्ट में दोष नही तो भंगी वा मुसलमान अपने हाथों से दूसरे स्थान में बनाकर तुम्हें आके देवे तो खा लोगे वा नहीं? जो कहो कि नहीं तो अदृष्ट में भी दोष है। इसी प्रसंग में दयानन्द ने आगे लिखा—जब तक एक मत, एक हानि-लाभ, एक सुख-दुःख, परस्पर न मानें तब तक उन्नति होना बहुत कठिन है।

सन् १८७७ में लाहौर में ऋषि दयानन्द ने भाषण करते हुए कहा था कि धर्म खाने-पीने में नहीं है, एक वर्ण दूसरे वर्ण के हाथ का छुआ वा पकाया हुआ भोजन न खावे, ऐसा प्रतिबन्ध वेदों में कहीं नहीं है।[2]

सन् १८८२ में शाहपुर में एक साधु स्वामी जी के पास पढ़ता था। वह एक दिन चौके के बखेड़े पर रसोईये के साथ लड़ पड़ा। स्वामी जी ने उसे बुलाकर कहा—आप संन्यासी भी हो गए, परन्तु चौके-चूल्हे का भ्रमजाल आपके पीछे ही पड़ा है। कच्चे-पक्के के पाप भावना की भूमि पर प्रेम का प्रसाद निर्माण करना होगा।[3]

शूद्रों के प्रति दया—

महर्षि के मन में दलित वर्ग के प्रति कितनी दया और सहानुभूति थी, यह उनके जीवन की अनेक घटनाओं से प्रकट होता है:

(क) सन् १८६८ में फर्रूखाबाद में एक दिन सुखवासी लाल साध स्वामीजी के लिए कढ़ी और भात बनवाकर लाये और उन्होंने उसे खाया। इस पर ब्राह्मणों ने कहा कि आप भ्रष्ट हो गये जो साधों के घर का भोजन खा लिया। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि भोजन दो प्रकार से भ्रष्ट होता है। एक तो यदि किसी को दुःख देकर धन प्राप्त किया जावे और उससे अन्न आदि क्रय करके भोजन बनाया जावे, दूसरा भोजन मलिन हो वा उसमें कोई मलिन वस्तु गिर जावे। साध लोगों का परिश्रम

---

१. 'सत्यार्थ प्रकाश' दशम समुल्लास

२. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र, भाग—२, (घासीराम एम. ए.) पृ. ४०

३; श्री मद्यानन्द प्रकाश, पृ. ५२०

का पैसा है, उससे प्राप्त किया भोजन उत्तम है। इस पर ब्राह्मण लोग निरुत्तर हो गये।[1]

(ख) एक उमेदा नाई अनूपशहर में रहता था। उसके भी हृदय-मंदिर में स्वामी जी का महत्व बस गया। एक दिन वह भक्ति-भाव से थाल में भोजन परस कर स्वामी जी की सेवा में लाया। स्वामीजी ने भक्त के भोजन को लेकर भोग लगाना प्रारम्भ कर दिया। उस समय कोई वहाँ बीस-पच्चीस ब्राह्मण विद्यमान थे। वे कह उठे. "छि:-छि: ! स्वामीजी क्या करते हो ? यह रोटी तो नाई की है।' महाराज ने हँसते हुए कहा, "नहीं, यह रोटी तो गेहूं की है, इसलिए मैं इसे अवश्य खाऊँगा।"

(ग) सन् १८७८ ई० में अजमेर में एक बार दयानन्द जी व्याख्यान कर रहे थे। उसी समय समाचार मिला कि भरतपुरिये चमारों के गंज में आग लग गयी है और उनके घास-फूस के मकान जल कर राख का ढेर हो गये हैं। यह सुनते ही उनके दयालु हृदय में दया उमड़ आई। उनके त्राण तथा सहायता के लिए उन्होंने अपने पास से कुछ द्रव्य दिया और दूसरों लोगों को भी इसके लिए प्रबल प्रेरणा की। उनके उपदेशों से तत्काल पर्याप्त रुपया एकत्र हो गया।[2]

(घ) शूद्रों के उद्धार और बचाने की चिन्ता भी उनके चित्त में बड़ी गहरी थी। सन् १८८१ में बम्बई में एक दिन एक मनुष्य महर्षि दयानन्द के पास आया और बोला भगवन्, मैं ब्राह्मण हूँ। अब काम-धंधा तो कुछ नहीं करता केवल पेन्शन पर निर्वाह होता है। संस्कृत तो नहीं आती परन्तु कुछ कर्मकाण्ड के श्लोक कण्ठाग्र किये हुए है। स्वामीजी ने कहा—आप उपदेश का कार्य करने लग जाइए। उसने विनय की कि रात-दिन बाल-बच्चों की चिन्ता और सोच में लीन रहता हूँ। ऐसी अवस्था में उपदेश का काम कैसे किया जा सकता है। स्वामी जी ने कहा आपको पेन्शन मिलती है उसमें पुत्र-पौत्र का परिपालन भली-भांति हो सकता है। आप ब्राह्मणवंशीय हैं। आपके पुरातन पुरुष पूर्वकाल में जगद्गुरु समझे जाते थे। वे जगदुपकार में जी-जीवन से लगे रहते थे। आपके लिए भी उनके चरण-चिन्हों पर चलना उचित है। अपने पूर्वजों की भांति परोपकार का व्रत धारण कीजिए और कटि बाँधकर भीलों की बस्तियों में चले जाइये। वे दिनों दिन धड़ाधड़ ईसाई होते चले जा रहे हैं। उनको अपनी इच्छानुकूल ईश्वर भक्ति का उपदेश देकर किसी प्रकार ईसाइयों के पंजे से बचाइये। आर्य जाति के छिलते हुए तलुओं की टूटती हुई उंगलियों की और टूटते हुए पांव की रक्षा कीजिए। पर उस ब्राह्मण के ऐसे भाग्य न थे जो श्रीवचनों को स्वीकार करता।[3]

---

१. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-१, पृ. १३३

२. श्रीमद्दयानन्दप्रकाश, पृ. ३७७

३. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ. ४६०

शूद्र बनाम दण्ड व्यवस्था—

सच्चे समाजवाद की स्थापना तथा दलित वर्ग के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार रखने के लिए स्वामी दयानन्द ने मनुस्मृति के आधार पर जिस दण्ड व्यवस्था का वर्णन किया है, वह यहाँ उल्लेखनीय है। उनके अनुसार जिस अपराध में साधारण मनुष्य पर एक पैसा दण्ड हो उसी अपराध में राजा को सहस्र पैसा दण्ड होवे।—मंत्री को आठ सौ गुणा—इसी प्रकार शूद्र को चोरी से आठ गुणा, वैश्य को सोलह गुणा, क्षत्रिय को बीस गुणा—इसी प्रकार ब्राह्मण को चौंसठ अथवा १२८ गुणा दण्ड होना चाहिये अर्थात् जिसका जितना ज्ञान और जितनी प्रतिष्ठा अधिक हो उसको अपराध में उतना ही अधिक दण्ड होना चाहिए। (सत्यार्थ प्रकाश षष्ठ समुल्लास)। इस प्रकार की धारणा हमारे सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में उपलब्ध होती है। वशिष्ट अध्याय २ सूत्र १७ में लिखा है कि यदि कोई मनुष्य उस आततायी वेद और उपनिषदों को भी क्यों न पढ़ा हो। इसी प्रकार बौद्धायन १, १०, १८, १८ के अनुसार यदि कोई ब्राह्मण किसी का वध करे, गुरु पत्नी की शैया की मर्यादा तोड़े, किसी का धन चुरावे, सुरा-पान करे तो राजा उसके ललाट अथवा पर शीर्ष रहित शरीर (धड़) अर्थशास्त्री के—का चिन्ह, शृगाल का अथवा मदिरा की दुकान का चिन्ह अंकित करके देश से बहिष्कृत कर दे।

आधुनिक काल में भले ही यह घोषणा हो कि दण्ड व्यवस्था सभी के लिए समान है, किन्तु व्यवहार में केवल दलित वर्ग के लोग ही पिस रहे हैं। राजनीतिज्ञ अपने प्रभाव से, पूँजीपति अपने धन से तथा शिक्षित अपने चातुर्य से कोई भी दण्ड ग्रहण नहीं करते। पुलिस और न्यायाधीश अपराधी को दण्ड न देकर किसी निरीह प्राणी को बलि का बकरा बनाते हैं। यह सत्य है, दलित वर्ग का व्यक्ति केवल अपनी पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिये अपराध में प्रवृत्त होता है—'बुभुक्षित: किं न करोति पापम्?' जबकि अन्य लोग लोभ, स्वार्थ अथवा अहंकारवश स्वयं पाप करते हैं अथवा किसी से कराते हैं। धनी व्यक्ति अपने धन के मद में तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति अपने अहंकार के नशे में दलितवर्ग के किसी निरीह प्राणी के सन्मुख रोटी का टुकड़ा फेंक कर उनसे अपराध करवाते हैं। यदि हमारे देश में अपराधों की न्यायपूर्वक छानबीन हो तो प्राय: सभी सरकारी अधिकारी, बड़े-बड़े पूँजीपति तथा उच्च पदों पर आसीन प्राय: सभी व्यक्ति अपराधी सिद्ध होंगे। हमारे देश में दलित वर्ग के उन्नति न कर सकने का यह एक बहुत बड़ा कारण है कि उच्च वर्ग पक्षपातपूर्वक अपने अयोग्य सम्बन्धियों (असली शूद्रों) को ही उच्च स्थान पर आसीन करते हैं। वे उन योग्य व्यक्तियों, सच्चे ब्राह्मणों को आगे नहीं बढ़ने देते जो दुर्भाग्यवश दलित वर्ग में उत्पन्न हुए थे। ऐसे लोग महान् दण्ड के अधिकारी हैं। महर्षि दयानन्द ने ऐसे राजा एवं राज्य की महान्

भर्त्सना की है जो अपराध को सहन करता है। उनके अनुसार ऐसा राजा शीघ्र नष्ट हो जाता है और राज्य में द्वेष उत्पन्न होता है (दे० सत्यार्थ प्रकाश षष्ठ समुल्लास)। हमें यदि अपने देश की वास्तविक उन्नति अभीष्ट है तो हमें सुदृढ़ दण्ड नीति अपनानी होगी।

इस प्रसंग में अथर्ववेद की निम्नोक्त ऋचा को उद्धृत करना आवश्यक है, जिसमें राजा तथा प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति के लिए निम्नलिखित आदर्श था—

> प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु।
> प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये॥ —अथर्व १६।६२।१

हे प्रभो, मुझे ब्राह्मणों का, क्षत्रियों का, शूद्रों का और वैश्यों का प्यारा बनाइये।

शूद्रों को विशेषाधिकार—

आज दलित वर्ग के उत्थान के लिए उन्हें कुछ विशेषाधिकार देने की पद्धति भारतीय राजनीति में चल रही है। किन्तु वस्तुत: उन विशेषाधिकारों का दुरुपयोग अधिक हो रहा है। क्योंकि भारतीय राजनीति में आज भी वर्ण या जाति को गुण-कर्म के आधार पर न मानकर जन्म के आधार पर स्वीकार किया जा रहा है। परिणामस्वरूप धनी व शिक्षित जन्मना हरिजन ही उन विशेषाधिकारों का लाभ उठाते हैं। निर्धन, अशिक्षित अथवा पिटे हुए हरिजनों को उनके कुछ विशेषाधिकार हैं, इसका ज्ञान भी नहीं होगा, अत: यदि हरिजनों के विकास के लिए विशेषाधिकारों की वर्तमान पद्धति रखनी भी है तो भी ये केवल उन हरिजनों के लिए अथवा उनकी सन्तान के लिए होने चाहिएँ जो कि निर्धन व अशिक्षित हैं। अथवा केवल उन्हीं शिक्षित हरिजन युवकों को विशेषाधिकार देने चाहिएँ जिनके माता-पिता अशिक्षित व निर्धन हैं। शिक्षित व धनी हरिजनों की सन्तान को भी यदि विशेषाधिकार दिये जाते रहेंगे तो उनका लाभ कुछ ही लोग उठाएँगे, जैसा कि आज हो रहा है।

हमारा तो विचार है कि हरिजन बालक-बालिकाओं को ७-८ वर्ष की आयु से लेकर २ वर्ष की आयु तक घर के दूषित वातावरण से दूर किसी स्वस्थ वातावरण में रखा जाए और उनके खान-पान, परिधान व शिक्षा आदि का सम्पूर्ण व्यय राज्य करे। यदि गत हजारों वर्षों से उनके साथ अमानवीय व्यवहार होता रहा है तो उनका आज यह पूरा अधिकार बनता है कि उनके उत्थान के लिए राज्य यह सम्पूर्ण व्यय अपने ऊपर ले। हमारा विश्वास है कि उनकी शिक्षा आदि की सम्पूर्ण व्यवस्था कर देने पर उन्हें कुछ अन्य विशेषाधिकारों की आवश्यकता नहीं रह जाएगी।

२५ वर्ष से ऊपर के अशिक्षित व निर्धन हरिजनों को नि:शुल्क व सुलभ न्याय, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा कृषि व विविध लघु उद्योगों को खोलने के उपाय सिखा कर आत्मनिर्भर बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

वर्ण-व्यवस्था में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि जिसकी जो वृत्ति (स्वभाव) है, जिसकी जो योग्यता है, जो जितना परिश्रम करता है, उसको वही प्राप्त होना चाहिए। ऋग्वेद का मन्त्र है—

समौ चिद्धस्तौ न समं विविष्टः सं मातदा चिन्न समं दुहाते।
यमयोश्चिन्न समावीर्याणि ज्ञानती चिन्सन्तौ न समं पृणीतः॥

—ऋग् १०।११७।९

मनुष्य के दोनों हाथ देखने में एक समान होते हैं तो भी उनमें काम करने की शक्ति एक समान नहीं होती, एक ही मां की दो बच्छियें एक जितना दूध नहीं देतीं, दो जोड़िये भाइयों में एक जैसा बल और पराक्रम नहीं होता! एक ही वंश के दो व्यक्ति एक जैसे उदार नहीं होते और वे एक जैसा कभी दान नहीं करते। इसी रुचि व योग्यता-भेद के कारण ही पृथक्-पृथक् वर्ण वनते हैं। एक अन्य मन्त्र है :

क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वमर्थमिव त्वमित्यै।
वि सदृशा जीविताभिप्रचक्ष उषा अजीगर्भुवनानि विश्वा॥

—ऋ० १।११३।६

हे उषा, तुम भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले जीवधारियों को अपने-अपने काम-धन्धे देखने भालने के लिए रात्रि के पीछे अन्धकार से बाहर कर देती हो, किसी को क्षत्रिय के यशस्वी काम करने के लिए, किसी को धन कमाने के वैश्य के काम करने के लिए और किसी को चल फिर कर शूद्र का काम करने के लिए।

अतः यह बात समझ में नहीं आती। किन्तु आज भी हम यह तो देखते ही हैं कि अर्थ की इच्छा रहते हुए भी कुछ लोगों की ज्ञान-प्राप्ति में, कुछ की युद्ध आदि में तथा कुछ की धनोत्पादन में अधिक वृत्ति रहती है। यह भी देखने में आता है कि धन की इच्छा भी सब की समान नहीं होती। कुछ धन कमाने में अधिक परिश्रम करते हैं और कुछ कम। धन का सम्बन्ध सम्मान व प्रतिष्ठा से जुड़ जाने के कारण ही व्यक्ति धन चाहने लगा है। आप ब्राह्मण को पूर्ण सम्मान दे दीजिए। वह अपने ज्ञान के विकास के कार्य को पूर्ण मनोयोग से करता रहेगा। क्षत्रिय को अधिकार सम्पन्न बना रहने दीजिए वह अपनी शक्ति का उपयोग अन्याय के विरुद्ध करेगा। वैश्य के पास धनोत्पादन के साधनों पर नियन्त्रण बना रहने दीजिए वह उसका ठीक वितरण करेगा।

किसी भी राष्ट्र के तीन प्रमुख कर्त्तव्य होते हैं। राष्ट्र में ज्ञान का विस्तार, उसकी रक्षा-व्यवस्था करना तथा उसमें धन-सम्पत्ति की वृद्धि कर अभावों की परि-समाप्ति। इन तीनों का दायित्व क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लेते हैं। और इस प्रकार राष्ट्र का पूर्ण विकास हो पाता है। शिक्षा की समाप्ति पर ये तीनों वर्ग अपने

राष्ट्र से अज्ञान, अन्याय और अभाव को दूर करने का व्रत लेते हैं। इस प्रकार वर्ण-व्यवस्था राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति का साधन है। दयानन्द लिखते हैं कि विद्या और धर्म के प्रचार का अधिकार ब्राह्मणों को देना क्योंकि वे पूर्ण विद्यावान् और धार्मिक होने से काम को यथायोग्य कर सकते हैं। क्षत्रियों को राज्य के अधिकार देने से कभी राज्य की हानि वा विघ्न नहीं होता। पशुपालनादि का अधिकार वैश्यों को ही होना योग्य है, क्योंकि वे इस काम को अच्छे प्रकार कर सकते हैं। शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिए है कि वह विद्यारहित मूर्ख होने से विज्ञान सम्वन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता, किन्तु शरीर के काम सब कर सकता है।[1] मनु कहते हैं कि ब्राह्मण ज्ञान से, क्षत्रिय बल से, वैश्य धन-धान्य से और शूद्र जन्म अर्थात् अधिक आयु से बड़ा होता है :

विप्राणां ज्ञानतो ज्यैष्ठयं क्षत्रियाणां तु वीर्यतः।
वैश्यानां धान्यधनतः शूद्राणामेव जन्मतः॥ मनु २।१५५[2]

वर्ण-व्यवस्था का आधार यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्य प्रवृत्तियों की दृष्टि से तीन वर्णों या वर्गों में विभक्त है। एक वर्ग सम्मान का इच्छुक है, द्वितीय प्रभुता, स्वामित्व व अधिकार का तथा तीसरा धन सम्पत्ति के अधिकाधिक अर्जन में पूर्ण सुख अनुभव करता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वर्ण व्यवस्था को केवल श्रम विभाजन नहीं कहा जा सकता। श्रम विभाजन शब्द आर्थिक क्षेत्र का है अर्थात् वर्ण-व्यवस्था मात्र पेशा या व्यवसाय नहीं है। वरन् सत्व, रजस् व तमस्—गुणों के अन्तर से मनुष्य का प्रवृत्तिगत भेद है। सात्विक प्रवृत्तियों की प्रधानता वाला व्यक्ति ब्राह्मण, राजस् प्रवृत्तियों की प्रधानता वाला व्यक्ति क्षत्रिय, सात्विक, राजस तथा तामस—तीनों प्रवृत्तियों वाला व्यक्ति वैश्य और तामस प्रवृत्तियों की प्रधानता वाला व्यक्ति शूद्र होता है। संसार के सभी मनुष्य किसी भी देश, जाति व धर्म के हो सकते हैं। ब्राह्मणादि की प्रवृत्तियों में से किसी न किसी एक प्रवृत्ति वाले अवश्य होंगे।[3] आधुनिक मनोविज्ञान जीवों को उद्बुद्ध व अनुद्बुद्ध भेद से दो वर्गों में विभक्त करता है। उद्बुद्ध जीवन में ज्ञान क्रिया तथा इच्छा भेद से मनुष्यों की प्रवृत्तियों में भेद होता है। इस भेद ही के कारण व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य बनता है। जिनमें इन तीनों में से एक भी विशेषता नहीं होती वे अनुद्बुद्ध जीव शूद्र होते हैं।

आज का मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सकता कि कोई व्यक्ति ऐसा भी हो सकता है कि जो बिना धन की चिन्ता किए मात्र ज्ञान के संग्रह में और उसके वितरण

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास,
२. सत्यार्थप्रकाश. १० समुल्लास,
३. मेरा धर्म, आचार्य प्रियव्रत, पृ. १२१-१२२

में अपना जीवन लगा दे या बिना धन की प्राप्ति के वह राष्ट्र के लिए मरने-मिटने के लिए तैयार रहे। यह युग आर्थिक युग है।

प्रत्येक वर्ण के कर्त्तव्य निर्दिष्ट कर देने के उपरान्त महर्षि लिखते हैं कि वर्णों को अपने-अपने अधिकार में प्रवृत्त करना राजा आदि सभ्यजन का काम है। यजुर्वेद के ९/२४ में सम्राट् अदित्सन्तं दापयति' कहा गया है। अर्थात् जो व्यक्ति नहीं देता है, सम्राट् उससे दिलवाता है। अर्थात् यदि ब्राह्मण विद्या का, क्षत्रिय शक्ति का तथा वैश्य अपने धन का दान राष्ट्र के निमित्त नहीं करता तो राजा उससे करवाता है। राजा के अतिरिक्त इन तीनों पर अपनी-अपनी शिक्षा संस्थाओं, गुरुओं व आचार्यों का तथा मान्य तपस्वी संन्यासियों का नैतिक दबाव इतना रहता है कि सभी अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक रहते हैं।

यह सत्य है कि वर्ण व्यवस्था में प्रत्येक वर्ण अपने कर्त्तव्य का पालन करता है और परिणामस्वरूप उन्हें क्रमशः सम्मान, प्रभुत्व तथा धन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। किन्तु उन्हें इनके मद में उन्मत्त होकर उसका दुरुपयोग करने का अधिकार नहीं दिया गया। ब्राह्मण को तो यहाँ तक कहा है—

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।
अमृतस्तयेव चाकांक्षेदवमानस्य सर्वदा॥ मनु २।१६२

ब्राह्मण सम्मान से विष की तरह दूर रहे, अपमान की अमृत की तरह आकांक्षा करे। क्षत्रिय को प्रभुत्व देकर सावधान किया—

दण्डो हि समुदत्तेजोदुर्धरश्चाकृतात्मभि।
धर्माद्विचलिते हन्ति नृपमेव सबाधवम्॥ मनु।७ २८

सत्य से डिगने वाले क्षत्रिय को दण्डशक्ति ही उसके बंधु बांधवों के साथ नष्ट कर डालती है।[1] इसी प्रकार वैश्य को कहा—दद्याच्च सर्वभूतानामन्नमेव प्रयत्नतः। धनार्जन व धन का संग्रह करते हुए वह सब प्राणियों को देने का भी प्रयत्न करे।

वर्ण-व्यवस्था के विषय में प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष रूप से पाश्चात्य विद्वानों ने भी विचार किया है। प्लेटो ने समाज के वही विभाग किए हैं जो वर्ण-व्यवस्था में पाये जाते हैं। उनके विभाग हैं—गार्डियन्स या फिलोस्फर्स, वारियर सोलजर्स तथा आर्टिजन्स या कॉमन मैन। वर्ण संकरता के विरुद्ध प्लेटो ने कहा था—जब ऐसा व्यक्ति जो प्रकृति के अनुसार आर्टिजन अर्थात् वैश्य प्रवृत्ति का है धन के घमण्ड में आकर वारियर अर्थात् क्षत्रिय श्रेणी में प्रविष्ट होना चाहता है, जब वारियर अपने से ऊँची श्रेणी के योग्य न होता हुआ सीनेटर या गार्डियन अर्थात् ब्राह्मण श्रेणी में आना चाहता है, जब एक ही व्यक्ति सब के काम करना चाहता है, तब समाज में दुर्व्यवस्था फैल जाती है। किसी भी राज्य में सुशासन होने के लिए आवश्यक है कि भिन्न

1. वैदिक संस्कृति के मूलतत्व, सत्यव्रत सिद्धतालंकार

भिन्न व्यक्तियों को अपने-अपने धर्म में ही लगाया जाए और अव्यवस्था न होने दी जाए।

इंग्लैंड के प्रसिद्ध विचारक एच० जी० वेल्स ने 'वारवैल्थ एण्ड हैप्पीनैस ऑफ मैन काइण्ड' नामक पुस्तक में मनुष्यों की तीन प्रवृत्तियां बताई हैं—

(क) पेज़ेण्ट परसोना (Peasant Persona) अर्थात् कृषक लोगों की प्रवृत्तियाँ (ख) नोमड परसोना (Nomad's Persona) बलशाली व साहसी लोगों की प्रवृत्तियाँ (ग) प्रीस्ट परसोना अथवा एडुकेटिड परसोना (Priest Persona or the educated Persona) पुरोहित अथवा शिक्षित लोगों की प्रवृत्तियाँ।

रूसी विद्वान औस्पेंस्की ने न्यू मॉडल ऑव दि युनिवर्स में मनु को उद्धृत करके कहा है कि वर्णाश्रम-व्यवस्था की पद्धति समाज व्यवस्था की सर्वश्रेष्ठ पद्धति है। इसी प्रकार हॉलैण्ड के प्रसिद्ध विचारक एच० मीज़ ने धर्म एण्ड सोसाइटी तथा ह्यूमैन फैमिली एण्ड इण्डिया में वर्णाश्रम व्यवस्था को समाज-व्यवस्था की सर्वोत्तम पद्धति कहा है।

हमारा मत है कि जिस रूप में (अर्थात् गुणकर्मानुसार) महर्षि ने वर्ण व्यवस्था की व्याख्या की है, इसी रूप में वर्ण-व्यवस्था को क्रियात्मक रूप देकर व्यवहार में लाने से कोई भी राष्ट्र समुन्नत हो सकता है।

२

आश्रम-व्यवस्था

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित समाज-व्यवस्था का एक आधार है—आश्रम व्यवस्था। शतपथ ब्राह्मण (१४ काण्ड) का वचन है—ब्रह्मचर्याश्रमं समाप्य गृही भवेत् गृही भूत्वा वनी भवेद्वनी भूत्वा प्रव्रजेत्—अर्थात् व्यक्ति सर्व-प्रथम ब्रह्मचर्याश्रम का पालन करें। ब्रह्मचर्याश्रम को समाप्त करके गृहस्थ होकर, वानप्रस्थ को धारण करे। वानप्रस्थ होकर संन्यासी होवे। यह अनुक्रम से आश्रम का विधान है।[1] आश्रम व्यवस्था सम्पूर्ण समाज के लिए नियमित व संतुलित जीवन का मार्ग प्रशस्त करती है। महर्षि की यह निश्चित मान्यता है कि सांसारिक भोगों का पूर्ण सुख प्राप्त करने के लिए जीवन में संयम व नियंत्रण भी आवश्यक है। वैदिक संस्कृति का 'त्यागपूर्वक भोग'[2] का सिद्धान्त किसी उच्च आदर्श का प्रतिपादन मात्र नहीं है, वरन् यह एक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है। मनोविज्ञान के अनुसार संतुलित भोग अधिक आनन्द प्रदान करता है। जिस प्रकार भोजन का पूर्ण आनन्द लेने के लिए तेज भूख की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार अन्य सांसारिक भोगों के विषयों में भी यह सत्य है कि व्यक्ति के मन में उनको प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा होनी चाहिए।

ब्रह्मचर्य काल में व्यक्ति को तपस्वी रखकर वस्तुतः भोगों से पूर्ण आनन्द लेने के लिए उसके मन में भूख जागृत करने का ही उपक्रम किया जाता है। साथ ही उसके देह व मन को इस प्रकार से तैयार किया जाता है कि वह प्रत्येक भोग को पचा सके।

---

१. (क) सत्यार्थ प्रकाश, ५वां समुल्लास, पृ, १२४
   (ख) तुलना कीजिए : जाबालोपनिषद्, खण्ड ४

२. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
   तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥—यजु० ४०।१
   हे मनुष्य ! इस जगत् के सब पदार्थों में परमेश्वर रमे हुए हैं, इसलिए संसार के पदार्थों का त्यागपूर्वक उपभोग कर, किसी के धन में लोभ-लालच मत कर।

यदि वातावरण सात्विक व पवित्र हो तो २५-३० वर्षों तक की आयु तक सामान्य व्यक्ति भी संयम से रहकर अपने देह व मन को पुष्ट कर सकता है। आज का व्यक्ति प्रारम्भ से ही उत्तेजक वातावरण में रहता है और बहुत ही जल्दी सांसारिक भोगों का उपभोग करना आरम्भ कर देता है। गृहस्थाश्रम में आते-आते उसकी शक्तियाँ क्षीण हो चुकी होती हैं, परिणामस्वरूप वह पूर्णकाम नहीं हो पाता।

यही स्थिति ५०-६० वर्षों की आयु के उपरान्त होती है। तब व्यक्ति की इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं और उसे भोगों से पूर्ण सुख की प्राप्ति नहीं होती। अतः वैदिक संस्कृति उसे फिर से तपस्वी जीवन व्यतीत करने, अपने शरीर को स्वस्थ रखने तथा ज्ञान की वृद्धि व प्रसार में अपना समय लगाने की व्यवस्था करती है।

इस मनोवैज्ञानिक आधार के अतिरिक्त आश्रम-व्यवस्था का एक सामाजिक व आर्थिक पहलू भी है। वर्तमान युग में अधिकांश देश आर्थिक विपदा के शिकार हैं। साथ ही नवयुवक बेकारी का दण्ड भोग रहे हैं। आश्रम-प्रणाली आर्थिक संतुलन उत्पन्न कर व्यक्ति को सुखपूर्वक जीवन का मार्ग प्रशस्त करती है। वर्तमान युग में व्यक्ति १८-२० वर्ष की आयु से और अधिकांश तो इससे भी पूर्व धनोपार्जन के कार्य में लग जाते हैं और जब तक वे शारीरिक दृष्टि से अशक्त नहीं हो ज ते तब तक कमाने से अवकाश ग्रहण नहीं करते। किन्तु आश्रम व्यवस्था के अनुसार व्यक्ति को गृहस्थी होने पर ही, अर्थात् २५-३० वर्षों की आयु से ही धनार्जन आरम्भ करना चाहिए और ५०-६० वर्षों की आयु के उपरान्त धन कमाने के कार्य से अवकाश ले लेना चाहिए। यही व्यवस्था उच्च पदों पर आसीन होने व राज्याधिकारों पर समय का अंकुश लगाती है। परिणामस्वरूप बेकारी की सम्भावना नष्ट हो जाती है और मस्तिष्क पर कमाने की चिन्ता का भार अधिक समय तक नहीं रहता।

इस प्रसंग में यह स्पष्ट कर देना अत्यन्त आवश्यक है कि आश्रम-व्यवस्था में धन को अनावश्यक रूप से एकत्र करने की आवश्यकता नहीं है। आज व्यक्ति धन दो कारणों से एकत्र करता है—(१) अपनी सन्तान की शिक्षा व विवाह आदि के लिए तथा (२) अपने वार्द्धक्य के लिए। आश्रम प्रणाली में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है, विवाह पर कोई व्यय नहीं होता, तथा वार्द्धक्य में वह किसी एक आश्रम का सदस्य हो जाता है और वहाँ उसकी जीवन-निर्वाह में कोई कठिनाई नहीं आती।

आश्रम-व्यवस्था में ब्रह्मचारी और वानप्रस्थी नगरों को छोड़कर जंगल में बनी कुटिया में आ बसते हैं, इसका एक प्रत्यक्ष लाभ यह होता है कि परिवारों व नगरों का भार (भीड़) कम हो जाता है। परिवार की निवास व आर्थिक समस्याओं का यह एक सरल समाधान है।

आश्रम व्यवस्था में ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) और वानप्रस्थी दोनों ही अन्न, वस्त्र

तथा अन्य वस्तुओं के उत्पादन में भाग लेते हैं। वे अपने जीवन-निर्वाह के लिए अपने आश्रम में ही कृषि और वस्त्र निर्माण आदि उद्योग स्थापित करते हैं तथा उससे अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। वर्तमान काल में वृद्ध व्यक्ति राष्ट्र के लिए जहाँ एक समस्या माने गये हैं, वहाँ आश्रम-व्यवस्था के अनुसार उनका उपयोग शिक्षा के प्रचार और प्रसार में किया जाता है। वे अपने ज्ञान का विस्तार करने के साथ अपने ज्ञान को वितरित भी करते हैं। उनका यह रचनात्मक कार्य राष्ट्र के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है।

प्रस्तुत अध्याय में हम प्रत्येक आश्रम का वर्णन करके सुदृढ़ समाज के निर्माण में उसके उपयोग पर प्रकाश डालेंगे।

ब्रह्मचर्य आश्रम—ब्रह्मचर्य प्रथम आश्रम है। इस दृष्टि से इसका बहुत महत्त्व है। वस्तुत: यही आश्रम शेष तीन आश्रमों—दूसरे शब्दों में मनुष्य की सम्पूर्ण आयु—का आधार है। महर्षि का कथन है कि ब्रह्मचर्याश्रम, जो कि सब आश्रमों का मूल है, उसके ठीक-ठीक सुधरने से सब आश्रम सुगम और बिगड़ने से नष्ट हो जाते हैं।[1] इस काल में व्यक्ति अपना सम्पूर्ण विकास करता है। अर्थात् ब्रह्मचर्य काल में वह एक ओर अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करता है और साथ ही शरीर व इन्द्रियों को पुष्ट तथा मन, बुद्धि, चित्त व आत्मा का भी पूर्ण विकास करता है।

ब्रह्मचर्य काल में व्यक्ति मुख्य रूप से ज्ञान प्राप्त करता है। यदि वह ज्ञान प्राप्त न करे तो निरा पशु रह जाय। महर्षि लिखते हैं कि जो गर्भ में बस के माता और पिताके सम्बन्ध से मनुष्य का जन्म होता है वह प्रथम जन्म कहाता है और दूसरा यह है कि जिसमें आचार्य पिता और विद्या माता होती है, इस दूसरे जन्म के न होने से मनुष्य को मनुष्यपन नहीं प्राप्त होता। इसलिए मनुष्यों को उसको अवश्य प्राप्त होना चाहिए।......इस काल में ब्रह्मचारी, पृथिवी, सूर्य और अन्तरिक्ष इन तीनों प्रकार की विद्याओं को पालन और पूर्ण करने की इच्छा करता है।......ब्रह्मचर्य और धर्मानुष्ठान से ही विद्वान् लोग जन्म-मरण को जीत के मोक्ष-सुख को प्राप्त हो जाते हैं।......मनुष्य का आत्मा ब्रह्मचर्य से प्रकाशित होके सबको प्रकाशित कर देता है। इससे ब्रह्मचर्याश्रम ही सब आश्रमों में उत्तम है।[2]

महर्षि लिखते हैं कि प्रथम वय में आचार्य छात्र को विद्याभ्यास में संलग्न करे और ब्रह्मचारी ऐसा निश्चय रखे कि जो मैं प्रथम अवस्था में ठीक-ठीक ब्रह्मचर्य रखूँगा तो मेरा शरीर और आत्मा आरोग्य व बलवान् व मेरे प्राण शुभ गुणों से युक्त होंगे।[3]

१—२. अथर्व ११।३।५।३—७,१७,१९, की महर्षि दयानन्द द्वारा कृत व्याख्या (देखिए ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वर्णाश्रम विषय:, पृ. २३५-२३६

३. सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास, पृ. ४५

महर्षि दयानन्द ने ब्रह्मचर्य काल में व्यक्ति को समग्र ज्ञान प्राप्त करने के साथ इन्द्रिय-निग्रह व धर्म के अन्य तत्वों को अपने जीवन में अपनाने पर बल दिया है। अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में—स आचार्य तपसा पिपर्ति, रक्षति तपसा ब्रह्मचारी, ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत आदि मन्त्रों में १५ बार तप शब्द का प्रयोग करके ब्रह्मचारी को तप से अपने जीवन का निर्माण करने का संदेश दिया है।

आज ब्रह्मचर्य शब्द के अर्थ में कुछ संकोच हुआ है। यह केवल अपनी कामविषयक वृत्तियों पर विजय प्राप्त करने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अनेक बार यह इससे भी अधिक संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होता है। उसके अनुसार यह अविवाहित व्यक्ति के अर्थ में आता है। किन्तु वस्तुतः ब्रह्म अर्थात् ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में विचरण करने वाले अर्थ के अतिरिक्त ब्रह्म अर्थात् प्रत्येक ईश्वरीय गुण से युक्त व्यक्ति को ब्रह्मचारी कहते हैं। सच्चा ब्रह्मचारी कामवृत्ति पर नियन्त्रण रखता है किन्तु यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि कामवृत्ति पर नियन्त्रण कर लेना ही पर्याप्त नहीं है। यदि कोई व्यक्ति क्रोध करता है, ईर्ष्या करता है, असत्याचरण करता है या इसी प्रकार की किसी अन्य दुष्प्रवृत्ति का शिकार है, उसका भी ब्रह्मचर्य खण्डित होता है। इन दुष्प्रवृत्तियों के होने पर व्यक्ति की जहाँ मानसिक और बौद्धिक शक्तियाँ नष्ट होती हैं, वहाँ वह शारीरिक दृष्टि से भी क्षीण होता है। सच्चा ब्रह्मचारी प्राणिमात्र के प्रति प्रेम की वृत्ति रखता है। उसमें इतनी मानसिक शक्ति होती है कि वह ईर्ष्या, क्रोध आदि दुष्प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त कर लेता है। सत्य ही वह इतना निर्भय होता है कि उसे कभी असत्याचरण की आवश्यकता नहीं होती। मनोविज्ञान का यह मान्य सिद्धान्त है कि ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, असत्याचरण आदि दुष्प्रवृत्तियों से मनुष्य का मन और आत्मा ही दुर्बल नहीं होता वरन् व्यक्ति का रक्त और उससे उसका देह भी रुग्ण होता है, इसके विपरीत उदारता, शान्ति, प्रेम और सत्य से मनुष्य के आत्मा का विस्तार होता है। उसका रक्त शुद्ध होता है और शरीर पुष्ट होता है। मनु ने जितेन्द्रिय अथवा ब्रह्मचारी में निम्नलिखित लक्षण आवश्यक माने हैं—

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः।
न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः॥ —मनु० २/९८

अर्थात् जितेन्द्रिय (ब्रह्मचारी) उसको कहते हैं कि जो स्तुति सुन के हर्ष और निन्दा सुन के शोक, अच्छा स्पर्श करके सुख और दुष्ट स्पर्श से दुःख, सुन्दर रूप देख के प्रसन्न और दुष्ट रूप देख के अप्रसन्न, उत्तम भोजन करके आनन्दित और निकृष्ट भोजन करके दुःखी, सुगन्ध में रुचि और दुर्गन्ध में अरुचि नहीं करता।[1]

इस प्रसंग में यह स्पष्ट करना अत्यन्त आवश्यक है कि व्यक्ति केवल अविवाहित होने मात्र से ब्रह्मचारी नहीं हो जाता। यह हो सकता है कि अविवाहित व्यक्ति भी

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, १०वाँ समुल्लास,

अपने वीर्य अथवा स्त्रीत्व की उतनी ही हानि करते हों जितनी कि विवाहित व्यक्ति करता है। उसके मन में भी उतनी ही दूषित वृत्तियाँ जागृत होती हों जितनी विवाहित व्यक्ति में उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत अविवाहित व्यक्ति इस उत्तेजित वातावरण में रहकर अनेक प्रकार की कुण्ठाओं से त्रस्त हो जाता है। उसका स्वभाव रूक्ष और कसैला हो जाता है। उसे ब्रह्मचारी कहना ब्रह्मचर्य शब्द का अपमान है।

सारांश यह कि ब्रह्मचर्य काल में व्यक्ति अपना सर्वांगीण—शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा का—विकास करने का प्रयत्न करता है। अस्वस्थ व चंचल मन वाला व्यक्ति ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर पाता। ब्रह्मचर्य को स्थिर रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि व्यक्ति सदा सावधान रहे। आलस्य और तन्द्रा ब्रह्मचर्य के शत्रु हैं। कठोर परिश्रम, समुचित व्यायाम व प्राणायाम आदि से व्यक्ति आलस्य को दूर कर सदा स्वस्थ रह सकता है। संतुलित व पौष्टिक भोजन भी उसके लिए अत्यन्त आवश्यक है। उसे तपस्वी होना चाहिए। जीवन के हर प्रकार के संघर्ष को सहन करने में उसे सक्षम होना होगा। स्वाध्याय उसके जीवन का अंग होना चाहिए। सदा नये-नये ज्ञानों को प्राप्त करने की उसकी इच्छा उसको कामवृत्तियों व दुर्बलताओं की ओर जाने से रोकती है। अथर्ववेद (११/५/४) में 'ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति अर्थात् ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय रहकर श्रम करता हुआ तप से लोकों पर विजय प्राप्त कर लेता है।

इस सबके लिए आवश्यक है कि चारों ओर का वातावरण अत्यन्त सात्विक हो। जिनका कि हमारी इन्द्रियों पर अनुकूल प्रभाव पड़े। तामसिक वातावरण से इन्द्रियाँ उत्तेजित हो उठती हैं। हमारे मित्र, उठने-बैठने के स्थान, पुस्तकें, हमारे खेल आदि इस प्रकार के हों जो हमारे जीवन का उत्कर्ष करें।

व्यक्ति जीवन में अपने को सत्कार्यों में संलग्न रखकर ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है। कलकत्ता में युवक नेता अश्विनीकुमार दत्त ने ऋषि दयानन्द से ब्रह्मचर्य धारण करने, कामवासना उत्पन्न न होने का रहस्य पूछा तो दयानन्द ने उत्तर दिया कि मैं अपने मन को कभी भी खाली नहीं रहने देता। सदा उसे किसी न किसी काम में लगाये रखता हूँ। मैं या तो वेदभाष्य और वेदांगप्रकाश आदि ग्रन्थ लिख-लिखवा रहा होता हूँ या पत्र-व्यवहार में लगा होता हूं या व्याख्यान दे रहा होता हूं और शास्त्रार्थ कर रहा होता हूं या डेरे पर आये हुए जिज्ञासुओं की शंकाओं का समाधान कर रहा होता हूं या कुछ पढ़ रहा होता हूं और जब कोई और काम करने को नहीं होता है तब मैं या तो ध्यानावस्थित होकर योगसमाधि में बैठ जाता हूं अथवा ओंकार का जाप करने में लग जाता हूं। मैं प्रत्येक क्षण किसी न किसी काम में लगा रहता हूं। मैं अपने मन को खाली नहीं रहने देता। काम के विचारों को मेरे मन का फाटक सदा बन्द

मिलता है। इसी से मैं अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन कर सका हूं।[1] इस प्रकार सत्कार्यों में व्यस्तता तथा ईश्वरभक्ति आदि उपाय ब्रह्मचर्य के आधार हैं।

अपने जीवन के आरम्भिक २५-३० वर्षों तक अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए महर्षि चाहते हैं कि व्यक्ति नगरों के दूषित व उत्तेजक वातावरण से दूर किसी पर्वत की उपत्यका में या नदी के तट पर बने आश्रम में किसी महान् आचार्य के संरक्षण में अध्ययन के लिए चला जाय। जहाँ का वातावरण इतना सात्विक हो कि मन में कोई दूषित विचार उत्पन्न न हो। जहाँ की दिनचर्या इतनी व्यस्त हो कि व्यक्ति सदा सत्कार्यों में संलग्न रहे। अध्ययन द्वारा अपने मस्तिष्क का विकास करे।

नगरों से निकलकर अरण्यों में बने आश्रमों में सभी बच्चों (१० से २५-३० वर्षों) के पहुँच जाने से पारिवारिक समस्या का भी समाधान होता है। आज नगरों व ग्रामों में बने घरों का स्थान इतना संकुचित है कि न व्यक्ति उनमें सुविधापूर्वक रह सकता है और न उनमें रहकर बच्चों की पढ़ाई हो सकती है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इतने लोगों का वहाँ रहना अनुचित है।

महर्षि कहते हैं कि आजकल ब्रह्मचर्याश्रम में बहुत-सी गड़बड़ है। कितने ही नाम ब्रह्मचारी रखते हैं और झूठ-मूठ जटा बढ़ाकर सिद्धाई करते और जप पुरश्चरणादि में फंसे रहते हैं, विद्या पढ़ने का नाम नहीं लेते कि जिस हेतु से ब्रह्मचारी नाम होता है उस ब्रह्म अर्थात् वेद पढ़ने में परिश्रम कुछ भी नहीं करते। ये ब्रह्मचारी बकरी के गले के स्तन के सदृश निरर्थक हैं।[2]

गृहस्थाश्रम—गृहस्थाश्रम से सम्बद्ध हम एक पृथक् अध्याय दे रहे हैं, अत: उसका वर्णन वहीं देखना चाहिए।

वानप्रस्थ—मनु आदि शास्त्रकारों के आधार पर महर्षि दयानन्द का भी यह निश्चित मत है कि व्यक्ति पहले स्नातक बने अर्थात् पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त ही गृहस्थ बने और फिर निश्चितात्मा और यथावत् इन्द्रियों को जीत के वन में जाकर बसे।[3] जो लोग एक बार गृहस्थ होकर विविध भोगों का उपभोग करते हुए उससे विराम नहीं लेते, वे न केवल अपनी आयु को क्षीण करते हैं, वरन् अपना आध्यात्मिक विकास करने में भी अक्षम रहते हैं। अत: जब गृहस्थ के शिर के केश श्वेत हो जाएँ, त्वचा ढीली हो जाए और लड़के का भी लड़का हो जाए तब वह घर को छोड़कर वन में जाकर निवास करे।[4] गृहस्थ में वह जिस उत्तमोत्तम आहार का,

---

१. 'मेरा धर्म' में वैदिक धर्म और ब्रह्मचर्य तथा 'पश्चिमी डॉक्टर' शीर्षक अध्याय, पृ० २६९-२७० लेखक—आचार्य प्रियव्रत।

२. सत्यार्थ प्रकाश, एकादश समुल्लास, पृ० ३८५

३. एवं गृहाश्रमे स्थित्वा विधिवत्स्नातको द्विजः।
वने वसेतु नियतो यथावद्विजितेन्द्रियः॥

४. गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः।
अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्॥

वस्त्रादि उत्तमोत्तम पदार्थों का उपभोग करता था, उनको छोड़, पत्नी को अपने पुत्रों के पास छोड़ अथवा उसको भी अपने साथ लेकर वन में चला जाए।[1]

वन में वह दृढ़ेन्द्रिय होकर रहे। भोगेन्द्रिय और स्वादेन्द्रिय पर पूर्ण नियंत्रण रखे। किन्तु गृहस्थ की भांति वहां भी पंच यज्ञ—ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, अतिथि यज्ञ, पितृ-यज्ञ व बलिवैश्व देव यज्ञ—करता रहे। वन में नाना प्रकार के सामा आदि अन्न, सुन्दर सुन्दर शाक, मूल, फल-फूल कन्दादि से अपना व अतिथि का निर्वाह करे तथा यज्ञों में भी इन्हीं का उपयोग करे।[2] शरीर के सुख (आरोग्य) के लिए अति प्रयत्न करे, ब्रह्म-चारी रहे, अर्थात् स्त्री भले ही साथ हो, विषय चेष्टा न करे, भूमि पर सोवे, अपने आश्रित व स्वकीय पदार्थों में ममता न करे, वृक्ष के मूल में बसे।[3] गृहस्थ में जहाँ प्रत्येक पदार्थ के प्रति ममत्व होता है वहाँ वानप्रस्थ में पदार्थों के प्रति ममता का निषेध है। एक अन्य स्थल में भी वानप्रस्थी को जितात्मा, सबका मित्र, इन्द्रियों का दमनशील, दयालु आदि कहाते हैं।[4]

मैं अग्नि से होम करके विधिवत् दीक्षित होकर, व्रत, सत्याचरण और श्रद्धा को प्राप्त होऊं, ऐसी इच्छा करके वानप्रस्थ होकर वह नाना प्रकार की तपश्चर्या, सत्संग, योगाभ्यास सुविचार से ज्ञान और पवित्रता प्राप्त करे।[5] वानप्रस्थ में व्यक्ति अपने ज्ञान को प्रवृद्ध कर ज्ञान का वितरण भी करता है। वस्तुतः वानप्रस्थ के यही दो कर्त्तव्य कर्म हैं अध्ययन और अध्यापन।

म० दयानन्द ने वानप्रस्थ के प्रसंग में धर्म के तीन स्कन्धों—

(१) विद्या का अध्ययन, (२) यज्ञ अर्थात् उत्तम क्रियाओं का करना तथा (३) दान अर्थात् विद्यादि उत्तम गुणों का देना—का वर्णन किया है। इसी प्रकार (१) तप अर्थात् वेदोक्त धर्म के अनुष्ठानपूर्वक विद्या पढ़ाना, (२) आचार्य कुल में वस के विद्या पढ़ना और (३) परमेश्वर का ठीक-ठीक विचार करके सब विद्याओं को जान लेना—इन सब बातों में वानप्रस्थ में भी सब प्रकार की उन्नति करना

---

१. संत्यज्य ग्राम्यमाहारं सर्वं चैव परिच्छदम्।
पुत्रेषु भार्यां निःक्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा॥ —मनु ६।१-३

२. अग्निहोत्रं समादाय गृह्यं चाग्निपरिच्छदम्।
ग्रामादरण्यं निःसृत्य निवसेन्नियतेन्द्रियः॥ —मनु ६।४

(क) मुन्यन्नैर्विविधैर्मेध्यैः शाकमूलफलेन च।
एतानेव महायज्ञान्निर्वपेद्विधिपूर्वकम्॥ —मनु ६।५

३. अप्रयत्नः सुखार्थेषु ब्रह्मचारी धराशयः।
शरणेष्वममश्चैव वृक्षमूलनिकेतनः॥ मनु ६।२६

४. दान्तो मैत्रः समाहितः।
दाता नित्यमनादाता सर्वभूतानुकम्पकः॥ मनु ६।८

५. अग्न्यादधामि समिधमग्ने व्रतपते त्वयि
व्रतञ्च श्रद्धांचोपैमीन्धे त्वा दीक्षितो अहम्। मनु २०।२४

मनुष्यों का धर्म है ।[1] यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि व्यक्ति ने अपने गृहस्थ जीवन में जो अनुभव प्राप्त किये हैं, वानप्रस्थ में उनका अध्यापन तथा अध्यात्म-विद्याओं का स्वयं ही अभ्यास (स्वीकार) करना उसका कर्त्तव्य है । वानप्रस्थ व्यक्ति स्वाध्याय अर्थात् पढ़ने-पढ़ाने में नियुक्त रहें ।[2]

वानप्रस्थ में व्यक्ति प्राणायाम, योगानुष्ठान व ईश्वरभक्ति आदि में भी लीन रहते हैं । मुण्डकोपनिषद् में वानप्रस्थ का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है—

तपःश्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये,
शान्ता विद्वांसो भैक्षचर्यां चरन्तः ।
सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयांति,
यत्राऽमृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा । मु० उ० २/११

जो शान्त, विद्वान् लोग वन में तपधर्मानुष्ठान और सत्य को श्रद्धा करके भिक्षाचरण करते हुए जंगल में बसते हैं, वे जहाँ नाशहित पूर्ण पुरुष हानि-लाभ रहित परमात्मा है, वहाँ निर्मल होकर प्राणाहार से उस परमात्मा को प्राप्त होके आनन्दित हो जाते हैं ।

अन्त में वानप्रस्थाश्रम की निम्नलिखित उपयोगिताएँ उल्लेखनीय हैं—

(१) वृद्धावस्था में आकर व्यक्ति की शक्तियाँ सीमित हो जाती हैं । उसकी शक्तियों को बनाए रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसे पारिवारिक व अन्य सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त रखा जाय । घर से दूर किसी तपोवन में पहुँचकर ही वह पारिवारिक व सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त रह सकता है ।

(२) वृद्धावस्था में सांसारिक उत्तेजक वातावरण को न छोड़ने पर वह अपनी कामवृत्ति पर नियन्त्रण नहीं कर पाता । वह लम्बे समय तक भोग में प्रवृत्त रहता है । जिससे न केवल वह अस्वस्थ होता है, वरन् अनेक रोग भी उत्पन्न होने लगते हैं । अपने शरीर को स्वस्थ रखने व दीर्घायुष्य के लिए भी उसको गृहस्थ का त्याग कर देना चाहिए ।

(३) परिवार में रहकर वृद्ध माता-पिता पुत्र और पुत्रवधू के कार्य में अपने बड़प्पन के कारण अनावश्यक रूप का हस्तक्षेप करके पारिवारिक सुख शान्ति को विनष्ट करते हैं । पारिवारिक सुख शान्ति के लिए उनका पुत्र की आजीविका व उसके विवाह के उपरान्त उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक रहने देना आवश्यक है ।

(४) वानप्रस्थ ग्रहण करने पर भी उनका अपने परिवार से सर्वथा विच्छेद

---

१. त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति । प्रथमस्तपएव द्वितीयो ब्रह्मचर्या चार्य कुलवासी तृतीयोऽत्यन्तमात्मानमाचार्यकुलेऽवसादयन्सर्व एते पुण्यलोका भवन्ति । —(छान्दोग्य २।२३)
(ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वर्णाश्रम विषय, पृ. २४१-२४२

२. स्वाध्याये नित्य युक्तः स्यात् । मनु ६।८

नहीं हो जाता। माँ को तो वह विकल्प भी दे दिया है कि यदि वह वानप्रस्थ न लेना चाहे तो अपने पुत्रों के साथ रह जाए। पुत्रों का कर्त्तव्य है कि वे अपने वानप्रस्थ माता पिता के भरण-पोषण का ध्यान रखें। तथा वानप्रस्थ पिता के पास जाकर सांसारिक विषयों पर विजय प्राप्त करने के उपाय पूछे।

(५) सामाजिक व राष्ट्रीय दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि वृद्ध लोग कुछ निश्चित समय के उपरान्त आजीविका के साधनों व उच्च पदों पर अपना अधिकार छोड़ दें। वह ठीक समय पर आजीविका के उच्च साधनों व उच्च पदों (सरकारी गैर सरकारी नौकरियों), व्यापार, राजनीति आदि से विरत नहीं होता तो नवयुवकों को कार्य आरंभ करने में कठिनाई अनुभव होती है और पूरे राष्ट्र को बेकारी के भयंकर रोग का सामना करना पड़ता है।

(६) वानप्रस्थाश्रम की पद्धति से राष्ट्र में निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो जाती है और उससे सम्पूर्ण राष्ट्र शिक्षित हो जाता है। प्रत्येक नगर और ग्राम के चारों ओर वानप्रस्थ अपनी कुटिया बनाकर रहने लगते हैं, और वहाँ छात्र आ जा कर अध्ययन करते हैं। महर्षि दयानन्द ने इन कुटियों या गुरुकुलों की नगर से ४ कोस की दूरी लिखी है। पर आज के युग में यातायात के अनेक साधनों के हो जाने से यह दूरी और अधिक होनी चाहिये।

संन्यास आश्रम : संन्यास आश्रम में प्रवेश के लिए म० दयानन्द ने मनुस्मृति का निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किया है :

वनेषु च विहृत्यैवं तृतीयं भागमायुषः।
चतुर्थमायुषो भागं त्यक्त्वा संगान्परिव्रजेत्॥ मनु ६।३३

इस प्रकार वनों में आयु का तीसरा भाग अर्थात् पचासवें वर्ष से पचहत्तरवें वर्ष पर्यन्त वानप्रस्थ होके आयु के चौथे भाग में संगों को छोड़के परिव्राट् अर्थात् संन्यासी हो जावे।

प्रश्न: यदि कोई व्यक्ति गृहस्थाश्रम और वानप्रस्थाश्रम न करके सीधा संन्यासाश्रम करे तो उसको पाप होता है वा नहीं ?

उत्तर : होता है और नहीं भी होता।

प्रश्न : यह दो प्रकार की बातें क्यों कहते हो ?

उत्तर : दो प्रकार की नहीं, क्योंकि यदि व्यक्ति बाल्यावस्था में विरक्त होकर विषयों में फंस जाए तो वह महापापी और यदि विषयों में न फंसे तो वह महापुण्यात्मा सत्पुरुष है।[1]

व्यक्ति संन्यास कब ग्रहण करे, इस सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्था है :

यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेद् वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत्–(अथर्ववेदी

1. सत्यार्थप्रकाश, पंचम समुल्लास

जाबालोपनिषत् कं—४) इसमें संन्यास ग्रहण करने के समय तीन विकल्प प्रस्तुत किए हैं। (१) जो विषय भोग किया चाहे वह ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ—इन आश्रमों को करके संन्यास ग्रहण करे। (२) जिस समय वैराग्य अर्थात् बुरे कामों से चित्त हट कर ठीक सत्यमार्ग में निश्चित हो जाए, उस समय गृहाश्रम से ही संन्यास हो सकता है। (३) जो पूर्ण विद्वान् होकर सब प्राणियों का शीघ्र उपकार करना चाहे तो ब्रह्मचर्य से ही संन्यास ग्रहण कर लेवे।[1] महर्षि का स्पष्ट अभिमत है कि यदि ब्रह्मचर्य से संन्यासी होकर जगत् को सत्य शिक्षा करके व्यक्ति जितनी उन्नति कर सकता है, उतनी गृहस्थ व वानप्रस्थ आश्रम करके संन्यासाश्रमी नहीं कर सकता।[1] यह प्रश्न करने पर कि जो ब्रह्मचर्य से संन्यास लेवेगा, उसका निर्वाह कठिनता से होगा और काम का रोकना भी अति कठिन है, इसलिए गृहाश्रम, वानप्रस्थ होकर जब वृद्ध हो जोए तभी संन्यास लेना अच्छा है। महर्षि ने इसका उत्तर देते हुए लिखा कि जो निर्वाह न कर सके, इन्द्रियों को न रोक सके, वह ब्रह्मचर्य से संन्यास न लेवे, परन्तु जो रोक सके वह क्यों न लेवे?

जिस पुरुष ने विषय वासनाओं के दोष और वीर्य संरक्षण के गुण जाने हैं, वह विषयासक्त कभी नहीं होता और उनका वीर्य विचाराग्नि का इंधनवत् है, अर्थात् उसी में व्यय हो जाता है जैसे वैद्य और औषध की आवश्यकता रोगी के लिए होती है, वैसी नीरोग के लिए नहीं। इसी प्रकार जिस पुरुष व स्त्री का विद्या, धर्म वृद्धि और सब संसार का उपकार करना प्रयोजन हो, वह भले ही विवाह न करे! जैसे पंचशिख आदि पुरुष और गार्गी आदि स्त्रियां हुई थी। एक अन्य स्थल पर भी इस प्रश्न का कि गृहस्थाश्रम का अनुभव लिए विना संन्यास न लेना चाहिए, उत्तर देते हुए महर्षि लिखते हैं कि यह कथन अप्रशस्त है, क्योंकि यदि रोग हो तो औषध देना बुद्धिमानी है। जिस पुरुष को विषयाशक्ति की इच्छा नहीं, इन्द्रिय भोगेच्छा नहीं, उसे नया संन्यास लेने की कोई आवश्यकता नहीं, किन्तु वह तो स्वयं बना बनाया संन्यासी ही है। गार्गी ने कभी भी संसार-सुख का अनुभव नहीं किया, वह सदा ब्रह्मचारिणी थी।

इस पर किसी ने शंका व्यक्त की कि संन्यास ग्रहण करना ईश्वर के अभिप्राय के विरुद्ध है, क्योंकि ईश्वर का अभिप्राय मनुष्यों की बढ़ती करने में है। जब गृहाश्रम नहीं करेगा तो उसके संन्तान ही न होंगे। जब संन्यासाश्रम ही मुख्य है, और सब मनुष्य करें तो मनुष्यों का मूलच्छेदन हो जाएगा। इस शंका का समाधान करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि (१) अच्छा, विवाह करके भी बहुतों के सन्तान नहीं होते अथवा होकर शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। फिर वह भी ईश्वर के अभिप्राय से विरुद्ध करने वाला हुआ। जो तुम कहो कि यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः—

---

१. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वर्णाश्रम विषय, पृ. २४४

जो यत्न करने से भी कार्य सिद्ध न हो तो इसमें क्या दोष ? अर्थात् कोई भी नहीं तो हम तुमसे पूछते हैं कि गृहाश्रम से बहुत सन्तान होकर आपस में विरुद्धाचरण कर लड़ मरें तो हानि कितनी बड़ी होती है, समझ के विरोध से लड़ाई बहुत होती है। इस कथन से महर्षि दयानन्द के दो अभिप्राय हैं, एक, यह आवश्यक नहीं है कि गृहस्थ में जाकर मनुष्य सृष्टि की वृद्धि ही हो। दूसरे, यदि संन्तान कलह करने वाली हुई तो ऐसे गृहस्थ से कष्ट अधिक होने के कारण, वह व्यर्थ है। इसके विपरीत सन्यासी एक वेदोक्त धर्म के उपदेश से परस्पर प्रीति उत्पन्न कराएगा तो लाखों मनुष्यों को बचा देगा। जबकि संन्यास ग्रहण न करने पर वह भी सहस्रों गृहस्थ के समान मनुष्यों की बढ़ती करेगा। (२) साथ ही महर्षि ने यह भी कहा कि सब मनुष्य संन्यास ग्रहण कर ही नहीं सकते, क्योंकि सबकी विषयासक्ति कभी नहीं छूट सकेगी। जो-जो संन्यासियों के उपदेश से धार्मिक मनुष्य होंगे, वे सब जानो संन्यासी के पुत्र तुल्य हैं।[१] और सबसे बड़ी बात यह कि यदि विरक्त व्यक्ति संन्यास ग्रहण कर ले तो उसका गृहस्थ असफल होगा।

यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि संन्यासी होना केवल अधिकारियों को उचित है अनधिकारी संन्यास ग्रहण करेगा तो आप डूबेगा, औरों को भी डुबा देगा। इस प्रकार स्पष्ट है कि संन्यास पूर्ण वैराग्य उत्पन्न होने पर ही लिया जाना चाहिए। इस प्रसंग में कठोपनिषत् का निम्नोक्त कथन उद्धरणीय है :

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो ना समाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात्॥ २।२३

जो दुराचार से पृथक् नहीं, जिसको शान्ति नहीं, जिसकी आत्मा योगी नहीं और जिसका मन शान्त नहीं है, वह संन्यास लेके भी प्रज्ञान से परमात्मा को प्राप्त नहीं होता।[२]

यही कारण है म० दयानन्द ७५ वर्ष की आयु में भी प्रत्येक व्यक्ति को संन्यास ग्रहण करने का अधिकारी नहीं मानते। महर्षि ने इस प्रश्न के उत्तर में कि संन्यास ग्रहण करना ब्राह्मण ही का धर्म है वा क्षत्रिय का भी ? स्पष्ट रूप से लिखा कि ब्राह्मण ही को अधिकार है, क्योंकि जो सब वर्णों में पूर्ण विद्वान्, धार्मिक, परोपकार-प्रिय मनुष्य है, उसी का ब्राह्मण नाम है। बिना पूर्ण विद्या, धर्म परमेश्वर की निष्ठा और वैराग्य के संन्यास ग्रहण करने में संसार का विशेष उपकार नहीं हो सकता। इसलिए लोक श्रुति है कि ब्राह्मण को संन्यास का अधिकार है, अन्य को नहीं। यह

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, पंचम समुल्लास पृ. १३३

१. सत्यार्थप्रकाश, पंचम समुल्लास, १३३ तथा १३६ पृ०

३. वही पृ. १२६

मनु का प्रमाण भी है—

एष वोऽभिहितो धर्मो ब्राह्मणस्य चतुर्विधः।
पुण्योऽक्षयफलः प्रेत्य राजधर्मं निबोधत ।। मनु ६।९७।

यह मनु जी महाराज कहते हैं कि ऋषियों ! यह चार प्रकार अर्थात् ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासश्रम करना ब्राह्मण का धर्म है। यहाँ वर्तमान में पुण्य स्वरूप और शरीर छोड़े जाने के पश्चात्—मुक्तिरूप अक्षय आनन्द का देने वाला संन्यास धर्म है, इससे आगे राजाओं का धर्म मुझसे सुनो। इससे यह सिद्ध हुआ कि संन्यास ग्रहण का अधिकार मुख्य करके ब्राह्मण (गुण से, जन्म से नहीं) का है, और क्षत्रियादि का ब्रह्मचर्यादि आश्रम हैं।[1] वेदों में भी 'यतयः ब्राह्मणस्य विजानतः' इत्यादि पदों से संन्यासका विधान ब्राह्मण के लिए है।[2] महर्षि के मत में निम्नलिखित लोग संन्यासी नहीं हो सकते :

—जो अविद्या के भीतर खेल रहे अपने को धीर पंडित मानते हैं वे नीचगति को जानेहारे मूढ़ जैसे अंधे के पीछे अंधे दुर्दशा को प्राप्त होते हैं, वैसे दुःखों को प्राप्त होते हैं।

—जो बहुधा अविद्या में रमण करने वाले बालबुद्धि हम कृतार्थ हैं, ऐसा मानते हैं, जिसको केवल कर्म-काण्डी लोग राग से मोहित होकर नहीं जान और जना सकते, वे आतुर होके मरणरूप दुःख में गिरे रहते हैं।[3] इसी कारण महर्षि दयानन्द ने वर्तमान साधु वैरागी, गुसाईं, खाखी आदि है, उनको संन्यासाश्रम का व्रती नहीं माना। क्योंकि उनमें संन्यास का एक भी लक्षण नहीं, वे वेदविरुद्ध मार्ग में प्रवृत्त होकर वेद (सर्वमान्य धर्म) से अधिक अपने सम्प्रदाय के आचार्यों के वचन मानते और और अपने ही मत की प्रशंसा करते, मिथ्या प्रपंच में फंसकर अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को अपने-अपने मत में फंसाते हैं। सुधार करना तो दूर रहा, उसके बदले में संसार को बहका कर अधोगति को प्राप्त कराते और अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं। इसलिए इनको संन्यासाश्रम में नहीं गिन सकते, किन्तु ये स्वार्थाश्रमी तो पक्के हैं। इसमें कुछ संदेह नहीं। जो स्वयं धर्म में चलकर सब संसार को चलाते हैं, जिससे आप और सब संसार को इस लोक अर्थात् वर्तमान जन्म में परलोक अर्थात् दूसरे

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, पंचम समुल्लास, पृ. १३२-१३३

२. वही, पृ. १२६

३. (क) अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितमन्यमानाः।
जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ।।

(ख) अविद्यायां बहुधा वर्त्तमाना वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः।
यत्कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्तेनातुरा क्षीणलोकाश्च्यवन्ते ।। मुण्ड० (१)२।८-९ ।।

जन्म में स्वर्ग अर्थात् सुख का भोग करते कराते हैं, वे ही धर्मात्मा वा संन्यासी और महात्मा है।[1]

संन्यास लेने के इच्छुक व्यक्ति के लिए कहा है कि सब लौकिक भोगों को कर्म से संचित हुए देख कर ब्राह्मण (अर्थात् संन्यासी) का इच्छुक व्यक्ति वैराग्य को प्राप्त होवे, क्योंकि अकृत (अनुपलब्ध) परमात्माकृत अर्थात् केवल कर्म से प्राप्त नहीं होता, इसलिए कुछ अर्पण के अर्थ हाथ में लेके वेदवित् और परमेश्वर को जानने वाले गुरु के पास विज्ञान के लिए जावे, जाके सब सन्देहों की निवृत्ति करे।[4] तभी वह संन्यास लेने का अधिकारी होता है।[2]

संन्यास ग्रहण करते समय व्यक्ति—प्रजापति अर्थात् परमेश्वर की प्राप्ति के अर्थ इष्टि अर्थात् यज्ञ करके उसमें यज्ञोपवीत, शिखादि चिन्हों को छोड़ आहवनीयादि पांच अग्नियों को प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान इन पाँच प्राणों में आरोपण करके ब्राह्मण ब्रह्मवित् घर से निकल कर संन्यासी हो जावे।[3]

केश, नख, दाड़ी मूंछ को छेदन करवावे, सुन्दर पात्र दण्ड और कुसुम्म आदि से रंगे हुए वस्त्रों को ग्रहण करके निश्चितात्मा सब भूतों को पीड़ा न देकर सर्वत्र विचरे।[4] इस प्रसंग में महर्षि के जीवन की एक घटना उल्लेखनीय है—सन् १८७६ में बड़ौदा में महर्षि एक दिन क्षौर करा रहे थे। एक पण्डित ने आकर कहा कि संन्यासियों का धर्म तो त्याग है, आप देह-विभूषा में क्यों लगे हैं? स्वामी जी ने हंसते हुए उत्तर दिया कि यदि बाल बढ़ाने में ही त्याग है तो रीछ सबसे बड़ा त्यागी है। यह कह कर उसे उपदेश दिया कि देह की रक्षा के लिए उसे संवारना पाप नहीं।[5]

संन्यासियों को आग को न छूना चाहिए ऐसा भी कहते हैं, परन्तु मरने तक वे अपने जठराग्नि को कैसे छोड़ सकेंगे अर्थात् वह तो उनमें बना ही रहेगा।[6]

संन्यासी अग्नि तथा धातु का स्पर्श नहीं करते—इस बात का भी दयानन्द ने विरोध किया है। यह कथन कि संन्यासियों को जो सुवर्णदान दे तो दाता नरक को

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, पंचम समुल्लास, पृ. १३७

२. परीक्ष्य लोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।

३; प्राजापत्यां निरुप्येष्टिं सर्ववेदसदक्षिणाम्।
आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद् गृहात्॥ मनु ६।३८

४. क्लृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भवान्।
विचरेन्नियतो नित्यं सर्वभूतान्यपीडयन्॥ मनु ६।५२

५. महर्षि दयानन्द का जीन चरित्र, भाग १. पृ. ३६१

६. उपदेशक मंजरी, चौथा प्रवचन, पृ. ३४
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्॥ मुण्ड० (१)

प्राप्त होवे :

> यतीनां कांचनं दद्यात्ताम्बूलं ब्रह्मचारिणाम् ।
> चौराणामभयं दद्यात्स नरो नरकं व्रजेत् भाव पाराशी ॥[1]

दयानन्द ने उत्तर दिया कि यह बात वर्णाश्रम विरोधी सम्प्रदायी और स्वार्थ बुद्धि वाले पौराणिकों की कल्पी हुई है । क्योंकि संन्यासियों को धन मिलेगा तो ये हमारा खण्डन बहुत कर सकेंगे और हमारी हानि होगी तथा वे हमारे आधीन भी न रहेंगे और जब भिक्षादि व्यवहार हमारे आधीन रहेगा तो डरते रहेंगे । जब मूर्ख और स्वार्थियों को दान देने में अच्छा समझते हैं तो विद्वान् और परोपकारी संन्यासियों को देने में कुछ भी दोष नहीं हो सकता । देखो—विविधानि च रत्नानि विविक्तेषू पादयेत् (मनु ११।६ से तुलनार्थ) नाना प्रकार के रत्न सुवर्णादि धन विविक्त अर्थात् संन्यासियों को देवें । पर दयानन्द जी ने साथ ही कहा कि यह बात तो है कि जो संन्यासी योगक्षेम से अधिक रखेगा, तो चोरादि से पीड़ित और मोहित भी हो जाएगा । परन्तु जो विद्वान् है वह अयुक्त व्यवहार कभी न करेगा, न मोह में फसेगा । वह प्रथम गृहाश्रम अथवा ब्रह्मचर्य में सब भोग कर वा देख चुका है, और जो ब्रह्मचर्य से हाता है वह पूर्ण वैराग्ययुक्त होने से कभी नहीं फंसता ।

संन्यासाश्रम के सम्बन्ध में इस स्थापना का कि 'एक रात्रिं वसेद् ग्रामे[2] संन्यासी को एकत्र एकरात्रिमात्र रहना चाहिए, अधिक निवास न करना चाहिए—का उत्तर देते हुए महर्षि ने कहा है कि यह बात थोड़े से अंश में तो अच्छी है कि एकत्रवास करने से जगत् का उपकार अधिक नहीं हो सकता और स्थानान्तर का भी अभिमान होता है, रागद्वेष भी अधिक होता है, परन्तु जो विशेष उपकार एकत्र रहने से होता हो तो रहे । जैसे जनक राजा के यहाँ चार-चार महीने तक पंचशिखादि और अन्य संन्यासी कितने ही वर्षों तक निवास करते थे । और एकत्र न रहना—यह बात आजकल के पाखण्डी सम्प्रदायियों ने बनाई है । क्योंकि जो संन्यासी एकत्र अधिक रहेगा तो हमारा पाखण्ड खण्डित होकर अधिक न बढ़ सकेगा । एक अन्य स्थल पर महर्षि लिखते हैं कि :

---

१. दयानन्द से जब यह किसी ने प्रश्न किया था तो दयानन्द ने बताया कि वास्तविक यतिहान्ते धनंदद्यात् है । पर दयानन्द ने इन दोनों वाक्यों का खण्डन किया है । यतीनां कांचनं दद्यात् पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा कि संन्यासी को सुवर्ण देने से यजमान नरक को जावे तो चांदी, मोती, हीरा आदि देने से स्वर्ग को जाएगा । इसी प्रकार यतिहस्ते धनं दद्यात्--जो संन्यासियों के हाथ में धन देता है, वह नरक में जाता है" पर टिप्पणी करते हुए कहा कि जो हाथ में देने से नरक को दाता नरक को जाए तो पग पधारने व गठरी बांधकर देने से स्वर्ग को जाएगा ।

२. नारदपरिव्राजकोपनिषद् उपदेश ४।१४

इन दिनों संन्यासियों पर बड़े-बड़े जुल्म अत्याचार हो रहे हैं अर्थात् संन्यासियों को वन में रहना चाहिए। एक ही बस्ती में तीन दिन से अधिक न रहे, इत्यादि-इत्यादि प्रतिबन्ध हैं। यदि इन्हें माना जाए तो, वह फिर किस प्रकार और किसे उपदेश करे? क्या वह एक गाँव से दूसरे गाँव दौड़ता फिरे?[1]

महर्षि ने संन्यासी के दो प्रकार के कर्त्तव्य निर्दिष्ट किये हैं—

(१) अपनी आत्मिक उन्नति और (२) परोपकार। आत्मिक उन्नति के लिए उसे कहा गया है कि—

(क) यच्छेद्वाङ्‌ मनसी प्राज्ञस्तद्यच्छेद् ज्ञान आत्मनि।
ज्ञानमात्मनि महति नियच्छेत्तद्यच्छेच्छान्त आत्मनि॥

क० वल्ली ३।१३

अर्थात् संन्यासी बुद्धिमान् वाणी और मन को अधर्म से रोके, उनको ज्ञान और आत्मा में लगावे और उस ज्ञान स्वात्मा को परमात्मा में लगावे और उस विज्ञान को शान्त-स्वरूप आत्मा में स्थिर करे।

(ख) वेदान्त विज्ञान सुनिश्चितार्था संन्यासयोगाद्यतयः शुद्ध सत्वाः।
ते ब्रह्मलोकेष परान्तकाले परा मृताः परिमुच्यन्ति सर्वे॥

मुण्ड० ३।२।६

जो वेदान्त अर्थात् परमेश्वर प्रतिपादक वेदमन्त्रों के अर्थज्ञान और आचार में अच्छे प्रकार निश्चित संन्यास योग से शुद्धान्तःकरण संन्यासी होते हैं वे परमेश्वर में मुक्ति-सुख को प्राप्त हो, भोग के पश्चात् जब मुक्ति में सुख की अवधि पूरी हो जाती है तब वहाँ से छूटकर संसार में आते हैं। मु क्त के बिना दुःख का नाश नहीं होता। क्योंकि—

न (वै) सशरीरस्य सतः प्रियाप्रिययोरपहतिरस्त्यशरीरं वावसन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशतः—(छान्दो० ८।१२।१)

जो देहधारी है वह सुख दुःख की प्राप्ति से पृथक् कभी नहीं रह सकता और जो शरीररहित जीवात्मा मुक्ति में सर्वव्यापक परमेश्वर के साथ शुद्ध होकर रहता है तब उसको सांसारिक सुख-दुःख प्राप्त नहीं होता।

(ग) लोकैषणायाश्च वित्तैषणायाश्च पुत्रैषणायाश्चोत्थायाथ भैक्षाचर्यं चरन्ति (शत० १४।५।२।१)

अर्थात् लोक में प्रतिष्ठा वा लाभ धन से भोग वा मान्य पुत्रादि के मोह से अलग होके संन्यासी लोग भिक्षुक होकर रात दिन मोक्ष के साधनों में तत्पर रहते हैं। एक अन्य स्थल पर महर्षि लिखते हैं—

जो वेद को पढ़ के परमेश्वर को जानने की इच्छा करते हैं, वे संन्यासी लोग

---

१. उपदेश मंजरी, चौथा प्रवचन, पृ. ३४

मोक्ष मार्ग को प्राप्त होते हैं तथा जो सत्पुरुष ब्रह्मचर्य, धर्मानुष्ठान-श्रद्धायज्ञ और ज्ञान से परमेश्वर को जान के मुनि अर्थात् विचारशील होते हैं, वे ही ब्रह्मलोक अर्थात् संन्यासियों के प्राप्ति-स्थान को प्राप्त होने के लिए संन्यास लेते हैं। जो उनमें उत्तम पूर्ण विद्वान् हैं वे गृहस्थाश्रम और वानप्रस्थाश्रम के बिना ब्रह्मचर्याश्रम से ही संन्यासी हो जाते हैं और उनके उपदेश से जो पुत्र होते हैं, उन्हीं को सबसे उत्तम मानकर अर्थात् सन्तानोत्पत्ति की इच्छा, धन का लोभ व लोक में प्रतिष्ठा की इच्छा करना—इन तीन प्रकार की इच्छा को छोड़ के वे भिक्षाचरण करते हैं।[1]

(घ) यो दत्वा सर्वभूतेभ्यः प्रव्रजत्यभयं गृहात्।
तस्य तेजोमया लोका भवन्ति ब्रह्मवादिनः॥

जो सब भूत प्राणिमात्र को अभय दान देकर घर से निकल के संन्यासी होता है, उस ब्रह्मवादी अर्थात् परमेश्वर प्रकाशित वेदोक्त धर्मादि विद्याओं के उपदेश करने वाले सन्यासी के लिए प्रकाशमय अर्थात् मुक्ति का आनन्दस्वरूप लोक प्राप्त होता है।

(ङ) इन्द्रियाणां निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च।
अहिंसया च भूतानाममृतत्वाय कल्पते॥ मनु ६।६०॥

अर्थात् इन्द्रियों को अधर्माचरण से रोक, राग द्वेष को छोड़, सब प्राणियों से निर्वैर बचकर मोक्ष के लिए सामर्थ्य बढ़ाया करे।

(च) यद्यपि निर्मली वृक्ष का फल पीस के गहरे जल में डालने से जल का शोधक होता है तदपि बिना डाले उसके नाम कथन वा श्रवण मात्र से उसका जल शुद्ध नहीं हो सकता। इसलिए ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मवित् संन्यासी को उचित है कि ओंकार पूर्वक सप्तव्याहृतियों से विधि पूर्वक प्राणायाम जितनी शक्ति हो, उतने करे, परन्तु तीन से तो न्यून प्राणायाम कभी न करे, यही संन्यासी का परम तप है। क्योंकि जैसे अग्नि में तपाने और गलाने से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही प्राणों

---

१. ब्रह्म सङ्स्थोऽमृतत्वमेति। छान्दो-प्रपा० २।२३ वेदानुवचनेन विविदिषन्ति। ब्रह्मचर्येण तपसा श्रद्धया यज्ञेनानाशनेन चैतमेव विदित्वा मुनि—र्भवत्येतमेव प्रव्राजिनो लोक मी सन्तः प्रव्रजन्ति। एतद्धस्मवैतत्पूर्वे ब्राह्मणः। अनूचाना विद्वांछसः प्रजां न कामयन्ते किं प्रजया करिष्यामो येषां नोऽयमात्मायं लोक इति ते ह स्म पुत्रैषणायाश्च वित्तैषणायाश्च लोकैषणायाश्च व्युत्थाया थ भिक्षाचर्य्यं चरंति या ह्येन पुत्रैषणा सा। वित्तैषणा या वित्तैषणासा लोकैषणो मेह्येते एषणे एव भवतः। (शतः० १४।७।२) (देखिए ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वर्णाश्रम विषयः, पृ० २४२—२४४)

के निग्रह से मन आदि इन्द्रियों के दोष भस्मीभूत होते हैं।[1] इसलिये संन्यासी लोग नित्य प्रति प्राणायामों से आत्मा, अन्तःकरण और इन्द्रियों के दोष, धारणाओं से पाप, प्रत्याहार से संगदोष, ध्यान से अनीश्वर के गुणों अर्थात् हर्ष, शोक और अविद्यादि जीव के दोषों को भस्मीभूत करें। इसी ध्यान-योग से जो अयोगी अविद्वानों के दुःख से जानने योग्य छोटे बड़े पदार्थों में परमात्मा की व्याप्ति उसको और अपने आत्मा और अन्तर्यामी परमेश्वर की गति को देखे।[2]

(छ) सब भूतों से निर्वैर, इन्द्रियों के दुष्ट विषयों का त्याग, वेदोक्त कर्म और अत्युग्र तपश्चरण से इस संसार में मोक्ष पदों को पूर्वोक्त संन्यासी ही सिद्ध कर और करा सकते हैं, अन्य कोई नहीं। जब संन्यासी सब भावों में अर्थात् पदार्थों में निःस्पृह, कांक्षारहित और सब बाहर भीतर के व्यवहार में भाव से पवित्र होता है, तभी इस देह में और मरण पा के निरन्तर सुख को प्राप्त होता है।[3]

(ज) संन्यासी पर अन्य आश्रमों की अपेक्षा धर्म के लक्षणों को जीवन में व्यवहार रूप देना अधिक उत्तरदायित्व है। दयानन्द जी का कहना है कि दस लक्षण युक्त—धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धीः, विद्या, सत्य, अक्रोध (शान्ति)—पक्षपात रहित न्यायाचरण धर्म का सेवन चारों आश्रम वाले करें और इसी वेदोक्त धर्म ही में आप चलना और दूसरों को समझाकर चलाना संन्यासियों का विशेष धर्म है। संन्यासी के धर्मानुसार वर्तना चाहिए, इसके लिए महर्षि दयानन्द ने मनु को उद्धृत करते हुए कहा कि जब संन्यासी मार्ग में चले तब इधर-उधर न देखकर नीचे पृथिवी पर दृष्टि रख के चले। सदा वस्त्र से छान के जल पिये, निरन्तर सत्य

---

१. (क) फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसादकम्।
न नाम ग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति।

(ख) प्राणायामा ब्राह्मणस्य त्रयोऽपि विधिवत्कृताः।
व्याहृति प्रणवैर्युक्ता विज्ञेयं परमं तपः॥

(ग) दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥
मनु० ६।६७, ७०—७१।

२. (क) प्राणायामैर्दहेद्दोषान्धारणाभिश्च किल्विषम्।
प्रत्याहारेण संसर्गान्ध्यानेनानीश्वरान् गुणान्॥

(ख) उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेयामकृतात्मभिः।
ध्यानयोगेन संपश्येद् गतिमस्यान्तरात्मनः॥ —मनु ६।७२-७३।

३. (क) उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेयामकृतात्मभिः।
ध्यानयोगेन सं पश्येद् गतिमस्यांतरात्मनः॥

(ख) अहिंसयेन्द्रियासंगैर्वैदिकैश्चैव कर्मभिः।
तपश्चरणैश्चोग्रैस्साधयन्तीह तत्पदम्॥ —मनु ६।७५-८०

ही बोले, सर्वदा मन से विचार के सत्य का ग्रहण कर असत्य को छोड़ देवे। जब कहीं उपदेश व संवादादि में कोई संन्यासी पर क्रोध करे अथवा निन्दा करे तो संन्यासी को उचित है कि उस पर आप क्रोध न करे किन्तु सदा उसके कल्याणार्थ उपदेश ही करे। और [एक] मुख [का], दो नासिका के, दो आँख के और दो कान के छिद्रों में बिखरी हुई वाणी को किसी कारण से मिथ्या कभी न बोले।[1] संन्यासी धीरे-धीरे सब संग दोषों को छोड़, हर्ष शोकादि सब द्वन्द्वों से विमुक्त होकर ब्रह्म ही में अवस्थित होता है।[2]

महर्षि दयानन्द ने संन्यासी को आत्मोन्नति करने के साथ अपने को परोपकार में लीन करने का भी आदेश दिया है। उन्होंने इस बात का खण्डन किया है कि संन्यासी सर्वकर्म विनाशी होता है। संन्यासी की निरुक्ति करते हुए उन्होंने लिखा—सम्यङ् नित्यमास्ते यस्मिन्यद्वा सम्यङ् न्यस्यन्ति दुःखानि कर्माणि येन सः संन्यासः, स प्रशस्तो विद्यते यस्य स संन्यासी अर्थात् जो ब्रह्म और उसकी आज्ञा में उपविष्ट अर्थात् स्थित और जिससे दुष्ट कर्मों का त्याग किया जाय वह संन्यास और वह उत्तम स्वभाव जिसमें हो वह संन्यासी कहाता है। सुकर्म का कर्ता और दुष्ट कर्मों का विनाश करने वाला संन्यासी कहाता है।[3]

महर्षि द्वारा संन्यासी को कर्म का उपदेश करता देखकर किसी ने प्रश्न किया कि संन्यासी लोग कहते हैं कि हमको कुछ कर्त्तव्य नहीं। अन्न वस्त्र लेकर आनन्द में रहना, अविद्यारूप संसार से माथापच्ची क्यों करना? अपने को ब्रह्म मानकर संतुष्ट रहना, कोई आकर पूछे तो उसको भी वैसा ही उपदेश करना कि तू भी ब्रह्म है, तुझको पाप-पुण्य नहीं लगता क्योंकि शीतोष्ण शरीर, क्षुधा-तृषा प्राण और सुख-दुःख मन का धर्म है। जगत् मिथ्या और जगत् के व्यवहार भी सब कल्पित अर्थात् झूठे हैं। इसलिए इस में धंसना

---

१. (क) दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्र पूतं जलं पिबेत्।
सत्यपूतां वदेद्वाचं मनः पूतं समाचरेत्॥
(ख) क्रुद्धयन्तं न प्रति क्रुध्येदाक्रुष्टः कुशलं वदेत्।
सप्तद्वारा वकीर्णां च न वाचमनृतां वदेत्॥ —मनु।६।४६, ४८

२. (क) यदा भावेन भवति सर्वभावेषु निस्पृहः।
तदा सुखमवाप्नोति प्रेत्य चेह च शाश्वतम्॥
(ख) चतुर्भिरपि चैवैतैर्नित्यमाश्रमिभिर्द्विजैः।
दशलक्षणको धर्मः सेवितव्यः प्रयत्नतः॥ —मनु ६।९१, ९२
(ग) धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्॥
(घ) अनेन विधिना सर्वांस्त्यक्त्वा संगच्छनैः शनैः।
सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तो ब्रह्मण्येवावतिष्ठते॥ —मनु ६।

३. सत्यार्थप्रकाश, पंचम समुल्लास, पृ. १३४

बुद्धिमानों का काम नहीं। जो कुछ पाप पुण्य होता है वह देह और इन्द्रियों का धर्म है, आत्मा का नहीं, इत्यादि उपदेश करते हैं—जबकि आपने विलक्षण संन्यास का धर्म कहा है। अब हम किसकी बात सच्ची और किसकी झूठी मानें? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए दयानन्द जी लिखते हैं कि क्या उनको अच्छे कर्म भी कर्त्तव्य नहीं? देखो वैदिकैश्चैव कर्मभि: (मनु ६।७५) आदि वचन द्वारा मनु जी ने वैदिक कर्म जो धर्म-युक्त सत्यकर्म हैं, संन्यासियों को भी अवश्य करना लिखा है। क्या भोजन छादनादि कर्म वे छोड़ सकेंगे? जो ये कर्म नहीं छूट सकते तो उत्तम कर्म छोड़ने से व पतित और पापभागी नहीं होंगे? जब गृहस्थों से अन्न-वस्त्रादि लेते हैं और उनका प्रत्युपकार नहीं करते तो क्या वे महापापी नहीं होंगे? जैसे आंख से देखना, कान से सुनना न हो तो आंख और कान का होना व्यर्थ है, वैसे ही जो संन्यासी सत्योपदेश और वेदादि सत्यशास्त्रों का विचार, प्रचार नहीं करते तो वे भी जगत् में व्यर्थ भाररूप हैं और जो अविद्या रूप संसार से माथापच्ची क्यों करना आदि लिखते और कहते हैं, वैसे उपदेश करने वाले ही मिथ्या रूप और पाप के बढ़ाने वाले पापी हैं। जो कुछ शरीरादि से कर्म किया जाता है, वह सब आत्मा ही का और उसके फल को भोगने वाला भी आत्मा है।[1] जो जीव को ब्रह्म बतलाते हैं, वे अविद्या-निद्रा में सोते हैं। क्योंकि जीव अल्पज्ञ और ब्रह्म सर्वव्यापक सर्वज्ञ है। ब्रह्म नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव युक्त है। और जीव कभी बद्ध कभी मुक्त रहता है। ब्रह्म को सर्वव्यापक सर्वज्ञ होने से भ्रम वा अविद्या कभी नहीं हो सकती और जीव को कभी विद्या और कभी अविद्या होती है। ब्रह्म जन्म-मरण दुःख को कभी प्राप्त नहीं होता और जीव प्राप्त होता है। इसलिए वह उनका उपदेश मिथ्या है।······जो इससे संन्यास के मुख्य धर्म सत्योपदेशादि नहीं करते वे पतित और नरकगामी हैं। इससे संन्यासियों को उचित है कि सदा सत्योपदेश, शंका समाधान, वेदादि सत्यशास्त्रों का अध्यापन और वेदोक्त धर्म की वृद्धि प्रयत्न से करके सब संसार की उन्नति किया करें मनु को उद्धृत करते हुए महर्षि ने लिखा है कि अपने आत्मा और परमात्मा में स्थिर अपेक्षारहित मद्यमांसादि वर्जित होकर आत्मा ही के सहाय से सुखार्थी होकर इस संसार में धर्म और विद्या के बढ़ाने में उपदेश के लिए सदा विचरता रहे।[2]

कोई संसार में उसको दूषित वा भूषित करे तो भी जिस किसी आश्रम में वर्तता हुआ पुरुष अर्थात् संन्यासी सब प्राणियों में पक्षपातरहित होकर स्वयं धर्मात्मा और अन्यों को धर्मात्मा करने में प्रयत्न किया करे। और यह अपने मन में निश्चित जाने कि दण्ड, कमण्डलु और काषाय वस्त्र आदि चिन्ह धारण करना धर्म का कारण नहीं है, सब मनुष्यादि प्राणियों की सत्योपदेश और विद्या-दान से उन्नति करना

---

१. सत्यार्थप्रकाश, पंचम समुल्लास पृ. १३४

२. अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः।
आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह ॥ —मनु ६।४६

संन्यासी का मुख्य कर्म है।......वे सर्वगुरु सबके अतिथि होके विचरते हुए संसार को अज्ञान रूपी अंधकार से हटा के सत्यविद्या के उपदेश रूप प्रकाश से प्रकाशित कर देते हैं।[1]

संन्यासी के कर्त्तव्य के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द के अन्य भी अनेक वाक्य उद्धरणीय हैं :

—संन्यासी को उचित है कि सारे जगत् में घूमे और सदुपदेश करे, यही उसका मुख्य कर्त्तव्य कर्म है। पंचशिख और शंकराचार्य का इतिहास देखना चाहिए कि उन्होंने सदा सत्य और सदुपदेश ही किये। उसी प्रकार सदुपदेश ही करना चाहिए।[2]

—उपदेश वा अधर्म की निवृत्ति करना यह संन्यासियों का मुख्य कर्त्तव्य कर्म है।......मूढ़ लोग जनपद में दुराचार कर-कर किसी आपत्ति में पड़ेंगे सो उन्हें सदाचरण की ओर लगाना यही चतुर्थाश्रमधारी ज्ञानी पुरुष का मुख्य काम है।[3]

—धर्म की प्रवृत्ति विशेष हो और जनहित करने में आवे, इसलिए ये संन्यास आश्रम है।[4] जो संन्यासी विद्याहीन, दण्ड, कमण्डलुले भिक्षामात्र करते-फिरते हैं, जो कुछ भी वेदमार्ग की उन्नति नहीं करते, छोटी अवस्था में संन्यास लेकर घूमा करते हैं और विद्याभ्यास को छोड़ देते हैं, से संन्यासी इधर-उधर जल, स्थल, पाषाणादि मूर्तियों का दर्शन पूजन करते फिरते, विद्या जानकर भी मौन हो रहते, एकान्त देश में यथेष्ट खा पीकर सोते पड़े रहते हैं और ईर्ष्या द्वेष में फंसकर निन्दा, कुचेष्टा करके निर्वाह करते, काषाय वस्त्र और दण्ड-ग्रहण मात्र से अपने को कृतकृत्य समझते और सर्वोत्कृष्ट जान कर उत्तम काम नहीं करते वैसे संन्यासी भी जगत् में व्यर्थ वास करते हैं और जो सब जगत् का हित साधते हैं, वे ठीक है।[5]

सन् १८७८ में प्रयाग के कुम्भ में निष्क्रिय साधुओं को देखकर व्याख्यान में महर्षि ने कहा—परोपकार के बिना नर जीवन मृगजीवन से उच्च नहीं है। सैंकड़ों साम्प्रदायिक साधु लोग इस मेले पर आए हुए हैं। ये गृहस्थों का नित्य आठ आने का पदार्थ खाकर जंगल में पड़े रहते हैं। सोचिए तो सही इनमें और मृगों में भेद ही क्या है। मृग भी तो इसी प्रकार किसानों के खेत नोचकर वनों में घुस जाया करते हैं।

---

१. दूषितोऽपि चरेद्धर्मं यत्र तत्राश्रमे रतः।
समः सर्वेषु भूतेषु न लिंगं धर्मकारणम्॥ —मनु ६।६६

२. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, पृ. २४४

३. उपदेश मंजरी, पृ० २४।३४।८०

४. सत्यार्थप्रकाश, एकादश समुल्लास,

५. श्रीमद्दयानंदप्रकाश, पृ. २१३

इस जीवन का लाभ ही क्या है ? यह तो पशु-पक्षियों को सहज ही से उपलब्ध है। सन् १८७८ में अमृतसर में निर्मले साधुओं को कहा—सहस्रों भारतवासी पेट भर अन्न नहीं पाते, दाने-दाने के लिए तरसते हैं। भूख के मारे बिल्ली-कुत्ते की मृत्यु मरते जाते हैं। देश की ऐसी शोचनीय दशा में धड़ाधड़ लोहेशाही और तूम्बेशाही बनने की क्या आवश्यकता है ? इस समय तो प्रत्येक को परिश्रम करके आजीविका चलानी चाहिए।[३]

पूना में भाषण देते हुए महर्षि ने कहा—संसार को एक ओर रखकर अध्ययन, उपदेश और लोक-कल्याण करने में जो सम्पूर्ण समय लगाया जावे वह संन्यास है। गृहस्थियों को इन सब कार्यों को करने का समय नहीं मिलता और सन्यासियों को अवकाश बहुत मिलता है, बस यही मुख्य भेद है।[४]

संन्यासियों का मुख्य कर्म यही है कि सब गृहस्थ दि आश्रमों को सब प्रकार के व्यवहारों का सत्य-निश्चय करा अधर्म व्यवहारों से छुड़ा सब संशयों का छेदन कर सत्य धर्मयुक्त व्यवहारों में प्रवृत्त कराया करे।[५]

संन्यासी के लिए परोपकार के कर्म को महर्षि कितना महत्व देते थे। यह उनके जीवन की एक घटना से भी प्रकट होता है। सन् १८६८ में सोरों में एक दिन गंगा-तीर पर एक साधु कमण्डलु आदि प्रक्षालन करके वस्त्र धोने में प्रवृत्त था। वह था एक घुटा हुआ मायावादी। दैवयोग से भ्रमण करते हुए स्वामी जी वहाँ जा पहुँचे। उसने स्वामी जी को सम्बोधन करके कहा—इतने त्यागी परमहंस—अवधूत होकर आप खण्डन मण्डन रूप प्रवृत्ति के जटिल जाल में क्यों उलझ रहे हो ? निर्लेप हो कर क्यों नहीं विचरते ? महर्षि मुस्कराकर बोले—हम तो यह सब करते हुए भी निर्लेप हैं। अब रही प्रवृत्ति की बात, सो शास्त्रीय प्रवृत्ति प्रजा-प्रेम से प्रेरित होकर सब ही को करना उचित है। साधुजी ने कहा—प्रजा-प्रेम का नया बखेड़ा क्यों डालते हो ? आत्मा से प्रेम करो, जिसके लिए कि श्रुति पुकार रही है। उस समय उसने मैत्रेयी और याज्ञवल्क्य के सम्वाद के वाक्य भी बोले। तब स्वामी जी ने पूछा, महात्मन् आप किससे प्रेम करते हैं ? साधु बोला—आत्मा से। स्वामी जी ने पूछा—वह प्रेम-मय आत्मा कहाँ है ? साधु ने कहा—वह राजा से लेकर रंक पर्यन्त और हस्ती से लेकर कीट तक सर्वत्र ऊँच-नीच में परिपूर्ण है। स्वामी जी बोले—जो आत्मा सबमें रमा हुआ है, क्या आप सचमुच उससे प्रेम करते हैं ? साधु ने उत्तर दिया—तो क्या हमने मिथ्या वचन बोला है ? तत्पश्चात् स्वामी जी ने गम्भीरतापूर्वक कहा—नहीं, आप उस महान् आत्मा से प्रेम नहीं करते। आपको अपनी भिक्षा की चिन्ता है, अपने

३. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ. ३५७
४. उपदेश मंजरी, चौथा प्रवचन, पृ. ३३
५. सत्यार्थप्रकाश, पंचम समुल्लास,

वस्त्र उज्ज्वल बनाने का ध्यान है, अपने भरण-पोषण का विचार है। क्या आपने कभी उन बन्धुओं का भी चिन्तन किया है जो आपके देश में लाखों की संख्या में भूख की चिता पर पड़े हुए रात-दिन, बारहों महीने, भीतर ही भीतर जल कर राख हो रहे हैं ?......उनके तन पर सड़े गले मैले-कुचैले चिथड़े लिपट रहे हैं। लाखों निर्धन हीन ग्रामीण भेड़ों और भैंसों की भांति गन्दे कीचड़ और कूड़े के ढेरों से घिरे हुए सड़े-गले झोंपड़ों में लोटते हुए जीवन के दिन काट रहे हैं।......महात्मन् ! यदि आत्मा से और विराट् आत्मा से प्रेम करना है तो अपने अंगों की भांति सबको अपनाना होगा। अपनी क्षुधा-निवृत्ति की तरह उनकी भी चिन्ता करनी होगी। सच्चा परमात्म-प्रेमी किसी से घृणा नहीं करता। वह ऊँच-नीच की भेद-भावना को त्याग देता है। उतने ही पुरुषार्थ से दूसरों के दुःख निवारण करता है, कष्ट क्लेश काटता है, जितने से वह अपने करता है। ऐसे ज्ञानी जन ही वास्तव में आत्मप्रेमी कहलाने के अधिकारी हैं। वह साधु यह सुनकर स्वामी जी के चरणों पर गिर पड़ा। अपने अपराध को क्षमा कराने लगा। इस प्रकार महर्षि के मत में संन्यासी का जीवन परोपकार से निमित्त है। वह घर की, परिवार की व संस्था की सीमाओं को तोड़ कर जन-जन के लिए अपनी सेवाएँ अर्पित कर देता है।

संन्यास ग्रहण की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए महर्षि लिखते हैं कि जैसे शरीर में शिर की आवश्यकता है वैसे ही आश्रमों में संन्यासाश्रम की आवश्यकता है। क्योंकि इसके बिना विद्याधर्म कभी नहीं बढ़ सकता और दूसरे आश्रमों को विद्याग्रहण, गृहकृत्य और तपश्चर्यादि का सम्बन्ध होने से अवकाश बहुत कम मिलता है। पक्षपात छोड़कर वर्तना दूसरे आश्रमी को दुष्कर है। जैसा संन्यासी सर्वतोन्मुख होकर जगत् का उपकार करता है, वैसा अन्य आश्रमी नहीं कर सकता। क्योंकि संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है उतना अन्य आश्रमी को नहीं मिल सकता। परन्तु जो ब्रह्मचर्य से संन्यासी होकर जगत् को सत्यशिक्षा करके जितनी उन्नति कर सकता है, उतनी गृहस्थ वा वानप्रस्थ आश्रम करके संन्यासाश्रमी नहीं कर सकता।

संन्यासी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने लिखा कि जैसे सम्राट् चक्रवर्ती राजा होता है वैसे परिव्राट् संन्यासी होता है। प्रत्युत राजा अपने देश में व स्वसम्बन्धियों में सत्कार पाता है और संन्यासी सर्वत्र पूजित होता है—

> विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन।
> स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

(चाणक्य नीति सार संग्रह व्याख्या श्लोक १)

विद्वान् (संन्यासी) और राजा की कभी तुल्यता नहीं हो सकती। क्योंकि राजा अपने

राज्य ही में मान और सत्कार पाता है और विद्वान् सर्वत्र मान और प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है।

अन्त में आश्रम-प्रणाली के सम्बन्ध में महर्षि के निम्नलिखित वाक्य उद्धरणीय हैं—

—विद्या पढ़ने, सुशिक्षा लेने और बलवान् होने आदि के लिए ब्रह्मचर्य; सब प्रकार के उत्तम व्यवहार सिद्ध करने के अर्थ गृहस्थ; विचार, ध्यान और विज्ञान बढ़ाने, तपश्चर्या करने के लिए वानप्रस्थ और वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रचार, धर्म-व्यवहार का ग्रहण और दुष्ट व्यवहार के त्याग आदि के लिए संन्यासाश्रम है।

ब्रह्मचर्य सुशिक्षा और सत्यविद्यादि गुण ग्रहण करने के लिए होता है। दूसरा गृहाश्रम जो कि उत्तम गुणों के प्रचार और श्रेष्ठ पदार्थों की उन्नति से सन्तानों की उत्पत्ति और उनको सुशिक्षित करने के लिए किया जाता है। तीसरा वानप्रस्थ जिससे ब्रह्मविद्यादि साक्षात् साधन करने के लिए एकान्त में परमेश्वर का सेवन किया जाता है। चौथा संन्यास जो कि परमेश्वर अर्थात् मोक्ष सुख की प्राप्ति और सत्योपदेश से सब संसार के उपकार के अर्थ किया जाता है।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चार पदार्थों की प्राप्ति के लिए इन चार आश्रमों का सेवन करना सब मनुष्यों को उचित है।

३

गृहस्थाश्रम व नारी

महर्षि दयानन्द स्त्री और पुरुष दोनों को समान महत्त्व देते थे। शिक्षा व ब्रह्मचर्य द्वारा उन्होंने दोनों का सर्वांगीण विकास करने की व्यवस्था की। 'स्त्री शूद्रौ नाधीयातामिति श्रुतेः' अर्थात् स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है—इस वाक्य का विरोध करते हुए उन्होंने कहा कि सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुएँ में पड़ो। यह तुम्हारी श्रुति कपोलकल्पना हैं, किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। .....स्त्रियों के पढ़ने का निषेध तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है। देखो वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण :

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्। —अथर्व० ३।२४।११।१८

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त हो के किसी युवती से जो कि विदुषी व अपने अनुकूल होती है—के साथ विवाह करते हैं; वैसे ही कुमारी ब्रह्मचर्य सेवन व वेदादि शास्त्रों को पढ़ के पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त होके व युवती हो के अपने सदृश प्रिय विद्वान्, पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष को प्राप्त होवे। महर्षि का स्पष्ट कथन है कि स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिए। क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं—अवश्य, देखो श्रौतसूत्रादि में 'इमं मंत्रं पत्नी पठेत्' अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मंत्र को पढ़ें,[१] जो स्त्री वेदादिशास्त्र को न पढ़ी हो तो यज्ञ में स्वरसहित मंत्रों का उच्चारण और संस्कृत-भाषण कैसे कर सके! भारतवर्ष की स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी वेदादिशास्त्रों को पढ़ के पूर्ण विदुषी हुई थीं—यह शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है। भला जो पुरुष विद्वान् और स्त्री अविदुषी और स्त्री विदुषी और पुरुष अविद्वान् हो तो नित्यप्रति देवासुर संग्राम घर में मचा रहे। फिर सुख कहां! जो स्त्री न पढ़ें

१. विस्तार के लिए देखिए मेरी पुस्तक 'वैदिक साहित्य में नारी' में 'नारी और यज्ञ' शीर्षक अध्याय।

तो कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका क्यों कर हो सकें तथा राजकार्य, न्यायाधीशत्वादि कार्य कैसे सम्पन्न करें। इसके अतिरिक्त गृहाश्रम के कार्य, (पति को स्त्री और स्त्री को पति द्वारा प्रसन्न रखना) अर्थात् घर के सब काम स्त्री के आधीन रहना भी बिना विद्या के अच्छे प्रकार कभी ठीक नहीं हो सकते।

देखो, आर्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्ध-विद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं, क्योंकि जो न जानती होती तो कैकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्यों कर जा सकती और युद्ध कर सकती? एक अन्य स्थल पर महर्षि लिखते हैं:

प्राचीन आर्य लोगों में गार्गी, मैत्रेयी आदि कैसी-कैसी विदुषी स्त्रियाँ हो गयी हैं। आजकल स्त्री को विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं, वह शूद्र के समान है। यदि स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होतीं, तो इन पण्डितों की बड़-बड़ाहट का खण्डन करके एक घड़ी में इनका मुँह बन्द कर देतीं।[1] इसलिए ब्राह्मणी और क्षत्रिया को सब विद्या, वैश्या को व्यवहार विद्या और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या अवश्य पढ़नी चाहिए। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए, वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए, क्योंकि इसके सीखे बिना सत्यासत्य का निर्णय, पति आदि से अनुकूल वर्तमान यथायोग्य सन्तानोत्पत्ति, उनका पालनवर्द्धन और सुशिक्षा करना, घर के सब कार्यों को जैसा चाहिए वैसा करना कराना, वैद्यक विद्या से औषधवत् अन्न-पान बनाना और बनवाना नहीं कर सकती। उसका वैद्यक जानना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे घर में रोग कभी न आवे और सब लोग सदा आनन्दित रहें। शिल्पविद्या के जाने बिना घर का बनवाना, वस्त्राभूषण आदि का बनाना-बनवाना, गणितविद्या के बिना सबका हिसाब समझना-समझाना, वेदादिशास्त्र के बिना ईश्वर और धर्म को न जान के अधर्म से कभी नहीं बच सके। इसलिए वे ही धन्यवादार्ह और कृतकृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्णबल को बढ़ावे, जिससे वे सन्तान, माता, पिता, सास-श्वसुर, राजा-प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य कर्म से वर्तें।[2]

सन् १८७२-७३ में कलकत्ता में अपने भाषण में महर्षि ने कहा था—सन्तान पहले माता के पास शिक्षा पावे। विना शिक्षा प्राप्त किये तो माता सन्तान को शिक्षा देगी नहीं। अतः वह पहले से ही पूर्ण विदुषी हो, यह दयानन्द का मत है। दयानन्दने अपने भाषण में स्त्री-शिक्षा के प्रश्न को स्पष्ट करते हुए लिखा—स्त्रियों को इनमें से कई विषयों की विशेष शिक्षा देनी आवश्यक है, जैसे भाषा, धर्मशास्त्र, शिल्प वि॰,

---

१. उपदेश मंजरी, बारहवां प्रवचन, पृ. १२६
२. सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास, पृ. ७४-७६

संगीत विद्या और वैद्यक शास्त्र। इनमें वैद्यक शास्त्र स्त्रियों के लिए विशेष प्रयोजनीय है, क्योंकि स्त्रियों को यह जानना नितान्त आवश्यक है कि किस वस्तु के खाने से शारीरिक पुष्टि और स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।[1]

सन् १८८० में मेरठ में एक सज्जन के आक्षेप पर स्वामी जी ने कहा कि स्त्रियाँ लिखने-पढ़ने के कारण से कुटिला नहीं होंगी। यह तो प्रकृति और संगति पर निर्भर है। कितने पढ़े-लिखे मनुष्य भी चरित्रहीन होते हैं।[2]

सितम्बर १८८० में मुजफ्फर नगर में एक भक्त ने स्त्री शिक्षा के विषय में प्रश्न करते हुए कहा—लोग कहते हैं कि स्त्रियों को पढ़ाने से उनमें दुष्कर्म वढ़ जायेंगे। स्वामी जी ने इस पर कहा—शिक्षा का परिणाम पाप हो तो पुरुषों को भी अशिक्षित ही रहना चाहिए। अधिकांश पापकर्म अपढ़ और कुपढ़ जन ही किया करते हैं।[3] स्त्रियों में विद्या का विस्तार अवश्यमेव होना चाहिए। इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने विवाह से पूर्व कन्या को विद्या पढ़ने की प्रेरणा प्रदान कर उसके गृहस्थ जीवन को सुखी बनाने का मार्ग प्रशस्त किया है।

मनु के 'कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्' (७।१५२) की व्याख्या करते हुए महर्षि दयानन्द ने लिखा कि राजा को योग्य है कि सब कन्या और लड़कों को उक्त समय से उक्त समय तक ब्रह्मचर्य में रख के विद्वान् कराना। जो कोई इस आज्ञा को न माने तो उसके माता-पिता को दण्ड देना अर्थात् राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात् लड़का व लड़की किसी के घर में न रहने पावें, किन्तु आचार्य कुल में रहें।[4] महर्षि दयानन्द के प्रयत्नों का ही यह परिणाम रहा कि हमारे देश में स्त्री-शिक्षा का भली प्रकार प्रचलन हो सका। यदि हमें स्त्री-पुरुष को समान स्तर पर लाना है तो सबसे पहले हमें सभी कन्याओं को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान करने होंगे। पूर्ण शिक्षित होकर जब स्त्री गृहस्थाश्रम में प्रवेश करेगी तब उसके प्रति अन्याय और अत्याचार कोई भी न कर सकेगा।

गृहस्थाश्रम में प्रवेश :

महर्षि दयानन्द प्रत्येक (कुछ वीतरागी स्वभाव के लोगों को छोड़कर) स्त्री-पुरुष का गृहस्थाश्रम में प्रवेश अनिवार्य मानते हैं। उनकी दृष्टि में गृहस्थाश्रम का महत्त्व बहुत अधिक है। उन्होंने मनु के श्लोकों को उद्धृत करके लिखा है कि—

—जैसे नदी और बड़े-बड़े नद तबतक भ्रमते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त

---

१. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-१. पृ. २३०
२. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-२, पृ. २५०
३. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ. ४४७
४. सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास, पृ० ७४-७६

नहीं होते, वैसे गृहस्थ ही के आश्रम से सब आश्रम स्थिर रहते हैं, बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।

—जैसे वायु के आश्रय सब प्राणी हैं वैसे गृहस्थाश्रम सब आश्रमों का आश्रय है, बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।

—जिससे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी तीन आश्रमों को दान और अन्नादि देके प्रतिदिन गृहस्थ ही धारण करता है, इससे गृहस्थ ज्येष्ठाश्रम है, अर्थात् सब व्यवहारों में धुरन्धर कहाता है।

—जो मोक्ष और संसार के सुख की इच्छा करता हो वह प्रयत्न से गृहाश्रम को धारण करे, जो गृहाश्रम दुर्बलेन्द्रिय अर्थात् भीरू और निर्बल पुरुषों से धारण करने के अयोग्य है, उसको अच्छे प्रकार धारण करे।[1]

महर्षि दयानन्द की स्पष्ट सम्मति है कि जितना कुछ व्यवहार संसार में है, उसका आधार गृहाश्रम है। जो यह गृहाश्रम न होता तो सन्तानोत्पत्ति के न होने से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम कहाँ से हो सकते ? जो कोई गृहाश्रम की निन्दा करता है, वही निन्दनीय है और जो प्रशंसा करता है, वही प्रशंसनीय है।[2]

महर्षि दयानन्द ने २४ जुलाई १८८२ को ब्र० रामानन्द से श्री रूपसिंह के पत्र के उत्तर में लिखा था—यह हर्ष हुआ कि अब आपका उद्वाह होने वाला है और आपकी योग्यता भी हुई अत्युत्तम है। आप प्रसन्नता के साथ अपना विवाह कीजिये।[3] इससे स्पष्ट है कि महर्षि के मत में विवाह का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

गृहस्थाश्रम में प्रवेश-योग्यता

ऊपर हम देख चुके हैं कि महर्षि दयानन्द कन्या के लिए शिक्षित होना अनिवार्य समझते हैं। उन्होंने स्त्री व पुरुष दोनों के लिए विवाह से पूर्व शिक्षा प्राप्त करना एक अनिवार्य शर्त रख दी थी वे लिखते हैं : जब यथावत् ब्रह्मचर्य आचार्यानुकूल व्रत कर धर्म से चारों, तीन वा दो अथवा एक वेद को सांगोपांग पढ़ के जिसका

---

१. (क) यदा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्॥ —मनु० ६।९०

(ख) यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्व जन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः॥

(ग) यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्य्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही॥

(घ) स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥ —मनु० ३।७७-७९

२. सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास पृ० १२२-१२३।

३. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ० ३५१

ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो वह पुरुष वा स्त्री (युवक व युवती) गृहाश्रम में प्रवेश करें।[1]

प्रवेश आयु—महर्षि दयानन्द युवक व युवती के लिए पूर्ण शिक्षा का विधान करने के साथ विवाह को ठीक आयु में करने के पक्ष में हैं। उनकी दृष्टि में बाल-विवाह समाज के लिए एक महान् अभिशाप है। बाल-विवाह का विरोध करने का एक कारण तो यही है कि इस कारण शिक्षा प्राप्त करने का समय कम हो जाता है। वे लिखते हैं हमारे देश में न्यून अवस्था में विवाह करने की रीति के कारण विद्या-सम्पादन करने में अड़चन होती है।[2]

पूना के अपने भाषण में उन्होंने कहा कि यदि इस समय हम लोगों में बाल-विवाह प्रचलित न होता तो विधवाओं की संख्या कभी इतनी न होती और न इतने गर्भपात और भ्रूणहत्याएँ होतीं और न इतने रोगों की अधिकता होती।[3] महर्षि का स्पष्ट अभिमत है कि :

—जो पुरुष यज्ञोपवीत [धारण करके] ब्रह्मचर्य के सेवन वा उत्तम शिक्षा और विद्या से युक्त होने के उपरान्त सुन्दर वस्त्र धारण करके पूर्ण जवान होके विद्या ग्रहण कर गृहाश्रम में आता है, वही दूसरे विद्या-जन्म में प्रसिद्ध होकर अति शोभा-युक्त मंगलकारी होता है। धीर व विद्वान् मनुष्य उसी पुरुष को उन्नतिशील करके प्रतिष्ठित करते हैं और जो ब्रह्मचर्य धारण, विद्या व उत्तम शिक्षा का ग्रहण किये विना अथवा बाल्यावस्था में विवाह करते हैं वे स्त्री-पुरुष नष्ट-भ्रष्ट होकर विद्वानों में प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं होते।[4]

—जो किसी ने दुही नहीं, उन गौओं के समान, बाल्यावस्था से रहित, सब प्रकार के उत्तम व्यवहारों को पूर्ण करने वाली, कुमारावस्था का उल्लंघन करने वाली, नवीन-नवीन शिक्षा से पूर्ण युवावस्थास्थ स्त्रियाँ—ब्रह्मचर्य व सुनियमों से, अद्वितीय, शास्त्र व शिक्षायुक्त प्रज्ञा मे रमण भावार्थ को प्राप्त करके, तरुण पतियों को प्राप्त होके, गर्भ धारण करे, वह कभी भूल के भी बाल्यावस्था में पुरुष का मन से भी ध्यान न करे। क्योंकि यही कर्म इस लोक और परलोक के सुख का साधन है। बाल्यावस्था में

---

१. वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुत ब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्र ममाविशेत् ॥मनु० ३।२
(देखिए सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास पृ० ७८)

२. उपदेश मंजरी, तृतीय प्रवचन, पृ० १६।

३. उपदेश मंजरी, बारहवां प्रवचन, पृ० १२६.

४. युवा सुवासाः परिवत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः।
ते धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ॥ऋ. ३।८।४
(देखिए सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास पृ० ८४

विवाह से जितना पुरुष का नाश होता है, उससे अधिक स्त्री का नाश होता है।

—अत्यन्त श्रम करने वाले, वीर्य सींचने में समर्थ, पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष, युवावस्थास्थ हृदयों की प्रिय स्त्रियों को प्राप्त होकर, शत वर्ष वा उससे अधिक वर्षों तक आयु को आनन्द से भोग कर पुत्र-पौत्रादि से संयुक्त रहते रहें, जैसे पूर्व वर्तमान शरद् ऋतुओं और वृद्धावस्था को प्राप्त कराने वाली, प्रातःकाल की वेलाओं को, रात्रि और दिन शरीरों की शोभा को अतिशय वृद्ध कर बल और शोभा को दूर कर देता है, वैसे में स्त्री या पुरुष अच्छे प्रकार निश्चय करके, ब्रह्मचर्य से विद्या, शिक्षा, शरीर और आत्मा के बल और युवावस्था को प्राप्त करके ही विवाह करूं ऐसा निश्चय करें। इससे विरुद्ध करना वेद विरुद्ध होने से सुखदायक विवाह कभी नहीं होता।[1]

महर्षि दयानन्द का स्पष्ट अभिमत है कि सोलहवें वर्ष से लेके चौबीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेकर ४८वें वर्ष तक पुरुष का विवाह-समय उत्तम है।[2]

इसके लिए उन्होंने चिकित्सा-शास्त्र (सुश्रुत) का प्रमाण दिया है। वे लिखते हैं कि शरीर की चार अवस्था है, एक वृद्धि, जो १६वें वर्ष से लेके २५वें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की बढ़ती होती है, दूसरा यौवन, जो २५वें वर्ष के अन्त और २५वे वष के आदि में युवावस्था का आरम्भ होता है। तीसरी सम्पूर्णता जो २५वें वर्ष से लेके ४०वें वर्ष पर्यन्त सब धातुओं की पुष्टि होती है। चौथी जब सब सांगोपांग शरीरस्थ सकल धातु पुष्ट होके पूर्णता को प्राप्त होते हैं। तदनन्तर जो धातु बढ़ता है वह शरीर में नहीं रहता, किन्तु स्वप्न प्रस्वेदादि द्वारा बाहर निकल जाता है। वही ४०वां वर्ष उत्तम समय विवाह का है। उत्तमोत्तम तो ४८वें वर्ष में विवाह करना है।[3]

---

१. (क) आधेनवोधुनयन्तमशिश्वीः शवर्दुघा शशया अप्रदुग्धाः।
नव्यानव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥ऋ. ३।५५।१६॥
(ख) वींरहं शरदः शश्रमाण दोषावस्तोरूससो जरयन्तीः।
मिनातिश्रियं जरिमा तनूनामप्यू नु पत्नीर्वृषणो जगम्यु ॥ऋ. १।१७६।१॥
(देखिए सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास पृ. ८४-८५)

२. महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि जो सोलह और पच्चीस में विवाह करे तो निकृष्ट १८-२० की स्त्री ३०-३५-४० वर्ष के पुरुष का मध्य, चौबीस वर्ष की स्त्री और ४८ वर्ष के पुरुष और कन्या का विवाह उत्तम है। (सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास पृ. ८१) वस्तुतः विवाह आयु के सम्बन्ध में चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से अनेक अनुसंधान होने चाहिएँ।

३. चतिस्रोवस्था शरीरस्य वृद्धिर्यौवनं पूर्णता किंचित्परिहाणिश्चति। आपोशद्वद्धिः। आपंचविंशतेर्योवनं। आचत्वांरिशतः सम्पूर्णता ततः किंचित्परिहाणिश्चेति॥
पंचविंशे ततो वर्षे पुमान् नारी तुषोडशे।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात्कुशलो भिषक्॥
(सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास पृ० ४६)

—जब स्त्री-पुरुष विवाह करना चाहें तब विद्या, विनयशील, रूप, आयु, बल, कुल शरीर का परिमाणादि यथायोग्य होना चाहिए। जब तक इनका मेल नहीं होता तब तक विवाह में कुछ भी सुख नहीं होता और न बाल्यावस्था में विवाह करने से सुख होता।[1]

—महर्षि ने कर्तारपुर (सूरत) ग्राम के निवासियों से कहा था—पुत्री का छोटी आयु में विवाह करना बहुत बुरा है। सन्तान के परित्राण के लिए इस कुरीति को अपने में से निकाल दो। जैसे कच्चे खेत को काट लेने से अन्न नष्ट हो जाता है, कच्चे फल और ईख में मिठास नहीं होती, ठीक उसी प्रकार छोटी आयु में जो सन्तान का विवाह कर देते हैं उनका वेटा भी बिगड़ जाता है। सन्तान में सुख और उन्नति का सदा अभाव ही बना रहता है। इस प्रान्त के कृषकों में यह कुरीति सबसे अधिक है। वहाँ के कृषक स्वामी जी के कथन से बहुत प्रभावित हुए।[२]

—महर्षि सन् १८७८ में मेरठ आए। वहाँ उन दिनों बख्तावरसिंह जी सब-जज थे। वे प्रतिदिन महर्षि दयानन्द की सेवा में आया करते थे। एक दिन वे अपने एक युवक बन्धु के साथ दर्शनार्थ आए। दयानन्द ने जज महाशय से कहा—इस युवक की आयु सोलह वर्ष की प्रतीत होती है। इतनी छोटी आयु में आपने इसका विवाह क्यों किया है ? आप पढ़े-लिखे सज्जन हैं। यदि आप लोग ही इस कुप्रथा को न हटाएँगे तो आर्य जाति का सुधार कैसे होगा ? यह बाल-विवाह आपकी जाति के जीवन-जड़ में घुन बनकर उसका सर्वनाश कर रहा है अब जो होना था सो तो हो गया, परन्तु २५ वर्ष के पहले इसको वधू का द्विरागमन न कराना।[३]

—इस देश के निवासियों को बाल-विवाह की कुप्रथा प्रचलित होने के कारण बलवीर्यहीन देखकर महाराज बच्चों के बच्चे कहा करते थे। एक दिन एक ब्राह्मण ने उनसे कहा कि यदि सब ही ऐसे हैं तो आप भी तो बच्चों के बच्चे हुए। दयानन्द ने कहा—नहीं, जिस समय हमारा जन्म हुआ तो हमारे पिता की आयु ३०-३५ वर्ष की थी और हमारी माता भी बालिका न थीं।[४]

—सन् १८७८ में गुजरात (पंजाब) में उन्होंने एक व्याख्यान ब्रह्मचर्य पर दिया। जिसे सुनकर स्कूल के छात्र बड़ी उलझन में पड़ गए। उनमें से जो विकसित थे वे सोचने लगे कि यदि हम २५ वर्ष तक स्त्री-सम्भोग न करेंगे तो हमारी स्त्रियों का चरित्र दूषित हो जायगा। उन्होंने डरते-डरते यह शंका दयानन्द से निवेदन की तो उन्होंने उत्तर दिया कि यदि तुम ब्रह्मचर्य व्रत का पालन न करोगे तो तुम और

१. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ० २६८-२६९।

२. वही, पृ० ३७०-३७१।

३. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित भाग—२, पृ० २२८-२२९।

४. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित भाग—३. घासीराम, पृ० ८४।

तुम्हारी स्त्रियां दोनों ही खराब होंगे और जो तुम्हारी सन्तति होगी वह ह्रस्वकाय होगी।'

महर्षि ने उदयपुर के महाराजा को उपदेश देते हुए १० से १५ अगस्त के मध्य सन् १८८३ को लिखा था कि अपने राज्य में २५ वर्ष का पुरुष और १६ वष की कन्या का विवाह करने के लिए दृढ़तापूर्वक आज्ञा दीजिए। कुमार और कुमारी का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे जिससे सब मनुष्य जाति की सत्य उन्नति होवे।'

महर्षि ने विवाहोपयुक्त आयु का निर्णय शरीर-विज्ञान के आधार पर किया है। सोलहवें वर्ष के पश्चात् चौवीसवें वर्ष पर्यन्त विवाह होने से पुरुष का वीर्य परिपक्व, शरीर बलिष्ठ, स्त्री का गर्भाशय पूरा और शरीर भी बलयुक्त होने से सन्तान उत्तम होती हैं। उचित समय से न्यून आयु वाले स्त्री-पुरुष को गर्भाधान में मुनिवर धन्वन्तरि सुश्रुत में निषेध करते हैं—

ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान्गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते ॥
जातो वा न चिरंजीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत् ॥
(सुश्रुत शारीरस्थान १०।५७-५८)

सोलह वर्ष से न्यून वय वाली स्त्री में पच्चीस वर्ष से न्यून आयु वाला पुरुष जो गर्भ को स्थापन करे तो वह कुक्षिस्थ हुआ गर्भ विपत्ति को प्राप्त होगा अर्थात् पूर्वकाल तक गर्भाशय में रहकर उत्पन्न नहीं होता अथवा उत्पन्न हो तो चिरकाल तक न जीवे, वा जीवे तो दुर्बलेन्द्रिय हो। इस कारण से अति बाल्यावस्था वाली स्त्री में गर्भ-स्थापन न करें। ऐसे-ऐसे शास्त्रोक्त नियम और सृष्टि क्रम को देखने और बुद्धि से विचारने से यही सिद्ध होता है कि १६ वर्ष से न्यून स्त्री और २५ वर्ष से न्यून आयु वाला पुरुष कभी गर्भाधान करने के योग्य नहीं होता। इन नियमों से विपरीत जो करते हैं वे दुःखभागी होते हैं। विवाहयोग्य आयु के लिए मनु का निम्नलिखित श्लोक महर्षि ने उद्धृत किया है—

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमती सती।
ऊर्ध्वं तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम् ॥ मनु ९।९०

कन्या रजस्वला हुए पीछे तीन वर्ष पर्यन्त पति की खोज करके अपने तुल्य पति को प्राप्त होवे। जब प्रतिमास रजोदर्शन होता है तो तीन वर्षों में ३६ वार रजस्वला हुए पश्चात् विवाह करना योग्य है, इससे पूर्व नहीं।

---

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ. ४५०

जिस देश में इसी प्रकार विवाह की विधि श्रेष्ठ और ब्रह्मचर्य विद्याभ्यास अधिक होता है, वह देश सुखी और जिस देश में ब्रह्मचर्य विद्या ग्रहण रहित, बाल्यावस्था और अयोग्यों का बिवाह होता है, वह देश दुःख में डूब जाता है। क्योंकि ब्रह्मचर्य विद्या के ग्रहण-पूर्वक विवाह के सुधार से ही बातों का सुधार और बिगड़ने से बिगाड़ होता है।[1]

अयोग्य साथी—महर्षि दयानन्द ने मनुस्मृति को प्रमाण मानकर कुछ कन्याओं (और कुमारों) को विवाह के अयोग्य माना है। उनका कथन है कि चाहे कितने ही धन, धान्य, गाय, अजा, हाथी, घोड़े, राज्य, श्री आदि से समृद्ध ये कुल हों तो भी विवाह सम्बन्ध में निम्नलिखित दश कुलों का त्याग कर दे। जो कुल सत्क्रिया से हीन, सत्पुरुषों से रहित, वेदाध्ययन से विमुख, शरीर पर बड़े-बड़े लोभ अथवा बवासीर, क्षयी, दम, खांसी, आमाशय, मिरगी, श्वेतकुष्ठ ओर गलित कुष्ठ युक्त कुलों की कन्याओं वा वर के साथ विवाह न होना चाहिए, क्योंकि ये सब दुर्गुण और रोग विवाह करने वालों के कुल में भी प्रविष्ट हो जाते हैं, इसलिए उत्तम कुल के लड़के और लड़कियों का आपस में विवाह होना चाहिए। न पीले वर्ण वाली, न अधिकानी (अर्थात् पुरुष से लम्बी-चौड़ी), न अधिक बलवाली, न रोगयुक्ता, न लोम रहित, न

---

१. महर्षि दयानन्द ने १० वर्ष की आयु में कन्या के विवाह विषयक वचनों को पूर्व पक्ष में उद्धृत किया है—

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशवर्षा भवेत्कन्या तत उर्ध्वं रजस्वला॥ १॥
माता चैव पिता तस्या ज्येष्ठो भ्राता तथैव च।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्टवा कन्यां रजस्वलाम्॥ २॥

ये श्लोक पाराशरी (७।६,८) और शीघ्रबोध (१।५४-६५) में लिखे हैं। अर्थ यह है कि कन्या की आठवें वर्ष गौरी नवमें वर्ष रोहिणी, दसवें वर्ष कन्या और उनके आगे राजस्वला संज्ञा हो जाती है। दसवें वर्ष तक विवाह न करके रजस्वला कन्या को माता-पिता और उसका बड़ा भाई, ये तीनों देख के नरक में गिरते हैं। इसके उत्तर पक्ष में दयानन्द ने 'ब्रह्मोवाच' लिखकर निम्नलिखित स्वरचित श्लोक लिखे हैं—

एकक्षणा भवेद्गौरी द्विक्षणेयन्तु रोहिणी। त्रिक्षणा सा भवेत्कन्याह्यत ऊर्ध्वं रजस्वला॥

माता पिता तथा भ्राता मातुलो भगिनी स्वका। सर्वे ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्। यह सद्योनिर्मित ब्रह्मपुराण का वचन है। जब कन्या जन्मे तब एक क्षण में गौरी, दूसरे में रोहिणी' तीसरे में कन्या और चौथे में रजस्वला हो जाती है। उस रजस्वला को देख के उस की माता, पिता, भाई, मां और बहिन सब नरक को जाते हैं। दयानन्द ने लिखा कि जिस प्रकार जन्मते ही विवाह व्यर्थ है, उसी प्रकार ६ या १० वर्ष की आयु में भी विवाह निष्फल है।

बहुत लोमवाली, न बकवाद करने वाली और भूरे नेत्र वाली[1] न ऋक्ष (अर्थात् (अश्विनी, भरणी, रोहिणी देवी चित्तारी आदि) नक्षत्र नाम वाली, वृक्ष नाम वाली, (तुलसी, गेन्दा, गुलाब, चंपा, चमेली आदि) नदी नाम वाली (गंगा, यमुना आदि) अन्त्य (चांडाली) आदि नाम वाली, पर्वत, (विन्ध्या, हिमालय, पार्वती आदि) पक्षी (कोकिला, मैनाआदि) नामवाली सर्प (नागी, भुजंगा आदि) नाम वाली, प्रेष्य (माधोदासी, मीरादासी आदि) नाम वाली और भीषण (भीमकुमारी, चण्डिका, काली आदि) नाम वाली कन्या के साथ विवाह न करना चाहिए, क्योंकि ये नाम कुत्सित और अन्य पदार्थों के भी हैं।[2]

योग्य साथी—अयोग्य साथी का वर्णन करने के साथ-साथ दयानन्द ने योग्य साथी का उल्लेख करते हुए लिखा—जिसके सरल सूधे अंग हों, विरुद्ध न हों, जिसका नाम सुन्दर (यशोदा, सुखदा आदि हो), हंस और हथिनी के तुल्य जिसकी चाल हो, सूक्ष्म लोम केश और दान्त युक्त और जिसके सब अंग कोमल हों, वैसी स्त्री के साथ विवाह करना चाहिए।[3]

साथी—समान गुण, कर्म, स्वभाव का हो।

महर्षि दयानन्द का यह निश्चित मत है कि विवाह समान गुण, कर्म, स्वभाव के व्यक्ति (युवक व युवती) से होना चाहिये। मनु के श्लोक को उद्धृत करके उन्होंने लिखा कि गुरु की आज्ञा ले स्नान कर गुरुकुल से अनुक्रमपूर्वक आके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने वर्णानुकूल सुन्दर लक्षण युक्त कन्या से विवाह करे।[4] उन्होंने आगे फिर लिखा है कि विवाह वर्णानुक्रम से करें और वर्णव्यवस्था भी गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार होनी चाहिए।[5] अर्थात् शूद्र या वैश्य के घर में जन्म ले करके भी यदि कन्या

---

१. (क) महान्त्यपि समृद्धानि गोऽजाविधनधान्यतः।
स्त्री संबंधे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत्॥ (मनु ३।६)
(ख) हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्षसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च॥ (मनु ३।७)
(ग) नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाधिकांगीं न रोगिणीम्।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटान्न पिंगलाम्॥ (मनु ३।८)

२. नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्यपर्वत नामिकाम्।
न पक्ष्यहिप्रेष्यनाम्नीं न चाभीषण नामिकाम्॥ —मनु ३।९
(यह स्पष्ट है कि यदि कन्या में और सभी गुण हों, केवल नाम ही अनुचित हो तो विवाह से पूर्व उसका नाम परिवर्तित करके उससे विवाह किया जा सकता है)।

३. अव्यंगांगीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्।
तनुलोमकेशदशनां मृद्वंगीमुद्वहेत्स्त्रियम्॥ —मनु ३।१०

४. असपिंडाच या मातुरसगोत्रा च या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने॥ मनु० ३।५ (सत्यार्थ प्रकाश पृ. ७८)

५. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ० ८५।

या कुमार की वृत्तियाँ ब्राह्मण की हों तो व ब्राह्मण वृत्ति के कुमार व कन्या से ही विवाह करें। मनु का कथन है—

काममामरणात्तिष्ठेद् गृहे कन्यर्त्तुमत्यपि ।
न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित् ॥ मनु० ९।८९

चाहे लड़का या लड़की मरणपर्यन्त कुमार रहें परन्तु असदृश अर्थात् परस्पर विरुद्ध गुण कर्म स्वभाव वालों का विवाह कभी नहीं होना चाहिए।[1]

साथी दूर देश का हो—महर्षि दयानन्द की यह निश्चित धारणा है कि विवाह के लिए एक साथी का चुनाव करते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह दूर का हो तथा उसका माता व पिता के कुल से निकट सम्बन्ध न हो। मनु के अनुसार जो कन्या माता के कुल की ६ पीढ़ियों में न हो और पिता के गोत्र की न हो, उस कन्या से विवाह करना उचित है।[2] इसका यह प्रयोजन है कि—

परोक्षप्रिया इव हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः (शतपथ १४।६।११।२)

यह निश्चित बात है कि जैसी परोक्ष पदार्थ में प्रीति होती है वैसी प्रत्यक्ष में नहीं। जैसे किसी ने मिश्री के गुण सुने हों और खाई न हो तो उसका मन उसीमें लगा रहता है। जैसे किसी परोक्ष वस्तु की प्रशंसा सुनकर मिलने की उत्कट इच्छा होती है, वैसे ही दूरस्थ अर्थात् जो अपने गोत्र व माता के कुल में निकट सम्बन्ध की न हो, उसी कन्या से वर का विवाह होना चाहिए। निकट और दूर विवाह करने में दोष और गुण ये हैं —

१. जो बालक बाल्यावस्था से निकट रहते हैं परस्पर क्रीड़ा, लड़ाई और प्रेम करते, एक-दूसरे के गुण-दोष स्वभाव का बाल्यावस्था के विपरीत आचरण जानने और जो नंगे भी एक-दूसरे को देखते हैं, उनका परस्पर विवाह होने से प्रेम कभी नहीं हो सकता।

२. जैसे पानी में पानी मिलने से विलक्षण गुण नहीं होता वैसे एक गोत्र पितृ वा मातृकुल में विवाह होने में धातुओं के अदल-बदल नहीं होने से उन्नति नहीं होती।

३. जैसे दूध में मिश्री व शुंठ्यादि औषधियों के योग होने से उत्तमता होती है वैसे ही भिन्न गोत्र मातृ-पितृ कुल से पृथक् वर्तमान स्त्री-पुरुषों का विवाह होना उत्तम है।

४. जैसे एक देश में रोगी हो वह दूसरे देश में वायु और खान-पान के बदलने

---

१. सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ८५

२. असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दार कर्मणि मैथुने ॥ —मनु
(सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ७८)

से रोगरहित होता है वैसे ही दूर देशस्थों के विवाह होने में उत्तमता है ।

५. निकट सम्बन्ध करने में एक-दूसरे के निकट होने में सुख-दुःख का भान और विरोध भी होना सम्भव है, दूर देशस्थों में नहीं, और दूरदेशस्थों के विवाह में दूर-दूर प्रेम की डोरी लम्बी बढ़ जाती है, निकटस्थ में नहीं ।

६. दूर-दूर देश के वर्तमान और पदार्थों की प्राप्ति भी दूर सम्बन्ध होने में सहजता से हो सकती है, निकट विवाह में नहीं, इसलिए :

दुहिता दुर्हिता दूरे हिता भवतीति । निरुक्त।३।४

कन्या का नाम दुहिता इस कारण से है कि इसका विवाह दूर देश में होने से हितकारी होता है, निकट रहने में नहीं ।

७. कन्या के पितृ कुल में दरिद्र होने का भी सम्भव है क्योंकि जब-जब कन्या पितृ कुल में आवेगीं तब तब इसको कुछ न कुछ देना ही होगा ।

८. कोई निकट होने से एक-दूसरे को अपने-अपने पितृकुल के सहाय का घमण्ड और जब कुछ भी दोनों में वैमनस्य होगा तब स्त्री झट ही पिता के कुल में चली जायेगी, एक-दूसरे की निन्दा होगी और विरोध भी, क्योंकि स्त्रियों का स्वभाव तीक्ष्ण और मृदु होता है ।—इत्यादि कारणों से पिता के एक गोत्र माता की छः पीढ़ी और समीप देश में विवाह करना उचित नहीं ।[1]

एक बार महर्षि से पूछा गया कि क्या अपने सगोत्र में विवाह सम्बन्ध करना दूषित है ? यदि है तो क्यों ? क्या सृष्टि के आदि में ऐसा हुआ था ? महर्षि ने उत्तर दिया, सगोत्र में विवाह करने से शरीर और आत्मा की यथावत् उन्नति नहीं होती और बल तथा प्रेम भी ठीक-ठाक नहीं बढ़ता । इन दोषों के कारण भिन्न गोत्र में विवाह करना उचित है । सृष्टि के आदि में तो गोत्र नहीं थे । इसलिए उस समय का प्रश्न करना व्यर्थ है ।[2]

जो लोग किसी संकुचित परिधि में ही वर व वधू का चुनाव करते हैं उनके विरुद्ध महर्षि ने मनु का निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किया है :

स्त्रियो रत्नान्यायथो विद्या सत्यं शौचं सुभाषितम् ।
विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वतः ।। मनु २।२४०

उत्तम स्त्री, नाना प्रकार के रत्न, विद्या, सत्य, पवित्रता, श्रेष्ठ भाषण और नाना

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ७८-७९

२. सन् १८७९ में म० दयानन्द जब फर्रुखाबाद आए थे तब कुछ पौराणिक पण्डितों ने महर्षि से २५ प्रश्न पूछे थे । उनमें से एक प्रश्न (२२ वां) उक्त था ।

(श्रीमद्दयानन्द प्रकाश पृ० ४२१)

प्रकार की शिल्पविद्या अर्थात् कारीगरी, सब देश तथा सब मनुष्यों से ग्रहण करे।[1] इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने न केवल अन्तर्जातीय व अन्तःप्रांतीय विवाहों का समर्थन किया है वरन् अन्तर्राष्ट्रीय विवाहों के भी पक्ष में हैं। ३ जून १८८१ को बम्बई में दिए भाषण में महर्षि ने कहा कि इस देश वालों को उचित है कि अपनी कन्याओं के विवाह अपेक्षाकृत दूर देशों में करें।[2]

साथी का चुनाव (स्वयंवर प्रथा)—महर्षि दयानन्द ने यह प्रश्न उपस्थित करके कि विवाह माता-पिता के आधीन होना चाहिए वा लड़का-लड़की के आधीन रहे, उत्तर दिया है कि लड़का-लड़की के आधीन विवाह होना उत्तम है। जो माता-पिता विवाह करना कभी विचारे तो भी लड़का लड़की की प्रसन्नता के बिना न होना चाहिए, क्योंकि एक-दूसरे की प्रसन्नता से विवाह होने में विरोध बहुत कम होता और सन्तान उत्तम होती है। अप्रसन्नता के विवाह में नित्य क्लेश ही रहता है। विवाह में मुख्य प्रयोजन वर ग्रौर कन्या का है, माता-पिता का नहीं, क्योंकि जो उनमें परस्पर प्रसन्नता रहे तो उन्हीं को सुख और विरोध में उन्हीं को दुःख होता है।[3]

महर्षि ने स्वयंवर की विधि भी प्रतिपादित की है। वे लिखते हैं कि कन्या और वर का विवाह के पूर्व एकान्त में मेल न होना चाहिए क्योंकि युवावस्था में पुरुष का एकान्तवास दूषण कारक है। परन्तु जब कन्या वा वर के विवाह का समय हो, अर्थात् जब एक वर्ष या ६ महीने ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या पूरी होने में शेष रहें तब उन कन्या और कुमारों का प्रतिबिम्ब अथवा प्रतिकृति (फोटोग्राफ) उतार के कन्याओं की अध्यापिकाओं के पास कुमारों की, कुमारों के अध्यापकों के पास कन्याओं की प्रतिकृति भेज देवे।[4] जिस-जिस का रूप मिल जाए (कद, रंग आदि की अनुकूलता हो) उस उसके इतिहास अर्थात् जन्म से ले के उस दिन पर्यन्त जन्म चरित्र की पुस्तक हो,[5] उसको अध्यापक लोग मंगवा के देखें। जब दोनों के गुण, कर्म, स्वभाव सदृश हों, तब जिस-जिस के साथ, जिस-जिस का विवाह होना योग्य समझें, उस-उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिम्ब और इतिहास कन्या और वर के हाथ में देवें और कहें कि इसमें जो तुम्हारा अभिप्राय हो, सो हम को विदित कर देना। जब उन दोनों का निश्चय परस्पर विवाह करने का हो जाय तब उन दोनों का समावर्तन एक ही समय में होवे। उनका अध्यापकों के सामने विवाह होना योग्य है। जब वे समक्ष हों तब उन अध्यापकों वा कन्या के माता-पित-आदि महापुरुषों के सामने उन दोनों की आपस में बातचीत, शास्त्रार्थ कराना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सो भी सभा में लिख के एक-दूसरे

---

१. वही, पृ. ९६-९७

२. महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित, भाग-२, पृ. २८७

३. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ० ८३

४. यह तभी संभव है कि जब कन्याएँ और कुमार घर से दूर किसी शिक्षा-संस्था में पढ़ते हों।

५. स्पष्ट है कि दयानन्द प्रत्येक छात्र की अध्यापक द्वारा लिखित दैनन्दिनी रखने के पक्ष में थे।

के हाथ में देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें। जब दोनों का दृढ़ प्रेम विवाह करने में हो जाय, तब उनका विवाह कर दें।[1]

स्वयंवर के पक्ष में महर्षि दयानन्द ने बारम्बार लिखा है—

—जैसी स्वयंवर की रीति आर्यावर्त में परम्परा में चली आती है वही विवाह उत्तम है।[2]

—जब तक इसी प्रकार सब ऋषि-मुनि, राजा-महाराजा, आर्य लोग ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़ ही के स्वयंवर विवाह करते थे तब तक इस देश की सदा उन्नति होती थी। जबसे यह ब्रह्मचर्य से विद्या का न पढ़ना, बाल्यावस्था में पराधीन अर्थात् माता-पिता के आधीन विवाह होने लगा तबसे क्रमशः आर्यावर्त देश की हानि होती चली आई है, इससे इस दुष्ट काम को छोड़ के सज्जन लोग पूर्वोक्त प्रकार से स्वयंवर विवाह किया करें।[3]

—हे गृहाश्रम की इच्छा करने वाले मनुष्य लोगों, तुम लोग स्वयंवर अर्थात् अपनी इच्छा के अनुकूल विवाह करके गृहाश्रम को प्राप्त हो।[4]

विवाह के प्रकार—इस प्रसंग में विवाह के विविध प्रकारों का उल्लेख करना भी आवश्यक है :

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथाऽऽसुरः ।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥ मनु० ३।२१

विवाह आठ प्रकार का होता है—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच। इन विवाहों की व्यवस्था निम्नलिखित प्रकार से है :

१. **ब्राह्म** : वर कन्या दोनों यथावत् ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्वान्, धार्मिक और सुशील हों। उनका परस्पर प्रसन्नता से विवाह होना ब्राह्म कहाता है।

२. **दैव** : विस्तृत यज्ञ करने में ऋत्विक् कर्म करते हुए जामाता को अलंकार युक्त कन्या का देना दैव है।

३. **आर्ष** : वर से कुछ ले के विवाह होना आर्ष है।

४. **प्राजापत्य** : दोनों का विवाह धर्म की वृद्धि के अर्थ होना प्राजापत्य है।

५. **आसुर** : वर और कन्या को कुछ दे के विवाह होना आसुर है। महर्षि दयानन्द विवाह में व्यय करने के अत्यन्त विरुद्ध थे। सन् १८७३ में फर्रुखाबाद में एक दिन पं० राधाचरण गोस्वामी वृन्दावन निवासी सेठ निर्भयराम, पं० गंगादत्त

१—२. सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास पृ० ९२-९३।

३. गृहामाविभीतमावेपध्वपूर्ज० (यजुर्वेद ३/४१) की व्याख्या में (देखिए ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, गृहाश्रम विषयः, पृष्ठ २३९-२४१।

४. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित, भाग—१, पृ. २५४

५. वही, भाग-२, पृ. १००

तथा अन्य लोगों को साथ लेकर स्वामी जी के पास गये और उनके सामने कुछ मिष्ठान्न रखा। स्वामी जी ने पूछा यह कैसा है? तो सेठ जी ने उत्तर दिया कि मेरे पुत्र के विवाह में मिष्टान्न बना था। उसी में से आपकी सेवा में लाया हूं। स्वामी जी ने कहा हमने सुना है कि आपने पुत्र के विवाह में बहुत धन व्यय किया है। इस प्रकार आप कंगाल हो जायेंगे और फिर आपको कोई सेठ जी नहीं कहेगा। विवाह में इतना धन व्यय करना अनुचित है।

सन् १८७८ में लाहौर में दिये भाषणों में महर्षि कन्याओं पर रुपये लेकर विवाह करने की निन्दा करते थे और कहते थे, यह ऐसा है जैसा कोई रुपया लेकर किसी वेश्या का प्रसंग किसी से करावे।

६. गांधर्व : अनियम, असमय किसी कारण से वर-कन्या काइच्छापूर्वक परस्पर संयोग होना गांधर्व है।

७. राक्षस : लड़ाई करके बलात्कार अर्थात् छीन-झपट वा कपट से कन्या का ग्रहण करना राक्षस विवाह है।

८. पैशाच : शयन व मद्यादि पी हुई पागल कन्या से बलात्कार संयोग करना पैशाच विवाह है।[१]

महर्षि दहेजादि के कारण हो रहे कन्याओं पर अत्याचारों के सख्त विरोधी थे। उनकी यह भावना अनेक स्थलों पर प्रकट हुई है। कानपुर में प्रयागनारायण और गुरुप्रसाद द्वारा बनवाए कैलाश और वैकुण्ठ मन्दिरों को देखकर कहा था—आपने लाखों रुपये लगाकर मन्दिर खड़े किये हैं, परन्तु यह तो बताइये कि इससे लाभ क्या हुआ है?......तीस-तीस वर्ष की बड़ी लड़कियाँ बिना ब्याही कनौजियों के घरों में बैठी हैं। यदि उनके ब्याह करा देते अथवा बालक-बालिकाओं की कोई पाठशाला स्थापित करके जनहित का परिचय देते तो भी अच्छा था।[२]

इन सब विवाहों में ब्राह्म विवाह सर्वोत्कृष्ट, दैव मध्यम, आर्ष, आसुर और गांधर्व निकृष्ट, राक्षस अधम और पैशाच महाभ्रष्ट है।[३]

विवाह संस्कार—महर्षि दयानन्द विवाह से पूर्व युवक व युवती को उत्तम खान-पान से हृष्ट-पुष्ट करने के पक्ष में हैं। वे लिखते हैं कि उनका शरीर जो ब्रह्मचर्य और विद्याध्ययन रूप तपश्चर्य और कष्ट से दुर्बल होता है, वह उत्तम भोजन से चन्द्रमा की कला के समान बढ़ के थोड़े ही दिनों में पुष्ट हो जाए। जिस दिन कन्या रजस्वला होकर शुद्ध हो तब वेदी और मण्डप रच के अनेक सुगन्ध्यादि द्रव्य और घृतादि का होम द्वारा विवाह संस्कार करें तथा उसमें अनेक विद्वान् पुरुष और स्त्रियों का यथायोग्य

---

१. श्रीमद्यानन्द प्रकाश, पृ. २५८

२. वही पृ. १८३

३. वही, पृ.६२

संस्कार करें।[1] ताकि ये सब हमको युवावस्था युक्त और विवाहादि नियमों में ठीक-ठीक प्रतिज्ञा करने वाले जानें, अर्थात् हमारे साक्षी हों।[2]

विवाह संस्कार में पुरुष कहे हे स्त्री, मैं सौभाग्य अर्थात् गृहाश्रम में सुख के लिए तेरा हस्त ग्रहण करता हूं और इस बात की प्रतिज्ञा करता हूं कि जो काम तुझको अप्रिय होगा, उसको मैं कभी न करूंगा। ऐसे ही स्त्री भी पुरुष से कहे कि जो व्यवहार आपको अप्रिय होगा उसको मैं भी कभी न करूंगी और हम दोनों व्यभिचारादि दोष रहित होके वृद्धावस्था पर्यन्त परस्पर आनन्द के व्यवहारों को करेंगे। हमारी इस प्रतिज्ञा को सब लोग सत्य जानें कि इससे उलटा काम कभी न किया जाएगा। जो ऐश्वर्यवान् सब जीवों के पाप-पुण्य के फलों को यथावत् देने वाला, सब जगत् का उत्पन्न करने और सब ऐश्वर्य का देने वाला, सब जगत् का धारण करने वाला परमेश्वर है, वही हमारे दोनों के बीच साक्षी है तथा परमेश्वर और विद्वानों ने मुझ को तेरे लिए और तुझको मेरे लिए दिया है कि हम दोनों परस्पर प्रीति करेंगे तथा उद्योगी होकर घर का काम अच्छी तरह करेंगे और मिथ्या भाषणादि से बचकर सदा धर्म में ही बर्तेंगे। सब जगत् का उपकार करने के लिए सत्यविद्या का प्रचार करेंगे और धर्म से पुत्रों को उत्पन्न करके उनको सुशिक्षित करेंगे—इत्यादि प्रतिज्ञा हम ईश्वर की साक्षी से करते हैं कि इन नियमों का ठीक-ठीक पालन करेंगे, दूसरी स्त्री और दूसरे पुरुष से मन से भी व्यभिचार न करेंगे। हे विद्वान् लोगों, तुम भी हमारे साक्षी रहो कि हम दोनों गृहस्थाश्रम के लिए विवाह करते हैं। फिर स्त्री कहे कि मैं इस पति को छोड़ के मन, वचन और कर्म से भी दूसरे पुरुष को पति न मानूंगी तथा पुरुष भी प्रतिज्ञा करे कि मैं इसके सिवाय अन्य स्त्री को अपने मन, कर्म और वचन से कभी न चाहूंगा। विवाहित स्त्री पुरुषों के लिए परमेश्वर की आज्ञा है कि तुम दोनों गृहस्थाश्रम के शुभ व्यवहारों में रहो, अर्थात् विरोध करके अलग कभी मत हो और व्यभिचार भी किसी प्रकार का मत करो। ऋतुगामित्व से संतानों की उत्पत्ति, उनका पालन और सुशिक्षा, गर्भ-स्थिति के पीछे एक वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य और लड़कों को प्रसूता स्त्री का दुग्ध बहुत दिन न पिलाना इत्यादि श्रेष्ठ व्यवहारों से १०० व १२५ वर्ष पर्यन्त आयु को सुख से भोगो। अपने घर में आनन्दित हो के पुत्र और पौत्रों के साथ नित्यकर्म पूर्वक क्रीड़ा करो। इसके विपरीत व्यवहार कभी न करो और सदा मेरी आज्ञा में वर्तमान रहो। इत्यादि अनेक मन्त्र विवाह विषयक हैं।[3]

---

१. वही, पृ. ६३ (विवाह संस्कार के वर्णन के लिए देखिए संस्कार विधि तथा मेरी पुस्तक 'वैदिक साहित्य में नारी' में गृहस्थाश्रम में प्रवेश शीर्षक अध्याय में विवाह संस्कार।

२. येषामध्येतिप्रवसन्येषु (यजु० ३।४२) की व्याख्या

(देखिए ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, गृहाश्रमविषयः, पृ० २३९-२४१)

३. (क) गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यत्वादुर्गा ईपत्यायदेवाः॥

(ख) इहैवस्तं मा वियौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतं।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे॥ —ऋग्वेद

परदा प्रथा का विरोध—

महर्षि दयानन्द परदा प्रथा के विरुद्ध थे। विवाह संस्कार में—सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत (ऋ० १०।८५।३३) आदि मन्त्र द्वारा वधू के दर्शन करने का विधान रखा गया है। सन् १८७४ में प्रयाग में भाषण करते हुए उन्होंने प्रचलित परदे की प्रथा पर भी खेद प्रकट किया था जिसके कारण महिलाएँ पब्लिक व्याख्यानों से लाभ उठाने से वंचित रहती हैं और अविद्या को दूर नहीं कर सकतीं।[1] सन् १८७७ में सहारनपुर में दिये भाषणों में महर्षि ने कहा कि स्त्रियों को पर्दे में रखना अनुचित है, यह नहीं है कि बिना पर्दे के स्त्रियाँ व्यभिचारिणी नहीं रह सकतीं, पर्दे में भी पाप होते हैं। सदाचारी बिना विद्या प्राप्ति के नहीं हो सकता। पर्दा मुसलमान राजाओं के समय में प्रचारित हुआ, क्योंकि वह जिस किसी की बहू बेटी को रूपवती देखते थे उसे बलात्कारपूर्वक छीनकर लौंडी बना लेते थे। इस अत्याचार के कारण हिन्दुओं ने अपनी बहू-बेटियों को पर्दे में रखना आरम्भ कर दिया। अंग्रेजों की स्त्रियाँ पर्दा नहीं करतीं और हिन्दुओं की स्त्रियों की अपेक्षा बुद्धिमती, विदुषी साहस और उच्चानावली होती हैं।[2]

स्त्री का सम्मान—विवाहोपरान्त स्त्री नये घर में प्रवेश करती है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसका उस घर में पूर्ण सम्मान हो। महर्षि दयानन्द ने मनु को उद्धृत करके कहा है कि जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है, वहाँ देवता (विद्वान् पुरुष) आनन्द से रमण करते हैं और जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता, वहाँ सब क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं।[1] जिस घर वा कुल में स्त्रियाँ शोकातुर होकर दुःख पाती हैं, वह कुल शीघ्र नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है और जिस घर वा कुल में स्त्रियाँ

---

१. (क) यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥ —मनु ३।५६

(ख) शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा॥ —मनु ३।५७

(ग) स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम्।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते॥ —मनु ३।६२

(घ) तस्मादेताः सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः।
भूतिकामैर्नरैर्नित्यं सत्कारेषूत्सवेषु च॥ —मनु ३।५९

(ङ) पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा।
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः॥ —मनु ३।५५

(देखिए सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ९५-९६)

आनन्द, उत्साह और प्रसन्नता से भरी हुई रहती हैं वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है।[1] अत: स्त्री की प्रसन्नता में कुल की प्रसन्नता और उसकी अप्रसन्नता में सब अप्रसन्न और दुःखी हो जाते हैं।[2] इसलिये ऐश्वर्य की कामना करने वाले मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समय में आभूषण, वस्त्र और भोजनादि से स्त्रियों का नित्य प्रति सत्कार करें।[3] पिता, भाई, पति और देवर बहुत कल्याण की इच्छा से इनको सत्कारपूर्वक भूषणादि से प्रसन्न रखें।[4]

महर्षि दयानन्द महिलाओं के विरुद्ध व्यर्थ की बात सुनने के अभ्यस्त नहीं थे। सन् १८८२ में उदयपुर में एक मुसलमान वकील महर्षि से बात कर रहे थे। बीच में उन्होंने एक यह प्रश्न किया कि यह जो अच्छे-अच्छे घरानों की सुन्दर-सुन्दर स्त्रियाँ वेश्या बन जाती हैं, इसका क्या कारण है? महर्षि ने क्रुद्ध होकर कहा कि हमें ऐसे भड़ुवेपन की बात नहीं रुचती। किसी अन्य से पूछना।[5] वस्तुत: स्त्री की किसी भी प्रकार की निन्दा का श्रवण उनके लिए असह्य था। इस प्रसंग में महर्षि ने एक शिष्टाचार की बात भी लिखी कि परिवार के सदस्य जब-जब प्रथम मिलें तब-तब प्रीतिपूर्वक नमस्ते एक-दूसरे से करें।

स्त्री के कर्त्तव्य—जहाँ स्त्री सब प्रकार के सम्मान की पात्री है, वहाँ स्त्री को योग्य है कि वह अतिप्रसन्नता से घर के कामों में रमे। चतुराई से वह सब पदार्थों का उत्तम संस्कार करे, घर की शुद्धि करे और व्यय में अत्यन्त उदार रहे। अर्थात् सब चीजें पवित्र और पाक इस प्रकार बनावे जो औषधरूप होकर शरीर वा आत्मा में रोग को न आने देवे। जो-जो व्यय हो उसका हिसाब यथावत् रख के पति आदि को सुना दिया करे। घर के नौकर-चाकरों से यथायोग्य काम लेवे। घर के किसी काम को बिगड़ने न देवे।

> सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया।
> सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया॥ मनु ५।१५०

जो स्त्री पति से प्रीति अथवा पति को प्रसन्न नहीं करती, उसे जानना चाहिए स्थिति के अप्रसन्न होने से काम (वैवाहिक आनन्द) उत्पन्न नहीं होता।[1]

पति-पत्नी (गृहस्थ) के धर्म—जिस कुल में भार्या से भर्ता और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है, उसी कुल में सब सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं, जहाँ कलह होता है, वहाँ दौर्भाग्य और दरिद्रता स्थिर होती है।[2]

---

१. महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित, भाग-१, पृ. २८०
२. वही, भाग-२, पृ. २०
३. वही, भाग-२, पृ. ३०२
४. वही, पृ० ९६
५. सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास,

वस्तुतः स्त्री और पुरुष का एक-दूसरे के आधीन व्यवहार अर्थात् स्त्री पुरुष का और पुरुष स्त्री का परस्पर प्रियाचरण, अनुकूल रहना, व्यभिचार का विरोध कभी न करना, पुरुष की आज्ञानुकूल घर के काम स्त्री और बाहर के काम पुरुष के आधीन रहना, दुष्ट व्यसन से फँसने से एक दूसरे को रोकना, अर्थात् यही निश्चय जानना—जब विवाह होवे, तब स्त्री के साथ पुरुष और पुरुष के साथ स्त्री बिक चुकी, अर्थात् जो स्त्री और पुरुष के साथ हाव-भाव, नखशिखाग्र पर्यन्त जो कुछ है वह वीर्यादि एक-दूसरे के आधीन हो जाता है, स्त्री वा पुरुष प्रसन्नता के बिना कोई भी व्यवहार न करे।[1]

(ख) महर्षि ने उदयपुर के महाराणा को जो विशेष विषय लिखे थे, उनमें से कुछ पति-पत्नी से सम्बन्धित थे—

(१) जब पति और पत्नी समक्ष हों, प्रसन्नतापूर्वक नमस्ते कर जिस-जिस प्रकार दोनों में प्रेम बढ़े, वैसा व्यवहार करें। विरुद्ध कभी व्यवहार न करें।

(२) दोनों सदा विद्या, धर्म, प्रजा सुख के लिए तन, मन, धन से प्रयत्न किया करें।

(३) किसी वेद विद्या विरुद्ध मत-मतान्तर के झगड़े में दोनों कभी न फंसें, किन्तु पक्षपातरहित, न्यायाचरण वेदोक्त धर्म ही का आचरण करें और करावें।

(४) राजा और रानी का जिस-जिस कर्म से पति-पत्नी और प्रजा में परस्पर प्रेम बढ़े, उस-उसका सेवन और विपरीत का सर्वथा त्याग करे।[2]

पारिवारिक सुख, आनन्द व उत्कर्ष के लिए महर्षि दयानन्द ने दम्पति को 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्', सत्य बोलो, प्रिय बोलने 'भद्रमित्येव वा वदेत्' कल्याणकारी वचनों का प्रयोग करने का आदेश देते हैं।[3] साथ ही दम्पत्ती धार्मिक रहकर निरन्तर ज्ञान की वृद्धि करती रहे।[4] महर्षि दयानन्द ने गृहस्थी के लिए सत्पात्र को निरन्तर दान देते रहने की प्रेरणा दी है।[5]

महर्षि ने गृहस्थियों से कहा कि अपने माता-पिता, सास-श्वसुर की अत्यन्त सुश्रूषा करें। मित्र और अड़ोसी-पड़ोसी, राजा, विद्वान्, वैद्य और सत्पुरुषों से प्रीति

---

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ. ३७१-३७२

२. सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्॥ ३।६०

३. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ९७

४. वही पृ. १०४

५. वही, पृ. ४०५

६. यदि हि स्त्री न रोचेत पुमांसन्न प्रमोदयेत्।
अप्रमोदात्पुनः पुंस प्रजनं न प्रवर्तते॥ —(मनु ३।६१)
(सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ९५)

खके और जो दुष्ट, अधर्मी उनसे उपेक्षा अर्थात् डोह छोड़कर उनसे सुधारनेकरा। प्रयत्न किया करें। जहां तक बने वहाँ तक प्रेम से अपने सन्तानों के विद्वान् और सुशिक्षा करने-कराने में धनादि पदार्थों का व्यय करके उनको पूर्ण विद्वान सुशिक्षायुक्त कर दें। धर्मयुक्त व्यवहार करके मोक्ष का भी साधन किया करें। और उसे जानना चाहिए। साथ ही दम्पत्ति कयह निर्देश दिया कि ऋत्विक्, पुसेरित आचार्य, मामा, अतिथि, संश्रित (स्वाश्रित व्यक्ति), बालक, वृद्ध, पीड़ित, चिकित्सक, स्वगोत्र व स्ववर्णस्थ, श्वसुरादि सम्बन्धी, मित्र, माता, पिता, बहन, भाई, स्त्री, पुत्री और सेवक लोगों से विवाद अर्थात् विरुद्ध लड़ाई बखेड़ा कभी न करे।

महर्षि दयानन्द ने गृहस्थी को पंचयज्ञ भी करने का निर्देश दिया है। यज्ञ जहाँ आध्यात्मिक शान्ति के लिए आवश्यक है, वहाँ यह पारिवारिक व सामाजिक परोपकार की उत्कृष्ट पद्धति है। ब्रह्मयज्ञ से अभिप्राय है वेदादि शास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना, सन्ध्योपासना व योगाभ्यास। देवयज्ञ में विद्वानों का संग, सेवा, पवित्रता व दिव्य गुणों को धारण करने की प्रेरणा उपलब्ध होती है। पितृयज्ञ में गृहस्थी अपने माता-पिता, वृद्ध, ज्ञानी और परम योगियों की सेवा करता है। पितृ यज्ञ के दो भेद हैं: श्राद्ध और तर्पण। जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाय उसको श्रद्धा और जो श्रद्धा से कर्म किया जाय उसका नाम श्राद्ध है। जिस कर्म से माता-पितादि पितर प्रसन्न हों, वह तर्पण ही महर्षि का मत है कि यह जीवितों के लिए है, मृतकों के लिए नहीं। इसी प्रकार गुरुजन व विद्वानों की सेवा को भी श्राद्ध और तर्पण कहते हैं। बलि के खदेव यज्ञ में जो कुछ भोजनार्थ बने, उसमें से खट्टा लवणान्न और क्षार को छोड़के घृत मिष्टयुक्त अन्न लेकर चूल्हे से अग्नि अलग कर उसमें उसकी आहुतियां दें और उसी अन्न को किसी दुःखी, बुभूक्षित प्राणी अथवा कुत्ते, कौए, चींटी आदि को देवे। अतिथि यज्ञ में अभ्यागत परम विद्वान्, परम योगी, संन्यासी की सेवा सुश्रूषा कर उनके सत्संग से ज्ञान-विज्ञानादि कर श्रवण करे।[१] ये सभी यज्ञ सेवा व परोपकार के साथ ही ज्ञान की वृद्धि करने की प्रेरणा देते हैं। गृहस्थी के लिए ये यज्ञ आवश्यक हैं।

२४ जुलाई १८८२ से महर्षि दयानन्द ने श्री रूपसिंह को अपने शिष्य रामानन्द से लिखवाया कि गृहाश्रम केवल भोग-विलास के अर्थ नहीं, किन्तु संसार की उन्नति के अर्थ हैं अर्थात् संस्कार विधि के अनुसार विवाहानन्तर उचित समय पर क्रिया करना

---

१. (क) ऋत्विक् पुरोहिताचार्यैर्मातुलातिथि संश्रितैः।
बालवृद्धातुरैर्वैद्यैर्ज्ञातिसम्बन्धिबान्धवैः ।। ४।१७९
(ख) माता पितृभ्यां यामिभिर्भ्रात्रा पुत्रेण भार्यया।
दुहिता दास वर्मेण विवादे न समाचरेत् ।। —मनु ४।१८०

२. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास. पृ. ९८-१०३

इस आश्रम का मुख्य फल यही है कि सुन्दर धीर, वीर, विद्यादि शुभागुणयुक्त पुत्र रूपी फल की प्राप्ति होता। विना विधि के सांगोपांग कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता।[1]

सन्तानोत्पत्ति : महर्षि दयानन्द गर्भाधान व सन्तानोत्पत्ति को अत्यन्त पवित्र-कर्म समझते हैं। उनका कहना है कि जिस दिन ऋतुदान देना योग्य समझें उसी दिन (संस्कारविधि पुस्तकस्थ विधि के अनुसार सब कर्म करके मध्यरात्रि या दस बजे एकान्त सेवन करें। पुरुष वीर्य स्थापन और स्त्री वीर्याकर्षण की जो विधि हैं उसी के अनुसार दोनों करें। जहाँ तक बने वहां तक ब्रह्मचर्य के वीर्य को व्यर्थ न जाने दें क्योंकि उस वीर्य वा रज से जो शरीर उत्पन्न होता है वह अपूर्व उत्तम सन्तान होता है। गर्भ-स्थिति होने का परिज्ञान विदुषी स्त्री को तो उसी समय हो जाता है, परन्तु इसका निश्चय एक मास के पश्चात् रजस्वला न होने पर सबको हो जाता है। सम्भोग के उपरान्त सोंठ, केशर, असगंध, छोटी इलायची और सालम मिश्री डाल के गर्म, स्नान करके जो प्रथम ही रखा हुआ ठण्डा दूध है, उसको यथारुचि दोनों पी के अलग-अलग अपनी-अपनी शय्या में शयन करें। यही विधि जब-जब गर्भाधान क्रिया करें तब-तब करना उचित है।

जब महीने भर में रजस्वला न होने से गर्भस्थिति का निश्चय हो जाए तब से एक वर्ष पर्यन्त स्त्री-पुरुष का समागम कभी न होना चाहिए, क्योंकि ऐसा न होने से सन्तान उत्तम और पुन: दूसरा सन्तान भी वैसा ही होता है। अन्यथा वीर्य व्यर्थ जाता है, दोनों की आयु घट जाती है और अनेक प्रकार के रोग हो जाते हैं। परन्तु ऊपर से भाषणादि प्रेमयुक्त व्यवहार दोनों को अवश्य रखना चाहिए। पुरुष वीर्य की स्थिति और स्त्री गर्भ की रक्षा और भोजन छादन इस प्रकार का करें कि जिससे पुरुष का वीर्य स्वप्न में भी नष्ट न हो और गर्भ में बालक का शरीर अत्युत्तम, रूप, लावण्य, पुष्टि, बल पराक्रमयुक्त होकर दशवें महीने में जन्म होवे। विशेष उसकी रक्षा चौथे महीने से और अतिविशेष आठवें महीने से आगे करनी चाहिए। कभी गर्भवती स्त्री रोचक, रुक्ष, मादक द्रव्य, बुद्धि और बलनाशक पदार्थों के भोजनादि का सेवन न करे। किन्तु घी, दूध, उत्तम चावल, गेहूं, मूंग, उर्द आदि अन्न पान और देशकाल का भी सेवन युक्तिपूर्वक करे। गर्भ में दो संस्कार, एक चौथे महीने में पुंसवन और दूसरा आठवें महीने में सीमन्तोनयन विधि के अनुकूल करे।

जब सन्तान का जन्म हो तब स्त्री और लड़के के शरीर की रक्षा बहुत सावधानी से करे। अर्थात् शुण्ठीपाक प्रथम ही बनवा रखे। उस समय सुगन्धियुक्त उष्ण-जल (जो कि किंचित् उष्ण हो) से स्त्री स्नान करे और बालक को भी स्नान करावे। तत्पश्चात् नाड़ी छेदन बालक की नाभि के जड़ में एक कोमल सूत से बांधकर चार अंगुल छोड़ के ऊपर से काट डाले। उसको ऐसा बांधे कि जिससे शरीर के रुधिर का एक बिन्दु भी न जाने

---

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ. ३५१

पावे। पश्चात् उस स्थान को शुद्ध करके उसके द्वार के भीतर सुगन्धादियुक्त घृतादि का होम करे। तत्पश्चात् सन्तान के कान में पिता 'वेदोसीति' अर्थात् 'तेरा नाम वेद है' सुनाकर घी और शहद से ले के सोने की शलाका से जीभ पर 'ओ३म्' अक्षर लिखकर मधु और घृत को उसीशलाका से चटवावे। पश्चात् उसी की माता को दे देवे। जो दूध पीना चाहे तो उसकी माता पिलावे। उसकी माता के दूध न हो तो किसी स्त्री की परीक्षा करके उसका दूध पिलावे। पश्चात् दूसरे शुद्ध कोठरी (जहाँ की वायु शुद्ध हो) उसमें सुगन्धित घी का होम प्रातः और सायंकाल किया करे और उसी में प्रसूता स्त्री तथा बालक को रख ६ दिनों तक माता का दूध पिये। स्त्री भी अपने शरीर की पुष्टि के अर्थ अनेक प्रकार के उत्तम भोजन करे। योनि संकोचन आदि भी करे। छठे दिन स्त्री बाहर निकले और सन्तान के दूध के लिए कोई धायी रखे। उसको खान-पान अच्छा करावे। वह सन्तान को दूध पिलाया करे और पालन भी करे। परन्तु उसकी माता लड़के पर पूर्ण दृष्टि रखे। किसी प्रकार का अनुचित व्यवहार उसके पालन में न हो। स्त्री दूध बन्द करने के अर्थ स्तन के अग्रभाग पर ऐसा लेप करे कि जिससे दूध स्रवित न हो। उसी प्रकार खान-पान का व्यवहार भी यथायोग्य रखे। पश्चात नामकरणादि संस्कार संस्कारविधि की रीति से यथाकाल करता जाए। जब स्त्री फिर रजस्वला हो तब शुद्ध होने के पश्चात् उसी प्रकार ऋतुदान देवे।[1]

सन्तान की संख्या बनाम परिवार नियोजन : आज के इस परिवार नियोजन के युग में वेद के 'दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि' (ऋ० १०/८५/४५ के आधार पर महर्षि की इस स्थापना का कि विवाहित पुरुष वा नियुक्त पुरुषों से दश सन्तान उत्पन्न कर और ग्यारहवें पति को समझ। इस वेद की आज्ञा से पुरुष दस सन्तान से अधिक उत्पन्न न करें। क्योंकि अधिक करने से संतान निर्बल, निर्बुद्धि, अल्पायु होते हैं और स्त्री तथा पुरुष भी निर्बलता, अल्पायु और रोगी होकर वृद्धावस्था में बहुत दुःख पाते हैं। एक अन्य स्थल पर महर्षि ने फिर लिखा कि जो विवाहित स्त्री-पुरुष दसवें गर्भ से अधिक समागम करें तो कामी और निन्दित होते हैं। आज के युग में दस सन्तानों की बात न केवल हास्यापद है, वरन् एक अपशब्द भी है। हमने वेद व महर्षि दयानन्द के इस कथन के औचित्य पर अपनी पुस्तक "वैदिक साहित्य में नारी" में विस्तार पूर्वक विचार किया है। वस्तुतः वेद व दयानन्द के मत में बलिष्ठ व पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति ही सन्तानोत्पत्ति करने में सक्षम हैं। उनके मत में पुरुष अपने वीर्य का उपयोग मात्र सन्तानोत्पत्ति के लिए ही करे। दयानन्द लिखते हैं कि विवाह व नियोग सन्तानों ही के अर्थ किए जाते हैं पशुवत् कामक्रीड़ा के लिए नहीं। दयानन्द स्त्री-पुरुष से जिस संयम से सन्तानोत्पत्ति करवाना चाहते हैं उस रूप में तो आज के दम्पती एक भी सन्तान

---

१. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ९३-९५

उत्पन्न करने के अधिकारी नहीं हैं।[1] यदि महर्षि के आदेश के अनुसार दम्पती सन्तान-उत्पन्न करने का निश्चय कर लें तो यह परिवार-नियोजन का एक उत्कृष्ट प्रकार होगा।

गृहस्थ में ब्रह्मचर्य : महर्षि दयानन्द गृहस्थ में भी ब्रह्मचर्य धारण करने का निर्देश देते हैं। वे लिखते हैं जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ भी ब्रह्मचर्य के सदृश है।[2] इस प्रकार गृहस्थ में ब्रह्मचर्य के लिए दो बातों की ओर ध्यान खींचा गया है। एक तो पुरुष व स्त्री को अपने ही पुरुष व स्त्री से रमण करने का अधिकार है। पर स्त्री व पुरुष से नहीं।

अप्रियकारक व्यभिचार वेश्या परपुरुषगमनादि काम हैं, इनको छोड़ के अपने पति के साथ स्त्री और स्त्री के साथ पति सदा प्रसन्न रहे।[3]

महर्षि का मत है कि मद्य, भांग आदि मादक द्रव्यों का पीना, दुष्ट पुरुषों का संग, पति बियोग, अकेली जहां-तहाँ व्यर्थ पाखंडी आदि के दर्शन करती फिरती रहना और पराए घर में जाके शयन करना व वास—ये छ: स्त्री को दूषित करने वाले दुर्गुण हैं, और ये पुरुष के भी हैं।[4] आगे एक स्थान पर कहा कि स्त्री और पुरुष को ध्यान रखना चाहिए कि वीर्य और रज को अमूल्य समझें। जो कोई अमूल्य पदार्थ को पर-स्त्री, वेश्या व दुष्ट पुरुषों के संग में खोते हैं, वे महामूर्ख होते हैं। क्योंकि किसान व माली मूर्ख होकर भी अपने खेत व वाटिका के बिना अन्यत्र बीज नहीं बोते। जबकि साधारण बीज और मूर्ख का ऐसा वर्तमान है तो जो सर्वोत्तम मनुष्य शरीर रूप वृक्ष के बीज को कुक्षेत्र में खोता है वह महामूर्ख कहाता है, क्योंकि उसका फल नहीं मिलता।

आत्मा वै जायते पुत्रः यह ब्राह्मण का वचन है अंगादंगात्संभपनि हृदयादधि जायसे।
आत्मासि पुत्र माभृथाः स जीव शरदः शतम् (सा० बा० मन्त्रपर्व प्रपा. १/५/१७/१८)

हे पुत्र, तू अंग-अंग से उत्पन्न वीर्य से और हृदय से उत्पन्न होता है। इसलिए तू मेरा पुत्र है, मुझसे पूर्वमत मरे, किन्तु सौ वर्ष तक जी। जिससे ऐसे-ऐसे महात्मा और महाशयों के शरीर उत्पन्न होते हैं उसको वेश्यादि दुष्ट क्षेत्र में बोना व दुष्ट बीज

१, सन् १८७९ में फरुखाबाद में पौराणियों द्वारा पूछे गए प्रश्नों में २२ वो प्रश्न (देखिए श्री मद्दयानन्द प्रकाश, पृ. ४२१)

२. सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ. ९३-९५ (विस्तार के लिए देखें हमारी पुस्तक आयुर्वेद के वेत्ता : महर्षि दयानन्द,)

३. (क) ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदार निरतः सदा। मनु ३।४५
(ख) ब्रह्मचर्येवमवति यत्र तत्राश्रमेव । मनु ३।५० (वही पृ. ९५)

४. पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोटहनं।
स्वप्नोन्यगेहवासश्च नारीसन्दूषणानि षड्। (मनु) ९।१३ (वही पृ. ११२)

अच्छे क्षेत्र में बुवाना महापाप का काम है। विवाह करके भी लंपटता न करे तो उसके शरीर में प्राण बलवान् होकर सब शुभ गुणों के वास कराने वाले होते हैं। (तृतीय समुल्लास, पृ. ४५)

दूसरे अपनी स्त्री के साथ रमण करने में भी मास में कुछ निश्चय दिन ही रमण करना होता है, उन्हीं में रमण करे। रजोदर्शन के दिनों में पुरुष को पूर्ण संयम रखना चाहिए। इसी प्रकार स्त्री के गर्भस्थ होने पर भी पुरुष को एक-डेढ़ वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण करने का निर्देश दिया है। एक अन्य स्थान पर महर्षि ने लिखा है—वेदानुसार विवाह करके ऋतुगामी रहते जो सन्तान प्राप्त हो, उसमें कोई भी दोष नहीं है। व्यभिचार अन्याय है, इसलिए उससे उत्पन्न हुई सन्तान दोषयुक्त होती है।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि ५०-५५ वर्ष के उपरान्त पुरुष ४०-४५ वर्षों के उपरान्त स्त्री को वानप्रस्थ की प्रेरणा देकर उस अवस्था में पूर्ण संयम करने पर बल देते हैं।

महर्षि दयानन्द स्त्री व पुरुष के कामविज्ञान व मनोविज्ञान से भली प्रकार परिचित थे। वे जानते थे कि युवा व्यक्ति विशेष रूप से विवाहित व्यक्ति जिन्होंने एक बार काम-सुख प्राप्त किया है—अधिक समय तक एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकते। उन्होंने लिखा कि पति और स्त्री का वियोग दो प्रकार का होता है—कहीं कार्यार्थ देशान्तर में जाना और दूसरा मृत्यु से वियोग होना। इनमें से प्रथम का उपाय यही है कि दूर देश में यात्रार्थ जावे तो स्त्री को भी साथ रखे। पति पत्नी को विदेश में साथ रखे इसके पक्ष में महर्षि दयानन्द ने निम्नलिखित मन्त्र उद्धृत किया है—

> कुह स्विद्दोषा कुह वस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः।
> को वा शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ।
>
> ऋ० १०।१८।८

अर्थात् तुम दोनों स्त्री पुरुष कहाँ रात्रि और कहाँ दिन में बसे थे ? कहां पदार्थों की प्राप्ति की ? और किस समय कहाँ वास करते थे ? तुम्हारा शयन स्थान कहाँ है ? तथा कौन वा किस देश के रहने वाले हो ? इससे यह सिद्ध हुआ कि देश-विदेश में स्त्री पुरुष संग ही में रहें। इसका प्रयोजन यही है कि बहुत समय तक वियोग न रहना चाहिए। यह उन्होंने इसी कारण लिखा है कि बहुत समय तक विरह की स्थिति में ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना कठिन है।

नियोग, बहु विवाह व विधवा विवाह :

महर्षि दयानन्द ने स्त्री और पुरुष का बहुविवाह होना योग्य है वा नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है कि युगपत् न, अर्थात् एक समय में नहीं होने चाहिएं

अर्थात् एक स्त्री के रहते दूसरी स्त्री और एक पति के रहते दूसरा पति करने का अधिकार व्यक्ति को नहीं होना चाहिए। हां, समयान्तर में अनेक विवाह हो सकते हैं, जैसे :—

या स्त्री त्वक्षतयोनिः स्याद्‌गत प्रत्यागतापि वा।
पौनर्भवेन भर्त्रासा पुनः संस्कारमर्हति ।। मनु० ९।१७६

जिस स्त्री व पुरुष का पाणिग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो और संयोग न हुआ हो, अर्थात् अक्षत-योनि स्त्री और अक्षत-वीर्य पुरुष हो, उनका अन्य स्त्री व पुरुष के साथ पुन-विवाह होना चाहिए। किन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णों में क्षतयोति स्त्री और क्षतवीर्य पुरुष का पुनर्विवाह न होना चाहिए। यह स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द एक बार संभोग हो चुकने के उपरान्त (शूद्रों को छोड़कर) किसी को पुनर्विवाह करने का आदेश नहीं देते। यह पूछने पर कि पुनर्विवाह में क्या दोष है? उन्होंने उसमें निम्नलिखित दोष दिखलाए हैं—(१) स्त्री-पुरुष में प्रेम न्यून होना क्योंकि जब चाहे तब पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुष छोड़कर दूसरे के साथ सम्बन्ध कर लेंगे। (२) जब स्त्री व पुरुष मरने के पश्चात् दूसरा विवाह करना चाहें तब प्रथम स्त्री के वा पूर्व पति के पदार्थों को उड़ा ले जाना और उनके कुटुम्ब वालों का उनसे झगड़ा करना। (३) बहुत से भद्रकुल का नाम वा चिह्न भी न रहकर उसके पदार्थ छिन्न-भिन्न हो जाना अर्थात् किसी कुलीन परिवार के व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर उसकी पत्नी यदि कहीं अन्यत्र विवाह कर ले तो वह कुल ही समाप्त हो जाएगा। (४) पतिव्रत और स्त्रीव्रत धर्म नष्ट होना। यदि पुनर्विवाह को सामाजिक मान्यता उपलब्ध हो जाए तो पति-पत्नी के रोगी होने पर उसकी पूर्ण सेवा की वृत्ति समाप्त होती है। और अनेक बार अनेक लोभों के वशीभूत होकर एक दूसरे की हत्या भी कर सकते हैं। इस प्रकार विविध दोषों के कारण महर्षि का कहना है कि क्षतयोनि, क्षतवीर्य स्त्री-पुरुष का पुनर्विवाह व अनेक विवाह कभी न होना चाहिए।

एक अन्य स्थल पर महर्षि लिखते हैं कि यदि विधवा विवाह की आज्ञा मिल जावे तो स्त्रियाँ अपने पतियों को विष देकर मारना आरम्भ कर दें और यदि पहले पति की जायदाद लेकर विधवा स्त्री दूसरा पति कर लेगी तो उसके और उसके पूर्व पति के सम्बन्धियों के बहुत से बखेड़े उठेंगे।[1]

अनेक पौराणिकों ने ६ अक्टूबर सन् १८७९ में फर्रूखाबाद में महर्षि दयानन्द से २५ प्रश्न किए। उनमें १२वां प्रश्न था—मनुष्य के लिए बहुत स्त्री करने का कहाँ निषेध है? यदि निषेध है तो धर्मशास्त्र में जो यह लिखा है कि यदि एक पुरुष के स्त्री बहुत हों, उनमें एक के पुत्रवती होनेसे सब पुत्रवती हैं यह क्यों लिखा? महर्षि ने इसका उत्तर दिया—मनुष्य को अनेक स्त्रियों के करने का निषेध वेद में

१. उपदेश मंजरी, बारहवां प्रवचन पृ० १२६

लिखा है। संसार में हर कोई अच्छा नहीं होता। जो अनेक अधर्मी पुरुष कामातुर होके अपने विषय-सुख के लिए-बहुत सी स्त्रियाँ करलें तो उनमें सपत्नीभाव होने से अवश्य विरोध हो जाता है। जब एक के पुत्र होता है दूसरी विरोध के कारण विष-प्रयोग आदि से उसको न मार डाले, इसलिए सबका होना लिखा है।

रुड़की के तहसीलदार नजफअली ने महर्षि से एक दिन निवेदन किया कि हमारे मत में अनेक स्त्रियों से विवाह करने की आज्ञा है। इसमें आपकी क्या सम्मति है? स्वामी जी ने उत्तर दिया कि अनेक स्त्रियों से विवाह करना सर्वथा अनुचित है और अन्याय है। बहुत विवाह में दयानन्द ने अनेक दोष दिखाकर कहा कि वेद में केवल एक स्त्री-पुरुष ही के विवाह का उपदेश है। तहसीलदार महाशय ने श्री वचनों को सिर आँखों से स्वीकार किया।[1] महर्षि ने उदयपुर के महाराणा के लिए जो विशेष नियम लिखे थे उनमें २३वाँ नियम था—सदा पूर्ण युवावस्था में अर्थात् २५ वर्ष के उपरान्त हृदय-स्वसदृश्य एक स्त्री से विवाह करे और उसी से सदा ऋतुगामी रहे। यदि प्रमाद-वश अनेक स्त्री हों तो भी उनके साथ पक्षपात छोड़ नियमित समय में एक सा वरतें। २४वें नियम में कहा कि उनमें परस्पर द्वेष उत्पन्न न होने दे, किन्तु सबकी तुल्य अन्न वस्त्राभूषण सम्भाषणादि प्रेम व्यवहार तुल्य रखे और प्रेम रखवावे। २५वें नियम में लिखा कि उन स्त्रियों को योग्य है कि एक के पुत्र होने में सब अपने को पुत्रवती समझें।[2]

इसी प्रसंग में विमाता के साथ पुत्र के व्यवहार का प्रश्न भी उपस्थित होता है। एक वार बाबू रूपसिंह ने दयानन्द से पत्र में पूछा था कि दूसरी माता की सेवा करने का अधिकार पुत्र को पहली माता के सदृश है वा नहीं? इसका महर्षि ने ३ फरवरी १८८२ के अपने शिष्य ब्र० रामानन्द से उत्तर लिखवाया कि जो विद्यादि शुभ गुणों से युक्त हो और शिक्षापूर्वक पुत्र पर प्रेम रखती हो उसका अनिष्ट चिन्तन कभी न करती हो तो साक्षात् अपनी माता के समान तन-मन-धन से सदैव करना योग्य है। जो इस प्रकार बर्ताव न वर्ते तो इतनी पुत्र को सेवा करना योग्य है कि अन्नवस्त्रादि और अभिवादन से उसको प्रसन्न रखना, अधिक सत्कार रखने योग्य नहीं। इसी प्रकार का ही एक अन्य प्रश्न पूछा—१२ वा १४ वर्ष की युवती कन्याओं से पुरुष दूसरा विवाह कर लेते हैं। उनके साथ प्रथम पत्नी से विवाह युवा पुत्र को किस प्रकार बर्ताव वर्तना चाहिए, वह विद्यादि शुभ गुणों की शिक्षा करे वा नहीं? महर्षि ने इसका उत्तर दिलवाया कि यह साधारण मनुष्यों से होना अशक्य है, क्योंकि स्त्री और पुरुष की परस्पर ऐसी आकर्षण शक्ति है कि जैसे चुम्बक पत्थर की लोहे के साथ। जिस समय युवती स्त्री और युवा पुरुष की आमने-सामने दृष्टि पड़ती है उसी समय मन

---

१. श्री दयानन्द प्रकाश, पृ० ३८७।

२. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ० ३७२

बिगड़ जाता है। बहुधा इन्द्रियों के वेगाश्रित होके अन्यथा व्यवहार मनुष्य कर बठते हैं, इसमें कुछ शंका नहीं। इससे सबसे होना असम्भव है। हाँ, जो पूर्ण विद्वान् योगाभ्यासी अर्थात् जिसकी इन्द्रिय आत्मा के वश में हो तो वह कर सकता है। स्त्री को शिक्षा करने का अधिकार उसके पति ही को है।[1]

मनुष्य को पुत्रैषणा सदा रहती है। विवाहोपरान्त किसी भी एक के मर जाने पर पुत्रप्राप्ति पुनर्विवाह के बिना किस प्रकार हो? पुनर्विवाह न होने पर उसका कुल नष्ट हो जाएगा। इसके अतिरिक्त युवावस्था में व्यक्ति काम से संतप्त भी रहते हैं। विशेष रूप से एक बार संभोग कर चुकने के उपरान्त फिर उसकी इच्छा और अधिक बलवती हो जाती है। यदि पुनर्विवाह का विधान न किया जाए तो स्त्री-पुरुष व्यभिचारादि कर्म करके गर्भपातनादि बहुत दुष्ट कर्म करेंगे। इस शंका का महर्षि दयानन्द ने दो प्रकार से समाधान किया है—(क) यदि स्त्री व पुरुष ब्रह्मचर्य में स्थित रहना चाहें तो कोई भी उपद्रव न होगा। और जो कुल की परम्परा रखने के लिये किसी अपने स्वजाति (सम्बन्धी) का लड़का गोद ले लेंगे, उससे कुल चलेगा, और पुत्रैषणा भी न रहेगी।

किन्तु आज के इस भौतिक व वासनात्मक जगत् में ब्रह्मचर्य द्वारा संयम रखने की कल्पना करना अत्यन्त कठिन है। महर्षि दयानन्दको इस स्थिति की कल्पना थी। उन्होंने लिखा कि जो ब्रह्मचर्य न रख सकें वे नियोग द्वारा सन्तानोत्पत्ति कर लें। यह पूछे जाने पर कि पुनर्विवाह और नियोग में क्या भेद है? उन्होंने उत्तर दिया—जैसे (१) विवाह करने में कन्या अपने पिता का घर छोड़ पति के घर को प्राप्त होती है और पितासे विशेष सम्बन्ध नहीं रहता। किन्तु विधवा स्त्री उसी विवाहित पति के घर में रहती है। (२) विवाहिता स्त्री की सन्तान विवाहित पति के दायभागी होते हैं। उस सन्तान का नियुक्त व्यक्ति (जिससे नियोग कर सन्तान हुई है) के न पुत्र कहलाते, न उसका गोत्र होता, और न उसका स्वत्व उन लड़कों पर रहता। वे मृत पति के पुत्र कहलाते, उसी का गोत्र रहता और उसी के पदार्थों के दायभागी होकर उसी घर में रहते हैं। (३) विवाहित स्त्री-पुरुष के लिए परस्पर सेवा और पालन करना आवश्यक है। किन्तु नियुक्त स्त्री पुरुष का कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता। (४) विवाहित स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध मरणपर्यन्त रहता है और नियुक्त स्त्री पुरुष का सम्बन्ध कार्य के पश्चात् छूट जाता है। (५) विवाहित स्त्री-पुरुष आपस में गृह के कार्यों की सिद्धि करने में यत्न किया करते हैं और नियुक्त स्त्री-पुरुष अपने अपने घर के काम किया करते हैं।...जैसे विवाहित स्त्री-पुरुष सदा संग में रहते हैं, वैसे नियुक्त स्त्री-पुरुष का व्यवहार नहीं, किन्तु बिना ऋतुदान के समय एकत्र न हों, जो स्त्री अपने लिए नियोग करे तो जब दूसरा गर्भ रहे, उसी दिन से स्त्री पुरुष

---

१. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन पृ० ३०८-३०९

का सम्बन्ध छूट जाय। और जो पुरुष अपने लिए करे तो भी गर्भ रहने से सम्बन्ध छूट जाय। परन्तु वही नियुक्त स्त्री दो तीन वर्ष पर्यन्त उन लड़कों का पालन करके नियुक्त पुरुष को दे देवे।

३ फरवरी १८८२ ई० को महर्षि दयानन्द ने अपने एक पत्र में श्री रूपसिंह से एक प्रश्न कि नियोग से उत्पन्न हुए पुत्र उन माता-पिताओं के साथ किस प्रकार बर्तें—के उत्तर में लिखा कि जो स्त्री अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करे वह पुत्र उस स्त्री के मृतक पति का होगा और उसी के पदार्थों का दायभागी भी होगा जो पुरुष अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करेगा तो वह पुत्र उस पुरुष का पुत्र होगा और उसी के पदार्थों का दायभागी भी होगा। सेवा करना भी जिसका पुत्र कहावेगा, उसी की तन मन धन से सेवा करेगा। दोनों की नहीं कर सकता। इस प्रकार का निर्णय वेदादि सत्य-शास्त्रों में विवेचन किया है।[1]

यह शंका करने पर कि यह नियोग की बात व्यभिचार के समान दीखती है, महर्षि ने उत्तर दिया कि जैसे बिना विवाहितों का व्यभिचार होता है वैसे बिना नियुक्तों का व्यभिचार कहाता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि जैसा नियम से विवाह होने पर व्यभिचार नहीं कहाता तो नियमपूर्वक नियोग होने से व्यभिचार न कहलावेगा। जैसे दूसरे की कन्या का दूसरे के कुमार के साथ शास्त्रोक्त विधिपूर्वक विवाह होने पर समागम में व्यभिचार वा पाप लज्जा नहीं होती, वैसे ही वेद शास्त्रोक्त[1] नियोग में व्यभिचार, पाप, लज्जा न माननी चाहिए।

अनेक आक्षेपकर्त्ताओं ने नियोग विषय पर शंकायें प्रकट कीं—यह वेश्या के सदृश कर्म दीखता है, नियोग की बात में पाप मालूम पड़ता है, आदि। पर महर्षि दयानन्द का एक ही उत्तर था कि नियोग में विवाह के समान नियम है। वेश्या के समागम में किसी निश्चित पुरुष का कोई नियम नहीं है। जो नियोग की बात में पाप हो तो विवाह में पाप क्यों नहीं ? पाप तो नियोग के रोकने में है क्योंकि ईश्वर के सृष्टिक्रमानुकूल स्त्री-पुरुष का स्वाभाविक व्यवहार रुक ही नहीं सकता। सिवाय वैराग्यवान् पूर्णविद्वान् योगियों के। क्या गर्भपातन रूप भ्रूणहत्या और विधवा स्त्री और मृतक स्त्री पुरुषों के महासंताप को पाप नहीं गिनते हो ? क्योंकि जब तक वे युवावस्था में हैं मन में सन्तानोत्पत्ति और विषय की चाहना होने वालों को किसी राजव्यवहार वा जातिव्यवहार से रुकावट होने से गुप्त कुकर्म बुरी चाल से होते रहते हैं। इस व्यभिचार और कुकर्म को रोकने के लिए महिष दयानन्द ने क्रमशः तीन उपाय निर्दिष्ट किये हैं—(१) महर्षि के मत में जो जितेन्द्रिय रह सकें वें ठीक हैं (२) किन्तु जो जितेन्द्रिय न रह सकें तो उनका विवाह और (३) आपत्काल में नियोग अवश्य होना चाहिए। इससे व्यभिचार का न्यून होना, प्रेम से उत्तम

---

१. देखिए ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, नियोग विषयः पृ० २१०-२१५

सन्तान होकर मनुष्यों को वृद्धि हाना सम्भव है। और गर्भहत्या सर्वथा छूट जाती है। नीच पुरुषों से उत्तम स्त्री और वेश्यादि नीच स्त्रियों से उत्तम पुरुषों के व्यभिचार रूप कुकर्म, उत्तम कुल में कलंक, वंश का उच्छेद, स्त्री-पुरुषों को संताप और गर्भहत्या आदि कुकर्म विवाह और नियोग से निवृत्त होते हैं। इसलिए नियोग करना चाहिए।

महर्षि के मत में नियोग और विवाह में कोई बहुत तात्विक अन्तर नहीं है। जैसे प्रसिद्धि से विवाह, वैसे प्रसिद्धि से नियोग। जिस प्रकार विवाह में भद्रपुरुषों की अनुमति और कन्या वर की प्रसन्नता होती है, वैसे नियोग में भी। अर्थात् जब स्त्री पुरुष का नियोग होना हो तब अपने कुटुम्ब में पुरुष स्त्रियों के सामने प्रकट करना चाहिए कि हम दोनों नियोग सन्तानोत्पत्ति के लिए करते हैं। जब नियोग का नियम पूरा होगा तब हम संयोग न करेंगे। जो अन्यथा करें तो पापी और जाति व राज्य के दण्डनीय हों। महीने महीने में एक वार गर्भाधान का काम करेंगे, गर्भ रहे पश्चात् एक वर्ष पर्यन्त पृथक् रहेंगे। ऋग्वेद के 'विधवेवदेवरम्' (द०१०।१०।२) तथा 'उदीर्ष्वनार्यपि' (ऋ० १०।१८।८) अदेवृघ्न्यपतिघ्नी (अथर्व १४।२।१८) आदि मन्त्रों में पति की मृत्यु पर द्वितीय वर के साथ सम्बन्ध स्थापित करने को कहा है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि महर्षि के मत में यह नियोग पति के छोटे भाई, बड़े भाई अथवा अपने वर्ण या उत्तम वर्ण के किसी भी व्यक्ति से हो सकता है। ये सभी देवर-द्वितीय वर (देव ! कस्माद् द्वितीयो वर उच्यते —निरुक्त ३।१५) कहलाते हैं।[1]

इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि ने मनु को उद्धृत करके कहा कि सपिण्ड अर्थात् पति की ६ पीढ़ियों में पति का छोटा बड़ा भाई, अथवा स्वजातीय तथा अपने से उत्तम जातिस्थ पुरुष से विधवा स्त्री का नियोग होना चाहिए। मनु ने 'तामनेन विधानेन विन्देत देवर: (मनु० ९।६९) कहकर इस पक्ष को पुष्ट किया है।[2]

इसके अतिरिक्त विधवा स्त्री और जिस पुरुष की स्त्री मर गयी हो (विधुर) वह पुरुष—ये दोनों परस्पर नियोग करके संतानों को उत्पन्न करते हैं।

संतानोत्पत्ति हो जाने पर भी पुन: वे नियुक्त आपस में समागम करें तो पतित हो जावें। संतानोत्पत्ति के उपरान्त नियुक्त व्यक्ति से सम्बन्ध विषयासक्ति गिनी जाती है। महर्षि दयानन्द द्वारा लाला जीवनदास को लिखा एक पत्र यहाँ उद्धरणीय है—हमने सुना है कि आजकल बाबू नवीनचन्द्रराय लाहौर में हैं, और विधवा विवाह में प्रयत्न कर रहे हैं और आर्यसमाज लाहौर भी इस बात में बाबूजी से संमत हो गया है। ये ब्रह्म समाजी लोग भीतर और तथा बाहिर और बात रखते हैं। इनका यह

---

१. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ. ३०९

२. महर्षि ने इसका अर्थ—जो अक्षतयोनि स्त्री विधवा हो जाय तो पति का निज छोटा भाई भी उससे विवाह कर सकता है—किया है। स्पष्टतः उनके मत में क्षतयोनि स्त्री देवर से नियोग कर सकती है।

भी मतलब होता है कि जैसे हम लोग कृश्चियनों के तुल्य अपमानित हुए हैं वैसे आर्यसमाज भी हो जाय, परन्तु जो अक्षतयोनि अर्थात् जिसका पुरुष के साथ कभी संयोग न हुआ हो उस कन्या के पुर्नविवाह करने में कुछ दोष नहीं, जिसका पुरुष से संमेल हुआ हो उसका नियोग करने में अपराध नहीं। इससे विपरीत करने से शास्त्र से विरुद्ध होने से अब अथवा पश्चात् बहुत कष्ट भोगना पड़ेगा अर्थात् वर्णबाह्य होना होवे तो भी कुछ संशय नहीं। (देखिये ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ० ३२७)

इस प्रकार महर्षि दयानन्द का मन्तव्य सर्वथा स्पष्ट है। वे विधवा की अपेक्षा सिद्धांततः नियोग के पक्ष में थे।

महर्षि दयानन्द ने नियोग की आवश्यकता अनेक प्रकार की स्थितियों में कल्पित की है। और उसके बाद उनका वासनापूर्ति के निमित्त कोई सम्बन्ध नहीं होगा

पति-पत्नी दोनों जीवित हों, किन्तु स्त्री वन्ध्या अथवा पुरुष नपुंसक हो, तो उनको संतान की कामना रहती है। स्त्री के वन्ध्या होने पर सन्तानप्राप्ति किसी भी शिशु को गोद लेने से हो सकती है। पर पुरुष के नपुंसक व दीर्घरोगी होने पर अथवा स्त्री के दुर्बल तथा दीर्घरोगिणी होने पर जहाँ सन्तान की समस्या रहती है वहाँ उनके वासनात्मक दृष्टि से अतृप्ति का प्रश्न भी है।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य स्थितियाँ भी हो सकती हैं, जिनमें सन्तान की इच्छा व अपनी कामपूर्ति का प्रश्न रह जाता है। ऐसी स्थितियों में ब्रह्मचर्य व संयम से अच्छा कोई उपाय नहीं है। और यदि व्यक्ति अपने काम व पुत्र की इच्छा पर नियन्त्रण न रख सके तो नियोग से अच्छा कोई उपाय नहीं हैं। दयानन्द लिखते हैं कि विवाहित स्त्री, जो विवाहित पति धर्म के अर्थ परदेश गया हो तो आठ वर्ष, विद्या और कीर्ति के लिए गया हो तो छः और धनादि कामना के लिए गया हो तो तीन वर्षों तक बाट देख के पश्चात् नियोग करके सन्तानोपत्ति कर ले, जब विवाहित पति आवे तब नियुक्त पति छूट जावे।[1] वैसे ही पुरुष के लिए भी नियम है कि वन्ध्या हो तो आठवें, सन्तान होकर मर जाए तो दशवें, जब-जब हो तब-तब कन्या ही होंवे पुत्र न हों तो ग्यारहवें वर्ष तक और जो अप्रिय बोलने वाली हो तो सद्यः उस स्त्री को छोड़के दूसरी स्त्री से नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर लेवें।[2] वैसे ही जो पुरुष अत्यन्त दुःखदायक

---

१. प्रोषितो धर्मकार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौ नरः समाः।
विद्यार्थं षड् यशोर्थं वा कामार्थं त्रींस्तु वत्सरान्। मनु ९।७६
(सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास)

२. विन्ध्याष्टमेऽधिवेद्यान्दे दशमे तु मृतप्रजाः।
एकादशे स्त्री जननी सद्यस्त्व अप्रियवादिनी॥ पृ. ९।८०
तुलना कीजिए : नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पति-रन्यो विधीयते (भाषापाराशरी ४।३०)

हो तो स्त्री को उचित है कि उसको छोड़के दूसरे पुरुष से नियोग कर सन्तानोत्पत्ति करके उसी को विवाहित पति के दायभागी सन्तान कर लेवें।

आज लोग सन्तानप्राप्ति के लिए नियोग नहीं करते किन्तु पति या पत्नी के नपुंसक व अस्वस्थ अथवा विदेशादि जाने पर व्याभिचार में लीन अवश्य होते हैं। यह व्यभिचार कर्म गुप्तरूप से चलता है। आधुनिक सभ्यता इस व्यभिचार को सामाजिक मान्यता भी देने लगी है। पर यह व्यभिचार नियोग से अच्छा किस प्रकार है, यह समझना कठिन है।

निकटस्थ सम्बन्धी (भाई आदि) से भी कर लें

वेद के 'अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत्' (ऋ॰ १०।१०।१०) की व्याख्या करते हुए दयानन्द लिखते हैं—जब पति सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होवे तब अपनी स्त्री को आज्ञा देवे कि हे सुभगे, सौभाग्य की इच्छा करने हारी स्त्री तू मुझसे दूसरे पति की इच्छा कर, क्योंकि अब मुझसे सन्तानोत्पत्ति न हो सकेगी। तब स्त्री दूसरे से नियोग करके सन्तानोत्पत्ति करे परन्तु उस विवाहित महाशय की सेवा में तत्पर रहे। वैसे ही स्त्री भी जब रोगादि दोषों से ग्रस्त होकर सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होवें तब अपने पति को आज्ञा देवे कि हे स्वामी ! आप सन्तानोत्पत्ति की इच्छा मुझसे छोड़के किसी दूसरी विधवा स्त्री से नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कीजिए। जैसा कि पाण्डु राजा की स्त्री कुन्ती और माद्री आदि ने किया और जैसा व्यास जी ने चित्रांगद और विचित्रवीर्य के मर जाने के पश्चात् उन अपने भाई की स्त्रियों से नियोग करके अम्बिका में धृतराष्ट्र और अम्बालिका में पाण्डु और दासी में विदुर की उत्पत्ति की। इत्यादि इतिहास भी इस बात में प्रमाण है।

वस्तुतः महर्षि दयानन्द विधवा-समस्या को हल करने के लिए कृतसंकल्प थे।[1] उन्होंने विधवाओं को सम्पत्ति में उत्तराधिकार और उनकी संतति को कानून की दृष्टि से वैध करार देने के लिए सरकारी अधिकारियों के पास निवेदन-पत्र भेजा था। २७ जुलाई १८८० को मेरठ से महर्षि ने लाहौर के लाला मूलराज जी को पत्र लिखा —मेरा विचार अपनी सरकार को एक ऐसे विषय पर लिखने का है जो निस्सन्देह जनता का हितकारी है, जिसे मेरे व्याख्यानों आदि के सुनने वाले सैंकड़ों पुरुष चाहते हैं। वह यह है कि सरकार को एक ऐसा नियम पास करने के लिए कहना चाहिए जिससे कि विधवाओं की संन्तान अपने पिताओं की स्थावर और जंगम सम्पत्ति के अधिकार को प्राप्त करे और उसे ले सके। और जो कोई विधवा को किसी प्रकार भी कष्ट दे वह सरकार का दण्डभागी बने। पूर्वोक्त बात से मैं इन फलों का विचार करता हूं कि

---

१. महर्षि ने उदयपुर के राणा को २५ हजार रुपए अनाथ, वृद्ध, विधवा और रोगियों के लिए रखने का आदेश दिया था (विज्ञापन पत्र पृ ४५०)

हजारों बालकों के जीवन बचाए जाएंगे, गर्भपात बन्द या कम हो जाएगा, इस प्रकार नियोग या विधवाओं का पुनः विवाह अन्ततः प्रचलित होगा। परन्तु इस काम को साधारण योग्यता के पुरुष नहीं कर सकते, इसलिए मैं यह विषय आप पर छोड़ता हूँ, और चाहता हूँ कि आप यथायोग्य नियम बनाएं जिनमें सब आवश्यक बातें विस्तार से आ जाएं। मैं आशा करता हूँ कि आप मुझसे सहमत होंगे और आवश्यक काम करेंगे।[1]

१ अगस्त १८८० को उन्होंने फिर मूलराज जी को लिखा—जो पत्र हमने आपत्काल के धर्म नियोग सम्बन्धी लिखवाया था, मैंने शोक से जाना है कि लेखक वह अभिप्राय नहीं प्रकट कर सका, जो मैं आपको जताना चाहता था और इसलिए आप इसे न समझ सके। आपका संकेत नियम के सम्बन्ध में कि यह पुनर्विवाह को बताता है, और नियोग को नहीं, इसके लिए मैंने अब एक कानूनी मसौदा एक विधवा की दुःखित अवस्था को दूर करने के लिए बनाया है। मैं वही एक या दो दिन में आपको आवश्यक शुद्धियों के लिए भेज दूंगा। (१) इसका प्रयोजन नियोग होगा। (२) विधवा की सन्तान मृत पति की सम्पत्ति की दायभागी होगी (३) उन्हें हरामी या जाति से बाहर न समझा जाए (४) विधवा की जाति के लोग उसे किसी प्रकार तंग न करें (५) कानून भी उसे दुःख न दे। ऐसे नियम के पास होने से गर्भपात बन्द हो जाएगा, और सैंकड़ों बालकों के जीवन बच जाएंगे, और आजकल की तरह किसी के दायभाग में आई सम्पत्ति या जागीर, अथवा कुल की वृद्धि बन्द या नष्ट न होगी, क्योंकि उस अवस्था में नियोगज सन्तान विवाह से उत्पन्न होने वालों के समान अधिकार रखेगी, उसमें कोई भेद न होगा, चाहे नियम जनता के सामने किया जाता है या और रूप से, यह एक ही है। मसौदा पूर्वोक्त नियमानुसार होगा।[2] इन द्वारा तैयार कराया गया नियोग का मसविदा ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र-विज्ञापन।

पृ० २२४-२२७ पर देखें।

उस मसविदे से स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द पुनर्विवाह की तुलना में नियोग को महत्त्व देते थे। पर आज इसका सामाजिक प्रचलन न होने के कारण इसको अधिक मान्यता देने में अनेक कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं।

आज का व्यक्ति यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि कोई स्त्री-पुरुष केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए ही समागम करेंगे। और यह है भी सत्य कि एक बार किसी विषमलिंगी व्यक्ति से सम्बन्ध हो जाने के उपरान्त फिर उससे सम्बन्ध न रखना अत्यन्त कठिन है। विशेष रूप से आज के वासनात्मक युग में। जिस प्रकार विवाहित

---

१. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ. २१३

२. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ.. २१६

स्त्री-पुरुष केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए समागम न कर वासनापूर्ति के लिए भी समागम करते हैं, उसी प्रकार नियुक्त स्त्री-पुरुष भी अपना सम्बन्ध रखेंगे और यदि उन्होंने सम्बन्ध रखना ही है तो क्यों न वे विवाह ही कर लें।

महर्षि दयानन्द ने भी आर्य परम्परा व एक अत्यन्त उच्च आदर्श की दृष्टि से नियोग का प्रतिपादन किया था, पर यह देखकर कि विधुर पुरुष तो पुनर्विवाह कर लेता है, केवल विधवा को ही वैधव्य का भार ढोने के लिए छोड़ दिया जाता है; उन्होंने लिखा—पर यह अवश्य कहूंगा कि ईश्वर के समीप स्त्री-पुरुष दोनों बराबर हैं, क्योंकि वह न्यायकारी है, उसमें पक्षपात का लेश नहीं है। जब पुरुषों को पुनर्विवाह करने की आज्ञा दी जावे तो स्त्रियों को दूसरे विवाह से क्यों रोका जावे।[1] इसके अतिरिक्त दयानन्द ने अक्षत योनि स्त्री-पुरुष तथा क्षतयोनि शूद्र के पुनर्विवाह पर कोई आपत्ति नहीं की। आज के युग में संयम की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति शूद्र है, अतः महर्षि दयानन्द को इनके पुनर्विवाह में कोई आपत्ति नहीं है। हां, जो स्त्री-पुरुष पुनर्विवाह करें वे अपने को असंयम के कारण शूद्र समझें। दयानन्द ने लिखा—अब इस समय नियोग और पुनर्विवाह दोनों के बन्द होने से आजकल के आर्य लोगों में जो-जो भ्रष्टाचार फैला हुआ है, वह आप लोग देख ही रहे हैं। हजारों गर्भ गिराए जाते हैं, भ्रूण हत्याएं होती हैं।[2]

महर्षि दयानन्द ने पुनर्विवाह व विधवा विवाह को भी प्रोत्साहन दिया। इसके कुछ निदर्शन इस प्रकार हैं—

(क) सन् १८६८ में टाकसल्लापुर (फर्रुखाबाद) में महर्षि पं० चोखेलाल के यहाँ रहे। पं० चोखेलाल निःसन्तान थे। उनकी स्त्री बन्ध्या थी। उन्होंने महर्षि की अनुमति से दूसरा विवाह किया। (१३१-I)

(ख) सन् १८७२-७३ में कलकत्ता में महर्षि ने भाषण में कहा कि जो स्त्री स्वामी की मृत्यु पर विवाह करना चाहे उसका विवाह कर देना चाहिए।

(ग) सन् १८७७ में सहारनपुर में भाषणों में महर्षि ने कहा कि विधवा का पुनर्विवाह होना चाहिए और पुरुष को एक स्त्री के जीवित होते हुए दूसरा विवाह न करना चाहिए। विधुर पुरुष को अधिकार है कि दूसरा विवाह करे या न करे। ऐसे ही विधवा को भी पुनर्विवाह करने का अधिकार है। (२०-II)

विधवा-विवाह में सन्तानवती विधवाओं की समस्या उत्पन्न होती है। उसके पुनर्विवाह कर लेने पर उसके पहले पति से उत्पन्न सन्तान की प्रायः दुर्दशा होती है। इसी प्रकार विधुर के पुनर्विवाह से उसके सन्तानों की समस्या उत्पन्न होती है। यदि विधवा-विवाह को समाज में समाप्त करना है तो राज्य को चाहिए कि वह विधवा व विधुर लोगों की सन्तानों की शिक्षा की व्यवस्था कर उनकी चिन्ता से उन्हें मुक्त कर

१—२. उपदेश मंजरी, बारहवां प्रवचन, पृ० १२६-१२८

दे। इसी प्रकार की एक समस्या है, अपने पूर्व पति की सम्पत्ति का मोह। यदि विधवा स्त्री पूर्व-पति की सम्पत्ति पर दृष्टि न रखे तो वह निश्शंक होकर पुनर्विवाह की बात सोच सकती है।

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा सकते हैं:

(१) योग्य आयु में स्त्री-पुरुष विवाह करके परस्पर एक-दूसरे की सेवा करते हुए आनन्दपूर्वक रहें। दोनों एक-दूसरे से कभी पृथक् न हों। सन्तान की उत्पत्ति कर उसे सुयोग्य बनावें। विवाह में भी ब्रह्मचर्य व संयम रखें।

(२) पति-पत्नी में से किसी एक की मृत्यु हो जाने पर दूसरा ब्रह्मचर्यपूर्वक रह सके तो सर्वोत्तम है। अन्यथा वह पुनर्विवाह कर सकता है, यह पुनर्विवाह पति के छोटे भाई या पत्नी की बहन से ही हो सके तो अधिक ठीक है। विवाह करने में यदि सम्पत्ति विषयक कठिनाइयाँ हों तो नियोग की व्यवस्था होनी चाहिए।

(३) पति-पत्नी दोनों जीवित हैं, पर दोनों में से कोई एक सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ हो, अथवा दूसरे की वासनात्मक इच्छाओं को पूर्ण करने में अक्षम हो तो भी नियोग करना चाहिए।

(४) वस्तुतः नियोग और विवाह में कोई अन्तर नहीं है। विवाह दोनों के जीवन-भर के साहचर्य की प्रवृत्ति है, जबकि नियोग केवल आंशिक काल के साहचर्य की व्यवस्था है।

(५) आज नियोग को सामाजिक मान्यता नहीं है। पर लोग चोरी-चोरी पर-पुरुष व परस्त्री से सम्बन्ध रखते हैं। चोरी खुलने पर उससे पारस्परिक अविश्वास, कलह व हत्या आदि की सम्भावना रहती है। समाज में व्यभिचार व्याप्त होता है।

(६) पर नियोग के लिए व्यक्ति व समाज का हृदय अत्यन्त उदार होना चाहिए। अनावश्यक रूप से शंका करना—कि नियोग के उपरान्त भी उनका सम्बन्ध नियुक्त व्यक्ति से बना हुआ है—अनुचित है। किसी विरक्त अथवा दूरदेशस्थ व्यक्ति से नियोग की व्यवस्था कर इस शंका पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

(७) नियोग को सामाजिक स्वीकृति न मिलने की स्थिति में व्यभिचार—चोरी-चोरी परपुरुष व परस्त्री से समागम अपरिहार्य है। यही मनोविज्ञान का मत है। ऐसी स्थिति में इस व्यभिचार को ही धीरे-धीरे सामाजिक मान्यता प्राप्त हो रही है, जो कि समाज के लिए अस्वास्थ्यकर प्रवृत्ति है।

महर्षि दयानन्द ने इस नास्तिक विचारधारा का कि स्त्री-पुरुष का विवाह में बँधना आवश्यक है, घोर विरोध किया है। इस प्रश्न का कि विवाह क्यों करना? क्योंकि इससे स्त्री-पुरुष को बन्धन में पड़ के बहुत संकोच करना और दुःख भोगना पड़ता है। इसलिए जिसके साथ जिसकी प्रीति हो तब तक वे मिले रहें। जब प्रीति छूट जाय तो छोड़ देवें—दयानन्द ने उत्तर दिया है कि यह पशु-पक्षियों का व्यवहार है, मनुष्यों

का नहीं। जो मनुष्यों में विवाह का नियम न रहे तो गृहाश्रम के अच्छे-अच्छे व्यवहार सब नष्ट-भ्रष्ट हो जाएँ। कोई किसी की सेवा भी न करे और महाव्यभिचार बढ़कर सब रोगी और निर्बल और अल्पायु होकर शीघ्र-शीघ्र मर जाएँ। कोई किसी से भय व लज्जा न करे। वृद्धावस्था में कोई किसी की सेवा भी नहीं करे और महाव्यभिचार बढ़ कर सब रोगी निर्बल और अल्पायु होकर कुलों के कुल नष्ट हो जाएँ।

हाँ, जो विवाह करना ही न चाहें वे मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रहते हों तो भले ही रहें। परन्तु यह काम पूर्ण विद्या वाले जितेन्द्रिय और निर्दोष योगी स्त्री और पुरुष का है। जो काम के वेग को थाम के इन्द्रियों को अपने वश में रखना (तृतीय समु० पृ० ४६) बड़ा ही कठिन काम है।

महर्षि के सम्पर्क में आई महिलाएँ

महर्षि आदित्य ब्रह्मचारी थे। अत: महिलाओं से सम्पर्क रखते हुए वे अत्यन्त सावधानी बरतते थे। विशेष रूप से अपने साधना-काल में वे अत्यन्त सचेत थे। जब दयानन्द स्वामी विरजानन्द के पास अध्ययन कर रहे थे, तब उनकी अवस्था ३५ वर्ष की हो चुकी थी। तप्त ताम्र और कुन्दन सुवर्ण की भाँति उनका मुखमण्डल उद्दीप्त था। अखण्ड ब्रह्मचर्य के कारण उनका चेहरा एक प्रकार के तेजोमय चक्र से घिरा रहता था। उनकी विशाल आकृति और दिव्य मूर्ति को देखकर सभी लोग उनके ब्रह्मचर्य-व्रत की प्रशंसा करने लग जाते थे। स्वामी जी गुरु विरजानन्द के स्नानादि के लिए जल के कोई बीस घड़ें लाने के लिए अनेक वार यमुना पर जाते थे। एक प्रकार से उनका आसन भी यमुना घाट पर ही था। ऐसे स्थानों में प्राय: नाना प्रकृति के लोग वास किया करते हैं। किसी-किसी समय राह चलतों से भी कोई-कोई व्यक्ति छेड़-छाड़ और उपहासादि करने से नहीं चूकते, परन्तु स्वामी जी थे कि उनसे उपहास करने का साहस कभी किसी अधम से अधम नर-नारी को भी न हुआ। वे बाजारों में चलते, गलियों में जाते और घाट से वार-वार पानी लेते थे। इन स्थानों में सैंकड़ों स्त्रियाँ इधर-उधर आती-जाती थीं, परन्तु ढाई वर्ष में कभी किसी ने उन्हें किसी स्त्री की ओर आँख उठाकर देखते नहीं देखा। वे सदा नीची, मार्ग विलोकिनी दृष्टि रखकर चला करते थे। उनकी इस वृत्ति की सारी मथुरा में धाक थी। मंदिरों में, घाटों पर, विश्रान्तों में, पाठशालाओं में, बाजारों में, हाटों पर, गृहों में, चौबों के अखाड़ों में और विजयापान की मण्डलियों में—सर्वत्र श्री दयानन्द की सुशीलता और अभंग ब्रह्मचर्य व्रत का गुणगान किया जाता था।

एक दिन का वर्णन है कि श्री स्वामी जी यमुना के पुल पर ध्यान में मग्न बैठे थे। एक स्त्री स्नान करके आई। उसने देखा कि सामने एक परमहंस पद्मासन लगाए समाधिस्थ हैं। श्रद्धावती देवी ने भक्तिभाव से अति निकट आकर स्वामी जी के चरण-

आया। स्वामी जी ने रोषपूर्ण शब्दों में कहा कि यह कैसा अन्याय है, उसने स्त्रियों को नीचे उतार दिया और स्वामी जी से कहा कि पहरे वालों के प्रमाद से ऐसा हुआ है। उन्होंने उन्हें बदलवा दिया। और नये पहरेदारों से कह दिया गया कि किसी स्त्री व लड़की को बंगले के पास न आने दो।[1]

आज के पाठक को महर्षि दयानन्द का स्त्रियों के प्रति उक्त व्यवहार अनुदार प्रतीत हो सकता है,किन्तु महर्षि दयानन्द का प्रयोजन अपने व्यवहार से यह सिद्ध करना था कि अनावश्यक रूप से संन्यासी को स्त्रियों के सम्पर्क में नहीं रहना चाहिए। इन दिनों अनेक संन्यासी स्त्रियों को अपनी चेलियाँ बनाकर समाज को दूषित करने में लगे हुए थे, इस कारण भी उन्हें अपेक्षाकृत अधिक सावधानी बरतनी होती थी। यहां महर्षि ने स्त्री जाति के उद्धार के जो प्रयत्न किये वे अविस्मरणीय हैं।

महर्षि द्वारा स्त्रियों को विद्या प्राप्त करने की प्रेरणा

महर्षि प्रत्येक स्त्री को वेदादि शास्त्रों का अध्ययन करने की प्रेरणा देते थे। यहां तक कि सर्वथा अशिक्षित व वृद्धा स्त्रियों को भी वे शिक्षा व भक्ति के मार्ग पर अग्रसर करने में न चूकते थे।

सन् १८६७ में स्वामी जी कर्णवास आए। वहां एक ६० वर्ष की वृद्धा बाल विधवा हंसा ठकुरानी रहा करती थी। यह देवी ठाकुर गोपालसिंह की ताई थी। यद्यपि वह पांच-छ: ग्रामों की स्वामिनी थी, परन्तु उसका भोजन था जौ की रोटी और मूंग की दाल। और वह उसे बनाती भी अपने हाथसे ही थी। ठाकुरों के परिवारों में उसका बड़ा आदर था। छोटी-बड़ी सभी बहू-बेटियाँ उसको मानती थीं और माँ कहकर पुकारा करती थीं। जब सब ठाकुर एक-एक करके श्री स्वामी जी के शिष्य हो गए तो उस देवी ने भी स्वामी-दर्शनों की लालसा प्रकट की। ठाकुर गोपालसिंह के पूछने पर स्वामी जी ने उसको आने की आज्ञा दे दी। वह वृद्धा स्वामी जी के समीप आई उसने अतिशय श्रद्धा से भूमि के साथ सिर लगाकर स्वामी जी को नमस्कार किया। हाथ जोड़कर स्वकल्याण का—जन्मसुधार का पथ पूछा। महर्षि ने उसे ठाकुर-पूजा छोड़ देने को कहा और गायत्री मन्त्र का उपदेश दिया। साथ ही ओम् पवित्र का जप करने की शिक्षा दी। चिरकाल पश्चात्, यह प्रथम समय था जब दयालु दयानन्द जी द्वारा एक स्त्री को गायत्री जप करने का अधिकार उपलब्ध हुआ। हंसा-देवी इस प्रकार श्री-उपदेश से निहाल होकर स्वगृह को लौट आई और अन्तिम दिन तक स्वामी-वचन-परायण रही।[2]

उन्होंने अपने शिष्य रामानन्द द्वारा ११ नवम्बर १८८२ को श्री रूपसिंह को लिखवाया कि स्त्री को पढ़ाना अत्युत्तम है, यथेष्ट पढ़ाओ।...हे प्रिय, अब मैं अपनी

---

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित, भाग-२, पृष्ठ ३३१

२. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ १३२

ओर से इतना विशेष लिखता हूं कि तुम अपनी स्त्री को इस मन्त्र को शुद्ध बतला देना—ओं विश्वानि देव सवितर्दु रितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव (यजु ३०।३) इसका अर्थ भूमिका में देखके सुना देना।[1]

सन १८७४ में प्रयाग में महर्षि के सम्पर्क में एक दिन एक विद्यासम्पन्न ब्रह्मचारिणी आई थी। उसने स्वामी जी से कहा था कि आप सदा मूर्तिखण्डन करते हैं, परन्तु आज मैं मूर्तिखण्डन करूंगी और आप उसका मंडन करेंगे। उसने वेदान्त विषय पर भी बातचीत की थी।

दयानन्द सामान्यत: स्त्रियों को दर्शनार्थ नहीं आने देते थे। सन् १८७८ में फतहसर (गुजरात) में पहरेदार ने आकर दयानन्द से कहा कि महाराज, एक स्त्री आपके दर्शनों की बड़ी अभिलाषिणी है। महाराज ने बहुत संकोच किया, परन्तु उसे अन्दर आने की आज्ञा दे दी। वह जाट की स्त्री थी और साधारण वस्त्र पहने हुए थी। उसने आकर निवेदन किया कि महाराज मुझे मारफत (ब्रह्मज्ञान) की राह बता दीजिए। महाराज ने उत्तर दिया कि वेद पढ़ो। यह सुनकर वह चुप हो गई। दयानन्द ने फिर पूछा कि और कुछ पूछना है, परन्तु फिर वह कुछ न बोली और उठकर चली गयी। सम्भवत: उस काल में स्त्री कल्पना भी न कर सकती थी कि कोई इतने सहज भाव से वेद पढ़ने की अनुमति दे दे।[2]

सन् १८७९ में फर्रूखाबाद में एक दिन स्वामी जी लाला कालीचरण के बाग में छत पर बैठे हुए थे कि कुछ स्त्रियों के आने की आहट मालूम हुई तो आपने तुरन्त ही अपने शरीर को बगल से पैरों तक वस्त्र से ढक लिया। स्त्रियाँ आकर प्रणाम करके बैठ गयीं। उनमें एक के साथ एक लड़का और दो लड़कियाँ थीं। स्वामी जी ने कहा कि लड़कियों को विद्या पढ़ाना, जब पढ़ जायें तब विवाह करना, अभी यह छोटी हैं, विवाह की जल्दी नहीं है।[3]

सन् १८७५ में हरियाणा की एक महिला माई भगवती तरुणावस्था में ही वैराग्यवती हो गई थी। उसके विचार नवीन वेदान्त के थे। परन्तु सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर उसके विचारों में परिवर्तन हो गया था। वह स्वामी जी के दर्शनार्थ बम्बई गई और उनसे उपदेश लेकर कृतार्थ हुई। स्वामी जी ने उसे स्त्री-जाति में धर्म प्रचार करने का आदेश दिया और वह यह कार्य मरणपर्यन्त करती रही।[4]

महर्षि दयानन्द ने बम्बई में आर्य समाज के जो पहले २८ नियम बनाए थे, उनमें सातवें नियम का उत्तरार्द्ध अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।[5] इसके अनुसार पुरुष और

---

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन, पृ. ३६८

२. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र (भाग २) पृ. ८८

३. वही, भाग २, पृ. २६

४. ऋषि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र, भाग १, पृ. ३४६

५. ऋषि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित. भाग १. बाबू देवेन्द्रनाथ पृ. २७९

स्त्री दोनों ही समाज के सभासद् बन सकेंगे। महर्षि की इच्छा स्त्री का बौद्धिक विकास करने की थी। यहाँ तक कि उन्होंने अपने जीवन काल में ही महिलाओं को विशेष महत्व देना आरम्भ कर दिया था। थियोसॉफी सम्प्रदाय की मैडम ब्लैवत्स्की को आर्य समाज का कार्य करने की उन्होंने प्रेरणा की थी। साथ ही उनके पत्रों में रमाबाई का नाम उपलब्ध होता है, जिसे वे आर्यसमाज के मंच पर लाकर उससे अनेक सामाजिक काम कराना चाहते थे।

९ अगस्त सन् १८८० को स्वामी दयानन्द ने मुंशी बखतावर सिंह को लिखा कि आर्य दर्पण में यह भी छाप देना कि रमाबाई के दो व्याख्यान मेरठ में बहुत ही अच्छे हुए, सब लोगों ने सुन के प्रशंसा की। आशा है कि स्त्री लोगों में उपदेश करेंगी तो बड़ी उन्नति की बात है।[1]

१८ अगस्त १८८० को मुंशी बखतावरसिंह को मेरठ से लिखे पत्र में उन्होंने लिखा—आजकल रमाबाई यहाँ कलकत्ते से आके ठहरी है। आज उसका व्याख्यान समाज में स्त्रियों के कर्त्तव्याकर्त्तव्य विषय में है। दूसरा आगामी शनि को भी होगा। यह संस्कृत पढ़ी है। बहुत अच्छा संस्कृत भाषण भी करती है। इसका विशेष आगे लिखेंगे।

८ सितम्बर १८८० को बाबू दुर्गाप्रसाद जी को लिखे पत्र में लिखा है—रमाबाई अपने घर को जाने को कहती है। यहाँ समाज से १२५ रुपए और एक थान मलमल का देकर सत्कार किया। कल यहाँ से दिल्ली और दिल्ली से इलाहाबाद, वहाँ से घर जाएगी। अभी किसी समाज में जाने को नहीं कहती है। शायद वहाँ से आवे तो जाए। उसके भाई के मरने से इसकी कुछ कुचाली हो गई है—ऐसा लोग संशय करते हैं। चित्त भी चंचल है। शरीर पतला, निर्बल और रोगी है, गुस्सा भी बहुत है। इसकी कुचाली में जो लोग शंका करते हैं वह लिखने योग्य नहीं है। हमने इसको वैशेषिक और न्याय दर्शन के कुछ सूत्र पढ़ाए हैं।[2] समझाया भी बहुत है। आशा है कि कुचाली को छोड़कर उपदेश मार्ग में प्रवृत्त हो जावेगी। इसके साथ में बंगाली लोग हैं। वे ही इसकी कुमति का कारण हैं। कहती है कि मैं देश में जाकर वहाँ से अपने किसी कुटुम्बी एक पुरुष और एक औरत रोटी करने वाली साथ में ले आऊँगी। इसकी बुद्धि बहुत अच्छी और सुबोध है। काव्यालंकार, कुछ व्याकरण, वाल्मीकि रामायण, महाभारत इतना पढ़ी है। संस्कृत बहुत अच्छा बोलती है। व्याख्यान बहुत अच्छा देती है। परसों रविवार को गोपालराव हरि ने इसके बुलाने के लिए चिट्ठी भेजी थी। सो यह कहती है कि अभी तो हम देश को जायेंगे फिर वहाँ से आवेंगे तब देखी जाएगी। ज्यादा क्या लिखना, और तो सब प्रकार से अच्छी है, परन्तु जैसे

---

१. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृ. २१५

२. उस समय (जब रमा पढ़ती थी) दयानन्द की विशेष आज्ञा से पण्डित भीमसेन, पण्डित ज्वालादत्त, पं. पालीराम और बाबू ज्योतिस्वरूप उपस्थित रहते थे।

चन्द्रमा में ग्रहण लग जाए ऐसा हाल है। रमा के इस हाल को प्रसिद्ध हर जगह न होना चाहिए। उसको भाई का शोक तो निवृत्त हो गया है। बाद में पता चला कि रमा का दयानन्द जी के पास आने का मुख्य प्रयोजन यह था कि दयानन्द उसके एक बंगाली युवक के साथ विवाह को शास्त्रसम्मत स्वीकार कर लें। रमाबाई महाराष्ट्र-ललना और विपिन विहारी बंगाली कायस्थ थे। रमाबाई जानती थी कि ऐसे विवाह को केवल स्वामी जी ही शास्त्रसम्मत बता सकते हैं, क्योंकि वह यह मानते थे कि प्राचीन भारत में वर्ण व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव पर निर्भर थी। दयानन्द ने उसे विवाह की अनुमति नहीं दी और कहा कि तुम अपना जीवन स्त्रियों की शिक्षा और उद्धार में लगाओ। इस पर दयानन्द ने कहा यदि हम जानते कि रमाबाई स्वदेश के पुनरुद्धार के लिए कार्य करना स्वीकार नहीं करेगी तो हम कदापि अपने नियम के विरुद्ध उसे अपने सामने बिठाने और शास्त्र पढ़ाने पर उद्यत न होते। रमाबाई उनसे अन्य शास्त्र भी पढ़ना चाहती थी, पर दयानन्द उसे पढ़ाने को तैयार न हुए। बाद में रमा ने उसी बंगाली विपिन विहारी के साथ ही १३ अक्तूबर १८८० को ईसाई मत स्वीकार करके विवाह कर लिया।

देवेन्द्र बाबू ने रमाबाई को एक पत्र लिखा था और स्वामी जी के विषय में उसकी सम्मति पूछी थी। पत्र का उत्तर रमा ने १३ नवम्बर १९०३ को दिया। उसने लिखा था स्वामी जी के सम्बन्ध में जो भाव मेरे मन पर अंकित हैं वह वास्तव में बहुत उत्तम हैं···उनका मेरे साथ वर्ताव कृपापूर्ण और पितृतुल्य था। ··उन्होंने मुझसे यह कहा था कि मैं चाहता हूं कि तुम आर्यसमाज में सम्मिलित हो जाओ। मैं तुम्हें शिक्षा दूंगा और तुम्हें आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार के लिए तैयार करूंगा। मैं धार्मिक विषयों में अव्यवस्थित थी, अतः मैंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। स्वामी दयानन्द स्त्रियों के लिए धर्म की आवश्यकता स्वीकार करते थे। वे कहते थे कि स्त्रियाँ वेद पढ़ सकती हैं जिसकी कि हिन्दू धर्म आज्ञा नहीं देता था। इस कारण से कि हिन्दू धर्म स्त्रियों और शूद्रों से द्वेष करता था। मैं दयानन्द की शिक्षा से कि स्त्रियों को वेद, दर्शन और धर्म शास्त्रों के पढ़ने का अधिकार है, प्रसन्न थी।

स्त्री के प्रति सम्मान व उसकी दुर्दशा से द्रवित

चित्तौड़गढ़ की एक घटना अत्यन्त स्मरणीय है। ऋषि दयानन्द अपने कुछ भक्तों के साथ घूमने जा रहे थे। रास्ते में एक वट वृक्ष के नीचे दो-तीन मूर्तियां थीं। जब पास से गुजरे तो ऋषि ने अपना सिर झुका दिया। इस पर एक शिष्य ने कहा कि महाराज, चाहे देवमूर्ति का कितना ही खण्डन कीजिए पर उसका ऐसा प्रभाव है कि पास जाकर सिर झुक ही जाता है। इस पर ऋषि खड़े हो गये। पास ही छोटे-छोटे बालक खेल रहे थे। उनमें एक चार वर्ष की नंगी बालिका भी थी। ऋषि ने उत्तर दिया कि देखा नहीं है, यह मातृशक्ति है, जिसने हम सबको जन्म दिया है! सब

शिष्यों पर इस वाक्य का अपूर्व प्रभाव हुआ। ऋषि के मन में स्त्री जाति के प्रति वैसा घृणा का भाव नहीं था, जैसा प्राय: संन्यासी या विरक्त दिखाया करते हैं। जो मनुष्य चार वर्ष की वालिका में माता की भावना कर सकता है, वह स्त्रीजाति के प्रति कैसी प्रतिष्ठा का भाव रखता होगा और उसका हृदय कितना पवित्र होगा, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है।[1]

एक दिन का वर्णन है कि स्वामी जी बैठे-बैठे लेट गये और फिर उठ कर टहलने लगे। एक भक्त ने विनयपूर्वक पूछा—महाराज को आज क्या कोई वेदना हो रही है? उन्होंने एक लम्बा साँस भरकर कहा—भाई, इससे अधिक हृदयविदारक दारुण वेदना और क्या हो सकती है कि विधवाओं की दु:खभरी आहों से, अनाथों के निरन्तर आर्तनाद से और गोवध से इस देश का सर्वनाश हो रहा है।[2]

मारवाड़ के राज्यों में जो लोग मुगलों के समय में मुसलमान हो गये थे, उनको वहाँ के आर्य लोग स्वामी जी के समय तक अपनी लड़कियाँ देते थे। दयानन्द ने ऐसे आर्यों को आमन्त्रित किया और सभा लगाकर उनको उपदेश दिया कि जान-बूझकर अपनी प्यारी पुत्रियों को मुसलमान न बनाओ। उन पर यह अनीति, अन्याय और अनर्थ न करो। महर्षि के वचन लोगों के हृदयों में घर कर गये। उन्होंने वहीं प्रण किया कि हम आगे को इस घोर अपराध के भागी नहीं बनेंगे। इस प्रकार स्वामी जी ने बीसियों आर्य बालिकाओं के जीवन को बचा लिया।[3]

वेश्यावृत्ति के घोर विरोधी

महर्षि दयानन्द स्त्री के वेश्या रूप को अत्यन्त घृणित समझते थे। वे प्रत्येक व्यक्ति को उससे बचने के लिए सावधान करते थे। फर्रुखाबाद के किसी प्रतिष्ठित पुरुष का पुत्र दुराचारी और वेश्यागामी हो गया था। उसने लाला पन्नीलाल से विनय-पूर्वक कहा कि यदि आप स्वामी जी से मेरे पुत्र का सुधार करा दें तो मैं आपका बड़ा उपकार मानूंगा। लाला पन्नीलाल ने यही बात स्वामी जी से कही। उन्होंने कहा कि यदि आप उस युवक को मेरे पास ले आवें तो मैं उसका कुव्यसन छुड़ा दूंगा। युवक के आने पर स्वामी जी ने कुशल प्रश्नोत्तर के अनन्तर नवयुवकों को उपदेश देना आरम्भ किया। वेश्यागमन के दोष दिखाते हुए उन्होंने उनसे पूछा कि यह तो बताओ कि यदि किसी वेश्यागामी के वीर्य से वेश्या के गर्भ से कन्या उत्पन्न हो तो वह कन्या किसकी होगी? युवकों ने कहा उसी वेश्यागामी की। जब वह युवती हो जायेगी तो क्या करेगी? नवयुवक बोला कि वेश्या ही बनेगी? तब दयानन्द जी ने

---

१. आर्य समाज का इतिहास, भाग-१, इन्द्र विद्यावाचस्पति पृ. १२८

२. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश, पृ. ३८५

३. वही, पृ. ३८५

अत्यन्त मार्मिक शब्दों में कहा कि संसार में ऐसा कौन सत्पुरुष है जो अपनी कन्या को वेश्यावृत्ति कराये, परन्तु वेश्यागामी पुरुष ही इतने नीच हैं जो अपनी कन्याओं को वेश्या बनाते हैं। दयानन्द के शब्द सुनकर कुव्यसनी युवक के रोंगटे खड़े हो गये और उसने स्वामी जी के पैर पकड़ इस व्यसन को छोड़ने की प्रतिज्ञा की।[१]

बरेली में लाला लक्ष्मीनारायण ने एक वेश्या रखी हुई थी। महर्षि ने एक दिन उनसे पूछा कि आपका क्या वर्ण है। उन्होंने कहा कि आप तो वर्ण-व्यवस्था कर्मानुसार मानते हैं, मैं क्या उत्तर दूं। महर्षि बोले कि यों तो सभी वर्ण संकर हैं, किन्तु लोक के अनुसार तुम अपने को क्या कहते हो? उत्तर में उन्होंने कहा कि मैं खत्री हूं। महाराज बोले कि यदि खत्री के वीर्य से वेश्या के पुत्र उत्पन्न हो तो उसे क्या कहोगे? लाला लक्ष्मी नारायण ने यह सुनकर लज्जा से सिर नीचा कर लिया। तब दयानन्द ने कहा कि सुनो भाई, हम किसी का पक्षपात नहीं करते, हम तो सत्य ही कहेंगे। लाला जी ने उसी रात को उस वेश्या को निकाल दिया।[२]

इस प्रकार महर्षि दयानन्द के सम्पर्क में आई महिलाओं के वर्णन से स्पष्ट है कि एक ओर महर्षि स्त्रियों को अपने व्यक्तिगत सम्पर्क में आने देने से बचते रहे, दूसरी ओर उसे शिक्षित व उन्नत करने की उनकी प्रबल आकांक्षा रही। उसके लिए उन्होंने प्रयत्न भी किया। स्त्री के प्रति उनके हृदय में अद्भुत सम्मान की भावना थी। वे स्त्री की दुर्दशा देख न पाते थे। विशेष रूप से वे स्त्री को वेश्या आदि नारकीय जीवन से त्राण दिलाना चाहते थे।

---

१. वही, भाग-१, पृ. १३८-१३९

२. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-२ पृ. १९०

॥ ओ३म् ॥

दयानन्द संस्थान

[पंजीकृत—न्यास] द्वारा प्रकाशित

प्रमुख वैदिक साहित्य की सूची

१. सम्पूर्ण वेद भाष्य : ४ जिल्दों में २८४)

२. सम्पूर्ण वेद भाष्य : ३ जिल्दों में २७१)

३. सम्पूर्ण वेद भाष्य : २ जिल्दों में २५०)

४. सम्पूर्ण वेद भाष्य आर्ट पेपर पर ६०४)

५. यजुर्वेद भाष्य महर्षि दयानन्द कृत सजिल्द मूल्य : ३०)

६. अथर्ववेद परिचय : पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड ६)

७. अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र : विद्यामार्तण्ड स्वामी ब्रह्ममुनि जी
कपड़े की सुनहरी जिल्द (द्वितीय संस्करण) मूल्य १५)

८. वेदामृत । पृष्ठ ४०० से अधिक : सजिल्द मूल्य १०)

९. शतपथ ब्राह्मण (प्रथम काण्ड) : स्वामी समर्पणानन्द जी, मूल्य २५)

१०. संक्षिप्त महाभारत : स्व० पं० सन्तराम मूल्य १०)

११. सामवेद भाष्य सजिल्द मूल्य २५)

१२. वैदिक गीता भाष्य सजिल्द मूल्य १५) : सुनहरी जिल्द २०)

१३. वेदांजलि सजिल्द मूल्य १५)

१४. अपने प्रभु से प्रार्थना : सजिल्द मूल्य १०)

१४. श्री मद्दयानन्द प्रकाश : सजिल्द मूल्य ८) । सजिल्द मूल्य ६)

१६. अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या सजिल्द मूल्य ८)

१७. वेदों का यथार्थ स्वरूप सजिल्द मूल्य १०)

१८. उपनिषद् संग्रह : महात्मा नारायण स्वामी जी सजिल्द मूल्य १०)

१९. वैदिक सत्संग पद्धति (हिन्दी) नया संस्करण अजिल्द मूल्य ८० पैसे

२०. वैदिक अर्थनीति—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर । मूल्य ४० पैसे

२१. वैदिक अर्थशास्त्र परिचय : पं० भारतेन्द्र नाथ मूल्य १)

२२. क्या वेद में मांस भक्षण का विधान है ?
लेखक—आचार्य शिवपूजन जी, कानपुर मूल्य १)
२३. वेद और बाईबिल—दीनानाथ सिद्धांतालंकार । मूल्य १)
२४. मोक्ष का वैदिक मार्ग—आचार्य वैद्यनाथ व योगीराज पथिक १)
२५. वैदिक सिद्धान्त—पं० यशःपाल सिद्धांतालंकार मूल्य ३)
२६. गायत्री शतक—पं० शिवदयालु आर्य मूल्य २)
२७. ईश्वर-भक्ति—स्वामी सर्वदानन्द सरस्वती मूल्य १)५०
२८. माँ गायत्री : तृतीय संस्करण मूल्ल १)५०
२९. धर्म का मार्ग—पं० सुरेशचन्द्र विद्यालंकार मूल्य १)
३०. अमृतपथ—पं० दीनानाथ सिद्धांतालंकार सजिल्द मूल्य ५)
३१. नारायण अध्यात्म सुधा—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी मूल्य १)
३२. शतक-त्रयी—पं० शिवदयालु जी आर्य मूलए १)५०
३३. उपनिषद्-वचनामृत—पं० दीनानाथ सिद्धांतालंकार मूल्य १)
३४. ईशोपनिषद्—पं० हरिशरण सिद्धांतालंकार मूल्य १)
३५ उपनिषद् त्रयी—पं० शिवदयालु आर्य मूल्य १) ५०
३६. स्वर्ण पथ—स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती अजिल्द १) ५०
३७. वैदिक धर्म ही क्यों ? महात्मा नारायण स्वामी मूल्य ५० पैसे
३८. महान् अनुपमेय—ऋषिराज स्वामी दयानन्द मूल्य १)५०
३९. धर्म का सार : ९ कथाएं मूल्य १)
४०. आर्याभिविनय (काव्यमय व्याख्या) मूल्य १) ५०
४१. प्रभु के चरणों में—हरिशरण सिद्धांतालंकार मूल्य १) ५०

अन्य उपयोगी साहित्य

४२. ऋषि दयानन्द ने कहा था मूल्य १)५०
४३. योगेश्वर श्रीं कृष्ण—स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती ६० पैसे
४४. १८४७ के भूले बिसरे शहीद—बनारसी सिंह । मूल्य १)५०
४५. कल्याण का मार्ग—श्री जगन्नाथ पथिक मूल्य २५ पैसे
४६. यज्ञ प्रसाद महात्मा आनन्द स्वामी जी मूल्य ३० पैसे

विवाह पर बांटने के लिए

४७. वैदिक गृहस्थाश्रम—विद्यामार्तण्ड पं० विश्वनाथ जी मूल्य ८)
४८. धरती का स्वर्ग : गृहस्थाश्रम मूल्य २)
लेखक—पं० शिवकुमार शास्त्री महामहोपदेशक सजिल्द मूल्य ३)
४९. आदर्श परिवार—श्री युगल किशोर चतुर्वेदी मूल्य ६० पैसे

आर्यसमाज सम्बन्धी साहित्य

५०. स्वामी दयानन्द (जीवन चरित्र सजिल्द मूल्य ६) अजिल्द मू० २)
५१. ज्योति स्तम्भ ६)
५२. आर्य क्रांतिकारी—श्री बनारसी सिंह मूल्य ३)

विविध साहित्य

१२१. वेद-ज्योति सजिल्द : मूल्य ६) । अजिल्द ४)
१२२. बाल-सत्यार्थप्रकाश : स्वामी जगदीश्वरानन्द मूल्य :२)५०
१२३. भाई परमानन्द : जीवन चरित्र—बनारसी सिंह मूल्य : २)
१२४. वन्दना के स्वर : क्षेमचन्द्र सुमन सजिल्द मूल्य : १५)
१२५. वाल्मीकि रामायण : (संक्षिप्त) श्री प्रेमचन्द्र शास्त्री मूल्य ३)
१२६. दयानन्द चित्र-दर्शन मूल्य : २०)
१२७. ज्ञान-दर्शन: लेखक डा. भवानीलाल भारतीय एम. ए. पी. एच. डी. सजिल्द : मूल्य १०)
१२८. दयानन्द चित्रकथा— मूल्य : ५० पैसे
१२९. चार फल— मूल्य : ३० पैसे
१३०. योग की राह पर : मूल्य : ५० पैसे
१३१. पातंजल योगशास्त्र : मूल्य : १)
१३२. भारत की अवनति के सात कातण मूल्य : ६० पैसे
१३३. शक्ति रहस्य : पं० यशपाल सिद्धान्तालंकार मूल्य : १)५०
१३४. वृहस्पति राज धर्म सूत्र : मूल्य : २)
१३५. उपनिषद कथा माला : महात्मा नारायण स्वामी मूल्य : १)
१३६. अध्यात्म योग : पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार (कपड़े की जिल्द) मूल्य : ८)
१३७. स्वामी श्रद्धानन्द (जीवन परिचय) मूल्य : ४० पैसे
१३८. महर्षि दयानन्द का ऐक्यवाद मूल्य : १)
१३९. महर्षि दयानन्द ऐतिहासिक संस्मरण मूल्य : १)
१४०. राष्ट्रवादी दयानन्द मूल्य : १)
१४१. ईश्वर : वैज्ञानिकों की दृष्टि में मूल्त १५)
१४२. जनज्ञान—(शताब्दी विशेषांक) मूल्य : १०)
१४३. योग और ब्रह्मचर्य्य (सचित्र) मूल्य :१)५०

आदेश के साथ १।४ धन अगाऊ भेजें। रेलवे स्टेशन लिखें।

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर, दिल्ली—३६

दूरभाष : ५६६६३९/८०१२२१

हमला-हमला-हमला

भारत मां पर हमला

जो भारत को माँ नहीं मानता
वह देश का दुश्मन है

भारत हमारी मां है इसकी रक्षा हमारा धर्म है

"भारत-रक्षा-समिति" बनाकर काम में लगिए

राष्ट्र द्रोही शक्तियों का फन कुचल डालिए

--भारतेन्द्रनाथ संयोजक

अ० भा० "भारत-रक्षा-समिति" वेद मन्दिर,

१५९७ हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

फोन ५६६६३९

मुद्रक प्रकाशक-सम्पादक पं० राकेश रानी द्वारा अपने स्थान पर स्वस्ति प्रस दिल्ली में छपा।

आर्यसमाज सम्बन्धी साहित्य

५०. स्वामी दयानन्द (जीवन चरित्र सजिल्द मूल्य ६) अजिल्द मू० २)
५१. ज्योति स्तम्भ ६)
५२. आर्य क्रांतिकारी—श्री बनारसी सिंह मूल्य ३)

विविध साहित्य

१२१. वेद-ज्योति सजिल्द : मूल्य ६) । अजिल्द ४)
१२२. बाल-सत्यार्थप्रकाश : स्वामी जगदीश्वरानन्द मूल्य :२)५०
१२३. भाई परमानन्द : जीवन चरित्र—बनारसी सिंह मूल्य : २)
१२४. वन्दना के स्वर : क्षेमचन्द्र सुमन सजिल्द मूल्य : १५)
१२५. वाल्मीकि रामायण : (संक्षिप्त) श्री प्रेमचन्द्र शास्त्री मूल्य ३)
१२६. दयानन्द चित्र-दर्शन मूल्य : २०)
१२७. ज्ञान-दर्शन: लेखक डा. भवानीलाल भारतीय एम. ए. पी. एच. डी. सजिल्द : मूल्य १०)
१२८. दयानन्द चित्रकथा— मूल्य : ५० पैसे
१२९. चार फल— मूल्य : ३० पैसे
१३०. योग की राह पर : मूल्य : ५० पैसे
१३१. पातंजल योगशास्त्र : मूल्य : १)
१३२. भारत की अवनति के सात कातण मूल्य : ६० पैसे
१३३. शक्ति रहस्य : पं० यशपाल सिद्धान्तालंकार मूल्य : १)५०
१३४. बृहस्पति राज धर्म सूत्र : मूल्य : २)
१३५. उपनिषद कथा माला : महात्मा नारायण स्वामी मूल्य : १)
१३६. अध्यात्म योग : पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार (कपड़े की जिल्द) मूल्य : ८)
१३७. स्वामी श्रद्धानन्द (जीवन परिचय) मूल्य : ४० पैसे
१३८. महर्षि दयानन्द का ऐक्यवाद मूल्य : १)
१३९. महर्षि दयानन्द ऐतिहासिक संस्मरण मूल्य : १)
१४०. राष्ट्रवादी दयानन्द मूल्य : १)
१४१. ईश्वर : वैज्ञानिकों की दृष्टि में मूल्त १५)
१४२. जनज्ञान—(शताब्दी विशेषांक) मूल्य : १०)
१४३. योग और ब्रह्मचर्य (सचित्र) मूल्य :१)५०

आदेश के साथ १।४ धन अगाऊ भेजें । रेलवे स्टेशन लिखें ।

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर, दिल्ली—३६

दूरभाष : ५६६६३९/८०१२२१

हमला-हमला-हमला

भारत मां पर हमला

जो भारत को माँ नहीं मानता
वह देश का दुश्मन है

भारत हमारी मां है इसकी रक्षा हमारा धर्म है

"भारत-रक्षा-समिति" बनाकर काम में लगिए

राष्ट्र द्रोही शक्तियों का फन कुचल डालिए

--भारतेन्द्रनाथ संयोजक

अ० भा० "भारत-रक्षा-समिति" वेद मन्दिर,

१५९७ हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

फोन ५६६६३९

मुद्रक प्रकाशक-सम्पादक पं० राकेश रानी द्वारा अपने स्थान पर स्वस्ति प्रस दिल्ली में छपा ।

जन-ज्ञान (हिन्दी मासिक) मई रजि० नं० D. (C.) 201
वेद मन्दिर दिल्ली-३६ १९७८ Regd. No. 107119/7

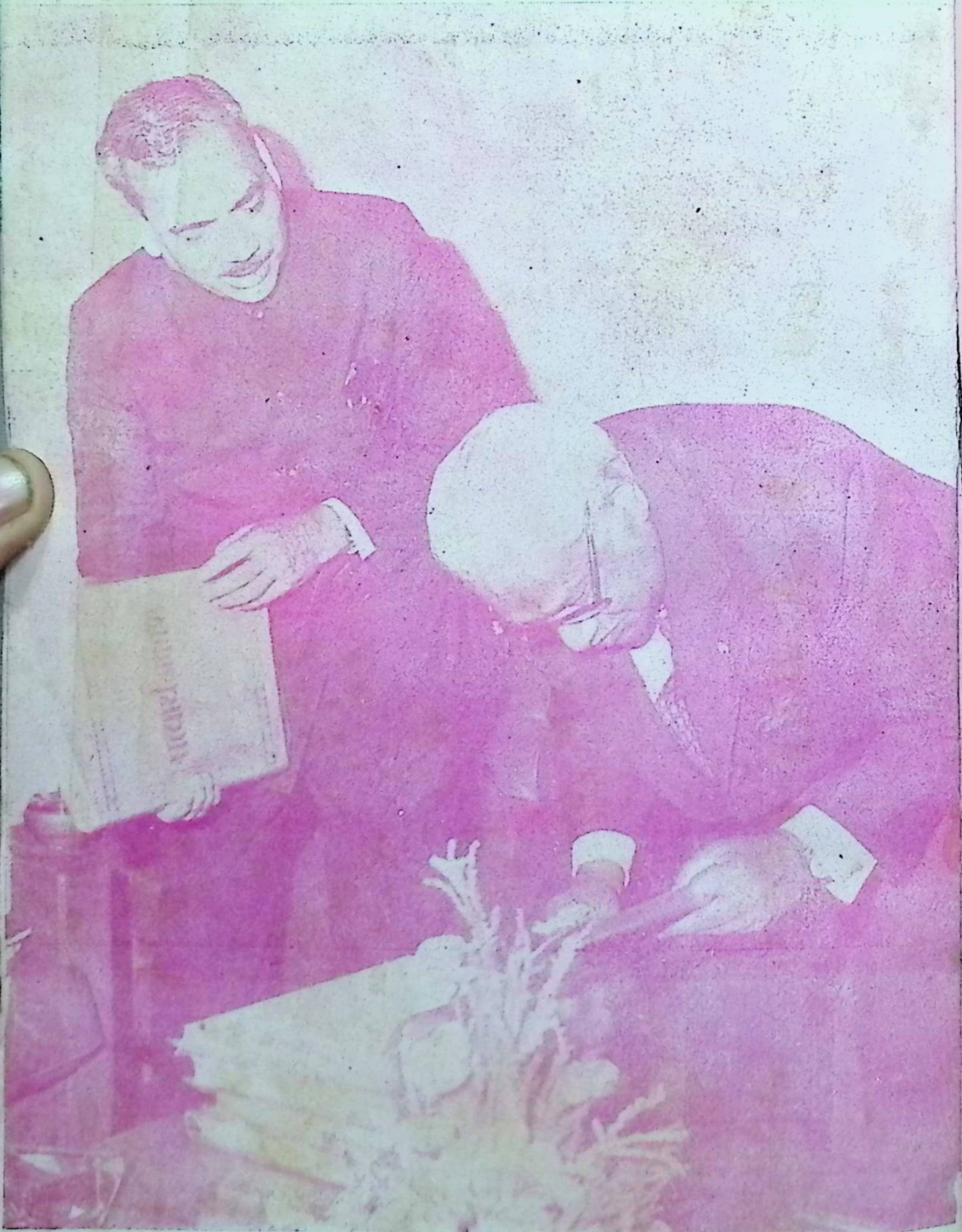

दयानन्द संस्थान को ओर से मारशीस के प्रधानमन्त्री सर शिवसा
रामगुलाम को आर्ट पेपर पर छपे चारों वेद व सत्यार्थप्रकाश तथा अन्य वैदि
साहित्य श्री बालेश्वर अग्रवाल सम्पादक हिन्दुस्तान समाचार ने भेंट किया

ॐ

आत्म-गीत

ATMA-GEET

THE SONGS OF THE SELF

A COMPILATION OF SOME VEDIC PSALMS

by

SATYA PRAKASH RAMSAHAL

Vedic Research Council
GUYANA ARYA PRATINIDHI SABHA
P. O. Box 661, GEORGETOWN
GUYANA, So. Am.

जन-ज्ञान (हिन्दी मासिक) मई रजि० नं० D. (C.) 201
वेद मन्दिर दिल्ली-३६ १९७८ Regd. No. 107119/7:

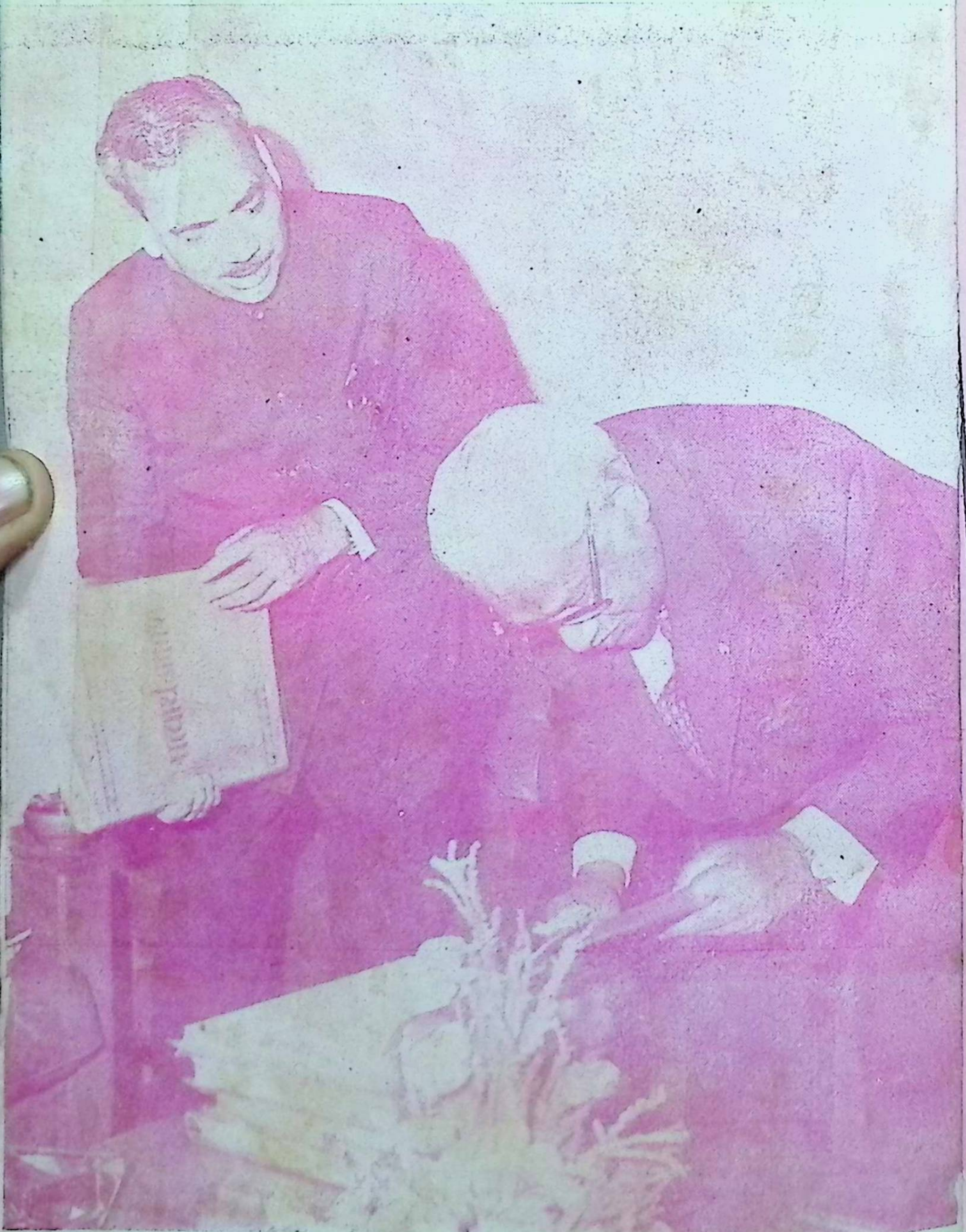

दयानन्द संस्थान की ओर से मारीशस के प्रधानमन्त्री सर शिवसा
रामगुलाम को आर्ट पेपर पर छपे चारों वेद व सत्यार्थप्रकाश तथा अन्य वैदि
साहित्य श्री बालेश्वर अग्रवाल सम्पादक हिन्दुस्तान समाचार ने भेंट किया

ॐ

आत्म-गीत

ATMA-GEET

THE SONGS OF THE SELF

A COMPILATION OF SOME
VEDIC PSALMS

by

SATYA PRAKASH RAMSAHAL

Vedic Research Council
GUYANA ARYA PRATINIDHI SABHA
P. O. Box 881, GEORGETOWN
GUYANA, So. Am.

FOREWORD

This booklet contains a selection of Vedic Bhajans (psalms) sung in the Arya Samaj mandirs for the last hundred years. They are called Vedic because they embody the Vaidik Sanskriti (culture) and give an accurate interpretation of Mother Nature (God). The Beauty of Vedic Hymns are in the meanings, more than in the Rhythm and Tune. Hence, when they are sung, Aryas are supposed to pour out the contents of their hearts, wherein reside the Atma(soul) - Hence Atma-Geet (the outpourings of the Soul).

It is expected that this transliteration will be a temporary phase and that these Bhajans will in the near future be read in the original Aryabhasha (Hindi). It is a fact that transliteration and Translation not only destroys the thought of the composer, but distort the meanings contained in the bhajans. It is certainly with much hesitation that the compiler of Atma Geet contented to prepare this work, for it has been proven that the Hindi Alphabet can be mastered in two weeks.

I do hope that this booklet will serve the purpose for which it has been prepared - F. Sukdeo

ॐ

आत्म-गीत

ATMA-GEET

THE SONGS OF THE SELF

A COMPILATION OF SOME VEDIC PSALMS

by

SATYA PRAKASH RAMSAHAL

Vedic Research Council

GUYANA ARYA PRATINIDHI SABHA

P. O. Box 001, GEORGETOWN

GUYANA, So. Am.

F O R E W O R D

This booklet contains a selection of Vedic Bhajans (psalms) sung in the Arya Samaj mandirs for the last hundred years. They are called Vedic because they embody the Vaidik Sanskriti (culture) and give an accurate interpretation of Mother Nature (God). The Beauty of Vedic Hymns are in the meanings, more than in the Rhythm and Tune. Hence, when they are sung, Aryas are supposed to pour out the contents of their hearts, wherein reside the Atma(soul) - Hence Atma-Geet (the outpourings of the Soul).

It is expected that this transliteration will be a temporary phase and that these Bhajans will in the near future be read in the original Aryabhasha (Hindi). It is a fact that transliteration and Translation not only destroys the thought of the composer, but distort the meanings contained in the bhajans. It is certainly with much hesitation that the compiler of Atma Geet contented to prepare this work, for it has been proven that the Hindi Alphabet can be mastered in two weeks.

I do hope that this booklet will serve the purpose for which it has been prepared - F. Sukdeo

ॐ

आत्म-गीत

ATMA-GEET

THE SONGS OF THE SELF

A COMPILATION OF SOME VEDIC PSALMS

by

SATYA PRAKASH RAMSAHAL

Vedic Research Council
GUYANA ARYA PRATINIDHI SABHA
P. O. Box 001, GEORGETOWN
GUYANA, So. Am.

CONTENTS

Ab saup diya I
Miltaa hai sachaa 2
Mankee Aakhe Khol 2
He jagat pita 3
Tum he prabhu chand 4
Pitagee tum patit 4
Pitu maatu sakhaa 5
Gaa-o madhur harinaam 5
Brahaman Svaraastra me 6
Jo kare om se 6
Bhagavat Bhajan 7
Om hee jeewan hamara 7
Kis need so raha 8
Utho aarya veero 8
Dayaamai deenbhandu 9
Ved kee jyotee I0
Sharan me aaye II
Chanchal man nit II
Om naam kaa jhandaa I2
Vigayee vishwa om I2
Kisaa sundar khel I3
Nar naaree praatha I4
parmeshwar kaa kar I4
Tere poojan ko I5
Dayaamai pita mai I5
Aaj mil sab geet gaao I6
Vishwapatee ke khyaan I6
He dayaamai ham sabha I7
Jis nar me aatma I8
Jo kare om ka preet I7
He bramanay jagat I9
Karo hare I9
Uth jaag musaphir 20
Kal rahaa so aaj 20
Dukh door kar hamara 2I
Tumhe chor kis dwaar 2I
Sharan prabhoo kee 22
E manuj jo 23
Sharan apnee me 22
Suhaag Kaisa 25
Eesh Sakshee panch 25
Pakarte hath ho 26
Grihapati Grihapatni 26
Do vachan hame do 27
Samai sundar 27
Ati khanyavaad 28
Suno suno ai duniya 29
Dayanand kee jai 30
Dayanand swamee ke 30
Dayanand ke veer 3I
Dayanand kee jay 3I
Dayanand ne vishwa 32
Dayanand agar too 32
Harshaa ka divas 33
Aryasamaj hamaara 34
Dayamai jyoti man 34
Aryo is desh ki 35
Yah vaidik dharma 35
Namaste shabda hai 36
Dayaaly kayaa kar 37
Omkar sabka adhar 37
Hai sache aarya 38
Dayaamai Jyotee 38
Deena bandhe ham 39
Utho sone vaali 40
Bano arya 40
Poojaniya prabhoo 4I
Yaha om Kaa 42
Akhiyaa hari 43
Nirbal ke praan 44
Anupam suramya 44
phagwah dhamaari 45
Sur kee gati 45
Shiv Raatree 46
Aaj rishi deevali 40
om Jai gadadeesh 48
O Guyana. 49
Jag maahi Kissee 23
Swagat Sab 24
Prano Samaan 24

PRAYER - BHAJANS

Ab saup diyaa

Ab saup diyaa is jeevan kaa
sab bhaar tumhaare haatho me,

Hai jeet tumhaare haatho me,
hai haar tumhaare haatho me.

Meraa nishchai hai ek yahee
ik baar tumhe paa jaa-o mai.

Arpan kar doo jagtee bhar kaa
sab pyaar tumhaare haatho me (1)

Yaa to mai jag se door rahoo
aur jag me rahoo to aise rahoo.

Is paar tumhaare haatho me
us paar tumhaare haatho me (2)

Yadi maanush hee mujhe janma mile
tab to charano kaa pujaaree rahoo

Mujh poojak kee ik rag rag kaa
Ho taar tumhaare hathoo me (3)

Jab jab sansaar kaa bandee ban
darabaar me tere aa-oo mai.

Ho mere paapo kaa nir-nai
sarkaar tumhaare haatho me (40

Mujhme tujhme hai bhed yahee
mai narhoo too naaraayan hai.

Mai hoo sansaar ke haatho me
sansaar tumhaare haatho me. (5)

.oOo.

Miltaa hai sachaa

Miltaa hai sachchaa sukh keval
bhagvaan tumhaare charano me

Yadi vairee sab sansaar bane
meraa jevan mujhpar bhaar bane

Chaahe maut gale kaa haar bane
rahe dhyaan tumhaare charano me (1)

Kahee sankat ne aa gheraa ho
chaahe chaaro or andheraa ho

Par chitta na dag-mag meraa ho
rahe dhyan tumhaare charano me (2)

Kahee agni pareekshaa me jalnaa ho
chaahe kaato par bhee chalnaa ho.

Chaahe chhor ke desh bichhurnaa ho
Rahe dhyaan tumhaare charno me (3)

Man kee aakhe khol

Man kee aakhe khol baabaa, man kee aakhe khol

Duniya kyaa hai ek tamaashaa
chaar dino kee jhoothee aashaa.

Jyaan taraajoo hath me lekar
tol sake to tol, baabaa (1)

Matlab kee sab duniyaa-daaree
matlab ke hai sab sansaaree
Jag me teraa ko hitkaaree

Tan-man kaa sab zor lagaakar
naam prabhu kaa bol baabaa (2)

He jagat pitaa bhagavaan

He jagat pitaa bhagavaan, hame do jyaan.

Too eeshvar pyaaraa, duniya me ek sahaaraa

Bachpan me hosh na aayaa hai,
jeevan me paap kamaayaa hai.

Ab jaa-oo kahaa vishayo ne mujhko maaraa (1)

Dil meraa to yaha kahataa hai
too man-mandir me rahataa hai

Din-raat bhataktaa rahaa mai dar-dar maaraa (2)

Paapo se hame bhagavan bachaa,
vedo kaa sachchaa bhakt banaa

Paakhand jhooth se sab hee kare kinaaraa (3)

Majhdhaar me hai beraa meraa
kripa kar aashrai hai teraa

'Nandalaal' paap me beetaa jeevan saaraa (4)

Om anek baar bol

Om anek baar bol prem ke prayogee

Hai yahee anaadi naad nirvikalpa nirvivaad

Bhoolate na poojyapaad veetaraag yogee.

Dhyaan me dhare virakta bhaav se bhaje subhakt

Tyaagate aghee ashakta poch paap rogee.

Om Om praatah sham jo jape bisaar kaam

To bane vivek dhyan mukti kyo na hogee ?

Tum ho prabhoo chaand

Tum ho prabhoo chaand mai hoo chakoraa
Tum ho kamal phool mai ras kaa bhauraa.
Jyotee tumhaaree kaa mai hoo patangaa
Aanand-ghan tum ho, mai ban kaa moraa (1)
Jaise hai chumbak se lohe kee preetee
Aakarshan kare mohe lagaataar toraa (2)
Paanee bina jaise ho meen vyaakul
Vaise hee tarpaa-e tumaaraa bichhoraa (3)
Ik boond jal kaa mai pyaasa hoo chaatak
Amrit kee karo varshaa haro taap moraa (4)

Pitaajee Tum Patit

Pitaa-jee tum patit-uddhaaranhaar.
Deen sharan kangaal ke svaamee
dukh ke mochan- har (1)
Is jag maayaa jaal bhraman me
Soojhe na saar asaar (2)
Satya jyaan bin andha sam dole
Kare asatya aachaar (3)
Paap pravaah bayankar jal me
doobat hai majh-dhaar (4)
Tumhaare dayaa bin ko samarth hai
kare deen ko paar (5)

Bhagavat bhajan kee jyotee

Bhagavat bhajan kee jyotee, hridai me jagaale

Duniyaa kee ul-jhano se, man ko zaraa hataa-le

Haasil yadi hai karnaa, bhagavaan kaa sakhaapan

Ban aap uskaa pahile, apnaa use banaa-le (1)

Abhyaas karte-karte, dho aatmaa ke mal ko

Saagar-aanand ke me, jee bhar ke phir nahaale (2)

Baato se kaam ko-ee pooraa kabhee na ho taa

Vaanee se jo kahaa hai kar ke use dikhaale (3)

Vedo ke jyaan dvaaraa deedaar kar prabhoo kaa

Doo-ee kaa bhaav dil se apne zaraa hataale (4)

Yaha to hai nakad saudaa ai desh jaan lenaa.

Is haath se too dharde us haath se uthaa le (5)

Om hee jeevan hamaaraa

Om hee jeevan hamaaraa Om praanaadhaar hai
Om hai kartaa vidhaataa Om paalanhaar hai
Om hee hai dukh vinaashak Om sarvaanand hai
Om hai bal tej-dhaaree Om karunaakand hai.
Om sabkaa poojya hai ham Om kaa poojan kare
Om hee ke dhyaan se ham shuddha apmaa man kare
Om ke guru mantra japne se rahegaa shuddha man
Buddhi din pratidin barhegee dharma me hogee lagan
Om ke japse hamaaraa jyaan barhataa jaayegaa
Ant me yaha jaap hamko mukti tak pahu-chaa-egaa.

Kis neend so rahaa hai

Kis nnend so rahaa hai jag ko jagaane waale
Samjhaaye kaun kaise sab ko saihaane vaale.

Har bigree baat toone pal me savaar dee thee
Bigraa kyo dhang teraa bigaree banaane vaale (1)

Kyaa bhool ho gayee hai bhoolaa saa jo huaa too
Aachaar paath saare jag ko parhanne vaale (2)

Ghar me tere bhayaanak tam drishti aa rahaa hai
He amar jyaan jyoti ghar ghar pahuchaane vaale (3)

Adho kee aakh hai too dalito kaa aashrai hai
Girtaa kyo jaa rahaa hai girte uthaane vaale (4)

Jaanaa tujhe kidhar hai taiyyaaree hai kahaa kee
Path bhool kyo rahaa hai khud kee banaane vaale (5)

Yah divas moor-cchhaa ko teree hataane aavaa
Kar hosh hosh khaaye sab ko dilaane vaale (6)

Utho aarya veero

Utho aarya veero utho aarya veero.
Uthaa-o dhvajaa dhram vaidik niraalee
Sipaahee dayaanand utho dharma veero (1)

Babo tum vivekee raho prem sevee
Bano karmayogee utho dharama veero (2)

Chalo aarya mandir bhajo eesh pyaaro
Caho yam niyam ko utho dharam veero (3)

Dharam hee vichaaro dharam hee bakhaano
Dhram hee achaaro utho dharama veero (4)

Samaajee banaa-o samaajee kahaa-o
Samaajee suvarmee utho dharma veero (5)

Bhagavat bhajan kee jyotee

Bhagavat bhajan kee jyotee, hridai me jagaale

Duniyaa kee ul-jhano se, man ko zaraa hataa-le

Haasil yadi hai karnaa, bhagavaan kaa sakhaapan

Ban aap uskaa pahile, apnaa use banaa-le (1)

Abhyaas karte-karte, dho aatmaa ke mal ko

Saagar-aanand ke me, jee bhar ke phir nahaale (2)

Baato se kaam ko-ee pooraa kabhee na hotaa

Vaanee se jo kahaa hai kar ke use dikhaale (3)

Vedo ke jyaan dvaaraa deedaar kar prabhoo kaa

Doo-ee kaa bhaav dil se apne zaraa hataale (4)

Yaha to hai nakad saudaa ai desh jaan lenaa.

Is haath se too dharde us haath se uthaa le (5)

Om hee jeevan hamaaraa

Om hee jeevan hamaaraa Om praanaadhaar hai
Om hai kartaa vidhaataa Om paalanhaar hai
Om hee hai dukh vinaashak Om sarvaanand hai
Om hai bal tej-dhaaree Om karunaakand hai.
Om sabkaa poojya hai ham Om kaa poojan kare
Om hee ke dhyaan se ham shuddha apmaa man kare
Om ke guru mantra japne se rahegaa shuddha man
Buddhi din pratidin barhegee dharma me hogee lagan
Om ke japse hamaaraa jyaan barhataa jaayegaa
Ant me yaha jaap hamko mukti tak pahu-chaa-egaa.

Kis neend so rahaa hai

Kis nnend so rahaa hai jag ko jagaane waale
Samjhaaye kaun kaise sab ko saihaane vaale.

Har bigree baat toone pal me savaar dee thee
Bigraa kyo dhang teraa bigaree banáane vaale (1)

Kyaa bhool ho gayee hai bhoolaa saa jo huaa too
Aachaar paath saare jag ko parhanne vaale (2)

Ghar me tere bhayaanak tam drishti aa rahaa hai
He amar jyaan jyoti ghar ghar pahuchaane vaale (3)

Adho kee aakh hai too dalito kaa aashrai hai
Girtaa kyo jaa rahaa hai girte uthaane vaale (4)

Jaanaa tujhe kidhar hai taiyyaaree hai kahaa kee
Path bhool kyo rahaa hai khud kee banaane vaale (5)

Yah divas moor-cchhaa ko teree hataane aavaa
Kar hosh hosh khaaye sab ko dilaane vaale (6)

Utho aarya veero

Utho aarya veero utho aarya veero.
Uthaa-o dhvajaa dhram vaidik niraalee
Sipaahee dayaanand utho dharma veero (1)

Babo tum vivekee raho prem sevee
Bano karmayogee utho dharama veero (2)

Chalo aarya mandir bhajo eesh pyaaro
Caho yam niyam ko utho dharam veero (3)

Dharam hee vichaaro dharam hee bakhaano
Dhram hee achaaro utho dharama veero (4)

Samaajee banaa-o samaajee kahaa-o
Samaajee suvarmee utho dharma veero (5)

Dayaamai Deenbandhu

Dayaamai deen-bandhu dukh hamaare door kar deeje

Avidyaa aur jahaalat hind se kaafoor kar deeje.

Tumhaaree faij bakh-shee machee hai dhoom aalam me

Dharam dhan daan de is deen ko bharpoor kar deeje (1)

Tumhee se noor paakar hai chamakte chaand aur sooraj

Mere is aashivyaano ko pitaa purnoor kar deeje. (2)

Kharee jo jhooth yaa paakhand kee raaho me chattaane.

Inhe nij shakti ke baano se chaknaa choor kar deeje.3

Bachaane vriddha bhaarat kee bhavar me doobatee naivaa

Yahaa ab ko-ee paidaa vaha dilaavar shoor kar deeje.4

Pitaa ham deen putro ko pilaa sanjeevanee bootee.

Ata kar zindagee zindaa dilee maamoor kar deeje . 5

Mujhme Om Tujhme Om

Mujhme Om tujhme Om , sab me Om samaayaa
Sabse karlo pyaar jagat me ko-ee nahi paraayaa.

Jitne hai sansaar ke pranee un sab me hai jyotee
Ek baag ke phool hai saare ek maalaa ke motee
Ek kaareegar ne sab ko, ek motee se banaayaa (1)
Ek baap ke bete ham sab ek hi pyaaree maataa
Daanaa paanee dene vaalaa ek hamaaraa daataa
Phir naa jaane kis paapee ne larnaa hame sikhaayaa 2

Ooch neech aur bhedbhaav ke divaaro ko toro
Badlaa zamaanaa tum bhi badlo buree aadate chhoro
Jaago aur jagaa-o sab ko samai hai aisaa aayaa (3)

Ved kee jyotee se

Ved kee jyoti se jag ko jagmadaa do aaryo
Is tarah se rin rishivar kaa chukaa do aaryo (1)

Ved kaa dankaa jamaane me bajaado aaryo
Dharma se paakhand kee jar ko hilaa do aaryo
Kahnaa hee kahnaa nahee kar ke dikhaa do aaryo
Phir sakal sansaar ko aarya banaa do aaryo

Ved kee jyoti se jag ko jagmadaa do aaryo (2)
Tum guru sansaar ke bhaaratvarsh ke shaan ho

Brahma se jyaanee bhee ho vedo ke bhee vidvaan ho
Aaryo tum par na kyo sansaar ko abimaan ho

Tum rishi gautam patanjali kapil ke santaan ho
Rishiyo ke sandesh ko ghar ghar pahuchaa do aaryo (3)

Arya Vir Dal, Arya Vir Dal

Arya Vir Dal, Arya Vir Dal

Saahas dikhaa-e chal jeevan banaaye chal.
Pag pag pe maatrei bhoomi kee lajjaa bachaaye chal

Sajjaa aaraam saav-dhaan dal pooras chal
Shanai chal veg chal daur chal chal (2)

Vaam daksh vaam daksh vaam daksh vaam
Shatruh bhheer me bhee bal, too aazmaaye chal (3)

Vaam ghoom daksh ghoom aur peechhe ghoom.

Vir desh dishaa-o ko abhai banaaye chal (4)

Ajyaan ko bhagaa anyaay ko mitaa

Abhaav door karke shanti too banaaye chal.

Sharan me aaye

Sharan me aaye hai ham tumhaaree
dayaa karo hai davaalu bhagavan.
Shambhaalo bigaree dashaa hamaaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan.
Na ham me bal hai no ham me bhaktee
na ham me saadhan na ham se shatee
Tumhaare dar ke hai ham bhikaaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan (1)
Jo tum ho svaamee to ham hai sevak
jo tum pitaa ho to ham hai baalak
Jo tum ho thaakur to ham pujaaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan (2)
Hai sunaa ham ash hai tumhaare
tumhee ho sach-che prabhu hamaree
To sudh hamaaree hai kyo bisaaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan (3)
Bure hai jo ham to hai tumhaaree
bhale hai jo ham to hai tumhaaree
Tumhaare hokar ke ham dukhaaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan (4)
Pradaan kardo mahaan shaktee
bharo hamaare me jyaan bhakti
Tabhee kahaa-oge taa-haaree
dayaa karo hai dayaalu bhagavan (5).

Chanchal Man Nit

Chanchal man nit Om japakar
Om japakar, japakar
Pal pal chhin chhin ghari ghari nishidin
Om japakar, japakar.
Praat samai kee sukh belaa me
sandhiya kee pulkit rajanee me
Rom rom se nikale tere, Om japaakar ... (1)

Gaharaa saagar tootee naiyaa
jeevan tarnee Om khivaiyaa
Paar Karenge Om. Om japaakar .... (2)
Saar tattva kee khoj kiye jaa
naam saras ras roz piye jaa
Paar karenge Om. Om japaakar .... (3)

.....

Arya Vir Dal Bhajans

Om naam kaa jhandaa pyaaraa

Om naam kaa jhandaa pyaaraa
jhandaa oochaa rahe hamaaraa.
Eeshvar kee poojaa sikh-laa-e
vedo kaa maarag bat-laa-e
Shaanti aur sukh ko phailaa-ee
maanavtaa kaa yah rakhvaaraa (1)
Vishva prem kaa paath padhaataa
ooch-neech kaa bhed mitaataa
Maanush bananaa hame sikhaataa
sab samjhe sansaar hamaaraa (2)
Sabkaa yah kalyaan karegaa
jhooth paap paakhand haregaa
Ripudal isko dekh daregaa
dukho se hogaa chhut-kaaraa (3)
Aao aarya veero aao
is jhande kee shaan barhaa-o
Sanskriti apnee phailaa-o
jai-jaikaar kare jag saaraa. (4)
Jhandaa na yah jhukne paa-e
jaan hamaaree bhale hee jaa-e
Saaree duniyaa me lahraa-e
laal lagaa-o prem kaa naaraa (5)

Vijayee vishva Om

Vijayee vishva Om kaa pyaara
Jhandaa oochaa rahe hamaaraa.
Sadaa shakti barsaane vaalaa
Prem sudhaa sarsaane vaalaa.
Veero ko harshaane vaalaa
Aarya kaa tan-man saaraa .... (1)
Is jhandhe ke neeche nirbhai
Lakh-kar josh barhe kshan me
Kaape shatru dekh-kar man me
Mit jaa-e bhai sakat saaraa .... (2)
Aao pyaare veero aao
Vaidik dharam pai bali-bali jaao
Ek saath sab milkar gaa-o
Pyaara aaryaavart hamaaraa .... (3)

See page

Tan roopee nagaree ke andar
    aatmaa ko bithlaayaa
Asht chakra nau dvaar banaa kar
    isko khoob sajaayaa, pitaaji ....

Yahai cholaa hai anmolaa
    na miltaa baarambaar re,
    ant kise na paayaa hai .... (3)

Kaisaa sundar khel rachaayaa

Kaisa sundar khel rachaayaa
    hai toone bhagavaan
Karte hai teraa gungaan, karte hai teraa gungann.
Prithivee sooraj chaand sitaare
    parvat aur aasmaan Karte hai ....

Seb angoor anaar ... banaaye
    rang birange phool khilaaye
Chham chham chham /varshaa aaye/...chham
    koyal meetha raag sunaa-e.
Rishi muni aur yogee saare
Dharte teraa dhyaan, karte hai .... (1)

Maanav cholaa ajab banaayaa
    su-ee na dhaagaa haath lagaayaa
Nas-naaree kaa jaal bichhaayaa
    aatmaa ko isme bithlaayaa
Dvaar banaaye toone iske
Naak aakh aur kaan, karte hai .... (2)

Dvaar tere pai jo bhee aaye
    jeevan apnaa saphal banaaye
Paropkaar vaha kartaa jaaye
    nandlaal vaha na ghabraaye
Tan man dhan .. vaha dharma desh par
Kar deve kurbaan, Karte hai .... (3).

Nar-naaree sab praatah shaam

Nar naaree sab praatah shaam
bhajlo payaare Om kaa naam
Om naam kaa pakar sahaaraa
jo hai sachchaa pitaa hamaaraa.
Vaha he hai mukti kaa dhaam, bhajlo ....(.1)

Kaisaa sundar jagat rachaayaa
soorya chaand aakaash banaayaa
Gun-gaataa hai jagat tamaan, bhajlo .... (2)

Prithivee aur pahar banaaye
nadiyaa naale khoob sajaaye
Bin kar karma kare nishkaa, bhajlo .... (3)

Rishiyo muniyo ne hai dhyaayaa
ant kisee na uskaa paayaa
Karte hai usko parnaam, bhajlo .... (4)

Man apne ko shuddha banaaye
vishai vikaaro se bach jaa-o
Vedo kaa yaha he pharmaan, bhajlo .... (5)

Heeraa janma gavaa-o na tum
nandlal gha-raa-o na tum.
Sandhyaa karo subah aur shaam, Bhajlo ...... (6)

Parmeshwar kaa kar gungaan

Parmeshvar kaa kar gun-gaan
vaha hee hai rakshak bhagavaan.
Om Om kaa jaap kiyaa kar
gaayatree kaa paath kiyaa kar
Ho jaaye teraa kalyaan, vaha hee .... .. (1)
Satsang me nitya aayaa kar.
jeevan saphal banaayaa kar
Bhakti ras kaa kar le paan, vaha hee .... (2)
Sevaa apnaa lakshya banaa
deen dukhee ke kashta mitaa
Mayaa kaa na kar abhiman, vaha hee ...... (3)
Nandlaal too hosh me aa vedo kaa maarag apnaa
Apnaa aap zaraa pahchaan, vaha hee ..... (4)

Tere poojan ko bhagavan

Tere poojan ko bhagavaan
banaa man-mandir aaleeshaan
Kisne dekhee teree maayaa
kisne bhed teraa hai paayaa
Rishi muni haare kar dhyaan, banaa man.....(1)

Kisne dekhee teree soorat
kaun banaave teree moorat
Too hai niraakaar bhagavaan, banaa man ... (2)

Yaha sansaar hai teraa mandir
too ramaa hai iske andar.
Karte rishi muni sab dhyaan, banaa man .. (3)

Too har gul me too bul-bul me
too har shaakh me too har paat me
Too har dil me prabhoo ko maan, banaa man (4)

Saagar teree shaan barhaave
parvat teree shobhaa gaave
Tere roop anoop mahaan, banaa man ...... (5)

Too ne raajaa rank baaaye
too ne bhikshuk raaj bithaaye
Teree leelaa eesh mahaan, banaa man ..... (6)

Jhoothe jag kee jhoothe maayaa
moorakh isme kyo bharmaayaa
Kar kuchh jeevan ka kalayaan, banaa man ... (7)

Dayaamai pitaa mai

Dayaamai pitaa mai banoo tau pi-yaaraa
Kripaa ho tihaaree sadaa ho ujaaraa (1
Jagat paal kartaa banaataa bigaataa
Tummaaraa banoo mai lagaa do sahaaraa(2
Dayaa hai tihaaree nayaa tav dikhaataa
Sabhee sthaan vyaapee lakhaa-o du-aaraa(3
Karo door hamse jahaa paap jaalaa
Nazar b ho bh-uaalaa karo mo nitaaraa (4
Tihaare binaanaa hamaaraa hamaaraa
Pitaa too piyaaraa udhaaro adhaaraa *(5

Aaj mil sab geet gad-e

Aaj mil sab geet gaa-o us prabhu ke dhanyavaad
Jiskaa yash nit gaate hai gandharva gunijan dhanyavad

Mandiro me kandiro me parvato ke shikhar par
Dete hai lagaataar sausau baar munivar dhanyavaad

Karte hai jangal me mangal paksheegan har shaakh par
Paate hai aanand mil gaate hai svar bhar dhanyavaad

Koo-e me taalaab me sindhoo kee gahree dhaar me
Prem ras me tript ho karte hai jalchar dhanyavaad

Shaadiyo me jalsayo me yajya aur utsav ke aad
Meethe svar se chaahiye kare naari nar sab dhanyavaad

Gaan kar ameechand bhaj-naanand eeshvar kee stuti
Dhyaan dhar sunte hai shrota kaan dhar dhar dhanyavaad.

Vishvapatee ke dhyaan me

Vishvapatee ke dhyaan me jisne lagaa-ee ho lagan

Kyo na ho usko shaanti kyo na ho usko man magan

Kaam kroodh lobh moha shatru hai ye mahaabali

In ke hanan ke vaaste jitnaa ho tujhse kar yatan

Aisaa banaa svabhaav ko chitta kee shaanti se too

Paidaa na ho eershaa keeaag dil me rahe teree lagan

Mitrataa sab se man me rakh tyaag ke vair bhaag ko

Chhor kr tedhee chaal ko theekakar apnaa too chalan

Us-se adhik na hai ko-ee jisne rachaa hai yaha jagat

Uskaa hee rakh too aasraa uskee hee tu pakar sharan.

He dayaamai ham sabo ko

He dayaamai ham sabo ko shuddhataa-ee deejiye
Door karke har buraa-ee ko bhalaa-ee deejiiye.

Aisee kripaa aur anugrah ham pai ho param-aatmaa
Ho sabhaasad is sabhaa ke sab ke sab dharmaatmaa

Ho ujaalaa sab ke man me jyaan ke prakash se
Aur andheeraa door ho avidyaa naash se.

Khote karmo se bache aur tere gun gaaye sabhee
Chhoot jaa-e dukh saare sukh sadaa paa-e sabhee.

Saaree vidyaa-o ko seekhe jyaan se bharpoor ho
Shubh karam me ho-e tatpar dushta gun sab door ho.

Yajya havan se ho sugandhit apnaa bhaaratvarsh desh
Vaayu jal sukh-daaee ho-e jaaye mit saare klesh.

Ved ke prachaar me ho-e sabhee purushaarthee.
Ho-e aapas me preetee aur bane parmaarthee.

Lobhee aur kaamee krodhee ko-ee bhee ham me na ho
Sab vyasano se bache aur chhor de-e moha ko.

Achchhi sangati me rahe aur ved maarag par chale
Tere hee ho-e upaasak aur ku-karmo se bache.

Keejiye 'keval' ka hridai shuddha apne jyaan se
Maan bhakto me badhaa-o sab ka bhakti daan se.

Jo kare Om se preet

Jo kare Om se preet vahee nar mukti paate hai
Jo man ko hai lete jeet vahee nar mukti paate hai

Heeraa janam amolak hai yah shubh karmo se paayaa
Is keekeemat ko na samajhaa dhool me ise milaayaa
Vishayo me gayee hai beet, vahee nar..... (1)

P.T.O.

Aaj mil sab geet gaa-e

Aaj mil sab geet gaa-o us prabhu ke dhanyavaad
Jiskaa yash nit gaate hai gandharva gunijan dhanyavad

Mandiro me kandiro me parvato ke shikhar par
Dete hai lagaataar sausau baar munivar dhanyavaad

Karte hai jangal me mangal paksheegan har shaakh par
Paate hai aanand mil gaate hai svar bhar dhanyavaad

Koo-e me taalaab me sindhoo kee gahree dhaar me
Prem ras me tript ho karte hai jalchar dhanyavaad

Shaadiyo me jalsayo me yajya aur utsav ke aad
Meethe svar se chaahiye kare naari nar sab dhanyavaad

Gaan kar ameechand bhaj-naanand eeshvar kee stuti
Dhyaan dhar sunte hai shrota kaan dhar dhar dhanyavaad.

Vishvapatee ke dhyaan me

Vishvapatee ke dhyaan me jisne lagaa-ee ho lagan

Kyo na ho usko shaanti kyo na ho usko man magan

Kaam krodh lobh moha shatru hai ye mahaabali

In ke hanan ke vaaste jitnaa ho tujhse kar yatan

Aisaa banaa svabhaav ko chitta kee shaanti se too

Paidaa na ho eershaa keeaag dil me rahe teree lagan

Mitrataa sab se man me rakh tyaag ke vair bhaag ko

Chhor kr tedhee chaal ko theekakar apnaa too chalan

Us-se adhik na hai ko-ee jisne rachaa hai yaha jagat

Uskaa hee rakh too aasraa uskee hee tu pakar sharan.

He dayaamai ham sabo ko

He dayaamai ham sabo ko shuddhataa-ee deejiye
Door karke har buraa-ee ko bhalaa-ee deejiiye.

Aisee kripaa aur anugrah ham pai ho param-aatmaa
Ho sabhaasad is sabhaa ke sab ke sab dharmaatmaa

Ho ujaalaa sab ke man me jyaan ke prakash se
Aur andheeraa door ho avidyaa naash se.

Khote karmo se bache aur tere gun gaaye sabhee
Chhoot jaa-e dukh saare sukh sadaa paa-e sabhee.

Saaree vidyaa-o ko seekhe jyaan se bharpoor ho
Shubh karam me ho-e tatpar dushta gun sab door ho.

Yajya havan se ho sugandhit apnaa bhaaratvarsh desh
Vaayu jal sukh-daaee ho-e jaaye mit saare klesh.

Ved ke prachaar me ho-e sabhee purushaarthee.
Ho-e aapas me preetee aur bane parmaarthee.

Lobhee aur kaamee krodhee ko-ee bhee ham me na ho
Sab vyasano se bache aur chhor de-e moha ko.

Achchhi sangati me rahe aur ved maarag par chale
Tere hee ho-e upaasak aur ku-karmo se bache.

Keejiye 'keval' ka hridai shuddha apne jyaan se
Maan bhakto me badhaa-o sab ka bhakti daan se.

Jo kare Om se preet

Jo kare Om se preet vahee nar mukti paate hai
Jo man ko hai lete jeet vahee nar mukti paate hai

Heeraa janam amolak hai yah shubh karmo se paayaa
Is keekeemat ko na samajhaa dhool me ise milaayaa
Vishayo me gayee hai beet, vahee nar..... (1)

P.T.O.

Rath shareer aur aatmaa svaamee indriyaa hai ghore
Man roopee lagaam ko buddhi dheelaa yadi na chhore
Tab hove nirmal cheet, vahee nar ... ... (2)

Kaam krodh aur lobh moha hankaar me na phas jaanaa
Yam niyamo kaa paalan karke jeevan saphal banaanaa
Hai dharam hee sachchaa meet, vahee nar .. ..(3)

Dukh sukh haani laabh aur yash apyash me jo muskaaye
Nandlaal vah hee praanee sachchaa maanav kahlaaye
uskee hee jagat me jeet, vahee nar ... ..(4)

Jis nar me aatmaa

Jis nar me aatmaa shakti hai
    vah sheesh jhukaanaa kyaa jaane.

Jis dil me eeshvar bhakti hai
    vah paap kamaanaa kyaa jaane.

Man mandir me bhagvaan basaa
    Jo uskee poojaa kartaa hai

Patthar ke devataa par jaakar
    vah phool charhaanaa kyaa jaane. (1)

Maa baap kee sevaa kartaa hai
    unke dukho ko hartaa hai

Vah mathuraa kaashee haridvaar
    brindaaban jaanaa kyaa jaane. (2)

Do kaal kare sandhyaa va havan
    nit satsang me jo jaataa hai
Bhagvaan kaa hai vishvaas jise
    dukh me ghabraanaa kyaa jaane (3)

Jo khelaa hai talvaaro se
    aur agni ke angaaro me

Ran-bhoomi me jaakar peechhe
    va kadam hataanaa kyaa jaane. (4)

Hay Brahmanay Jagatpatay

Hay Brahmanay jagata-patay, Namastutay, Namastutay
Hay sacchi-da anand eeshwar, Namastutay, Namastutay

twam
Hay sarva-vyaapak eeshwar, eva maataa cha pitaa,
He sarva loke swaminaa, Namastutay, Namastutay ..Hay

Hey janma daata hay prabhu, jagat paalakam twam sharanam
Hay Brahma lokay ho pita, Namastutay, Namastutay ..Hay

Hay gyaan-sagar deva:ba, sarvagya sab ho jaanata
Hay antar-aatma ho prabhu, Namastutay, Namastutay...Hey

Hay paar-prahma parmaatma, nirakaar eesh hai nirgunam
Hay sarvapdhar hita-lamba eesh, Namastutay, Namastutay..Hey

Hay karuna saagar ho prabhu, kare ye sab mohee ab,
Hey sarva-akshai swaaminaa, Namastutay, Namastutay ..Hay

Karo hari

Karo hari naiyyaa meree paar.

Tumb bin kown bachaavan haar yah jag paaraavaar.

Paap pralobhan injin bhagvan, kheenchi karee majhdaar.

Man kevat maayaa ke mad me, gheraa panch makaar.

Dheelee paree surat kee doree, svaamin tumhe bisar.

Baar-baar takrat dusah dukh, toot gayaa patvaar

Naav praanee jhaanjhari ho ga-ee, kahan me dooban haar.

Balle haath gaho karunaakar, paar karo karttaar.

.oOo.

FUNERAL - BHAJANS

Uth jaag musaaphir

Uth jaag musaaphir bhor bhayee
Ab rain kahaa jo sovat hai
Jo jaagat hai so paavat hai
Jo sovat hai so khovat hai.

Tuk neend se aakhe khol zaraa
aur apne eesh se dhyaan lagaa
Yaha preeti karan kee reeti nahee
prabhoo jaagat hai too sovat hai.

Jo kal karnaa hai aaj karle
jo aaj karnaa hai ab karle
Jab chiriyo ne chug khet liyaa
Phir pachha-taaye kyaa hovat hai.

Naadaan bhugat karnee apnee
ai paapee paap me chain kahaa
Jab paap kee gatharee sees dharee
Phir sees pakar kyo rovat hai.

Kal Rahaa so aaj

Kal rahaa so aaj naa aru aaj hai so ab nahee
Chakra yaha sansaar kaa ghoomat sadaa is bhaatee hee.
Or hai naa chhor hai jeevan lataa adbhut sadaa
Phooltee phaltee tathaa mur-jhaat phir nootan bhaee
Kaun aayaa hai yahaa sab kaal tahne ke liye
Karma seeche phailtee surbhit hu-ee jeevan kalee.
Naar nar saathee yahaa sukh dukha apne bhaag se
Lok bhee mithyaa nahee jeevan kalaa hai seekhanee..
Pattaa kamal paanee rahe phirbhee kabhee mohe nahee
Maanav tathaa jeenaa yahaa aasaktaabhogan me nahee.
Dharma ko pahichaan lo aru karma-yogee hoyalo
Eesh ko nit nehalo bas aur doosar hai nahee.

Dukh door kar hamaaraa

Dukh door kar hamaaraa sansaar ke rachaiyaa
Jaldee se do sahaaraa majh-dhaar me hai naiyaa

Tum bin ko-ee hamaaraa rakshak nahee yahaa par
Dhoon-dhaa jahaan saaraa tum saa nahee rakhaiyaa

Duniyaa me khoob dekhaa aakhe pasaar karke
Saathee nahee hamaaraa maa baap aur bhaiyaa

Sukh ke sabhee hai saathee duniyaa ke mitra saare
Teraa hee naam pyaaraa dukh dard se bachaiyaa

Duniyaa me phanske hamko haasil hu-aa na kuchh phal
Tere binaa hamaaraa ko-ee nahee sunaiyaa

Chaaro taraf se hampar gam kee ghataa hai chhaa-ee
Sukh kaa karo ujaalaa prakaash ke karaiyaa.

Achchaa buraa hai jaisaa raajee hai raam rahataa
Cheraa hai yaha tumhaaraa sudh le-o sudh livaiyaa

Tumhe chhor kis dvaar

Tumhe chhor kis dvaar jaa-oo?
vyathaa hridai kee kise sunaa-oo?
Ham anjaan anjaane baalak
tum svaamee rakshak prati-paalak
Aan pare hai sharan tumhaaree
janma maran ka sankat bhaaree.

Vinai kare pratidin uth praatah
Sutavat kantha lagaa-o taataa
Tum mangal-mai mangal daataa
Tum ho maataa pitaa au' bhraataa.

Artha-chatushtai hamko deejai
dar dar kaa nahi bhikshuk keejai.

Sharan apnee me rakh leeje

Sharan apnee me rakh leeje dayaamai daas hoo teraa
Tumhe tajkar kahaa jaa-oo hitoo ko aur hai meraa.

Bhataktaa hoo mai muddat se nahee aaraam paataa hoo
Dayaa kee drishti se dekho nahee to ddobataa beraa.

Sataayaa raag dvesho ne tapaayaa teen taapo .. ne
Dukhaayaa janma mrityu kaa hu-aa behaal hai meraa.

Dukho ko metane vaalaa tumhaaraa naam sunkar mai
Sharan me aa giraa ab to bharosaa naath hai teraa.

Kshamaa apraadh kar mere fakat ab aas hai teree
Dayaa 'baldeva' par karke banaale naath nij cheraa.

Sharan prabhoo kee aa-vo re

Sharan prabhoo kee aa-o re yahee samai hai pyaare
Chhal kapat aur jhooth ko tyaago satya me chitta lagaa-o re. (1)
Udaya hu-aa Om naam kaa bhaanu aa-o darshan paa-o re (2)
Paan karo is amrit-phal ko uttam pad-vee paa-o re (3)

Hari kee bhakti bin nahee mukti dridha vishvaas jamaa-o re. (4)
Manushya janma amolak hai yaha vrithaa na isko gavaa-o re. (5)
Karlo naam hari kaa simaran ant ko na pachhataa-o re. (6)
Dhanya dayaa jo sabke paale mat usko bis-raa-o re(7
Chhote bare sab milkar khushee se gun eeshvar ke gaa-o re (8)

E manuj jo chaahate sukh

E manuj jo chaahate sukh shaanti paanaa jagat me
Bandhano ko tyaag kar bhagavaan poojan seekhalo

Lok me bheje gaye tum karma karne ke liye
Bhoga-yonee vaasanaa ko tyaag yogee hoyalo.

Baal taarun jeerna kaalaa naa gavaa-o vyartha me
Ant me aahe sunaate chhor sab kuchh jaa-i-ho.

Naa yahaa maataa pitaa daaraa tathaa bhaa-ee rahe
Karma phal aavaagaman yaha satya shikshaa dhaaralo

Jeeva avinaashee banaa bhejaa gayaa kuchh nem se
Her pheraa ho rahaa ronaa kalap-naa chhor do.

Eesh sabkaa hai pitaa vah nyaay sabkaa hee kare
Aarva vyaapak antar-aatmaa sarva paalak ko bhajo.

Jag maahi kisee kaa

Jag maahi kisee kaa sanga nahee
    Jag maahi kisee kaa sanga nahee.

Aanaa jaanaa sabko hai kuchh
    saath nahee jo jaavat hai
Dharma karmaa vaha hee saathee
    uske bin paar utaar nahee (1)
Jeevan ghatikaa nishchit see hai
    naav lahariyaa melan hai
Aadi janaataa anta lakhaataa
    kaaj yahaa mamataa hi nahee(2)
Vastra banaa ke pahinaate jo
    jeeran hota bigaa dete
Theek yahee yaha deha kathaa hai
    sheerna bhayaa tab jeev nahee (3)
Baal yuvaa phir vriddha bhayaa par
    chintit naahi kahi koyee
Paatan kaa jab kaal bhayaa tab
    rodan kaa kachhu kaam nahee. (4)

Welcome Bhajan

Swaagat sab jan is mandir ho bhakti svaati kee dhaar
Sundar sumdhur gaan hamaaro ran-jan sab nar naar.

Eesh sagun nirgun avinaashee maat pitaa aru yaar
Tor bhaye ham vatsa sadaa hee taar hame sansaar

Aarya samaaj namaste bhaave veda prakaash lakhaar
Khand pakhandaa hota lakhaave jyaan jagat uji-yaar

Bhed kubhaavan door bhagaa-ve aaya yahaa par pyaar
Dev dayaanand prem viveke vishva rahe ik-taar.

Teertha bhayaa yaha gota lagaa-ve punya yahaa parsaar
Sangati santan nem chalaave shobhan sab vyav-haar

Praano samaan pyaaraa
Family Bhajan

Praano samaan pyaaraa kul ho sadaa hamaaraa

Maanav samaaj saaraa pyaaraa bane hamaaraa
c Bandhan kataan-haaraa kul ho sadaa hamaaraa.

Ham sab sapoot tere too hai sadaa adhaaraa
Sampark prem hove kalhaadi kaa mitaaraa.

Jag rang manch yah hai nit khel kaa lakhaaraa.
Ravi chand jot bhaavai gun gaan sab tihaaraa.

Lobhaadi shatru heyaa antah karan ujaaraa
Mandir padhaar devaa too hee yahaa hamaaraa.

Chahu or shaanti mai ho vipadaa lakhe kinaaraa
In bhakti bhakti desaa kul bhakti ho sahaaraa.

Weeding Bhajans

Suhaag kaisaa sudin niraalaa

Suhaag kaisaa sudin niraalaa
Vadhoo tathaa var susho-bhate hai
Suyajya shaalaa supanda mandaa
dhunee trivedan sumantra bhaavai
Vivaah vaidik vibhooti bhaavee
kripaa kshiteeshaa suhaavate hai (1)
Swayamvaraa yaha na bhed mankaa
nahee vachan chit vichhoh dekhai
Swadharma deekshaa jayaar maalaa
sugandha homan bahaar se hai(2)
Sukar grahan hai vachan puraa-ee
niyam kahaavan va daan kaise
Padee susaptaa subandha yogee
sushaanti paathaa asees jan hai(3)
Sadaa dulaare sabhee jano ke
grihastha yugalaa nikanta hove
Na ho viyogaa na ho kaleshaa
sadaa badhanti suyoga yug hai (4)
Kripaa dayaalaa vadhoo va var ho
sadharma maarag pravesh in hai
Prasanna dolai vihaar inkaa
sabhee kutumbee viraaj so hai. (5)

Eesh saakshee panch

Eesh saakshee panch jan hai dil diyaa dete vachan
Karma bhee sangee rahe aru mitrataa kaa poor ho.
Bhaagya dono ka udai dhan dhaanya shaalee ham bane
Bandhu sangati prem sootaa hoya gunthan bhaav ho.(1)
Do shareeree ek jeevee aarya aaryaa sang ho
Dharma path chalte sadaa hee sad grihasthee naat ho(2)
Haasya vachano keliyo kaa phaag is gehaa rahe
Maut tak hamaro bichhohaa naa tathaa roothan na ho (3)
Paalamaa rakshan tumhaaraa dharma meraa jaana-naa
Jo nideshaa hoya usko paalanaa mama nema ho (4)

. . .

Pakarte haath ho naathaa

Pakarte haath ho naathaa sabhaa mandap sushobhit
hai
Nibaaho ant tak mujhko yahee aashaa dulaaree hai.
Pratijyaa aaj jo keeneekaro paalan janaa-ee se
Kulaa-ee aarya jeevan kee vahee jeevan sahaaraa
hai (1)

Sukhaa-ee vaa dukhaa-ee ho dhanee nirdhan
niraashaa ho
Shareeraa chhaaya hokar hee chale ham dharma
sangat hai (2)

Kshamaa karnaa kabhee ko-ee agar apraadh naadaanee
Samajh-naa mohi hee apnaa yahee dhaaraa chalaanee
hai(3)
Kahoge so sunoongee mai vachan detee sabhaa
me hai
Niyam se kaaj sab karne yahee maarag lakhaayaa
hai (4)

Grihapati grihapatni

Grihapati grihapatni kal gaaje
geha pravesh rahe sukhdaa-yee
Vaibhav isme shaanti viraaje
prem sadaa barse agh-naashee.
Hoya prajaa-pati daayaa pooree
santati aanandit sab vaase
Lakshmee-pati barsaave dhan jan
deeragh jeevan kaal hulaasee(1)
Hom yahaa par nit prati sobhe
sandhyaa vandan vidhivat hove
Veda vidhaan sadaa cham-kaave
kusumit nootan ranjit holee (2)
Poot rahe man vachan sukaayaa
rog binaa chit chain kataa-ve
Trishnaa kalaha vidaa-ee ghar se
kartav paalan phal ke tyaagee(3)

P.T.O.

Aaraj karmaa aaraj dharmaa
aaraj shobhaa aarya badhaa-ee
Aaraj aaraj nit kee aaraj
aaraj bansee aarya kahaa-ee (4)

Do vachan hame do chaar

Do vachan hame do chaar karo ikraar
O Preetam pyaaraa, pakaroo tab haath tumhaaraa

Jo patnee mujhe banaanaa hai
aayu bhar bojh uthaanaa hai
Dukh sukh me karnaa tum ne nahee kinaaraa

Vastra bhojan denaa hogaa
patnee vrat ko lenaa hogaa
Man vachan karma se karo yahaa ik-raaraa

Mujhko na kabhee aataa-oge
jeevan bhar saath nibhaa-oge
Ban patideva is naiyaa kaa rakh-vaaraa

Pancho me tum ik-raar karo
sachche dil se jo pyaar karo
Nandlaal kahe ho svarga yah grihastha tumhaaraa

Samai sundar suhaanaa

Samai sundar sahaanaa hai
harash is ghar me chhaayaa hai
Richaaye ved kee gaakar
yah sundar yajya rachaayaa hai
Kiyaa nirmaan is ghar kaa
prabhu ke geet gaa gaa kar
Basenge aaj se griha me
atah utsav manaayaa hai (1)
Yahee hai kaamanaa sab kee
prabhoo is mahal ke vaasee
Sadaa sukh se sabhee jeeve
na hove kashta kaayaa hai (2)

Do dhaaree gau-ve ho ghar me
bail rath ashva haathee ho
Manaaye khushiyaa baalak dharma
dhan hove sataayaa hai (3)
Rahe bharpoor is ghar me
sadaa dhan dhaan sat shraddhaa
Sadaa dhyaaye manaaye deva
jo vedo ne gaayaa hai 4)

Birthday Bhajan - Ati dhanyavaad parameshvar

Ati dhanyavaad parameshvar kaa
yaha sundar avsar aayaa hai
Thaa janma divas is baalak kaa
jo utsav aaj manaayaa hai (1)
Eeshvar vishvaasee satyavaadee
vedo kaa yah anuyaayee ho
Din raat phale phoole nirog
ho sundar is kee kaayaa hai (2)
Vidvaano kaa sammaan kare guru
maat pitaa kaa sevak ho
Dukhiyo ke dukh ko door kare
jo vedo ne batlaayaa hai. (3)
Sab grantho ko padh padh soche
jeevan me jyoti jagee rahe
Yash keerti amar hove is kee
aave na maan mad maayaa hai.(4)
Sab gun sampanna bane baalak
hai aasheervaad yahee sabkaa
Sabko sukhdaayak sadaa rahe
jo geet dev ne gaayaa hai.(5)

Bhajans in honour of Swami Dayananda

Suno suno ai duniyaa vaalo

Suno suno ai duniyaa vaalo dayaanand ki amar kahaanee
Jiskee jai jai karte hai duniyaa ke saare hee pranee

Jyaan kaa soorya lop huaa jab phail gayaa thaa andheraa
Dharma karma sab bhool gaye the lagaa avidyaa kaa deraa
Andhakaar ko door bhagaane aayaa thaa svaamee. .(1)

Moolshankar ke pitaa ne ik din baithke yaha samjhaayaa hai
Shiv chaudas kaa baraa mahaatmya shiv puraan ne gaayaa hai
Aajyaa maan pitaa kee poojaa karne kee thaanee(2).

Raat ko ek baje jo so gaye the mandir ke narnaaree
Ek choohe ne aakar shiv kee khaa-ee mithaa-ee thee saaree
Rishi ne sochaa patthar poojaa karnee naadaanee(3)

Rishi kee bahan aur chaachaa dono swarga me the sidhaare
Ghar vaalo sab ro rahe the rishi khare man maare
Nikal parerghar baar chhor jangal kee khaak chhaanee(4

Sant mahant aur jogee jangam naange naath ajmaaye the
Shaiv shaakta aur raam snehi baithe takhta lagaaye the
Guru virjaanand ke charano me rahne kee thaanee (5

Shukra aur shanishchar raahu ketu sir par charhate the
Hindu Hindi chhor rahe the oordoo phaarsee padhate the
Hindi kaa prachaar kiyaa aur parhee ved vaanee (6)

Vidhvaa-o ke kashta mitaa-o gale achhoot lagaaye the
Karan singh aur vikram singh ke rishi ne zor ajmaaye the
Brahmacharya ke bal keedekh hu-ee sab ko hairaanee(7

Dayaanand kee jai pukaaraa

Dayaanand kee jai pukaaraa karenge
namaste namaste uchaaraa karenge
Bajaa denge duniyaa me vedo kaa dankaa
puraano se ab ham kinaaraa karenge.

Ham aarya hai vaidik dharam hai hamaaraa
ise jaano dil se pyaaraa karenge
Na chhorenge vaidik dharam ko kabhee ham
shaheed hoke marnaa gavaaraa karenge

Prabhu chhorkar ham na poojenge patthar
hamaaraa vahee paar utaaraa karenge
Pujaaree ke mohataaj hai aap jo but
vah kalyaan kaise hamaaraa karenge.

Jahaa vah zindaa rahenge hameshaa
dharam par jo jeevan ko vaaraa karenge
Ham ab noor vedo ka phailaake 'roshan'
munavvar yah sansaar saaraa karenge.

Dayaanand Swaamee ke gunvaad

Dayaanand svaamee ke gunvaad gaa-o
Na upkaar us maharishi ke bhulaa-o.

Karo kaam saahas se milkar paraspar
Chalo naadvedo kaa ghar ghar bajaa-o
Andhere me jo thokare khaa rahe hai
Unhe prem se satya maarag dikhaa-o. (1)
Jo aalam lare ilmiyat se pachhaaro
Jo murakh lare to bhujaa bal dikhaa-o
Virodhee dalo kaa daman karke pyaare
Gagan me vijai kee pataakaa lahraa-o (2.
Swayam shuddha bankar karo sab kee shuddhi
Isaa-ee musalmaan mile so milaa-o
'Pathik' badh gaye hai zamaane me leeder
Zaraa sochkar apnaa rahbar banaa-o. (3

Dayaanand ke veer

Dayaanand ke veer sainik banenge
  Dayaanand kaa kaam pooraa karenge.
Uthaa-e dhwajaa dharma kee ham phirenge
  Usee ke liye ham jiyenge marenge

Guzaa-enge vedo ko ham geet gaakar
  dikhaa-enge duniyaa puraanee banaa-kar.
Basaa-denge shaharo ko jangal me jaakar
  bataa-enge jeevan ko sachchaa banaakar.

Uthaa-enge rishiyo kee aavaaz koham
  banaa-enge phir swarga sansaar ko ham
Mitaa-enge sab sampra-daayo mato ko
  banaa-yenge phir aarya saare jagat ko.

Vahee prem gangaa yahaa phir bahegee
  jo sansaar ko taap maalaa haregee
Kahegaa jagat phir se ik swar me saaraa
  vahee vriddha bhaarat guru hai hamaaraa.

Dayaanand kee jai dayaanand

Dayaanand kee jai dayaanand jai ho.
Abodh andher machaa jag me thaa
Prakaashak jyoti dayaanand jai ho. (1

Adharma anartha ghiraa bhav yahaa thaa
prachaarak dharma dayaanand jai ho (2

Sunaa prabhu aayasu lok sachetaa
Udhaarak ved dayaanand jai ho (3

Shruti smriti anga upaanga samaayaa
Rishi jyaan deva dayaanand jai ho (4

Akhand niyam munivar jag shobhaa
Sudhaarak lok dayaanand jai ho (5

Dayaanand ne vishva

Dayaanand ne vishva saaraa jagaayaa
Hame apnee manzil kaa raastaa bataayaa

Gulaamee me sab kuchh bhulaayaa huaa thaa
Khayaalaat par vaham chhayaa huaa thaa
Buraa-i-yo ko dil me chhupaayaa huaa thaa
Pauranik aadambar rachaayaa huaa thaa
Dayaanand ne jyaan soorya chadhaayaa
Jahaalat kaa pardaa uthaa kar dikhaayaa (1

Musalmaan eesaa-ee ban jaate saare
Bichhur jaate aakho se aakho ke taare
Na rahte kahee ke museebat ke maare
Bhatak-te hue phirte rahte bechaare
Daayaanand ne doobane se bechaayaa
Bhavar me phase the kinaare lagaayaa (2

Dayaanand ne ved vidyaa padhaa-ee
Thee so-ee hu-ee duniyaa aakar jagaa-ee
Prabhu ek hai yah hakeekat bataa-ee
Na patthar ko pooje kharee kah sunaa-ee
Dayaanand ne dharma vaidik sikhaayaa
Jo bichhre the un ko gale se lagaayaa(3

Dayaanand agar too

Dayaanand agar too hame na jagaayaa
Jo vedo kaa maarag hame na . bataataa

Taraptee thee gau-e rotee thee vidhavaa
Anaatho bechaaro ka kyaa kuchh pataa thaa(1
Thaa brahmacharya ko jaanataa kaise ko-ee
Jo talvaar ko torkar na giraataa (2
Vah kyaa jaanate the tujhe kaashee vaale
Jo shaastraarth karke unhe na haraataa (3
Dhanya tujhko rishivar dhanya teree himmat
Dayaanand kyaa thaa gajab kaa bhalaa thaa(4

Namkaran & Mundan Sanskar Bhajan

Harsha kaa divas

Harsha kaa divas aayaa hai badhaaee ho badhaaee ho
Yah shubh sandesh laayaa hai badhaaee ho badhaaee ho

Phale phoole yah devee eesh ki kripaa rahe is par
Yah baalak jisne jaayaa hai badhaaee ho badhaaee ho

Ho lambee aayu baalak kee rakhaa hai naam ab jiskaa
Prem se yajya rachaayaa hai badhaaee ho badhaaee ho

Badhaaee de rahaa nandlaal hai parivaar saare ho
Geet gaakar sunaayaa hai badhaaee ho badhaaee ho.

Eesh sagun tum nigun - Prayer

Eesh sagun tum nigun niranjan bin aakar dayaalo
Stuti praarthnaa aru nitya upaasan man mandir maha aa-o

Jagat banaayaa tumne saaraa tum pitu maatu hamaare
Vishva kutumba samaaj hamaaraa shobhan buddhi jagaa-o

Mandir masjid girjaa chhaane khojat tumko haare
Duniyaa jhanjhat jarjar deenaa naath kripaa kar aa-o

Ajya kuchaal ghire andhere phirte jagme maare
Paap bachaay sanehi swaamee aashrai hamko devo.

Tej tathaa bal veeraj ojaa manyu sahan gun aa-we
Yaachan tumse naath karo bhav saagar paar kripaa lo

Bhajans in honour of Aryasamaj

Aryasamaaj hamaaraa hai

Aryasamaaj hamaaraa hai, praano se bhee pyaaraa
hai

Vedo kaa prachaar kare
shuddha aachaar vichaar kare
Maanavtaa se pyaar kare
yah hee is kaa naaraa hai (1

Kaisaa shubh din aayaa hai
sab kaa man harshaayaa hai
Kaam jo kar dikh-laayaa hai
yah jaane jag saaraa hai (2

Om dhwajaa laharaa-enge
vaidik naad bajaa-enge
aage barhate jaa-enge
aaryo ne lal-kaaraa hai (3

Sab ko ved parhaa-enge
sandhyaa havan sikhaa-enge
Satyaartha prakaash se hee
door hove andhiyaaraa hai (4

Amar rahe yaha aarya samaaj
bigree sabhee samwaare kaaj
naandalaal maanavtaa kaa
vah hee ik rakh-vaaraa hai (5

Dayaamai jyoti man mandir

Dayaamai jyoti man-mandir dayaakar jag-magaajaao
Andhere ki pareshaanee niraashaa ko hataajaao

Are jugnoo niraalankaar timtim kar sujhaa isko
Nahee maarag kahee lakhtaa mujhe dhruvpaar
leejaa-o

Cont'd on page 38

Aaryo is desh ke bigree banaanaa

Aaryo is desh ke bigree banaanaa hai tumhe
Ved ki shikshaa pai chalnaa aur chalaanaa hai tumhe

Desh ki ajyaantaa ko door karne ke liye.
Naujavaano dharma ke maidaan me aanaa hai tumhe.

Jyaan ke golo ke lekar haath me aage badho
Paap aur paakhand ke gadh ko giraanaa hai tumhe.

Jitne atyaachaar hote hai dharam ke naam par.
Satyaartha prakaash se un ko mitaanaa hai tumhe.

Pashchimee tahjeeb kee aandhee hai aisee chal rahee
Sabhyataa sanskriti apnee bachaanaa hai tumhe.

Ved ke sandesh ko phailaa-o saare vishva me
Geet yah nandlaal kaa ghar ghar sunaanaa hai tumhe.

Yah Vaidik Dharma Hamaaraa

Yaha vaidik dharma hamaaraa (twice)

Ham hai iske rakshak saare, is par apmaa tan man vaare
Milkar apnaa vrat yah dhaare, yah hi praan hamaaraa(1

Maatribhoomi ki sevaa karnaa, bhakti bhaav se bhete dharmaa
Iske oopar jeenaa marnaa hai kartavya hamaaraa (2

Vair bhaav ko door bhagaakar, chhoo-aa-chhoot kaa bhoot bhagaakar
Mil jaa-o sab gale lagaakar, bahe prem kee dhaaraa(3

Ghar ghar ved mantra sab gaa-o, vedo ko phir se apnaa-o
Rishi updesh kriyaa me laa-o, bane aarya jag saaraa(4

Sabmil rishivar ke gun gaao, hridai beech me unhe bithaao
Unke aage sheesh navaao sudhare janma hamaaraa (5

Namaste shabda hai bhaavan

Namaste shabda hai bhaavan tathaa shishtaa
charan uttam
Karo ko jor kar smitmai prayogo yah namah sattam.

Namah aru te suyogan se namaste vaakya hai bantaa
Binaa kachhu bhed bhaavaa ho namaste sab kare hardam

Karan vakshas-thalee jore jhukaa sir prem vachano se
Hridai mantan sabhee saathaa kare satkaar nishdinham

Yajus adhyaay solah me bateesah mantra as bhaashaa
Sataa mandal chhateesaa rik kahe pancham yahi
nirbhram

Atharvan kaand chathave me trayodash ke pratham
teenaa
Samaa aarchik pratham doojaa pachaa ssoktaa
kahaa yah nam.

Gunee yam baal nachiketaa kathaa me vach namaste
hai
Yudhishthir Bheeshma bhaarat me namaste neha
vidhi ke sam

Lakho baalmikee raamaayan namaste muni vashishthaa
ko
Satee seetaa viraadhaa ko 'namaste raakshaso-ttam'
yam

Suno muni yaajya-valkyaa ko kahee gaargee namaste
hai
Brihad-aaranya upanishadaa yahee satkaar naa kuchh
kram

Namaste bhaagavat me bhee namah keshav kahee kunti
Namahi phir atri raghuveeraa pranaamaa raam tulsee
mam.

Pitar maatar namaste pad ko jhuko pooraa sabhee
vridhan
Baraabar thor jhuk karke kahee adhikaa kahee
parkam.

Dayaalu dayaa kar

Dayaalu dayaa kar dayaa kar dayaa kar
Yaha pyaalaa meraa prem amrit se de bhar

Nivam poorvak havan-sandhyaa karoo mai
Dharam ke liye hee jiyoo au' maroo mai
Rahoo sevaa ke kaamo me mai agarsar (1)

Rahe ektaa man, vachan aur karam me
Atal bhakti ho meree vaidik dharam me
Sadaa ach-chhee sangat me rahne kaa do var (2)

Mujhe jaagate sote ho dhyaan teraa
Vishai-vaasanaa me phase man na meraa
Teraa jaap karne se man ho ekaa-gar (3)

Sach-chaa-ee kee khaatar mai ang-ang kataa-oo
aa-e mrityu to bhee prabhoo muskaraa-o
Dharam desh ke kaam aa-e meraa sar (4)

Mere man ke mandir me prakaash kar do
Avidyaa ya andhakaar kaa naash kar do
Niyat kartaa nandlaal mastak jhukaa kar (5)

Omkaar sabke aadhaar

Omkaar sabke aadhaar
Teree mahimaa aparam paar re
Ant kise na paayaa hai

Yaha sundar sansaar prabhoo jee
    hai teree phul-vaaree.
Phool aur patte hai is me
    pashu pakshee aur nar-naaree, prabhu......

too vaalee jag kaa maalee gun gaaye sab sansaar re
Ant kise na paayaa hai (1)
Is prithivee ko too ne bhagavan
    sooraj girad ghumaayaa.
Ravi shashi nakshatro kaa hai
    sundar chakra chalaayaa, pitaaji ------
Dukh hartaa paalan kartaa
Sab kee too sune pukaar re, ant kise na paayaa hai

Hai sachche aarya veer

Hai sachche aarya veer vah hee
jo kahate hai so karte hai
Mrityu se na vah darte hai
has-has kar phaasee charhate hai (1)
Ghar baar lute parivaar lute
sanmukh beshak ho maut kharee.
Khanjar bhaalaa talvaar top
etam se bhee na darte hai (2)
Itihaas ko roshan karte hai
jo jaan dharma par dete hai
Yah desh dharma ke parvaane
mar kar ke bhee na marte hai (3)
Kaato ko sej samajhte hai
jahar ko samjhe vah amrit.
Preetam ko milne ke khaatir
vah sheesh takee par dharte hai (4)
Sacchche sainik rishi dayaanand ke
dakshin me jaa balidaan hu-e
Vedo ke pujaaree satyavaadee
aage hee aage barhate hai (5)
Gaandhi subhaash aur bhakt-singh
shyaamaaprasad mukarjee se
Shree lekhraam shraddhaa-nand se
nirbhai ho maut se larte hai (6)
Nandlaal yaad kar bandaa ko
padmaa aur veer hakeekat ko
Yuvako kaa khoon ubaltaa hai
itihass jo un kaa parhate hai (7)

Dayaamai jyoti manmandir (From pg. 34)

Pujaaree bhakti pushpo se rijhaataa gandh dravyo se
Vinai meree suno bhagvan tarastaa ab lakhaa-jaao

Nahi laanaa mujhe tumko pitaa sharano paraa tere
Stavo ke prem me guthke khilo deepak jagaa-jaao

Yahaa hai vighna baadhaa-ye bhatak taa jhaariyo
phirtaa
Tatoloo shubhra jyostnaa ko ise pratibodh se aa-o

Deena-bandho ham sabhee

Deena-bandho ham sabhee ko
jyaan bhiksha deejiyee.

Aapake ham putra hai
sab bhaati rakshaa keejiye

Do hame var bhakti apnee
aur sundar dheerataa.

Shakti vidyaa maan dhan yash
aur sachchee veerataa (1)

Desh-sevee ham sahee ho
Satva hee bhaashan kara

Jhooth chal choree luvaa se
nit he eeshvar dare. (2)

Ant ko sab shishu-gano kee
aapse vinatee yahee

He sabhee is yoga jo
shobhit lare bhaarat mahee (3)

He prabhoo aananda daataa
jyaan hamko deejiye

Sheeghra saare durguno ko
door hamse keejiye. (4)

Leejiye hamko sharan me
ham sadaa-chaaree bane

Brahmachaaree dharma-rakshak
veer vrat-dhaaree bane (5).

Utho sone vaalo

Utho sone vaalo jagaane ko aaye
Samaachaar sundar sunaane ko aaye

Bane saare jyaanee padho ved vaane
Tumhe ved vaanee sunaane ko aaye.

Maanav janam vishva bhar me hai uttam
Isee ko saphal ham baaane ko aaye.

Karo kaam par dukh na hove kisee ho
Prabhu-var kee aajyaa bajaane ko aaye

Sabho kaa bhalaa ho sabho kaa bhalaa ho
Yahee bhaav dil me bithaane ko aaye.

Sadaa aap satsang me aaye jaaye
Pratijyaa sabhee se karaane ko aaye.

Rachaayaa hai utsav sabhee aaryo he
Avashya hee padhaaro bulaane ko aaye.

Mahotsav kee shobhaa tumhee se barhegee
Yah sandesh ghar ghar sunaane ko aaye.

Bano aarya khud!

Bano aarya khud aur jahaa ko banaado
jo kahte ho duniyaa ko karke dikhaado.
Prabhu ek hai ved hai uskaa vaanee
Yah paigaam svaamee kaa ghar ghar sunaado (1)
Na rishiyo kee tahjeeb mit jaa-e veero
mitaaye jo isko unhe tum mitaa do.
Hasaa-o na duniyaa ko lar-larke-naahak
samaajo me ulfat kee gangaa bahaado (2)
Bhatakte bahut tishnaalay phir rahe hai
'Musaaphir' unhe jaame-bahdat pilaadoo
Jahaalat kee deevaar ab tak kharee hai
utho aur use bekho-bum se hilaa do. (3)

.oOo.

Poojaniya prabhoo hamaare

Poojaneeya prabhoo hamaare bhaav ujjval keejiye
Chhor deve chhal kapat ko maanasik bal deeiye

Ved kee bole richaa-e satya ko dhaaran kare.
Harsha me ho magna saare shok saagar se tare.

dik j
Ashvamedhaa/ rachaa-e yaya par-upkaar ko
Dharma maryaadaa chalaa kar laabh de sansaar ko

t
Niya shraddhaa bhakti se yajyaadi sab karte rahe.
Rog peerit vishva ke santaap sab harte rahe.

Kaam-naa mit jaa-e man se paap atyaachaar kee
Bhaavanaa-e poorna hove, yajva se nar-naari kee

Laabha-kaaree ho havan har praana-dhaaree ke liye
Vaayu jal sarvatra ho shubha gandha ko dhaaran kiye.

Svaartha bhaav mite hamaaraa prem-path vistaar ho
Idanna mama kaa saarthak pratyek me vyavhaar ho

Haath jor jhukaa-e mastak vandanaa ham kar rahe
Nath karunaa roop karunaa aapkee sab par rahe.

Prabhoo man ke Mandir.

Prabhoo man ke mandir me hee paa-i-egaa
Use dhoodhane ho kahaa jaa-i-egaa.

Yaha chaand aur sooraj prithivee sitaare
Lagaataar chalte hai jiske sahaare
Use zarre zarre me hee paa-i-egaa (1)

Jo bheetar ke pat khol andar ke kar band
Milenge tujhe nishchai hee sachcheedaanand.
Kathin hai yaha manzil na ghab-raa-i-egaa (2)

Sabhee ka ek vo hee sahaaraa
Rachaa jisne sundar yaha sansaar saaraa.
Usee kee sharan me hee sukh paa-i-egaa (3)

continued on page 43

Bhajan to hoist Om Flag

Yaha Om kaa jhandaa aataa hai
sone vaalo jaag chalo.

Lekar ugate ravi kee laalee
Lenitya vasantee hari-yaalee

Yaha lahare lele aataa hai
dhartee ke jaage bhaag chalo (1)

Jab golee gole barsenge
yaha sir kat-kat kar sarsenge

Ham maut ke bheeshan aangan me
has-has khelenge phag chalo (2)

Parvat ko kaha do nam jaa-e.
saagar ko kaha do tham jaa-e

Yaha ek banaane duniyaa ko
umaraa hai anuraag chalo (3)

Ab prem sachaa-ee vidyaa kaa
yaha jhandaa laharaayaa baakaa

Himsaa paakhand avidyaa se
kaha do ki ab tum bhaag chalo (4)

Akhiyaa hari darshan

Akhiyaa hari darshan kee pyaasee.

Dekhan chaahat us rasnidhi ko nishidin rahat udasse

Paat paat me jinkee leelaa bhakta hridai ke vaasee

Jinke prem phand me phans-kar chhoot jaa-e sab

phaasee.

Poojaniya prabhoo hamaare

Poojaneeya prabhoo hamaare bhaav ujjval keejiye
Chhor deve chhal kapat ko maanasik bal deeiye.

Ved kee bole richaa-e satya ko dhaaran kare.
Harsha me ho magna saare shok saagar se tare.

dik j
Ashvamedhaa/ rachaa-e yaya par-upkaar ko
Dharma maryaadaa chalaa kar laabh de sansaar ko

t
Niya shraddhaa bhakti se yajyaadi sab karte rahe.
Rog peerit vishva ke santaap sab harte rahe.

Kaam-naa mit jaa-e man se paap atyaachaar kee
Bhaavanaa-e poorna hove, yajva se nar-naari kee

Laabha-kaaree ho havan har praana-dhaaree ke liye
Vaayu jal sarvatra ho shubha gandha ko dhaaran kiye.

Svaartha bhaav mite hamaaraa prem-path vistaar ho
Idanna mama kaa saarthak pratyek me vyavhaar ho

Haath jor jhukaa-e mastak vandanaa ham kar rahe
Nath karunaa roop karunaa aapkee sab par rahe.

Prabhoo man ke Mandir.

Prabhoo man ke mandir me hee paa-i-egaa
Use dhoodhane ho kahaa jaa-i-egaa.

Yaha chaand aur sooraj prithivee sitaare
Lagaataar chalte hai jiske sahaare (1)
Use zarre zarre me hee paa-i-egaa

Jo bheetar ke pat khol andar ke kar band
Milenge tujhe nishchai hee sachcheedaanand.
Kathin hai yaha manzil na ghab-raa-i-egaa (2)

Sabhee ka ek vo hee sahaaraa
Rachaa jisne sundar yaha sansaar saaraa. (3)
Usee kee sharan me hee sukh paa-i-egaa
continued on page 43

Bhajan to hoist Om Flag

Yaha Om kaa jhandaa aataa hai
sone vaalo jaag chalo.

Lekar ugate ravi kee laalee
Lenitya vasantee hari-yaalee

Yaha lahare lele aataa hai
dhartee ke jaage bhaag chalo (1)

Jab golee gole barsenge
yaha sir kat-kat kar sarsenge

Ham maut ke bheeshan aangan me
has-has khelenge phag chalo (2)

Parvat ko kaha do nam jaa-e.
saagar ko kaha do tham jaa-e

Yaha ek banaane duniyaa ko
umaraa hai anuraag chalo (3)

Ab prem sachaa-ee vidyaa kaa
yaha jhandaa laharaayaa baakaa

Himsaa paakhand avidyaa se
kaha do ki ab tum bhaag chalo (4)

Akhiyaa hari darshan

Akhiyaa hari darshan kee pyaasee.

Dekhan chaahat us rasnidhi ko nishidin rahat udaase

Paat paat me jinkee leelaa bhakta hridai ke vaasee

Jinke prem phand me phans-kar chhoot jaa-e sab

phaasee.

Sur kee gati

Sur kee gati mai kyaa jaanoo

Ek bhajan karnaa jaanoo.

Marma bhajan kaa bhee ati gaharaa

Usko bhee mai kyaa jaanoo

Prabhu prabhu prabhu karnaa jaanoo

Nayano jal jharnaa jaanoo (1)

Phulvaaree lakh log jagat ke,

Jhoom-jhoom kar gaate ho.

Jab poochhaa kyaa kuchh paate ho

Bol uthe mai kyaa jaanoo (2)

Phulvaaree ke phool jhool kar

Jiske gun nit gaate hai.

Uske gun gaa-oo to poochhe

Kyo, kyo, kyo ? mai kyaa jaanoo (3)

.oOo.

Shivaraatree Bhajan (Rishi Bodh)

Shivaraat raatree aa-ee sandesh rishi kaa laa-ee

Shivamandir me chaturdashee ko
chooche se huaa bodh rishi ko

Eeshvar chintaa chhaa-ee (1)

Mitee na thee abhi chintaa man kee
hu-ee achaanak maut bahan kee

Mool uthee gaha-raaee (2)

Mrityu ke sang yuddha karan ko
ghar se chale eesh khojan ko

Preet prabhu sang laa-ee (3)

Netra heen virjaanand svaamee
rishi ke the guru antar-yaamee

Jisne shikshaa paa-ee (4)

Jaakar isne desh jagaayaa
aapas kaa mat-bhed mitaayaa

Vish peekar karee bhalaa-ee (5)

Sakal jagat ko aarya banaa-o

Sakal jagat ko aarya banaa-o karke dharma prachar

Aarya purush ho aarya ho naaree aarya sakal parivar

Satya grahan me tatpar ho-e chhor asatya vichaar

Ek prabhu kaa kare sab sumiran taj ke sab aadhaar

Prem sudhaa me snaan kare sab taj ke bhed vichar
Isee me shubh hai isee me shaanti isee me sukh kaa sar

Deevaalee - bhajan (Rishi-nirvaan)

Aaj rishi deevaalee aa-ee

Aaj rishi deevaalee aa-ee,
sab mil kar rahee manaa-ee.

Dayanand see ved bataaye
dharma dee khaatar praan gavaa-ye
Kar bhale desh bhalaa-ee (1)

Yaadgaar ham rishi manaave
rishi kahe upkaar kamaave
Ju-aa na khele ko-ee (2)

Deevaalee bud-dhimaan manaade
moorh daulat juye gavaade
Kaisee hosh bhalaa-ee (3)

Nal raaje ne khelayaa ju-aa
desho chhor videshee hu-aa
Jaan dukhaa vich paa-ee (4)

Dekho paandav juye bhulaaso
juaa khel pichho pichha-taane
Dar-dar thokar khaa-ee (5)

Rishiyo dee aulaad kahaade
juaa khelan paap kamaade
Saaree akal gavaa-ee (6)

Juye vaalaa jit na paave
jo khele so hariyaa jaave
khooba taraha ajmaa-ee (7)

Rishi dayaanand aan jagaayaa
seedhe maarag sab noo paayaa
Chhoro sabhee buraa-ee (8)

Dheer jano ne aakh sunaayaa
vaidik maarag rishi bataayaa
Vidyaa rahee sunaa-ee (9)

Aartee Bhajan

Om jai jagdesh hare, svaamee jai jagdeesh hare

Bhakt jano ke sankat kshan me door kare.

Jo dhyaave phal paave dukh vinshe mankaa

Sukh sampati ghar aave kasht mite tan kaa

Maat pitaa tum mere sharan gahoo kiskee
Tum bin aur na doojaa ass karo jiskee.
Tum pooran paramaatmaa tum antaryaamee.

Paar-brahma parameshvar tum sabke svaamee.

Tum karunaa ke saagar tum paalankartaa.

Deen dayaalu kripaalu kripaa karo bhartaa.

Tum ho ek agochar sab ke praan-pati

Kis vidhi miloo dayaamai tum ko mai kumtee

Deen-bandhu dukh-hartaa tum rakshak mere

Karunaa hast barhaa-o dvaar paraa tere.

Vishai vikaar mitaa-o paap haro devaa

Shraddhaa bhakti barhaa-o santan kee sevaa.

ADVERTISEMENT:

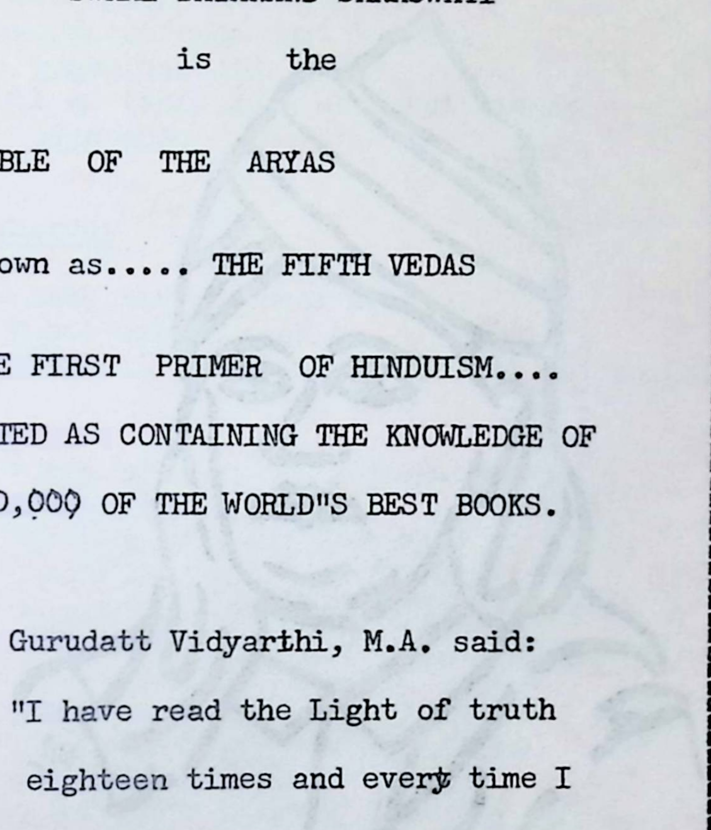

LIGHT OF TRUTH
of
SWAMI DAYANAND SARASWATI

is the

BIBLE OF THE ARYAS

known as..... THE FIFTH VEDAS

THE FIRST PRIMER OF HINDUISM....

RATED AS CONTAINING THE KNOWLEDGE OF

240,000 OF THE WORLD"S BEST BOOKS.

** Gurudatt Vidyarthi, M.A. said:

"I have read the Light of truth eighteen times and every time I read it I discovered new knowledge"

**NO ARYAN HOME IS COMPLETE WITHOUT A COPY OF THE LIGHT OF TRUTH.

** And NO ONE KNOWS ANYTHING UNTIL HE HAS READ A LIGHT OF TRUTH.

Guyana Arya Pratinidhi Sabha
P.O. Box 667, W,309 Murray Street,
Georgetown. Phone, 64110

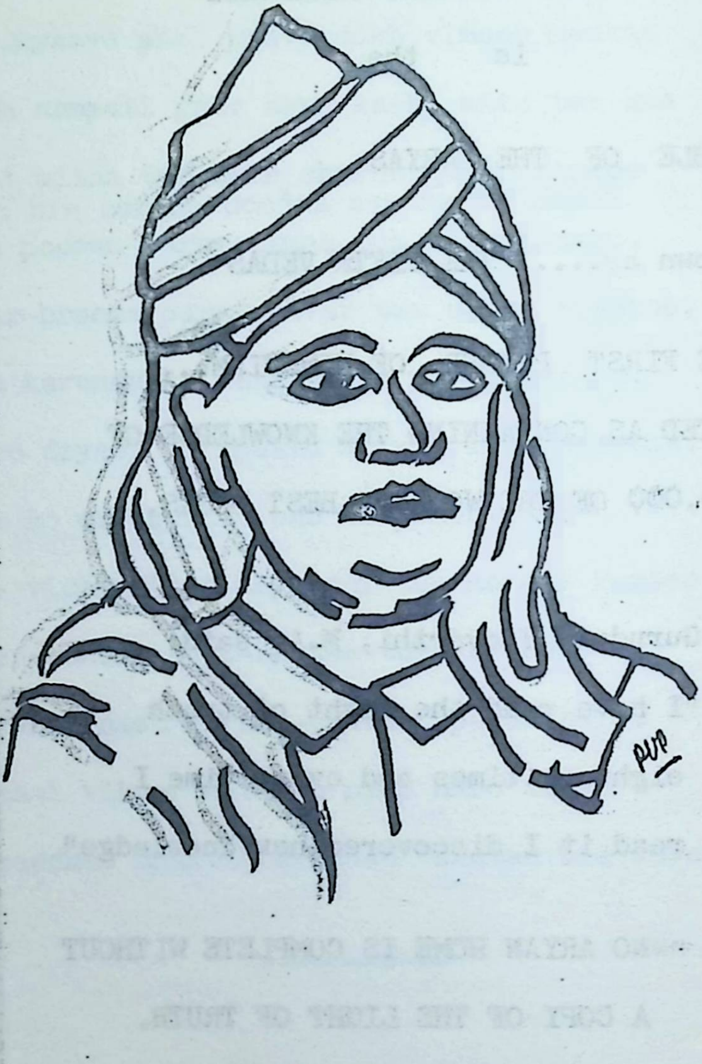
PVP

O GUYANA O GUYANA!!

Dhan Daulat aur phal phulon se
  is duniye hai khub pyaraa,
Phir bhi oosmei sabse sundar
desh hamara hai nyaraa.
Swapanose waha jari hui hai
  pyara hai uske jan.
Dil ke takat garh uska hai himmat
  uska shan

Chorus:

Talash karo tu nahi melaga,
Tumhai nirala desh ho.
O Guyana! O Guyana! Deshon mei sartaj ho!

Kheton mei hariyali, jiska ban mei
  Chiryan gati hai
Punj punj me gunje bihangam
  titaliyan pankhati hai.
Phulon sebhi karoo madhu man bhar
  phulon me sogati hai.......... Chorus..

Kis desh ki bhati nadiyan lekar
  himmat ka laharan,
Kis desh ka parbat me ham gari daulat
  ki shan,
Kis desh megh garjatta chaati
  mein har tarat tuphan .... Chorus...

Dhanon mei sona jo sechay ganme
  jiski chandi,
Kala pila gora bhura sab larkan
  bankiyadi.
Dharam sikata prema mitra meljol
  abadi;........... Chorus ....

ओ३म्

वेद और कुरआन

तुलनात्मक - अध्ययन

कुरआन

वेद

क्रान्ति प्रकाशन

પૂજ્ય સ્વામી સચ્ચિદાનંદજી

ને સાદર સમીક્ષાર્થે

[illegible]

૨.૪.૯૨

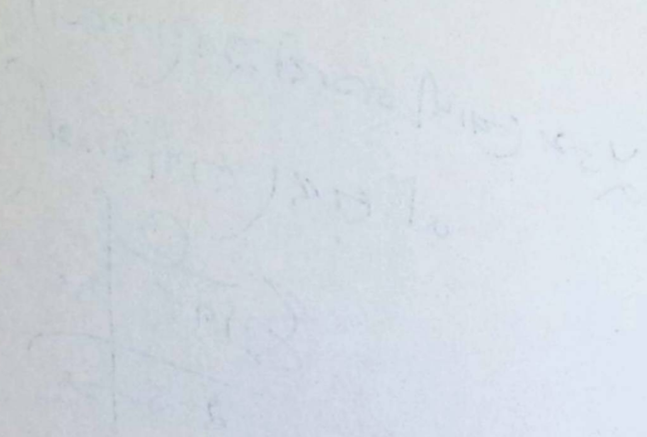

"वेद और कुरआन"

वेद—अनादि काल से मानवता, जन कल्याण, विज्ञान, विवेक व बुद्धि के मार्ग प्रशस्त करते रहे हैं। वेद-वाणी किसी समुदाय, जाति या सम्प्रदाय विशेष की धरोहर नहीं–सृष्टि के प्रत्येक प्राणी का वेद पर उतना ही अधिकार है जितना किसी पुत्र का अपनी जन्म दायिनी माता के स्तन-पान पर ! वेद को केवल पुस्तकालयों तक सीमित न रखकर हमें उसे जन-जन तक पहुँचाना होगा। केवल यह कह कर सन्तोष कर लेने से काम नहीं चलेगा कि वेद महान है—अपितु उसके लिए हमें कुछ आचरण में करके दिखाना होगा—यही सच्चा वेद प्रेम होगा।

कुरआन—१५०० वर्षों में कुरआन ने इस्लामी मजहबी ग्रन्थ के रूप में धरती के एक चौथाई भाग पर अपना अधिकार कर लिया है। कुरआन वास्तव में वैदिक ग्रन्थो पर आधारित वेदों का अरबी सहायक मात्र होता यदि माता खदीजा बानो का निधन न हुआ होता—किन्तु होनी को कौन टाल सका है-कुरआन के कुछ अंश वेद पर आधारित हैं। उन पर हम सब विश्वास करें किन्तु कुरआन की जो बात तर्क विज्ञान बुद्धि की कसौटी पर खरी नहीं उतरती उसे मानना आवश्यक नहीं। यही बात वेद के लिए भी आवश्यक है।

हम वेद और कुरआन दोनों को तर्क विज्ञान व बुद्धि की कसौटी पर रखें यही युग की मांग है।

—कुंवर आनन्द "सुमन"

मानवता, विज्ञान, विवेक

क्रान्ति प्रकाशन

★ प्रकाशक—
(श्रीमती) सरस्वती सिंह (संचालक)
क्रान्ति प्रकाशन (वैदिक क्रान्ति अभियान)
तपोवन आश्रम, देहरादून–२४८००८ दूरभाष : २६८६७

★ वेद और कुरआन (तुलनात्मक–अध्ययन)

★ लेखक—
डाक्टर कुंवर आनन्द "सुमन"

★ सर्वाधिकार लेखकाधीन सुरक्षित

★ द्वितीय संस्करण (आर्ष राष्ट्र भाषा)

★ मकर संक्रान्ति (पौष शुक्ल ४ संवत २०४२)

★ सहयोग—छः रुपये मात्र

★ हमारा अब तक प्रकाशित साहित्य—
(१) वैदिक सूक्ति सुमन (२) मैंने इस्लाम क्यों छोडा (३) क्रान्ति के स्वर (४) सामाजिक स्वर्ग (५) इस्लाम में नारी (६) वेद और कुरआन (तुलनात्मक अध्ययन) (७) सिंह गर्जना।

★ मुद्रक—
'अंकन'
३४, करनपुर, देहरादून–२४८००१

क्रान्ति सूर्य – आनन्द सुमन

हिमगिरि से इन्दु सरोवर तक ऊर्जा श्री के दो कूल चले।
उनमें गीर्वाण-सभ्यता के वहते संस्कार समूल चले ॥
उस सम्यक कृति की संस्कृति ने अविकर्लायत्व की थाप थपी :
वन गये अभेय अस्मिता ले, हम पारमार्थिक और परम्तपी ॥
पर जव हम स्वत्व विभ्रमित हो, परकीय वृति के बने दास।
लज्जित कर दिया हिमालय को, ओ इन्दु सिन्धु का किया ह्रास ॥
हम अन्तस्हीन विवश विचलित कुत्सा से तभी हुए कुण्ठित।
इतिहास और भूगोल सहित व्यक्तित्व-कृतित्व हुआ लुण्ठित ॥
तव कोई विवस्वान करता, निज मन्वन्तर का शिलान्यास।
सस्कृति की सुमना वालियों से जन में भरता "आनन्द" लास ॥
उस विवस्वान के मनु के तुम कश्यप के क्रान्त आर्य नन्दन।
सह, ओज़ मन्यु के अग्रदूत हिन्दुत्व धीर "आनन्द सुमन" ॥
है छत्रसाल की म्लेक्ष-क्षरण की छवि उरस्क प्रस्कन्धों में।
तुम आने लगे अर्थ बन कर अव तो भूषण के छन्दों में ॥
राणा की संकल्प ध्वनि हो तुम हो वन्दा के अभिनन्दन।
वलिदानी गुरुओं की गति में तुम शिवा शक्ति के निर्बंधन ॥
तुम हो प्रताप हित पृथ्वीराज, के क्रान्ति पत्र की भाषा हो।
तुम पराभूत मन के क्रान्तिक परिवर्तन की परिभाषा हो ॥
परिवर्तंन शब्द परिधिगत है पद निचय परावर्तन अलीक।
आनन्द सुमन तुम बांबी से धुल कर निकले हो बाल्मीक ॥

१९-११-८३
नागरिक अभिनन्दन
आर्य समाज सीतापुर.

"सोम दीक्षित"
(सीतापुर उ०प्र०)

प्रस्तावना

प्रिय डाक्टर आनन्द सुमन जी द्वारा लिखित "वेद और कुरआन" नामक पुस्तक की पांडुलिपि पढ़ने को मिली। पुस्तक वेद और कुरआन के तुलनात्सक समालोचना दृष्टि से लिखी गई है।

लेखक स्वयम् जन्म जात, अध्ययन शील मुस्लमान रहा है। अतः इस्लामी वातावरण में रह कर भी वेदादि शास्त्रों का स्वाध्याय में रूचि का होना लेखक के पुर्नमिलन (शुद्धि) का कारण बना। पुस्तक वेद और कुरआन की तुलनात्मक समीक्षा के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

लेखक ने कुरआन के उन अंशों को वेद मन्त्रों से तुलना कर यह सिद्ध कर दिया है कि कुरआन ईश्वरीय ज्ञान (इलहाम) नहीं हो सकता उसकी शिक्षाऐं न तो सार्व भौम हैं और न मानव को शान्ति का मार्ग दिखलाती है।

इस बात को सिद्ध करने में लेखक ने जो निष्पक्ष, निर्भीक और साहस पूर्ण कदम उठाया है वह स्तुत्य है।

मुझे आशा है कि इस लघु ग्रन्थ के प्रकाशन के बाद सभी मतों के लोगों को वेद और कुरआन के तुलनात्मक अध्ययन का अवसर मिलेगा।

ओ३म् प्रकाश शास्त्री
(विद्या भास्कर)
शास्त्रार्थ महारथी
खतौली (मुजफ्फरनगर)

अपनी बात

पाठक वृन्द !

वन्देमानवम्–नमस्ते

क्रान्ति प्रकाशन का यह दशम् पुष्प आपके दिव्यकरों में है ! सीमित साधन एवं अनेको संघर्षों से जूझते हुये हम साहित्य साधना के निर्भीक, निष्पक्ष एवं जन कल्याणकारी शोध प्रबन्धों को निरन्तर आपको समर्पित कर रहे हैं, हमारे सम्मुख अर्थाभाव का संकट प्रथम है, किस प्रकार हम कार्य चला रहे हैं यह हम ही जानते हैं फिर भी हमें तो निरन्तर संघर्ष करना ही है।

उत्तिष्ठित जागृत प्राप्य वरान्निबोधत
(उपनिषद्)
वयम् राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः (यजुर्वेद)

यही सूक्तियां हमारी प्रेरणा की आधार हैं, इसी प्रेरणा के फलस्वरूप हम अपने कार्य को निरन्तर करते जा रहे हैं ! यदि आपका समुचित सहयोग मिले तो कार्य उत्तरोत्तर गतिमान हो सकेगा ?

वेद और कुरआन (तुलनात्मक अध्ययन) विगत् वर्ष चर्चा का विषय रहा, कारण कुछ मतान्ध एवं संकुचित विचारों वाले व्यक्ति सत्य को पचा नहीं पाते, फल स्वरूप कई बड़े नेताओं ने इस विषय में अपनी बुद्धिमता का परिचय दिया अभियोग, हमले व प्रतिबन्ध का क्रम चला किन्तु सूर्य पर आई घनघोर घटायें कब तक ठहरतीं। सत्य ने ज्योति फैलाई कालिमा मिट गई।

डा० सुमन विवादस्पद व्यक्ति बन गये हैं, उनकी पुस्तकों ने समाज में एक क्रान्ति उत्पन्न की है, हमारा उद्देश्य भी समाज में वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात् करना ही है किन्तु हम कभी भी मारधाड़, रक्तपात या अनैतिक क्रान्ति के पक्षधर नहीं रहे, न हैं ! अतः हम मात्र वैचारिक क्रान्ति को ही प्राथमिकता देते हैं। क्रान्ति होगी यह हमारा अटल विश्वास है, मानव समाज क्रान्तदर्शी बनेगा यह भी ध्रुव सत्य है।

हम अपने उद्देश्य में कहां तक सफल हो रहे हैं, यह परिणाम धीरे-धीरे हमारे सम्मुख आ रहे हैं, डा० सुमन के शब्दों में—

क्रान्ति १९४७ में नवयौवना थी अतः तीव्र गति से आई किन्तु ३८ वर्षों में अनेकों तथाकथितों ने उसके शरीर को नोचा खसौटा है अतः वह जर्रर अवस्था में है। क्रान्ति आयेगी अवश्य आयेगी किन्तु तीव्र गति से नहीं—धीरे धीरे डंडा टेक कर आयेगी।

इन शब्दों में एक विश्वास है उसी विश्वास का रूप धारण किया है वैदिक क्रान्ति अभियान ने जो द्रुत गति से डा० सुमन के नेतृत्व में प्रवाहमान है। इस विश्वास को आप मनसा, वाचा कर्मणा सहयोग देकर और दृढ़ बना सकते हैं।

तेरा वैभव अमर रहे मां हम दिन चार रहें न रहें, हम निरन्तर संघर्षरत् रहें यही परमेश्वर ओ३म् से प्रार्थना है, आप हमें सहयोग दें जिससे हम कार्य को दोगुनी शक्ति से करें।

घबरायें नहीं संकट तो सत्य मार्ग के ही साथी हैं फिर कोई भी कार्य बिना संघर्ष के आनन्द नहीं देता—

व्युह में घिर कर जवानी क्रुद्ध है।
युद्ध है अभिमन्यु यह तो युद्ध है॥

जुल्म भी सहना दुआ भी देना
वो बेबसी का गया ज़माना।
गर हैजुर्रत गिराओ बिजली
बना रहे हैं हम आशियाना॥

आशा है आप निरन्तर संघर्षरत् रहेंगे व हमारा सहयोग करते रहेंगे क्रान्तिकारी शुभकामनाओं सहित,

नीड़ के नव निर्माण की कल्पना में—

आपकी बहन—
(श्रीमती) सरस्वती सिंह
संचालक क्रान्ति प्रकाशन

क्रान्ति प्रकाशन

वेद आर्ष संस्कृति, मानव धर्म एवं सत्य विज्ञान का प्रेरणा स्रोत हैं अनादि काल से वैदिक संस्कृति विश्वास रूप में सकल बुद्धि वादी समाज का मार्ग दर्शन करती रही है। वेद एवं वैदिक संस्कृति को महाभारत के पश्चात् जन्माधिकार वाद, पाखण्ड वाद, चमत्कार वाद एव अज्ञान का ग्रहण लगा, किन्तु दयानन्द ने वेद का पुनर्उद्धार कर मानव समाज को सत्य, मानवता, विज्ञान एवं विवेक का मार्ग दर्शाया अनेकों जड़ बुद्धि वादियों ने वेद की समाप्ति की औपचारिक घोषणायें तक कर डालीं, किन्तु आज हम गर्व से कह सकते हैं कि वैदिक ज्ञान संसार का प्रथम स्वतः प्रमाण एव प्राणी मात्र का कल्याण कारक ज्ञान है, इसी ज्ञान से प्रत्येक समस्या का समाधान खोजा जा सकता है। आज के इस विध्वंसकारी वातावरण में वेद के मर्म को समझे विना हम अन्धकार की दल दल से निकल नहीं पायेंगे। वेद ज्ञान किसी सम्प्रदाय, वर्ग, जाति विशेष की वपौती नहीं—वेद ज्ञान पर मानव मात्र का उतना ही अधिकार है जितना प्रत्येक शिशु का अपनी जन्म दायिनी मां के स्तन पान पर।

वेद भी मां हैं जो प्रेरक, पालक एवं अनेकों कल्याण करने वाली है, आवश्यकता है हम इस ज्ञान को समझें, अन्यों को समझाएं—यही सच्चा वेद प्रेम होगा।

आज के अन्धकार वादी, पाखण्ड वादी एवं सम्प्रदाय वादी मानवता के शत्रु सम्प्रदाय एवं मजहबों को सत्य की कसौटी पर कस कर वेद से तुलना कर हमें मानव मात्र को सत्य की ओर प्रेरित करना होगा। इसी स्वरूप एवं उद्देश्य पूर्ती के निमित्त क्रान्ति प्रकाशन की स्थापना की जा रही है। ३० अगस्त १९८३ को क्रान्ति प्रकाशन की रूप-रेखा बनी प्रथम प्रकाशन के रूप में वेदज्ञान पर आधारित "वैदिक सूक्ति सुमन" वेद मंत्रों का काव्यानुवाद प्रकाशित हुआ। उसके पश्चात् (२) सामाजिक स्वर्ग (३) इस्लाम क्यों छोड़ा, (४) वेदामृत (पत्रक) (५) क्रान्ति क्यों (पत्रक) (६) क्रान्ति के स्वर (७) वेद और कुरआन एक तुलनात्मक अध्ययन, (८) इस्लाम में नारी (९) सिंह गर्जना के

रूप में प्रकाशन ने अपनी छवि प्रस्तुत की। अनेकों मानवों ने हमारे सत् प्रयासों को सराहा, हमें आत्म बल मिला और हम निरन्तर संघर्ष रत हैं। हमारा कार्य प्रगति मान हो रहा है। अब हम प्रयास कर रहे हैं "क्रान्ति चेतना" मासिक पत्रिका को प्रकाशित करने की एवं प्रत्येक दो माह में एक क्रान्तिकारी लघु ग्रन्थ आपको सौपने की–हमारे इस स्वप्न को साकार करने में आप महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। हमें विश्वास है कि आप आर्य संस्कृति, मानव कार्य के प्रचार प्रयास हेतु अपना अमूल्य सहयोग हमें प्रदान करेगें एवं हम निरन्तर संघर्ष करते रहेंगे।

सहयोग के प्रकार—

(१) साधारण सहयोगी सदस्य—ग्यारह रुपये एवं इससे अधिक सहयोग देकर आप हमारे सहयोगी बन सकते हैं।

(२) सहयोगी सदस्य—इक्कावन या इससे अधिक सहयोग देकर आप हमारे सहयोगी बन सकते हैं।

(३) विशेष सहयोगी सदस्य—एक सहस्त्र रुपये या इससे अधिक सहयोग देकर आप हमारे सहयोगी बन सकते हैं।

प्रत्येक सहयोगी का नाम दानदाता सूची में प्रकाशित किया जायेगा। प्रत्येक सहयोगी प्रकाशन से कभी भी आय व्यय देखने की मांग कर सकेगें। प्रत्येक सहयोगी को उनके सहयोग के आधार पर साहित्य निशुल्क प्रेषित किया जायेगा। सहयोगी यदि प्रकाशन साहित्य मंगवाऐंगे तब उन्हें २०% छूट साहित्य पर दी जायेगी। "क्रान्ति चेतना" के वार्षिक एवं आजीवन सदस्य के साथ भी यही नियम लागू होंगे।

मानवता विज्ञान एवं विवेक के प्रचार प्रसार हेतु आपका सहयोग निवेदित है आपके विचारो एवं सहयोग की हमें प्रतीक्षा रहेगी। साथ ही आप वैदिक क्रान्ति अभियान में भी सहयोग कर सकते हैं। अपने ग्राम या नगर में शाखा बना कर, सहयोगी बनाकर आशा है हमें—

—आपका सहयोग मिलेगा—

—संचालक

———

इस्लाम क्या है ?

इस्लाम का उदय अरब के मक्का व मदीना क्षेत्र में १५०० वर्ष पूर्व हुआ । इस्लाम का प्रारम्भिक और मौलिक अर्थ है नम्रता, विनती आदि अरब के साहित्य में यह विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है । इसके दो विशेष अर्थ होते हैं, इस्लाम का एक अर्थ है आज्ञा पालन, हुक्म मानना, झुक जाना, आत्म समर्पण पूर्ण रूप से किसी दूसरे के लिए हो जाना, त्याग स्वेच्छा पूर्वक अधीनता स्वीकारना । इस्लाम धर्म का नाम इस्लाम इसलिए पड़ा कि यह शिक्षा देता है कि हम सब एक अल्लाह के हो जायें । किन्तु जिसने इस्लाम को आरम्भ किया उसी ने एक अल्लाह के दूत के रूप में अपनी उपासना की कड़ी को जोड़ दिया । वास्तव में इस्लाम तौहीद (एकेश्वर वाद) का उपासक था किन्तु मौहम्मद साहब ने तौहीद के साथ स्वयं को भी जोड़ दिया ।

लाइ लाहा इल्लल्लाह ! मौहम्मदुर रसुलुल्लाह ! अर्थ–नहीं है कोई पूजा के योग्य सिवा उस अल्लाह के जो इस सारी दुनिया का स्वामी है । और हजरत मौहम्मद उसके सच्चे रसूल हैं । बस यहीं से इस्लाम अपने को वेद मार्ग से पृथक करता चला गया, वेद का सिद्धान्त है—

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति ।

अर्थ—परमेश्वर एक है । विद्वान उसे अलग अलग नाम से पुकारते हैं (या जानते हैं ।)

किन्तु कुरआन के रचियता हजरत मौहम्मद ने कहा कि मैंदाने हश्र (कर्मफल का स्थान) में जब कर्म फल मिलेगा तब जो भी मेरी ध्वजा के नीचे आ जायेगा मैं उसी की सिफारिश करके उसे क्षमा करा कर मुक्त करा दूंगा व स्वर्ग दिला दूंगा । किन्तु वैदिक धर्म की मान्यता है कि व्यक्ति कोई भी हो वह जैसे कर्म करेगा उसे वह तो भोगना ही पड़ेगा । कर्म फल से कोई भी मुक्ति नहीं दिला सकता । अतएव अच्छे कर्म ही करो ।

इस्लाम शब्द का दूसरा अर्थ है शान्ति, एकता संरक्षण । यहां यह स्पष्ट कर दें कि इस्लाम का शाब्दिक अर्थ शान्ति है, व्यवहारिक रूप में

तो इस्लाम केवल तलवार के बल पर फैला है इस्लाम के आरम्भ में ही मौहम्मद साहब ने केवल युद्ध ही किये जिस प्रकार भारत में बुद्ध ने शान्ति व सच्चाई के विचारों से बौद्ध धर्म को फैलाया वैसा इस्लाम में कुछ देखने को नहीं मिलता।

इस्लाम में आरम्भ से ही अशान्ति को बढ़ावा दिया यहुदियों व मुसलमानों के फसाद यही नहीं शिया व सुन्नी फसाद भी हजरत मौहम्मद के जीवन काल में ही आरम्भ हो गये थे जो आज तक यथावत चल रहे हैं। आतताई अकबर औरंगजेब काला पहाड़ व बहादुर शाह जफर व वर्तमान में ईरान का खुमैनी किस प्रकार से अत्याचार करते रहे हैं व कर रहे हैं। इस्लाम के प्रचार की जो योजनायें बनाई गई वह भी हमारी नजरों से छिपी नहीं हैं। यह बात दूसरी है कि आज हमें जो इतिहास पढ़ाया जाता है वह सच्चाई का अश मात्र भी तो नहीं है, हमें झूठा इतिहास पढ़ा कर हमें पथ भ्रष्ट करने की योजना जो वर्षों पूर्व बनी थी वह आज भी यथावत है। इस्लाम वास्तव में कोई धर्म नहीं धर्म का अर्थ होता है धारण करने योग्य जो हो वही सबसे बड़ा धर्म है! मानवता व प्राणियों का कल्याण कारक सन्देश धर्म हो सकता है ! किन्तु इस्लाम तो मात्र एक राजनैतिक षडयन्त्र है। इस्लाम मानवता को नहीं मानता केवल एक बात मानता है।

इस्लाम में दो प्रकार के स्थान होते हैं। मिल्लत व कुफ्र मिल्लत =जहां इस्लामी शासन हो इस्लाम के अनुयायी बहुसंख्यक हो व कुफ्र=जहां इस्लाम को न मानने वाले अधिक हों

या-यों कहें दारूक हरब=इस्लाम विरुद्ध स्थान

दारूल इस्लाम = इस्लामी स्थान

किन्तु वेद तो प्राणी मात्र का कल्याण ही नहीं चाहता अपितु अपने अनुयाईयों को कल्याण करने की शिक्षा भी देता है। इस्लाम एक आन्दोलन है जो मात्र सारे विश्व में इस्लामी शासन बनाने का सपना देख रही है ऐसे अमानवीय आन्दोलन का विरोध करना प्रत्येक मानव का परम् कर्म है। इस्लाम के १५०० वर्षों के इतिहास में हमने एक भी बात धारण करने योग्य या कल्याण कारक नहीं पाई। इस्लाम ने मात्र साम्प्रदायिकता को बढ़ावा ही दिया है। वास्तव में इस्लाम वैदिक

धर्म का ही अंग होना चाहिए था इस्लाम के आरम्भ में वैदिक मान्यताऐं ही मानी जाती थी किन्तु धीरे धीरे इस्लाम ने एक जुनून वादी रूख अपना लिया जो आज तक चल रहा है।

इस्लाम केवल मक्का मदीना के क्षेत्रों के लिए ही था किन्तु अनावश्यक रूप से इस्लाम को अन्यत्र भी फैलाया गया किन्तु तर्क या शास्त्र के आधार पर इस्लाम कहीं भी नहीं फैला। इतिहास साक्षी है इस्लाम तलवार या दौलत के बल पर ही फैला अन्य साधनों में स्वर्ग का लालच, नरक का भय बहु पत्नि प्रथा का लालच व अन्य कारण रहे हैं।

इस्लाम के अनुयायी केवल स्वर्ग नरक के चक्कर में ही हैं। फिर मुल्ला मौलवी बचपन से ही बच्चे के विचारों को कट्टर बना देते हैं कि वह तर्क की बात को सुनना भी पसन्द नहीं करता। कट्टरता की सीमा होती है किन्तु इस्लाम में तो इस्लाम विरोधी को कत्ल करने तक के आदेश दिये गये हैं। किन्तु इसके विपरीत अन्य सम्प्रदायों या वैदिक धर्म ने उस प्रकार का कोई उपदेश नहीं दिया। वैसे धीरे धीरे पाखण्ड व असत्य समाप्त होता जा रहा है। मानव समाज अपने हित अहित को समझने लगा है। इस्लामी जगत में भी कुछ बुद्धि जीवी ऐसे हैं जिन्होंने कठ मुल्लाओं को ललकारा है प्रमाण हमारे सामने है। अनेक मुस्लिम बुद्धि जीवी धीरे धीरे वैदिक धर्म में दीक्षित हो रहे हैं।

हम तो मुस्लिम बंधुओं से एक ही बात कहते हैं कि तर्क व सत्य की कसौटी पर परख कर ही कुरआन की बातों को स्वीकारे फिर कभी हानि नहीं होगी।

इस्लाम यदि आज भी अपने आधार वेदों के उपदेशानुसार आचरण करे तो हम सब वैदिक धर्मी इस्लाम को वैदिक स्वरूप देने हेतू तत्पर है।

आशा है मुस्लिम वन्धु विचार करेंगे।

———

अरब वासी आर्यों की सन्तान ?

विश्व में अनेकों सम्प्रदाय, अनेकों मत मतान्तर हैं, किन्तु यह ऐतिहासिक सत्य है कि वैदिक धर्म से प्राचीन कोई धर्म नहीं। आज विश्व में धर्म के नाम पर पाखण्ड को अधिक माना जाता है। कहीं मूर्ति पूजा पर झगड़े तो कहीं अन्तिम रसूल होने के झगड़े। कहीं खुदा का बेटा होने का दावा, यह सारी बातें, सारी ही लड़ाई वास्तव में मानव मस्तिष्क की उपज मात्र हैं। ईसा का काल दो हजार वर्ष से अधिक नहीं हैं। इस्लाम का काल मात्र पन्द्रह सौ वर्षों का है। किन्तु इससे पूर्व क्या था ? जब इस विषय पर चिन्तन करते हैं तब मालूम होता है कि वैदिक धर्म सृष्टि की उत्पत्ति से ही सकल संसार को उचित, मानव मात्र ही नहीं प्राणी मात्र के कल्याण कारक व सत्य मार्ग का पथ प्रदर्शित करता आ रहा है। विश्व के पुस्तकालय में एक पाट्टिका लगी है, उस पर लिखा है "ऋग्वेद विश्व-पुस्तकालय में सबसे पुराना ग्रन्थ है" ! ऋग्वेद संसार को ज्ञान, विज्ञान की सूझ देने वाला महानतम् ग्रन्थ है।

वेद वास्तव में सनातन व प्राचीन है। वेद का प्रत्येक अक्षर सत्य व प्राणी मात्र के कल्याण का उपदेशक है। वेद में किसी वस्तु, व्यक्ति या स्थान का वर्णन नहीं, अपितु प्राणियों में सद्भावना, एकता व ज्ञान प्राप्त कर आधुनिक तकनीक की शिक्षा का वर्णन है। किन्तु आज की आधुनिक कहलाने वाली अन्धकारमय शिक्षा का नहीं। सत्य का, सृष्टि के रचियता परम् पिता का यह भी एक कटु सत्य है कि विश्व में शान्ति व प्राणियों में सद्भावना तभी सम्भव है, जब वेदों के पवित्र सन्देश को मानव जीवन में धारण कर वेदानुसार आचरण करना शुरू कर दिया जाये।

एक प्रश्न उठता है यदि वास्तव में वैदिक धर्म सबसे अधिक प्राचीन है, ईसाइयत व इस्लाम से पूर्व भी वैदिक धर्म ही था तब क्या अरब वासी भी आर्यो (हिन्दुओं) की संतान ही हैं ? वास्तव में इस प्रश्न का

उत्तर हां ही होना चाहिए, किन्तु हमारे अरबी बन्धु इस बात को स्वीकारने को तैयार नहीं होगें। भले ही न हो किन्तु निम्नलिखित प्रमाणों से स्पष्ट हो जाता हे कि वास्तव में अरबवासी भी आर्यो की ही सन्तान हैं। स्मरण करें महाभारत का पांच हजार वर्ष से भी पुराना समय, महाभारत का युद्ध हुआ, कौरव और पांडव दोनों ही भाई थे, किन्तु युद्ध, न्याय और अन्याय के मध्य था। युद्ध आरम्भ हुआ, घमासान युद्ध। विश्व के इतिहास में महाभारत से बड़ा शायद ही कोई युद्ध हुआ हो। कौरव व पांडव दोनों एक ही वंश के थे, कुरू वंशी क्षत्रीय क्षत्रीयों में एक वंश का नाम था। पांडव व कौरव दोनों ही कुरुवंशी क्षत्रीय थे, दोनों ही वेद के आधार पर चलते थे, अन्तर मात्र इतना था कि कौरव लोभी अधिक थे वेद की मान्यताओं को त्याग कर पाखण्ड में पड़कर घमन्डी हो गये थे। पांडव बेचारे संख्या में भी कम थे, प्रभु भक्त भी कुछ अधिक ही थे। महाभारत के युद्ध में जब पांडवों की सेना ने योगी राज कृष्ण के मार्गदर्शन से कौरवों की सेना को मार गिराया तब बचे-कुचे कौरव अपनी पोथी पत्रा लेकर भागे, यह तो स्पष्ट है ही कि यदि वह कौरव युद्ध स्थल पर रुकते तो अवश्य मारे जाते। वह भागे, भारत में रूकना उन्होंने उचित नहीं समझा, भागते रहे, जब समुद्र के तट पर एकान्त स्थान पर पहुँचे तो वहीं डेरा डाल दिया। रेत ही रेत क्या खायेंगे–देखा खजूर के पेड़ ही हैं और कुछ नहीं, समुद्र का पानी भी खारा है। किन्तु जान बचाकर मुश्किल से तो एकान्त स्थान मिला था बेचारे वहीं रहने लगे–डर अब भी लगा रहता कि कहीं पांडवों को पता लग गया तो यहां भी नहीं छोड़ेंगे। तब उन्होंने सोचा कि क्यों न अपना नाम बदल लें। और जो कुरुवंशी क्षत्रीय थे वही कुरु के स्थान पर कुरैश व वंश के स्थान पर कबीला अर्थात कुरैश कबीला कहलाने लगे।

कुरैश = करने वाला, कुरु = आरम्भ करना
वंश = परिवार नाम, कबीला = वंश

समुद्र के किनारे वाले खाली स्थान को उन्होंने अरब = ग्राम कहना शुरु कर दिया। कुरुवंशी क्षत्रीयों ने स्वयं को कुरेश कबीला तो कहा किन्तु उनकी मान्यताऐं वैदिक ही रही, वेद के पवित्र संदेशों का अनुवाद धीरे-धीरे वहीं की मूल भाषा में भी किया गया कुरुवशी क्षत्रियों ने जो सनातन धर्म के अनुयायी थे, अपनी पूजा पद्धति के नियम

नहीं बदले। दैनिक अग्नि होत्र व संध्या तो वह करते ही थे। अब उन्होंने मूर्ति पूजा भीं प्रारम्भ कर दी उन्होंने शिवलिंग की स्थापना की व घर में शंकर पार्वती व गणेश की मूर्तियां पूजी जाने लगी। नगर के मध्य स्थल में एक विशाल पत्थर को शिवलिंग बनाकर धरती में गाड़ दिया गया। वही आज संगे अस्वत कहलाता है। पुरानी सारी क्रियाओं के साथ उन्होंने कुछ नयीं बातें अवश्य अपना ली थीं। केवल पांडवों के भय से कुरुवंशी क्षत्रीय कुरेश कबीला के नाम से जाने, जाने लगे, यही कुरेश धीरे-धीरे फैलते गये। अरब एक ग्राम से देश बन गया संस्कृत व अन्य स्थानीय भाषाओं का मिश्रण कर कर के वहां कुरेश वंश ने अरबी भाषा बनाई।

धीरे-धीरे यह कुरेशी ही कहलाने लगे। पड़ोसी देशों से इनका व्यापार शुरू हुआ और इनका वंश पनपता गया। १५०० वर्ष पूर्व हजरत मौहम्मद (वास्तव में मौहम्मद शब्द योगीराज कृष्ण के नाम का ही अंश है, योगीराज कृष्ण का एक नाम मदन मोहन भी था। कुरुवंशी क्षत्रीयों अर्थात कुरेशों ने इसी नाम को बदल दिया, मदन शब्द का मद और मोहन शब्द का मोह लेकर मोहमद=मोहम्मद शब्द तैयार किया इसी प्रकार के अनेकों प्रमाण अरबी भाषा में भीं मिलते हैं) का जन्म अब्दुल मुत्तलिब के पुत्र अब्दुल्ला के घर में हुआ। स्वयं मोहम्मद साहब १६ वर्ष की अवस्था तक महादेव की मूर्तियां बेचते थे व शिवलिंग की उपासना करते थे। मोहम्मद साहब ईमानदार थे, सच्चे थे, धीरे-धीरे उनका व्यापार बढ़ा, उनका सम्पर्क खदीजा बेगम से हुआ। (खदीजा बेगम वास्तव में वेद एवं अन्य आर्य ग्रन्थों की ज्ञाता थी सच्ची आर्या थी) पहले व्यापारिक सम्बन्ध बढ़े फिर विवाह कर लिया। विवाह के समय खदीजा बेगम की आयु हजरत मोहम्मद की माता से भी अधिक थी खदीजा बेगम ने मोहम्मद साहब के द्वारा वेद के कुछ नियमों का अरबी रूपान्तर कर कर के अरब वासियों के सम्मुख प्रस्तुत किया। अरब वासियों ने बहुत पसन्द किया, सर्वत्र मोहम्मद साहब की प्रशंसा होने लगी किन्तु दुर्भाग्य कि खदीजा बेगम अधिक समय जीवित नहीं रह सकीं, और मोहम्मद साहब पढ़े लिखे थे नहीं कि वेद के तत्त्व को समझते। उन्हें जैसे साथी मिले वैसे ही उन्होंने इस्लाम को आगे बढ़ाया। आज इस्लाम का जो स्वरूप हमारे सामने है वास्तव में यदि खदीजा बेगम जीवित होतीं तो इस्लाम सच्चे अर्थो में वैदिक धर्म का

अंग होता, किन्तु आज इस्लाम के अनुयायी स्वयं को वैदिक धर्म से पृथक मानते हैं।

चर्चा चल रही थी कि क्या अरबवासी आर्यों की सन्तान हैं। वास्तव में यह सत्य ही है कि अरबवासी हिन्दुओ के ही भाई हैं। सत्य तो यह है कि कुरेश कबीले वाले व कुरेश कबीले से निकले प्रत्येक कबीले के सदस्य कुरुवंशी क्षत्रीयों की ही सन्तान हैं। कहीं और से नहीं आये, समय आया है कि वैदिक धर्म के अनुयायी जाग्रत हों व संगठित होकर अपने वंश के बिछड़े, बिगड़े व रूठे बन्धुओं को चाहे वह भारतीय मुस्लिम या ईसाई हों, या अरब व इग्लैंड के मुस्लिम व ईसाई, सभी को पुनः वेद की पवित्र मान्यताओं पर वापस लाकर उनका पुनर्मिलन करें व सकल विश्व को शान्ति व एकता का सन्देश दें। आशा है आर्य बन्धु विचार करेंगे।

———

कुरान में ओ३म् है ?

ओ३म् परम् पिता परमेश्वर का प्रमुख नाम है। ओ३म् किसी जाति, मजहब, सम्प्रदाय या समाज का सूचक नहीं। ओ३म् सर्व व्यापक, सर्व शक्तिमान, सृष्टि के रचियता परम् पिता परमेश्वर का सूचक है। ओ३म् विश्व शान्ति व मानव एकता का प्रतीक भी है। ओ३म् में तीन अक्षर हैं।

अ=परमात्मा। उ=जीवात्मा, म्=प्रकृति
या इस प्रकार कहें
अ=परमात्मा=सत्य
उ=जीवात्मा=चित
म=प्रकृति=आनन्द
अर्थात सच्चिदानन्द,

परमात्मा, जीवात्मा, प्रकृति का मिश्रण ही ओ३म् है। कुछ लोगों को भ्रान्ति है कि ओ३म् केवल वेद में ही है। किन्तु यह कटु सत्य है कि ओ३म् प्रत्येक मत सम्प्रदाय में समाया है।

ओ३म्=सर्व शक्तिमान, स्वयम् भू (वेद)
अल्लाह=सर्व शक्तिमान, न्यायकारी (कुरआन)
गॉड=सर्व व्यापक, पालक (बाईबिल)
ओंकार=सर्वाधार, रक्षक (ग्रन्थसाहब)

यह स्पष्ट उपदेश मेरा नहीं–समस्त ग्रन्थों का है कुरआन में तो स्पष्ट ओ३म् है। देखें—

कुरआन में प्रथम अध्याय है सुरह अलबकद अर्थात गाय का अध्याय। इस अध्याय में ईश्वर, समाज, स्त्री व गाय पर मिले जुले विचार प्रकट किये गये हैं, इस अध्याय की प्रथम आयत निम्न प्रकार है।

अलिफ, लाम, मीम, जाले कल कितावों ला रैव। अलिफ, लाम, मीम,—हमने तुम्हें किताब दी है इसके आसमानी होने में कोई शंका नहीं।

प्रश्न यह है कि जालेकल किताबों ला रैब का अर्थ है तब अलिफ लाम मीम का अर्थ क्यों नहीं है। यदि है तो लिखा क्यों नहीं गया—हमारे मौलवी बन्धु कहते हैं कि यह तो अल्लाह का हुक्म है कि इस का कोई अर्थ ही नहीं है। किन्तु शंका का समाधान केवल यह कह देने मात्र से नहीं हो जाता–कर्म हुआ–इसका अर्थ है कोई कर्त्ता अवश्य है, ज्ञात होता है कि किसी बात को छिपाया जा रहा है। हमारी मान्यता है कि वैदिक धर्म से वचने के लिए इन शब्दों का अर्थ नहीं किया गया। देखें–

अलिफ=अ=परमात्मा या अल्लाह

लाम=उ=प्रकाश करने वाला या जीवात्मा

मीम=म्=कल्याण कारक या प्रकृति

अरबी अलिफ="अ" (संस्कृत) ईश्वर को सकार इस लिए कहते हैं कि संसार का आरम्भ उसी के द्वारा होता है अर्थात आदि मूल

अरवी लाम=संस्कृत "ल" अर्थ प्रकाश स्वरूप अर्थात जीवात्मा जो प्रकाश स्वरूप है अर्थात उ जो लाम का सूचक है अरवी मीम=संस्कृत 'म' जो कल्याण कारण है या जो उसे महान बनाता है।

कुरआन के अलिफ लाम मीम का वास्तविक अर्थ यही होना

चाहिए, किन्तु हमारे मुस्लिम बन्धु इसे स्वीकार नहीं कर पायेगें क्योंकि अहम् जो मन में है। उसे तो निकाल नहीं सकते मन में सम्प्रदाय का जो विष बचपन से घोला जाता है उसे किस प्रकार धोयें ?

हमने माना अलिफ = अ = परमात्मा = आदिमूल = सृष्टि का रचनाकार = परम् प्रकाश = सबका रक्षक लाम = उ = जीवात्मा =प्रकाश स्वरूप = परमेश्वर का अंश मीम = म् प्रकृति = कल्याण कारक = महान बनाने वाली, किन्तु यहां एक भ्रान्ति का निवारण करते चलें। प्रकृति तभी कल्याण कारक है जब जीवात्मा परमात्मा में लीन हो जाय। देखें—

सत्य+चित+आनन्द

परमात्मा+जीवात्मा+प्रकृति

यदि चित्त को सत्य में रमा लिया जाय या चित्त में लीन हो जाये तभी आनन्द की प्राप्ति होती है। किन्तु यदि चित्त सत्य को त्याग कर आनन्द की ओर भागे तब क्या आनन्द प्राप्त होगा आनन्द ईश्वर की तरह ही एक अनुभूति है धन के बल पर ऐश्वर्यशाली भोगी बन कर आनन्द प्राप्त नहीं होता आनन्द तो वास्तव में ईश्वर को मन में बसा लेने से प्राप्त होता है तब क्या आनन्द प्राप्त होगा। आनन्द तो मात्र एक अनुभूति है अतएव आनन्द प्राप्ति का साधन यही है कि पहले सत्य को प्राप्त करें—तब आनन्द तो स्वयं ही प्राप्त हो जायेगा कैसे—देखें एक छोटी सी कथा—

एक मनुष्य ने अपनी परछाई को देखा। उसकी इच्छा हुई कि परछाई को पकड़ ले, उसने हाथ बढ़ाया परछाई थोड़ा आगे बढ़ गई ! वह भी आगे बढ़ा, परछाई थोड़ा और आगे बढ़ गई वह मनुष्य भागने लगा। परछाई भी उसके थोड़ा आगे भागने लगी, वह काफी देर तक दौड़ता रहा अन्त यह कि थक कर चूर हो गया, गिर गया, थोड़ी देर में होश आया। सामने एक भद्र पुरुष खड़े थे-भद्र पुरुष ने पूछा क्यों मनु की सन्तान कैसे गिर गये ? उत्तर दिया—परछाई पकड़ने दौड़ा था। किन्तु हाथ ही नहीं आती, भद्र पुरुष मुस्कराये कहा—हे मनुज कितने भोले अज्ञानी हो तुम, अरे कहीं परछाई के पीछे भागने से परछाई पकड़ पाओगे। मनुज पैर पड़ गया—बोला महाराज तब किस विधि से हाथ

आयेगी बताईये, भद्र पुरुष ने कहा यदि परछाई प्राप्त करना चाहते हो तो परछाई की विपरीत दिशा में भागो परछाई तो स्वयं तुम्हारे पीछे पीछे आयेगी। तुम उससे मोह करोगे—वह तुमसे दूर जायेगी, तुम उससे जितना दूर जाओगे वह उतना ही तुम्हारे पास आयेगी और भद्र पुरुष चले गये मनुज काफी देर तक सोचता रहा क्या इस विधि से परछाई को पा जाऊंगा। उठा, उठकर परछाई की विपरीत दिशा में चला चौंक पड़ा परछाई तो उसके पीछे पीछे चली आ रही थी। यही तो वास्तविक आनन्द है कि हम परछाई की ओर भागेंगे तब आनन्द प्राप्त नहीं होगा। किन्तु यदि हम परछाई के विपरीत दिशा में भागेंगे तब वह तो वेचारी हमारी दासी है ही स्वयं पीछे-पीछे आयेगी।

अनन्द, सत्य व चित्त के बिना नहीं रह सकता इस लिये हमें सत्य की ओर ही चित्त लगाना चाहिए आनन्द तो प्राप्त हो ही जायेगा।

कुरआन में ओ३म् है। आपने उपरोक्त प्रमाणों के आधार पर यह देख ही लिया होगा।

सत्य है कहा जाये या न कहा जाये। खिड़की है चाहे खोली जाये या न खोली जाये। किन्तु यदि सत्य है तो उसे बोला जाना चाहिए। खिड़की है तो उसे खोला जाना चाहिए।

कोई माने या न माने किन्तु यह तो सत्य है कि कुरआन में ओ३म् है। वास्तव में संस्कृत समस्त भाषाओं की जननी है। कोई भी भाषा उससे अछूती नहीं–इस लिये कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में वह सर चढ़ कर बोल ही जाती है। बुद्धि जीवी वर्ग तो इस बात को स्वीकार करता ही है और कोई करे या न करे–उसके करने या न करने से होता भी क्या है। यह सत्य है कि कुरआन में ओ३म् है।

—★—

कुरआन में वेदमन्त्रों का अरबी रूपान्तर

कुरआन मजीद इस्लाम का मजहवी ग्रन्थ है जिसकी रचना लगभग १५०० वर्ष पूर्व हजरत मोहम्मद ने की। कुरआन मजीद को परमेश्वर द्वारा भेंट की गई पुस्तक माना जाता है किन्तु वास्तविकता वस्तुस्थिति के पूर्णतया विपरीत है ! मुझे कुरआन पढ़ने का सौभाग्य

प्राप्त हुआ ! मैं यदि गलत रहा तो एक स्थान पर कि मैंने बुद्धि से कार्य लिया किन्तु इसके विपरीत इस्लाम व कुरआन के सम्बन्ध में अकल का दखल सिद्धान्त विरुद्ध है ! थोड़ा पढ़ा लिखा होने के कारण जो बात बुद्धि सम्मत नहीं, उसे स्वीकारने का प्रश्न ही नहीं उठता। हुआ भी यही—फिर देखा कि कुरआन में जितने विवरण सत्य से सम्बन्ध रखते हैं, वह या तो वेद मन्त्रों का अरबी रूपान्तर हैं या अन्य वेदानुकूल ग्रन्थों के उपदेश—चूँकि वेद अनादि काल से विश्व के प्राणी मात्र को कल्याणी मार्ग प्रदर्शित करते रहें हैं व आज भी कर रहे हैं। सृष्टि की उत्पत्ति से आज तक वेद अपने सत्य स्वरूप में मानवों का मार्ग दर्शन कर रहे हैं। वेद में किसी इतिहास, गप्प व गोल गप्पों का वर्णन नहीं, वेद में मात्र मानव के जीवन व जीवन आनन्द का वर्णन है, विज्ञान व तकनीक का वर्णन है ईश्वर का वर्णन है, वेद अनादि है इसमें कोई शका नहीं सिर्फ इतना ही लिखेंगे—

नक्कारा वेद का बजता है,
आये जिसका जी चाहे।
सदाकत वेद अकदस,
आजमाये जिसका जी चाहे॥

सर्व विदित है कि हजरत मोहम्मद ने पहला विवाह खदीजा बानो से किया था। इस्लाम से पूर्व अरब की स्थिति डाँवा डोल थी, अन्धेर नगरी चौपट राज ! जीवित लड़कियों को दफन कर दिया जाता था, एक-एक व्यक्ति कई-कई विवाह करता था व कई कई रखैल रखता था, एवं अन्य प्रकार की कुरीतियाँ थीं जैसे कई ईश्वरों की उपासना की जाती थी। खदीजा बानों एक बुद्धिमती महिला थीं, उन्होंने मोहम्मद साहब को मैदान में लाकर वेद के कुछ मन्त्रों को अरबी भाषा में रूपान्तरित कर अरब वासियों के सम्मुख रखे। क्योंकि वह आयत ईश्वर भक्ति व मानव कल्याण से सम्बन्धित थी। अरब वासियों को अच्छा लगना तो स्वभाविक था। मोहम्मद साहब के मुख से निकले इन उपदेशों को सुनकर अरबवासी उन्हे सम्मान देने लगे और कुछ लोगों ने उन्हें ईश्वरीय दूत कहना प्रारम्भ कर दिया, जब ईश्वर दूत कहलाने लगे तो कुछ नाटक भी किया। पहाड़ियों में जाने लगे—हिजरत (ईश्वर के मार्ग में यात्रा) भी करने लगे पहाड़ों में जाकर कुछ भी करे, किन्तु

कहा यही कि अल्लाह ने बुलाकर यह उपदेश बताया है, वह उपदेश बताया है। बस धन्धा चल निकला। जब लोगों को विश्वास होने लगा तब बीच में ही खदीजा बानों की मृत्यु हो गई। अब मोहम्मद साहब सोचने लगे क्या किया जाये ? अब आगे का काम कैसे चलेगा ! क्योंकि स्वयं तो पढ़े लिखे थे नहीं जो वेद मन्त्रों का रूपान्तर करते। बस कुछ पढ़े लिखे लोगों को मिलाकर योजना बनाई। उन लोगों ने जो भी बता दिया उसी सबको ईश्वर का उपदेश बता कर लोगों तक पहुँचाया जाने लगा। लोग तो पहले ही प्रभावित थे। बाद की बात पर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। अधिकतर अरब वासी तो बेचारे अनपढ़ थे ही। बस मनगढ़न्त बातों के आधार पर इस्लाम नामक मजहब बना लिया गया। जो भी इस्लाम स्वीकार करता उसे अपना सब कुछ अल्लाह मोहम्मद साहब के लिए समर्पित करना होता। अल्लाह का तो बस नाम ही नाम था, काम तो बस मोहम्मद साहब का ही चल रहा था, बस शुरू हुआ अंधकार का सिलसिला जो आज तक चल रहा है। लोग तो बेचारे सीधे थे ही। जैसे सत्य नारायण की कथा में पंडित जी गलती से कह गये; सीता राम का बाप था। श्रोता बोले सत्य वचन महाराज। वही इस्लाम के साथ भी हुआ। इस्लाम स्वीकारने वाले हर व्यक्ति को धर्मान्धता में बन्धना पड़ा, वही धर्मान्धता आज भी विद्यमान है।

आइये देखते हैं कि वेद मन्त्रों का अरबी रूपान्तर कुरआन में कहाँ-कहाँ है। इस्लाम के पांच सिद्धांत हैं,

(१) तौहीद (ऐकेश्वरवाद) (२) नमाज (योग सूर्य नमस्कार विधि) (३) जकात (दान) (४) रोजा (उपवास) (५) हज (तीर्थयात्रा)

हम तौहीद पर चर्चा करते हैं। तौहीद का जो सूत्र है वही एकेश्वर वाद का खण्डन करता है—देखें

लाइलाहा इल्लल्लाह (तौहीद)
मौहम्मदुर रसुलुल्लाह (पाखण्डवाद)
लाइलाहा इल्लल्लाह–पूजा केवल एक ही ईश्वर की जो स्वामी है।
मौहम्मदुर रसुलुल्लाह–मोहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।

कुरआन में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कुरआन अपनी हर

बात का खण्डन स्वयं ही करता है। इसी से प्रतीत होता है। कि कुरआन ईश्वरीय ग्रन्थ नहीं।

तौहीद को पढ़कर ही व्यक्ति इस्लाम दीक्षित होता है। कहा जाता हैं कि यदि व्यक्ति कुरआन नहीं पढ़ सकता—नमाज हज, रोजा व जकात के नियम पूरे नहीं कर सकता तो कोई बात नहीं किन्तु तौहीद पर विश्वास रखना अत्यन्त आवश्यक है। तौहीद वेद के आधार पर रचित कलमा या आयत है – देखें–

लाइलाहा इल्लाह (तौहीद)

भावार्थ—नहीं है कोई पूजा के योग्य सिवाय उस अल्लाह के जो सकल विश्व का स्वामी, पालक है।

यह आयत ऋग्वेद की एक सूक्ति का अरबी रूपान्तर है, देखें।

जनानां एको विश्वस्य भुवनस्य राजा। (ऋ० ४-३६-४)

भावार्थ—इस सारे जगत व सृष्टि का एक स्वामी परमात्मा है। उसी की उपासना करो।

तौहीद इसी वेद मन्त्र का रूपान्तर है किन्तु मोहम्मद साहब ने अपना नाम अपनी ओर से जोड़ दिया कि मेरी भी उपसना करो मुझे भी मानो। यह बात बुद्धि सम्मत नहीं। हमारे वैदिक धर्म में अनेकों ऋषि, मुनि, सन्यासी हुये हैं किन्तु किसी ने भी स्वयं को ईश्वर का दूत नहीं बताया। यदि बताया भी होगा तो हम तो उस पर विश्वास नहीं करते। ईश्वर तो एक ही है। कुरआन का आधार हैं, कुरआन की प्रथम आयत 'सूरहः फातिहा' अर्थात ईश्वर की प्रशंसा यह आयत भी वेद के आधार पर ही है, देखें।

(१) अलमहदो लिल्लाही रब्बिल आलमीन (फातिहा–१)

अर्थ—सब प्रशंसा अल्लाह के लिए हैं। जो सारे संसार का रब (पालनकर्त्ता) है।

यह वेद मन्त्र का अरबी रूपान्तर है देखे।

मही देवस्यः सवितुः परिष्टुतिः। (ऋ० ५-८१-१)

भाव—उस जगत के रचनाकार के लिए सब स्तुति है।

(२) अररहमानिर्रहीम (फातिहा–२)
अर्थ—जो कृपालु और दयावान है।
वेद—वसुर्दयमानः ॥ (ऋ० ३-३४-१)
भाव—जो धारण करने वाला दयालु है।

(३) इयाकाना बुदु व इयाका नस्तयीन। (फातिहा–४)
अर्थ—प्रभुवर ! हम तेरी ही उपासना करते हैं। और तुझी से सहायता चाहते हैं।
वेद—अभित्वा शूर नोनुमः। (ऋ० ७-३८-८८)
भाव—हे शक्तिमान् ! हम तुझी को वहुत बहुत नमस्कार करते हैं।

(४) इहिदि नस्मिरातल मुस्तकीम ! (फातिहा–५)
अर्थ—हमें सीधा मार्ग दिखा, सत्य मार्ग दिखा।
वेद—अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्। (यजु० ४०-१८)
भाव—हे अग्ने ! हमें अच्छे रास्ते को दिखा।

(५) कुल हुव्वल्लाहु अहद ! (इखलास–१)
अर्थ—कह दो अल्लाह एक है ! अकेला है।
वेद—एक इद्राजा जगतो बभूव ! ऋ० १०-१२१-४)
भाव—जगत का स्वामी एक ही है।
उपरोक्त सभी प्रमाण वेद व कुरआन के ही हैं अन्य भी देखिये।

(६) ला ताबू दून इल्लल्लाह ! (बकर–८३)
अर्थ—अल्लाह के सिवा किसी को वन्दगी न करो। न वेद—मा चिदन्यद् विशंसत ! (ऋ० ८-१-१) हीन भाव—किसी दूसरे को मत पूजो।

(७) अलम् तालम् अन्नल्लाह लहु मुल्कुस्समावाति वल अर्जि ! वमा लकुम् मिन दुनिल्लाहे मिन वल्ली इन वला न सीरिन !
(बकर–१०७)

अर्थ—क्या तुम नहीं जानते कि आकाशों और धरती का राज्य अल्लाह ही के लिए है ! और अल्लाह के सिवा न कोई मित्र है और न सहायक
वेद—महोदिवः पथिव्याश्च सम्राट् ! नो भवत्विन्द्र ऊती !
(ऋ० (०-१००-१)
भाव—वह महान प्रभु ! द्यौ और पृथ्वी का स्वामी है ! वह ईश्वर सब ओर से हमारी सहायता करें।

(८) वलिल्लाही मशारि को बल मगारिबो फ एनमा तवल्लौ फ सुम्म वज हुल्लाहे ! इन्नल्ललाह वासिऊ अलीमून ! (बकर–११५)
अर्थ—और पूर्व पश्चिम अल्लाह ही के हैं तो जिस ओर भी रुख करो ! उसी ओर अल्लाह का रुख है, निःसन्देह अल्लाह समाई वाला और जानने वाला है !

वेद—यस्येमाः प्रदिशः। (ऋ० १०-१२१-४)

भाव—सब दिशायें उसी (परमेश्वर) की हैं। सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात् ! सवितोत्तरातात् सविताधरात्तत !

(ऋ० १०-३६-१४)

भाव—पूर्व, पश्चिम ऊपर और नीचे प्रभु व्यापा है ! हीन विश्वतश्चक्षु रुत विश्वतो मुखः ! (ऋ० १०-८१-३)

भाव—ईश्वर की आँखे हर ओर है। ईश्वर का मुख हर ओर है।

(९) व इलाहुकं इलाहुं वाहिदुम् ला इलाह इल्ला हुवर्रहमानुर्रहीम! (बक–१६३) —तुम्हारा इलाह (पूज्य प्रभु) अकेला इलाह, उसके सिवा कोई भी इलाह नहीं वह कृपाशील व दयावान् है (इलाह पूज्य) वेद— प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता वभूव! ऋ० १-१२१-१०)

भाव—हे सबके स्वामी, तेरे सिवाय कोई दूसरा सारे संसार का स्वामी नहीं—तू दयावान् व कृपावान् है !

(१०) फाइन्नी करीबुन, उजीबो दावतद् दयी ! (बकर १८९)
अर्थ—मैं पुकारने वाले की पुकार का, जब वह मुझे पुकारता है, उत्तर देता हूं।

वेद—त्वं नो अन्तम उत त्राता ! (ऋ० ५-२४-१)

भाव—तू हमसे निकटतम है व हमारा रक्षक है, हमारी पुकार सुनने वाला तू ही है !

(११) इन्न फी खलाकि स्समा वाति वल अर्जी वखतलाफिल लंलि वन निहारि वल फलाकि अल्लती तजरी फिल वहरे बिमा तन फ़ उन्नास वमा अन्जल मिनस्समाये मिन मायिन फ अहया बिहिल अर्जी वाद मौरिहीव वस्स फ़ीहा मिन फुल्लि दा वतिन् व तसरी फिल रयाहि वस्सहाबि लमु सखखर वंनस्स माये वल अर्जील, आयातिन लिकौमि याकिलून। (बकर १६४)

अर्थ—निःसन्देह आकाशों व धरती की बनावट में, रात दिन के बारी बारी एक दूसरे के आने में, उन जहाजों में जो समुद्र में लोगों के लिए लाभदायक सामग्री लेकर चलते हैं, और उस पानी में जिसे अल्लाह ने आकाश से उतारा, फिर उसके द्वारा भूमि को उसकी मृत्यु के पश्चात् जीवित किया और हर प्रकार के जीव जन्तु उसने उसमें फैलाये, और हवाओं की गर्दिश में और उन बादलों में जो आकाश और धरती के बीच काम पर लगा रक्खे गये हैं, उन लोगों के लिए निशानियाँ हैं जो बुद्धि से काम लेते हैं।

वेद—(१) न यस्य द्यावा पृथिवी अनुव्यचो न सिन्धवों रजसो अंन्तमानशुः। नोत स्ववृष्टि मदे यस्य न युध्यत एको अन्यच् चेकृष विश्व मानुषक् ! (ऋ० १-५२-१४)

(२) वेद नावः समुद्रियः ! (ऋ० १-२५-७)

(३) देवं बहन्ति कतवः। (यजु० ३३/१)

भाव—न पृथ्वी न आकाश उस ईश्वर की व्यापकता की सीमा को पा सकते हैं, न आकाश के लोक, न आकाश से बरसने वाला मेंह सिवाय उस ईश्वर के और कोई दूसरा इस विश्व पर अधिकार नहीं रखता !

(२) वह समुद्र की नावों को जानता है !

(२) दुनियां की चीजें ईश्वर की निशानिथां हैं !

(१२) तुलि जुल्लैल फिन नहारे व तुलिजुन नहार फिल लैली ! तुखरिजुल हय्म मिनल मौति व तुख़रिजुल मौति मिनल हय्य !

(आले इमरान–२६)

अर्थ—तू रात को दिन में प्रविष्ट करता है और दिन को रात में ! और जीवित को निर्जीव में से निकालता है, और निर्जीव को जीवित में से निकालता है।

वेद— अहोरात्राणि विदधद विश्वस्य मिषतौ वशी !

(ऋ० १०-६०-२)

भाव—समस्त प्राणियों को बस में रखने वाले परम पिता ने रात और दिन का क्रम स्थापित किया है !

यस्य छाया अमृतम् यस्य मृत्युः ! (ऋ० १०-१२१-२)

भाव—जिसकी छाया आश्रय अमृत और जिसकी अनाश्रयता मृत्यु है।

(१३) व अन्नलला लायुजीओ अजरल मोमिनीन !

(आले इमरान–१७२)

वेद—यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि ! तवेत्तत सत्यमङ्गिरः !
(ऋ० १-१-६)

भाव—है प्रकाश पुंज—ईश्वर ! आप धर्मात्मा पुरुष का कल्याण करते हैं ! यह आपका सत्य स्वभाव ही है।

(१४) हुवल्लजी युसब्वि रूकं फिल अरहामि ! (आले इमरान–६)
अर्थ—वही हैं जो गर्भाशयों में जैसा चाहता है वैसा रूप देता है।
वेद—प्रजापतिर्जनयति प्रजा इमा. ! (अथर्व० ७-१९-१)
भाव—ईश्वर सब प्रजा का रचनाकर है !
अर्थ—अल्लाह ईमान वालों का प्रतिदिन अकारथ नहीं करेगा !

(१५) वला तजअलू मयाल्लाहे हन आखर ! (जारियात–५१)
अर्थ :–अल्लाह के साथ किसी दूसरे को इलाह (पूज्य) न बनाओ।
वेद—य एक इत्। तमुष्टहि ! (ऋ० ६-४५-१५)
भाव—वह एक ही है, उसी की स्तुति कर !

(१६) इन्नल्लाह ला यहिब्बु मन कान मुहतालन फुजूरन
(अननिसा–३६)
अर्थ—निःसन्देह अल्लाह किसी ऐसे व्यक्ति को पसन्द नहीं करता जो इतराने वाला और डींग मारने वाला हो !
वेद—ऋतस्य पथा नमसा विवासेत् ! (ऋ० १०-३१-२)
भाव—मनुष्य को चाहिये कि सत्य के मार्ग में नम्रता से चलें।

(१७) इन्नलाह मुहिब्बुल मुक सितीन ! (माइदा–४२)
अर्थ—निःसन्देह अल्लाह इन्साफ करने वालों से प्रेम करता है।
वेद—प्रियम् सुकृत् प्रय इन्द्र मनायः ! (ऋ० ४-२५-२)
भाव—ईश्वर अच्छे कार्य करने वाले मननशील मनुष्यों से प्रेम करता है।

(१८) सिर्रकुम्व जहरकुम् व मालमु मा तक्सिवन !
(अल अनआम–३)
भाव—वह तुम्हारी छिपी और खुली सब बातें जानता है ! और जो तुम करते हो वह उसे जानता है !
वेद—यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति !
(ऋ० १०-१८७-४)

भाव—वह ईश्वर सारे संसार को भली भांति जानता है।

(१९) व हुवल काहिरो फौक इबादि ही ! (अल अनआम-१८)
अर्थ—और उसे अपने बन्दों पर पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त है।
वेद—विश्वस्य मिषतो वशी ! (ऋ० १०-१९०-२)
भाव—वह सब प्राणियों को वश में रखता है।

(२०) व इन्दहु मिफ़ात हुल गैब लायालमु हा इल्ला हूं ! वयालमु मा फिल र्वारि वल बहरि ! व मा तस्कुतु मिन वर कातिन इल्ला यालमुहा। (अल अनआम–५९)
अर्थ—और उसी के पास परोक्ष की कुन्जियां हैं उन्हें उसके सिवा और कोई नहीं जानता, और वह जानता है जो कुछ भूमि और समुद्र में हैं ! और कोई पत्ती नहीं जो गिरे और उसे न जानता हो !
वेद—सर्वतद् राजा वरुणों वि चष्टे यदन्तरा रोदमी यत् पुरस्तात ! (अथर्वे० ४-१७-५)
भाव—जो कुछ पृथ्वी में या आकाश में या इसके अलावा है, ईश्वर उसे देखता है, जानता है !

कुरआन की उपरोक्त आयतों व वेद के संलग्न मन्त्रों के अध्ययन के पश्चात ऐसा प्रतीत होता है कि बड़ी चतुराई से १५०० वर्ष पूर्व हजरत मोहम्मद व खदीजा बानों ने वेदमन्त्रों को अरबी भाषा में रूपान्तरित किया व जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया। वेद में शान्ति पाठका स्पष्ट वर्णन है। शान्ति पाठ में हम विश्वशान्ति, मानवशान्ति व सकल सृष्टि की शान्ति की प्रार्थना जगत् नियन्ता प्रभु से करते हैं। शान्ति पाठ के आधार पर ही इस्लाम शब्द का प्रचलन हुआ। हजरत मोहम्मद ने शान्ति पाठ के शान्ति शब्द को ही इस्लाम का आधार बनाया। व इस्लाम मजहब नाम देकर कुरआन की रचना वेद मन्त्रों के आधार पर ही की। किन्तु माता खदीजा बानो की मृत्यु के पश्चात कुरआन व इस्लाम वेद के मार्ग से हटते चले गये व अनेकों प्रकार की बातों को भर कर कुरआन को वृहद्‌ रूप दे दिया गया। वास्तव में यदि माता खदीजा बानो जीवित रहतीं तो इस्लाम का स्वरूप मात्र वेद के आधार पर ही रहता, व इस्लाम वैदिक धर्म का अरबी सहायक मात्र ही होता, किन्तु समय के कठोर राक्षस ने इस्लाम को वैदिक धर्म से पृथक कर वैदिक धर्म के विपरीत कर दिया। जैसे-जैसे इस्लाम के आरम्भिक सदस्यों को

यह ज्ञात हुआ कि इस्लाम सत्य सनातन वैदिक धर्म का ही अङ्ग है, वैसे वैसे उन लोगों ने वैदिक मान्यताओं के विपरीत चलना आरम्भ कर दिया। व कुरआन में वर्णित वैदिक मान्यताओं का खण्डन आगे की आयतों में कर दिया। इसीलिए कुरआन में स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि कुरआन अपनी प्रत्येक बात का खण्डन स्वयं ही करता गया है जैसे वैदिक मान्यताओं में एकेश्वरवाद है किन्तु इस्लाम में हजरत मोहम्मद को अल्लाह का दूत मानकर एकेश्वरवाद का मात्र खण्डन ही नहीं किया गया अपितु वंश परम्परा को विधिवत चलाने हेतु नायब रसूल (सहायक दूत) का प्रचलन भी शुरु कर दिया गया। मोहम्मद साहब के बाद अली (मोहम्मद के दामाद) व उमर (मोहम्मद के शिष्य) में पद हेतु संघर्ष हुआ। व इस्लाम में दो फिरके (सम्प्रदाय) बन गये—सुन्नी (जो मोहम्मद को नबी व उमर को नायब रसूल मानते हैं) शिया (जो मोहम्मद को नबी व अली को नायब रसूल मानते हैं) शिया सुन्नी संघर्ष आज तक विराजमान है। ईरान व ईराक का युद्ध इसका ज्वलंत उदाहरण है। व लखनऊ आदि नगरों में मोहर्रम व अन्य अवसरों पर होने वाला वार्षिक संघर्ष भी शिया-सुन्नी लड़ाई का एक रूप है। कहा जाता है कि जब किसी शिया के यहाँ कोई अतिथि आता है तो उसे प्रस्तुत किये गये भोजन में पहले परिवार का मुखिया थूकता है तब भोजन प्रस्तुत किया जाता है। यह शिया सम्प्रदाय के नियमों में एक है, सुन्नी वर्ग मानता है ला ईलाहा इल्लल्लाह मोहम्मद रसुलुल्लाह। किन्तु शिया वर्ग मानता है लाईलाह इल्लल्लाह मोहम्मदुर रसुल्लाह अली युनवली अल्लाह। यह मतभेद है शिया व सुन्नी में। इस्लाम को वास्तव में शान्ति का सन्देश वाहक होना चाहिये था किन्तु आरम्भ से ही इस्लाम तलवार के बल पर फैला ही नहीं अपितु अनेकों वर्षो तक फैलता रहा। आज इस्लाम के अनुयायी नब्बे प्रतिशत लोग यह भी नहीं जानते कि कुरआन है क्या ? बस नाम मात्र के मुस्लिम हैं। वह कुरआन पढ़ते तो हैं किन्तु मात्र अरबी में, उसका अर्थ नहीं। उसका अर्थ क्या है यह जानने की आवश्यकता भी नहीं है। जो कुछ मौलवी ने कह दिया बस वही सबसे बड़ा धर्म है। यदि नहीं माना तो जन्नत नहीं मिलेगा पैदाने हश्र (कर्मफल स्थान) में निजात (मुक्ति) दिलाने वाला कौन होगा। बस यही सब ढ़कोसले आज तक इस्लाम को जीवित रखे हुये है। तीन चार वर्षों से तो इस्लाम का फैलाव धन के बल पर हो रहा है। तमिलनाडु राज्य में ऐसे अनेकों उदाहरण प्राप्त हुये हैं कि

किसी को दस किसी को पाँच हजार रुपये या इससे भी अधिक धन देकर इस्लाम में दीक्षित किया गया।

कुरआन यदि आज भी वैदिक मान्यताओं पर वापस आ जाये तो हमें कुरआन को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं। किन्तु बुद्धिहीन, विज्ञान विरुद्धः अमानवीय बातों को मानना हमारे लिए कठिन ही है।

हम तो वेद के पवित्र उपदेशों को मानव के हृदय में भर कर उसे-अज्ञान, अन्याय, अभाव, व आलस्य से पृथक कर मानवता, ज्ञान, न्याय, समृद्धि व सेवा के पथ पर लाना चाहते हैं। आशा है आप सब विचार करेंगे।

—★—

कुरान में पुनर्जन्म (तनासुख) ?

इस्लाम व कुरआन को मानने वाले पुनर्जन्म (तनासुख) को नहीं मानते। उनका मत है कि प्रत्येक व्यक्ति एक बार जन्म लेता है, एक ही बार मर कर कब्र में दफन होकर कयामत (प्रलय) के दिन की प्रतीक्षा करता है। प्रलय के दिन उसका कर्मानुसार हिसाब-किताब होता हैं। किसको स्वर्ग मिले, किसको नरक, किन्तु यदि कोई व्यक्ति उस समय मोहम्मद साहब से क्षमा माँग लेगा, तो उनकी सिफारिश पर उसे क्षमा कर स्वर्ग में ही भेजा जायेगा, स्वर्ग में परियां, हूरें (जो अब तक १४०० वर्ष की हो गई होंगी न मुंह में दांत होंगे, न पेट में आंत, बाल सफेद, चेहरे का अन्दाजा तो आप स्वयं लगा सकते हैं कि कैसा होगा) मिलेंगी-मय के जाम, मिलेगे फल फूल, मेवा आदि मिलेगा, किन्तु वेद के अनुसार आत्मा अमर है, शरीर नश्वर है। जिस प्रकार वस्त्र पुराना होने पर फट जाता है, उसी प्रकार शरीर की वृद्धावस्था में पुराना हो जाता हैं। जिस प्रकार वस्त्र बदला जाता है, उसी प्रकार शरीर को बदला जाता है, व नया शरीर धारण किया जाता है। कर्मानुसार फल भोगना तो स्वाभाविक है ही। जो मनुष्य अपने जीवन काल में या अगले जन्म में भोगता है, वेद के अनुसार स्वर्ग व नरक सब इसी धरती पर है। प्रत्येक मानव इसी धरती माता की गोद में स्वर्ग व नरक कर्मानुसार भोगता है। मुस्लिम बन्धु पुनर्जन्म को नहीं मानते किन्तु वे जिस कुरआन को परमेश्वर का ग्रन्थ मानते हैं, उसमें पुनर्जन्म का स्पष्ट वर्णन है चलिए देखते हैं।

नहनु खलकनाकुं । फलौ लातु सद्दिकन। अफर ऐतुं मातु मूनून, अ अन्तुं तखलूक़ून हू अम् नह्‌नुल खालिक़ून, नह्‌नु कद्दर्ना बैन कुमल मौत। वमा नहनु बिमस्बकीन, अला अन तुब द दिल अयसालकुं व नुन शियकुं फ़ी माला तालि मून। वाक़िया ५७ से ६१

अर्थ—हमने तुम्हें पैदा किया, फिर तुम क्यों सच नहीं मानते। फिर क्या तुमने देखा जो वीर्य टपकाते हो, उसे आकर तुम देते हो या हम हैं आकर देने वाले, हमने तुम्हारे बीच मरने की रीति ठहराई और हमारे बस से बाहर नहीं कि हम तुम्हारा आकार बदल दें, और तुम्हें किसी ऐसे रूप में उठा खड़ा करें जिसे तुम जानते तक नहीं।

इस आयत में ईश्वर के चमत्कार को प्रकट किया गया है। यह बताया गया है कि माँ के गर्भ में भ्रूण का निर्माण ईश्वर करता है, मनुष्य नहीं, और यह भी बताया गया है कि परमेश्वर एक ही बार नहीं बना सकता बल्कि कई बार बना कर अलग-अलग शरीरों में भी पैदा कर सकता है। क्या यह बात पुनर्जन्म के प्रमाण हेतु पर्याप्त नहीं? यही नहीं कुरआन में एक ऐसी भी आयत है जो स्पष्ट पुनर्जन्म को मानती है।

कैफ़ तक फिरून बिल्लाहि व कुन्तुं अमावतन फ़ अहया कुं सुम्म युमी तुकुं सुम्म युह ईकुम सुम्म इलैहि तुर्जऊन। (बकर २८)
अर्थ—तुम अल्लाह के साथ कुफ्र की नीति कैसे अपनाते हो जबकि तुम निर्जीव थे, उसने तुम्हें जीवित किया फिर वही तुम्हें मारता है। फिर वही तुम्हें जीवित करेगा, फिर उसी की ओर तुम लौटाये जाओगे। यहाँ जीवन व मरण का बराबर आना स्पष्ट है। भाष्यकारों ने निहित स्वार्थवश पुनर्जन्म से बचने के लिए यहाँ अमावतन अर्थात् (मृत्यु) का अर्थ दिया है कि तुम निर्जीव थे, विज्ञान की दृष्टिकोण से कोई भी जीव बिना प्राण नहीं होता है, जब प्राण निकलते हैं तभी निर्जीव होता है। यह आयत मैंने स्वयं नहीं लिखी जो ईश्वर मनुष्य को एक बार मार कर फिर जीवित करता है, फिर मारता है यह यदि पुनर्जन्म नहीं तो क्या है। यह दूसरी बात है कि उसे हम स्वीकार करते हैं या नहीं। हमारे इस्लाम के अनुयायी कहते हैं कि कुरआनी की बात न मानने वाला काफिर होता है। तब क्या कुरआन की पुनर्जन्म वाली बात को मानने के लिए तैयार हैं? हमारे मुल्ला मौलवी व आलिम फाजिल आदि

नहीं मानते तो क्यों ? आइए प्रमाण देते हैं कि कुरआन पुनर्जन्म को मानता है या नहीं।

वह अल्लाह पहली बार पैदा करता है, फिर बार-बार पैदा करता है। कुरआन (२९-१९)
क्या यह भी असत्य है ? यह तो स्पष्ट पुनर्जन्म का संकेत है। और देखिए—

क्या इन लोगों ने देखा नहीं कि अल्लाह पहली बार कैसे पैदा करता है, और फिर उसकी पुनरावृत्ति करता है। (कुरआन २ २९-१९)
यह आयत भी कुरआन का स्पष्ट आदेश है कि पुनर्जन्म होता है किन्तु उसके बाद भी बुद्धिहीन मतान्ध समाज इसे स्वीकारने को तैयार नहीं। पुनर्जन्म के सम्बन्ध में कुछ और प्रमाण कुरआन के आधार पर—

फ़ काल लहुमल्लाहु मूतु। सम्मह याहुं। इन्नल्लाह लजु फ़जालिन अलन्नासि व ला।किन्न अवसरन्मासि ला यश कुरून (बकर–२४३)

अल्लाह ने कहा मर जाओ, फिर उसने उन्हें जीवित किया। निसन्देह अल्लाह लोगों के लिए बड़ा ही अनुग्रह वाला है। परन्तु अधिकतर लोग कृतज्ञता नहीं दिखाते।

सुम्म व असनाकुं नि वादि मौतिकुं अल्लकुं तश कुरून।
(बकर–५६)

फिर तुम्हारे बे जान हो जाने के पश्चात् हमने तुम्हें जिला उठाया ताकि तुम कृतज्ञता दिखलाओ।

उपर्युक्त प्रमाण कुरआन के अंश हैं। कुरआन व कुरआन का अल्लाह तनासुख-पुनर्जन्म को मानता है। किन्तु हमारे मुस्लिम बन्धु इस बात को स्वीकारने को तैयार नहीं—क्योंकि इनके मस्तिष्क में आरम्भ से ही यह भावना भरी जाती है कि तुम्हें वह कर्म करना है जो आर्यो के विपरीत हो। इसी धारणा से पुनर्जन्म कुरआन में होते हुए भी मुस्लिम बन्धु मानने को तैयार नहीं। किसी के मानने या ना मानने से सच्चाई समाप्त तो नहीं हो जाती। आज सकल विश्व पुनर्जन्म को स्वीकारने लगा है। इसे यदि आज के मुसलमान न स्वीकारें तो हमारा क्या जाता है, वैसे हमारा फर्ज़ था सच्चाई को बताना सो वह पूरा हुआ।

पिछले दिनों समाचार पत्रों में ऐसे अनेकों समाचार छपे हैं जिनमें पुनर्जन्म होने के प्रमाण मिलते हैं। जैसे कोटा में एक कन्या जो पूर्वजन्म में किसी की पत्नी थी, उससे हम मिले। उसने पूर्व की सारी बातें बताई। पुनर्जन्म के प्रमाण हेतु हम ब्रह्मचारी कृष्णदत्त जी को ही देख लें इस जन्म में उन्होंने विद्यालय की शक्ल भी नहीं देखी किन्तु जब संस्कृत का उच्चारण करते हैं तब लगता है जैसे कोई आचार्य हों, पुनर्जन्म सत्य है इसने कोई शंका नहीं। हम तो मुसलमान भाइयों को यही सलाह दे सकते हैं कि वे सच्चाई को स्वीकार करें व तर्क की कसौटी पर परखने के बाद ही किसी बात को स्वीकार करें। आशा है मुस्लिम बन्धु विचार करेंगे।

१. पास मुल्ला के नहीं, कुछ मेरे तर्कों का जवाब।
हाँ मगर खुद साखता, इक फतवाए तक फीर है॥
२. यह भी मुस्लिम जान लें, हिन्दू भी हैं एहले किताब।
ईश्वरीय ज्ञान हैं, ब्रह्मा के यारों वेद चार॥
३. आवागमन नहीं है, तो जालिम है फिर खुदा।
उसका है क्या कुसुर, जो अन्धा है जन्म का॥
४. अमल से जिन्दगी बनती है, जन्नत भी जहन्नुम भी।
यह खाकी अपनी फितरत है, न नूरों है, न नारी है॥
५. जाहिरे तंग नजर ने, मुझे काफिर जाना।
और काफिर यह कहता है, कि मुसलमान हूं मैं॥

कुरआन में नारी का स्थान ?

स्त्री मानव समाज का एक अभिन्न अंग है, यह कटु सत्य है कि जीवन रूपी गाड़ी को चलाने हेतु स्त्री पुरुष दोनों का होना अति आवश्यक है। स्त्री माता बन कर परिवार का संचालन करती है। बहन बन कर प्रेम देती है पत्नि बन कर जीवन का अनुभव कराती है। पुत्री बन कर आत्म स्वाभिमान देती है। आर्ष ग्रन्थों में "माता निर्माता भवति" उपदेश है। किन्तु इससे भी बढ़ कर यदि देखा जाय तो मानव के पुत्र से लेकर पिता तक के विकास क्रम में वास्तव में स्त्री का सहयोग ही कार्य करता है। महर्षि मनु ने कहा है:—

यत्र नारियस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता—(मनु स्मृति)
अर्थात जहाँ नारी का मान सम्मान होता है वहाँ देवता वास करते हैं।

वैदिक आर्ष ग्रन्थों में स्त्री का स्थान प्रथम है।

पाणि ग्रहण संस्कार में भी स्त्री अग्रणी रहकर पति को वरती है स्त्री मानव समाज की आवश्यता है, थी, रहेगी। अनेकों सम्प्रदायों में स्त्री के साथ पृथक-पृथक व्यवहार किये गये हैं किन्तु स्त्री ने कभी स्पष्ट विरोध नहीं किया–सहन किया है। किन्तु आज के वैज्ञानिक युग में–वैदिक युग में क्या स्त्री समाज शान्त भाव से अत्याचारों को सहन कर पायेगा। पाकिस्तान में स्त्रियों को समान अधिकार न देना स्त्री के वाहर आने जाने पर प्रतिबन्ध व अन्य प्रकार से उत्पीड़न देना, वह भी इस्लामी शरीयत के आइने में। स्वयं हमारे ही देश में नित्य प्रति हजारों बहनों को दहेज की अग्नि में चढ़ना पड़ता है। नित्य प्रति समाचार पत्रों में ऐसे एक दो समाचार देखने को मिल जायेंगे। हमें समाज के संकीर्ण व लोभी विचारों को समाप्त कर उदारता व समान भाव अपनाना होगा। हमारे देश में एक समुदाय ऐसा भी है जहां स्त्री का कोई स्थान नहीं मात्र भोग विलास का साधन, या घर का झाड़ू पोंछा करने का अधिकार! मुस्लिम समुदाय में विवाह को कोई एहमीयत नही जब चाहा निकाह किया जब चाहा तब तलाक दिया। यहां तक कि एक के ऊपर एक कई पत्नियां रखने तक की आजादी भी अल्लाह ताला की ओर से मिली हुई है। किन्तु मात्र उन्हें जो इस्लाम के उपासक हैं, काफिरों (इस्लाम विरुद्ध) को नहीं। काफिरों को तो केवल कत्ल करने का आदेश है। इस्लाम एक सम्प्रदाय है। पन्द्रह सौ वर्षों पूर्व इस्लाम अरब देश में फैला। आज विश्व के एक हिस्से पर इस्लामी शासन है।

इस्लाम वैदिक धर्म से ही निकला इसमें कोई दो रायें नहीं। यह दूसरी बात है कि इस्लाम के अनुयायी इस बात को मानने को तैयार नहीं किन्तु किसी के मानने न मानने से सत्य समाप्त तो हो नहीं जायेगा सत्य तो अमर है। इस्लाम वास्तव में यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के सोलहवें मन्त्र पर आधारित है। इस्लाम माता खदीजा बानों के प्रकाश पुन्ज से प्रकाशित होकर हजरत मौहम्मद के द्वारा फैला, और फैलता ही गया। किन्तु माता खदीजा की मृत्यु के पश्चात इस्लाम में जो जोड़-तोड़ हुआ उसने इस्लामी समुदाय ग्रन्थ कुरआन में ऐसी बातों को वढ़ावा दिया जिसके कारण इस्लाम को वेद से पृथक समझा जाने लगा। यहां विषय है "इस्लाम में नारी"! इस्लाम में स्त्री का स्थान क्या है? इस्लामी ग्रन्थ ने स्त्री समाज को क्या आदेश दिये हैं? यह सब चिन्तन

हम दिव्य कुरआन के प्रकाश में अपनी निष्पक्ष, निर्भीक, व पैनी आंखों से ही करेंगे। हमारा उद्देश्य सही बात को बताना मात्र है। स्त्री को इस्लाम के आदेश :—

तुम रहो सिर्फ घर में, बाहर न निकलो घर से।

कुरआन —२२-३६-३८

स्त्री जो माता, बहन, पत्नि, पुत्री सब कुछ है। मानव समाज का आधार है उसी स्त्री को कुरआन ने मात्र घर में रहने का आदेश दिया है, घर से बाहर जाने का आदेश क्यों नहीं ? पुरुष हो या स्त्री सभी को समान अधिकार है। जब पुरुष घर से बाहर जाकर सामाजिक राजनैतिक जगत् में हिस्सा ले सकता है तब क्या बेचारी जगत जननी को यह भी अधिकार नहीं कि वह घर से बाहर जा सके, फ़िर गृह कार्य तो स्त्री ही करती है चाहे घर में रहे या बाहर। बाहर रहने से मेरा तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक युग में हम सब समान अधिकार लेकर यदि साथ-साथ चलें तब क्या ही आनन्द हो, प्रत्येक व्यक्ति की बुद्धि में एक नई खोज होती है, हमारा स्त्री समाज़ प्रगति क्षेत्र में पुरुषों से अग्रणी है, प्राचीन रीति अवश्य थी कि स्त्री परदे में रहें या कम घर से निकले किन्तु आज का युग बदल चुका है। एक चिकित्सालय में मैंने ससुर व बहु को एक साथ डाक्टरी करते देखा —जबकि एक युग यह भी था कि जब बहु ससुर के सम्मुख नहीं आती थी मुँह देखना तो बड़ी बात है, किन्तु आज ससुर-बहु एक साथ रहकर सामाजिक सेवा कार्य में व्यस्त है। इस्लाम का यह नियम कि स्त्रियां घर से न निकले प्राचीन युग में ठीक हो सकता था किन्तु आज तो युग बदल गया है। स्त्रियां घर की शोभा होती हैं। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि वह घर से बाहर ही न निकले चिकित्सा विज्ञान में आबो हवा (वातावरण) बदलने की बात कही गई है। इससे रोग नहीं होते, किन्तु जरा सोचिये जो मानव एक मकान की चार दीवारी में बन्द रहेगा उसका स्वास्थ्य क्या होगा ? बुद्धि क्या होगी, क्या स्त्री का कार्य मात्र झाडू-पोछा व भोग-विलास का साधन मात्र बनना है। कहीं ऐसा तो नहीं कि इस्लामी शरीयत ने स्त्री को अन्य समुदायों की स्त्रियों की तरह आजाद रहने को देखने के भय से यह आदेश दिया हो। यह तो स्पष्ट है कि मनुष्य वातावरण को देख कर स्वयं के जीवन में भी परिवर्तन करना चाहता ही है, आज मुस्लिम बहनें लम्बे काले बुर्के में देखी जा सकती है। बच्चों

की भरमार भी उनके साथ दर्शनीय होती है। इस्लाम की स्थापना के समय अरब में अनेकों कुरीतियां थी। इस्लामी युग उस समय अरब के लिए कुछ लाभप्रद अवश्य था, किन्तु अन्य देशों के लिए उनमें से कुछ नियमों की बिलकुल भी आवश्यकता नहीं थी। आज स्त्री पुरुष से भी बढ़ कर कार्य कर रही है। हमारा देश तो अनेकों वर्षों से एक स्त्री के नेतृत्व में ही उन्नति कर रहा है। यह दूसरी बात है कि हमारे देश ने केवल भौतिक उन्नति ही की है। नैतिक उन्नति के नाम पर हमारा देश भी शून्य ही हैं क्यों कि हमने प्राणी मात्र के कल्याण कारक मानव जीवन के सही मार्ग दर्शक वैदिक पथ को त्याग कर अनेकों पथ अपना लिये, सभी से हमें हानि ही हुई लाभ तो कुछ भी नहीं।

वर्तमान युग मे हम स्त्री को घर की चार दीवारी में बन्द नहीं रख सकते हमें खूब विचार कर दिव्य कुरआन से इस प्रकार के नियमों को निकाल देना चाहिए तब देखें दिव्य कुरआन की मान्यता क्या हो जाती है, किन्तु कुरआन ने स्त्री को केवल घर में रहने का ही उपदेश नहीं दिया अपितु स्त्री को जीते जी अधमरा कर दिया है। प्रत्येक स्त्री अपने पति को मात्र अपना ही प्रेमी देखना चाहती है न कि उसका पति कई स्त्रियों से इश्क लड़ाये क्या वह चुपचाप देखती रहेगी। स्त्री मन बड़ा कोमल होता है। मानव समाज में स्त्री का विशेष स्थान है और हमें चाहिए कि स्त्री के मनोभाव को समझें उसका आदर भी करें। पत्नी तो केवल एक ही हो सकती है। हमें चाहिए कि जिस प्रकार स्त्री वफादार रह कर एक ही पति के साथ सारा जीवन व्यतीत करती है। हम भी वैसे ही एक ही पत्नि के साथ जीवन का आनन्द लें। एक स्त्री को अपना बना लें व हम स्वय उसके बन जायें। यह समर्पण ही मनुष्य को महान बना देता है। वैदिक शास्त्रों में स्त्री को अर्धांगिनि माना गया है अर्थात जो पति का आधा अंग है जो पति को प्रत्येक संकट से बचाती है, पति के दुखों को पीकर उसे वास्तविक आनन्द का आभास कराती है वही स्त्री जो मां बन कर प्रेम बांटती है स्वयं गीले में सोकर भी पुत्र को सूखे में सुलाती है। तब क्या वह पत्नि बन कर यह सहन कर पायेगी कि उसका पति उसे छोड़ किसी दूसरी स्त्री के उनकी सौतन बना कर उसी के सामने लाकर रखे स्वयं दूसरी स्त्री के साथ आनन्द मनाये-वह बेचारी घुटन का जीवन व्यतीत करे। तब उसके हृदय पर कुठारा घात नहीं होगा क्या, स्त्री कोई पैर की जूती तो

है नहीं कि जब चाहा बदल लिया। जीवात्मा है उसे भी जीने का अधिकार है किन्तु घुट-घुट कर या सिसक सिसक कर कोठे में बन्द रहकर नहीं।

स्त्री प्रम चाहती है भूखी-प्यासी फटेहाल रह सकती है किन्तु उसका पति उसे छोड़ दूसरी को उसी के सम्मुख सौतन के रूप में रखे यह कभी सहन नहीं कर पाती इस्लाम के अनुयायी यह कहते नहीं थकते कि इस्लाम में स्त्री का ऊंचा स्थान है इस्लाम ही वह मजहब है जहां औरत को समान अधिकार है। यह कहने वाले मुस्लिम जिस प्रकार अपने हरम् (घर) में चार-चार कमसिन युवतियों को फंसा कर किस प्रकार रखते—आश्चर्य तो यह है कि दिव्य कुरआन के आदेश पर यह सब दिन दहाड़े होता है उस पर भी समानाधिकार व प्रेम के भाषण, क्या यह उचित है। कुरआन का आदेश देखें:—

तुम्हारे लिए जायज है, दो-दो तीन-तीन और चार-चार तक विवाह कर लें। कुरआन अन निसा ३

यह है कुरआन व इस्लाम में स्त्री को प्रेम व समान अधिकार देने का नियम व ढ़ंग चार विवाह एक साथ एक घर में चार पत्नियां आज भी नित्य प्रति यह सब होता है। कमाल तो यह है कि भारत जैसे धर्म निरपेक्ष गणतन्त्र में भी यह सब होता है। जहां वैदिक धर्म ने स्त्री को महान स्थान दिया हो वहीं दूसरी ओर स्त्री को केवल पैर की जूती समझा जाये कहां तक उचित है। आज अभाव के कारण एक पत्नि का भार उठाना ही कठिन है, तिस पर इस्लाम का चार विवाह करने का आदेश क्या हमारे मुस्लिम बन्धु कुरआन से इस प्रकार की बातों को निकाल पायेंगे। किन्तु कुरआन का आदेश तो माना ही जाता है चाहे चारों पत्नियां भूखीं मरे या उनके बच्चें भीख मांगे चोरी डकैती करें। किन्तु चार विवाह करना आवश्यक आदेश है कुरआन का। तब मानना तो है ही। मेरे नगर में एक रिक्शा चालक था दैनिक आय मुश्किल से दस रुपये थी पत्नियां चार थीं और बच्चे बीस प्रत्येक वर्ष चार बच्चे होना भी आवश्यक ही हो गया था। जब वह रिक्शा चालक घर वापस आता तो प्रश्न होता खाना, दस रुपये में चार पत्नियों व बीस बच्चों का खाना कैसे आये घर में कोहराम मचता सारी पत्नियां व बच्चे मिल कर बूढ़े को मार लगाते वह बूढ़ा रोता और

पछतावा करता–अब कर भी क्या सकता था। किन्तु पेट तो भरना ही है। एक दिन उसके एक पुत्र ने चोरी की पकड़ा गया जेल गया वह बूढ़ा क्षय रोग से पीड़ित हुआ, अब वह सड़क के चारों ओर घूम-घूम कर भीख मांगता हैं। उसके बच्चे भी कुछ भीख मांगते हैं कुछ मूंगफली इत्यादि बेच कर काम चलाते हैं, दो पत्नियों ने तो पुनः विवाह कर लिया एक पत्नी अपने पिता के घर चली गई एक पत्नी वैश्यावृति करके अपना खर्च चलाती है। इस्लाम के अनुयायी पन्द्रह सौ वर्षो से इस कार्य को करते आ रहे हैं। इसी प्रकार अनेकों परिवार छिन्न-भिन्न होते हैं। अनेकों लोग भीख मांगने पर मजबूर होते हैं तो अनेकों चोरी-लूटमारी को ही कर्म मान लेते हैं बेचारी स्त्री फिर लुटती हैं फिर अनेकों पुरुषों की बाहों से गुजरती है और शान्त रहकर आंसू पीकर घुंट-घुट कर जीती है।

अबला जीवन तेरी हाय यही कहानी
आंचल में है दूध और आँखों में पानी

आज भी जब भी किसी अस्सी साला बूढ़े की नजर किसी अठ्ठारह साला बेसहारा युवती पर पड़ती है तो उसका तो मन ललचा जाता है उसे सहारा देने के नाम पर अपने हरम् में फंसा कर बेगम बना लेता है। छः माह बाद अल्लाह को प्यारा हो जाता है, उस स्थिति में वह युवती वैश्या बनती है या गुप-चुप रूप से शरीर का व्यापार करती है इस्लाम का यह नियम वर्तमान स्थिति में उचित नहीं। हमें ऐसे नियमों को बदलना होगा तब जाकर कहीं हम समाज में समता की बात कर पायेंगे हमारे मुल्ला मौलवी आये दिन जो इस प्रकार के विवाह कराते हैं। हमारे मौलवियों को यह सोचकर ही विवाह कराने चाहिए कि वर-वधू साथ-साथ जीवन व्यतीत कर पायेंगे या नहीं। पैसे के लोभ में ऐसे निकाह भी नहीं कराने चाहिये जिसमें आयु विचार व गुण कर्म की समानता न हो।

हमारी मुस्लिम बहनें भी बहु पत्नी प्रथा का विरोध करें व समाज को बता दें कि स्त्री जाग्रत है, वह पत्नी है किन्तु दासी नहीं पति की दासी है किन्तु उस स्थिति में जब कि उसका पति भी उस का दास हो, उसका प्रेमी हो उसे उतना प्रेम दे जितना आवश्यक है आशा है मुस्लिम बन्धु विचार करेंगे। यह न सोचें कि मैं किसी

गलत भावना से इस बात को यहां लिख रहा हूं। एक चिकित्सक होने के नाते मेरा यह कर्तव्य है कि मैं समाज में फैले रोगों की ओर ध्यान दूं। जितना बन सके उन रोगों का यथा सम्भव निदान करूं, चिरायता कड़वा होता है किन्तु रक्त को कुन्दन बना देता है, मेरी बातें कुछ मुस्लिम बन्धुओ को (जो धर्मान्ध हैं) चुभेंगी जरूर किन्तु यदि मेरी बात को समझ ले तो यह कोढ़ जो समाज में फैला है समाप्त हो सकता है जिस प्रकार कड़वी दवाई जल्दी फायदा करती है उसी प्रकार मेरे सत्य विचार भी आपको शीघ्र लाभ देंगे।

हम चर्चा कर रहे थे चार विवाह की, विवाह, निकाह, या पाणि ग्रहण संस्कार का महत्व मानव जीवन में अनादि काल से है। विवाह सूत्र में बधने वाले वर-वधू भी तो एक दूसरे के प्रति समर्पित भावनायें लेकर हो हाथ में हाथ लेते हैं, किन्तु क्या चार विवाह करके हम अपने उस संकल्प को पूरा कर सकते हैं जिस प्रकार एक स्त्री एक समय में केवल एक पति रख सकती है उसी प्रकार एक पति को भी यही अधिकार होना चाहिए, यदि मुस्लिम बन्धु यह बात स्वीकार नहीं करते तों स्त्रियां प्रत्युत्तर में एक साथ चार-चार पति रखे इस्लाम का यह नियम स्वय ही बदल जायेगा। आज मुल्ला वर्ग यह दलील अवश्य देता है कि हजरत मोहम्मद ने भी कई विवाह किये थे इस लिए व अल्लाह का आदेश कुरआन में है इसीलिए चार विवाह सुन्नत हैं चलिये मान लिया हजरत मोहम्मद ने कई विवाह किये थे व कुरआन का आदेश भी है किन्तु क्या कुरआन में यह नहीं बढ़ाया जा सकता कि एक स्त्री एक समय में चार पति रखने को अधिकारी है, जिस प्रकार भंग पीने वाले यह कहते हैं कि भगवान शंकर भंग पिया करते थे। इस लिए हम भंग पीते हैं। क्या शंकर को किसी ने भंग पीते देखा यह दलीलें सब बेकार हैं आधुनिक युग में समान अधिकार तो देना ही होगा स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष करें।

मानव समाज आज अणु व परमाणु बम के भय से ग्रस्त तो है ही साथ ही समाज में आर्थिक संकट भी बढ़ते ही जा रहे हैं, कारण मानव भोग विलास को प्राथमिकता देता है, भोग विलास में कुरआन का एक बहुत बड़ा हाथ भी है, स्वयं कुरआन ने ऐसी शिक्षाएं दी है जो मानवता व राष्ट्रीयता के हित में नहीं। नारी पूज्या है।

मानवता की जननी नारी है, फिर पत्नि के पश्चात प्रत्येक नारी से हमारा सम्बन्ध माता, बहन या पुत्री का ही होना चाहिए किन्तु कुरआन से अरबी काल में मुस्लिम शासकों व आन्दोलनकारियों ने युद्ध में पकड़ी गई युवतियों को रखैल (लौंडी) बनाकर अपनी वासना का शिकार बनाया और सब कुरआन के आदेशानुसार किन्तु इसके विपरीत छत्रपति शिवाजी ने युद्ध में पकड़ी गई गौहरबानू को ससम्मान उसके पिता के पास पहुंचवा दिया था, कारण हिन्दू समाज की मान्यताएं स्त्री के साथ माता की हैं, किन्तु कुरआन ने तो हद कर ही दी है यहाँ तक की चार पत्नियां रखने की बात, तिस पर युद्ध में पकड़ी गई लोंडी व अन्य स्त्रियों को धन के बल पर प्राप्त करने का आदेश।

और विवाहित स्त्रियां तुम्हारे लिए अवैध है जो किसी के निकाह में है। सिवाय उनके जो लौंडी [युद्ध में जीती गई स्त्री] के रूप में तुम्हारे कब्जे में हैं, यह अल्लाह का आदेश है इसके अतिरिक्त और स्त्रियां तुम्हारे लिए वैध है कि तुम अपने माल द्वारा उन्हें प्राप्त करो। कुरआन अननिसा २४ जो स्त्री किसी के निकाह में है वह तो अवैध है, सुन्दर आदेश है किन्तु प्रश्न यह उठता है कि जो स्त्रियां कुमारी हैं या अविवाहित है। उन्हें अल्लाह ने माल द्वारा प्राप्त करने की बात क्यों कही इसका अर्थ तो यह है कि अपनी पत्नी, लौंडी के बाद जो भी स्त्रियां हैं [वह चाहे माता, बहन या पुत्रियां हो] उन्हें धन द्वारा प्राप्त करना पाप नहीं अर्थात वैश्यावृति को पनपाने का आदेश भी कुरआन में है। क्या यही मानवीय धर्म है। जरा विचारिये।

सम्भवतः आज के मुल्ला मौलवी इन्हीं आदेशों के पालन हेतु अनेकों नव युवतियों को वृद्धावस्था में भी अपनी वासना का शिकार बनाते हैं।

मुस्लिम बन्धुओं प्राचीन कुरीतियों को त्याग कर विज्ञान के इस मानवीय युग में सबको समानाधिकार देना ही होगा तब कब तक बेचारी स्त्री को बुर्के व घर की चारदीवारी में कैद रखा जा सकेगा। इसके साथ भी तो न्याय होना चाहिये ! तब न्याय क्षेत्र में आयी स्त्री के साथ जो अन्याय आज तक हुआ कुरआन के आदेश पर होते रहे हैं व

हो रहे हैं उन्हें समाप्त कर हम स्त्री को समान अधिकार दें उसे वास्तविक रूप में अर्धोजिवी स्वीकारें व उसे अपने साथ बढ़ने का अधिकार दें आशा है मुस्लिम बन्धु विचारेगें।

विश्व की समस्त मुस्लिम बहनों से मेरा अनुरोध है कि कुरआन की अज्ञानता भरी बातों को न स्वीकारें यदि इस्लाम के नाम पर किसी बहन के साथ अत्याचार होता है तो वह आवाज उठायें। पूरा समाज उनकी आवाज को सुनेगा यदि महिलायें चाहें तो कुरआन के महिला विरोधी नियम बदले जा सकते हैं। नव युवक मुस्लिम बन्धु व बहनें इस पर गम्भीरता से विचार करें और बहु विवाह प्रथा, युवा (कुछ समय के लिए विवाह) का विरोध करें स्त्री पर लगी पाबन्दियों का विरोध करें कोई भी महिला अपने पति को दूसरा विवाह न करने दें। यदि पति कोई गलत कदम उठाये तो उसका पूर्ण विरोध करें समाज के अन्य सज्जनों तक उस बात को पहुँचाये जिससे उसे न्याय दिलाया जा सके इस्लाम के शान्ति वाले स्वरूप को आज सच्चे रूप में प्रस्तुत नही किया जा रहा है। अतः मुस्लिम बुद्धि जीवी वर्ग समय के अनुसार बुद्धि हीन सिद्धान्तों को बदले–समय रहते यह कार्य न किया गया तो परिणाम बुरे ही निकलेंगे। हमारी बहने सामाजिक परिवर्तन हेतु महिला क्रान्ति की ज्योति को प्रज्जवलित करें व समाज में यत्र नारियस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता—के सन्देश को साकार करें।

———

कुरआन के विज्ञान व बुद्धि विरूद्ध–आदेश ?

कुरआन को ईश्वरीय ग्रन्थ कहा जाता है। किन्तु क्या वास्तव में कुरआन ईश्वरीय ग्रन्थ है ? पिछले पृष्ठों में मैं लिख चुका हूं कि कुरआन अपनी प्रत्येक बात का खण्डन स्वयं ही करता है। अब हम देखते हैं कि क्या कुरआन विज्ञान व बुद्धि को मानता है या इसके विपरीत है ! हमारे अनपढ़ मुल्ला मौलवी सीना ठोक कर यह बात कहते हैं कि कुरआन विज्ञान व बुद्धि को मानता है। किन्तु हमने जब अपनी पैनी आंखों से कुरआन का अध्ययन किया तो पाया कि हमारे मुल्ला मौलवी यह बात मजाक में ही कह देते हैं। वास्तविकता से इसका कोई सम्बन्ध नहीं।

हम इन सारी बातों को किसी द्वेश या घृणा वश नहीं लिख रहे वास्तव में कुरश्रान क्या चाहता है ? क्या है ? यह बातें हम संसार के प्रत्येक मानव तक पहुंचाना चाहते हैं ! यह हमारा परम् कर्त्तव्य भी है ! वास्तव में यह कुरश्रान का प्रचार ही है। किन्तु हमारे साथ समस्या यह है कि एक तरफा बात को ही प्रस्तुत करना हमें नहीं श्राता, श्रपितु हर बात की तुलना करके उसे सत्य की कसौटी पर कस कर ही हम संसार तक उसे पहुंचाने का कार्य करते हैं ! हमारी इन बातों से यदि किन्हीं भाई को ठेस या चोट लगे तो हम क्षमा प्रार्थी हैं।

हां तो हम चर्चा कर रहे थे विज्ञान व बुद्धि की ! श्रायें देखें क्या वास्तव में कुरश्रान विज्ञान व बुद्धि को मानता है।

वही जिसने तुम्हारे लिए धरती को बिछौना व श्राकाश को छत बनाया। (बकर–२२)

धरती बिछौना व श्राकाश छत हैं क्या कमाल है बुद्धि व विज्ञान का। देखिये कुरश्रान के रचियता ने श्राज मंहगाई के युग में कितने सस्ते में काम बना दिया। भारत सरकार क्या विश्व के प्रत्येक देश की सर-कार रोटी कपड़ा श्रौर मकान की समस्या से पीड़ित है। लगता है हमारी सरकारों ने कुरश्रान नहीं पढ़ा वर्ना मकान को समस्या तो हल कर ही लेते। श्रब देखिये न जब धरती बिछौना बन गई तब बिस्तर का खर्च बचा, पलंग का खर्च बचा, सबसे बड़ी बात तो यह कि मकान बनाने की श्रावश्यकता ही नहीं रही। बस धरती पर सोइये, श्राकाश तो छत के रूप में है ही, फिर कैसी चिन्ता। श्राराम करो। कितने सस्ते में काम निबटा दिया कुरश्रान के श्रल्ला ताला ने, भाई क्या श्रकल पाई है कमाल नहीं। लेकिन यदि वर्षा हुई तब क्या हमें श्राकाश रूपी छत बचा सकेगी क्या शीत से हम बच सकेंगें वर्फ कहां रूकेगी क्या वास्तव में श्राकाश छत हो सकता है ! विज्ञान की दृष्टि से तो श्राकाश कुछ है ही नहीं तब श्राकाश छत बनेगा कैसे ! क्या बुद्धि इस बात को स्वीकार करेगी कि श्राकाश छत धरती बिछौना है ! कदापि नहीं ! तब श्रल्लाह ताला ने इस प्रकार का बुद्धि विरोधी श्रादेश क्यों दिया क्या वास्तव में कुरश्रान ईश्वरीय ग्रन्थ है। यदि ईश्वरीय ग्रन्थ होता तो इस प्रकार के विज्ञान व बुद्धि विरोधी श्रादेश क्यों देता ! चलिए मान लिया कि धरती बिछौना व श्राकाश छत है तब क्या हमारे मुस्लिम बन्धुश्रों ने

यह नहीं सोचा कि यदि चोर आ गये व सामान चुरा कर ले गये तब क्या होगा ! यदि कीड़ों मकोड़ों ने हमें काटना शुरू किया तब कैसे बचाव करेंगे इन सारी बातों पर चिन्तन करें हमारे मुस्लिम बन्धु जो कुरआन पर विश्वास करते हैं। विज्ञान व बुद्धि की दृष्टि से तो न आकाश छत हो सकता है न धरती बिछौना ! किन्तु कुरआन इसी प्रकार के अनेकों आदेशों से भरा पड़ा है। जिनका सम्बन्ध बुद्धि से नहीं है इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि कुरआन परमेश्वर द्वारा रचित नहीं, अपितु किन्हीं मानवों द्वारा रचित ग्रन्थ ही है। जिन्होंने अपनी अल्प बुद्धि के आधार पर ही कुरआन की रचना की। आशा है मुस्लिम बन्धु इन विषयों पर विचार करेंगे किन्तु इतना मात्र ही नहीं कुरआन का अगला आदेश देखिये :—

और तुम्हारे ऊपर हमने सात गुजर गाहें (आकाश) बनाई।

(अल मोमिनन–९६)

यह देखिए कुरआन का अगला आदेश कि हमने तुम्हारे ऊपर सात सात आकाश बनायें हैं, अब तक धरती बिछौना व आकाश छत था किन्तु अब आकाश सात हो गये हैं। विज्ञान की दृष्टि से आकाश कुछ है ही नहीं मात्र प्रतीत होता है। वास्तव में धरती के चारों ओर जल का भण्डार है उसी जल की नीली छाया धरती के ऊपर नीली पड़ती है उसी को हम आकाश समझते हैं, आप अन्तरिक्ष में कितने भी ऊंचे उड़ते चले जाइये उसकी कोई लम्बाई या ऊंचाई मापी नहीं जा सकती फिर कुरआन का ईश्वर सात आकाश किस आधार पर मानता है। आज बुद्धि व विज्ञान के युग में सात आकाशों की कोरी कल्पना मात्र बुद्धि-हीनता, अज्ञानता मात्र ही लगती है संसार आगे जा चुका है विज्ञान दिन प्रतिदिन उन्नति की ओर अग्रसर है। और हमारे मुस्लिम बन्धु हजारों वर्ष पूर्व की थोथी दलीलों पर ईमान लिए बैठ हैं। मेरा मुस्लिम बन्धुओं से अनुरोध है कि इस प्रकार की विज्ञान व बुद्धि विरोधी बातें कुरआन से निकाल दें तब अधिक उचित रहेगा। इस प्रकार की बुद्धि विरोधी बातों से कुरआन के सत्य सन्देशों से भी समाज का विश्वास हटता जा रहा है। समय की पुकार को तो सुनना ही पड़ेगा लकीर के फकीर बनने से कार्य नहीं चलता यह सारी बातें हम इसी लिए लिख रहे हैं कि इस्लाम की युवा बुद्धि जीवी पीढ़ी इस प्रकार के ढकोसलों को समाप्त कर इस्लाम के वैदिक स्वरूप को स्वीकार करें व विज्ञान के इस

युग मैं बुद्धि व तर्क के आधार पर जीना सीखें हमारी बातें कटुसत्य होने के नाते चुभती अवश्य होगी किन्तु यदि इन पर विचार कर लिया तो यही काँटे आपको वास्तविक आनन्द की अनुभूति करा देंगे।

आइये आपको ले चलते हैं इस्लाम के एक और दर्पण की ओर इस्लाम के दर्पण में हम बुद्धि व विज्ञान को पुनः कसते हैं। कहा जाता है कि एक बार हजरत मौहम्मद अल्लाह ताला से भेंट करने हेतु (मैराज-शरीफ) अल्लाह ताला के पास सातवें आसमान पर गये वैतुल मुकद्दिस (जो आजकल इसराईल के कब्जे में है) की एक मीनार पर मोहम्मद साहब चढ़े, आकाश में एक खिड़की खुली, उससे एक झूला नीचे आया, मोहम्मद साहब उस झूले में बैठकर आकाश में चले गये। किन्तु पहले के बाद दूसरे तीसरे चौथे आकाश पर कैसे गये क्या अल्लाह ताला ने लिफ्ट लगवा रखी हैं? या सीढ़ियों से जाने का मार्ग है! सात आकाशों की ऊंचाई चढ़ने में कितना समय लगा। वाईबिल का ईश्वर चौथे आसमान पर रहता है क्या वाईबिल के खुदा ने मोहम्मद साहब को ईसाई बनने का न्योता नहीं दिया ? क्या बीच के अन्य आकाशों पर बसने वालों ने मोहम्मद साहब को रोका नहीं ? क्या सात आकाशों की ऊंचाई उतनी हो है जितनी हमें एक आकाश की दिखाई पड़ती है ? इन सारे प्रश्नों का उत्तर कुछ भी नहीं, क्योंकि सत्य यह है कि मोहम्मद साहव ने अरव की जनता पर अपना प्रभाव जमाने के उद्देश्य से यह कोरी गप्प प्रचलित की। कहा यह जाता है कि मोहम्मद रात्रि में ही सारा कार्य कर वापस लौट आये थे उन्हें जाते या आते हुये किसी ने नहीं देखा इतना ही नहीं कहा जाता है कि अल्लाह ताला व मोहम्मद साहव के वार्तालाप के मध्य चन्द्रमा ने मुख निकाल कर देख लिया मोहम्मद साहव ने ऊंगली उठाई और चन्द्रमा के दो टुकड़े हो गये एक पूरब में व एक पश्चिम में चला गया। भय्या आज जो यह चन्द्रमा पूर्ण हो जाता है। व एक ही है। यह कैसे हो गया। प्लास्टिक सर्जरी द्वारा हुआ या आर्थोपेडिक (हड्डी विज्ञान) के डाक्टरों ने चन्द्रमा का प्लास्टर आदि किया कितने दिन चन्द्रमा को एन्टीवायटिक इन्जेक्शन कैप्सूल व सीरप लेने पड़े। कितने दिन डाक्टरों ने विश्राम कराया? तभी तो चन्द्रमा ठीक हुआ होगा या वैसे ही कोई कमाल हो गया कहा यह भी जाता है कि इस घटना का प्रत्यक्ष दर्शी कोई नहीं क्योंकि मोहम्मद साहव जिस प्रकार रात्रि को सोये थे उसी प्रकार प्रातः सोते

हुये मिले ऐसा तो नहीं कि मोहम्मद साहब ने कोई सपना देख लिया हो और उसी को वास्तविक घटना क्रम बना दिया हो। भई ईश्वर का दूत बनने में झूठ तो बोलना ही पड़ता है जिस प्रकार हमारे रामायण के रचनाकार ने लिखा है कि हनुमान जी एक बार सूरज को लड्डू समझ कर खा गये और धरा पर लम्बे समय तक अंधकार रहा जब हनुमान जी का क्रोध उतरा तभी सूर्य महाशय बाहर आये वर्ना सूर्य बेचारा तो लड्डू है ही खा गये।

गप्पों की सीमा होती है गप्प सुनों जी गप्प, तुमसे बड़ी है मेरी गप्प। लेकिन गप्पों को वास्तविक बताना सबसे बड़ी मूर्खता है। जहां हमारे पंडे पुजारियों ने अनावश्यक रूप से गप्पों के चमत्कारों का स्थान दिया है वही कुरआन की रचना करने वालों ने पुराणों के आधार पर ही कुरआन में भी गप्पों को अधिक स्थान दिया है। विज्ञान व बुद्धि की कसौटी पर न हनुमान सही उतरते हैं न मोहम्मद। क्योंकि दोनों के सन्देश में जो बातें कही गई हैं वह बहुत बड़ा झूठ है। छोटा मोटा झूठ तो चल सकता था किन्तु इतना बड़ा झूठ कि अब तक के झूठों में सबसे बड़ा झूठ हो उसे भक्त तो मान सकते हैं किन्तु बुद्धि व विज्ञान के छात्र किस प्रकार इन कपोलों को मान लें !

आज का युग विज्ञान का वैदिक युग है। इस युग में हमें सत्य व विज्ञान की ओर बढ़ना है। अन्धकार असत्य व चमत्कारों की कोल कपोल सारी बातों को त्याग कर। किन्तु इस प्रकार के दोगले ग्रन्थ हमें हजार वर्ष पीछे घसीटना चाहते हैं। हम तो अरबों वर्षों से प्रवाहमान विज्ञान व बुद्धि क प्रवर्तक प्रणेता वेदों की मान्यताओं को मानते हैं। क्योंकि वेद कोई गप्प नहीं कोई इतिहास नहीं वेद, विज्ञान, ज्ञान, सत्य व बुद्धि का भण्डार हैं उसी पवित्र वेद के उपदेशों से हम असत्य व अंधकार को समाप्त कर सकते हैं।

असतो मा सदगमयम तमसो मा ज्योतिर्गमय !

भाव—असत्य से सत्य की ओर व अंधकार से प्रकाश की की ओर बढ़ना ही मानवों का प्रथम कर्म है। हे मानव इस जीवन को पाखण्ड से पृथक कर बुद्धि, विज्ञान, सत्य व ज्ञान के आधार पर चलाओ !

क्या इन सारी बातों को कुरआन स्वीकार कर पायेगा, किन्तु कुरआन

तो अंधकार की ओर ले जाना चाहता है। वहाँ ले जाना चाहता है जहां ईश्वर की सत्ता से पूर्व मोहम्मद साहब की सत्ता को माना जाये उनके कपोल चमत्कारों को माना जाये। इस प्रकार के आदेशो को स्वीकारना आज के बुद्धिजीवी, विज्ञान मय युग में कठिन ही है। आज अन्तरिक्ष की उड़ान भरने में समय लगता है। केवल ३०० किलोमीटर ऊपर जाने के लिए राकेट का प्रयोग व अनेकों यन्त्रों उपकरणों का प्रयोग इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है ! तब क्या करोड़ों मील जाने के लिए मोहम्मद साहब को राकेट आदि की व्यवस्था नहीं करनी पड़ी ! तब राकेट या विमान थे या नहीं इसी प्रकार की अनेकों शंकायें कुरआन के इस प्रकार की विज्ञान व बुद्धि मय बातों से दूर रख कर मात्र चमत्कार को नमस्कार करने वाला बनाया जाता है। झूठी मनगढ़न्त बातों के आधार पर बेचारे भोले भाले मानव के हृदय में भय व स्वर्गादि का लोभ उत्पन्न कर उसे धार्मिक कट्टरता में बांध दिया जाता है। आज की युवापीढ़ी इस वातावरण में अपने को घुटता हुआ महसूस कर रही है बुद्धि जीवी पीढ़ी को इस्लाम के अन्धकार मय वातावरण से छुटकारा दिलाना परम् आवश्यक है। आयें नये युग की ओर चलें कहा जाता है कि हजरत मोहम्मद पढ़े लिखे नहीं थे ! अल्लाह ताला की ओर से कुरआन की आयतें आने से पूर्व एक बार जिवराईल नामक फरिश्ता आया और मोहम्मद साहब को एकान्त में ले गया उन से कहा पढ़ो, मोहम्मद साहब ने उत्तर दिया मैं नहीं पढ़ सकता, फरिश्ते ने कई बार कहा पढ़ो, किन्तु हर बार मोहम्मद साहब ने यही उत्तर दिया कि मैं नहीं पढ़ सकता अन्त में उस फरिश्ते ने मोहम्मद साहब को अपने वक्ष में सटा लिया इतना भींचा इतना भींचा कि मोहम्मद साहब की पसलियां फरिश्ते की पसलियों में व फरिश्ते की पसलियां मोहम्मद साहब की पसलियों में घुस गई और मोहम्मद साहब पढ़ने लगे अलिल लाम मीम जाले कल कितबो ला रैब ! अब प्रश्न उठता है कि एक अनपढ़ व्यक्ति को यदि इस सक्षिप्त व सरल विधि से विद्वान व शिक्षित बनाया जा सकता है। तब अल्लाह ताला ने कुरआन के मानने वाले हर अशिक्षित व्यक्ति को शिक्षित क्यों न बना दिया। आज करोड़ो मुसलमान अशिक्षित हैं भीख मांग कर चोरी करके काम चलाते हैं तब क्या अल्लाह ताला अपने फरिश्ते से इन सारे मुस्लमानों को शिक्षित नहीं कर सकता था। भई शिक्षित करने से लाभ ही लाभ हैं। हमारी धर्म निरपेक्ष, तुष्टि करण वादी नीति को मानने वाली सरकार तुरन्त सारे मुस्लमानों को अच्छे पदों पर

ले सकती है ! तब तो शीघ्र ही अल्लाह ताला को यह कदम उठाना चाहिये दूसरा प्रश्न यह है कि आज किसी को चोट लग जाती है तो मरहम पट्टी करानी पड़ती है। तब उस समय जब मोहम्मद साहब व फरिश्ते की पसलियां आपस में घुम गई थी तब उन्हें ठीक होने में कितने दिन लगे। कितने दिन अस्पताल में रखना पड़ा। क्या मोहम्मद साहब के फेफड़ खराब नहीं हुये। क्या मोहम्मद साहब की हड्डी से चोट खाकर हृदय में खराबी नहीं आई। इस प्रकार के अनेकों प्रश्नों का उत्तर क्या है ? उत्तर स्वरूप यही कहा जायेगा कि यह अल्लाह ताला व मोहम्मद साहब का व्यक्तिगत मामला है हमें इससे क्या लेना देना। हमारे मुल्ला मौलवी इसी प्रकार के उत्तर देकर टाल देते हैं किन्तु विज्ञान व बुद्धि के इस युग में किस प्रकार इन मूर्खता पूर्ण बातों को स्वीकार किया जाये हमारी बुद्धि में तो इस प्रकार की बातें उतरती नहीं हां अनपढ़ सीधे साधे लोगों को इन चमत्कारित बातों के छलावे में फंसाया जा सकता है। वह कार्य आज भी निरन्तर चल रहा है।

हम विरोधी केवल उस बात को करते हैं जो बुद्धि सम्मत नहीं कहा जाता है कि खुदा सातवे आसमान पर रहता है वहां एक तखत पड़ा है उस तखत को आठ फरिश्ते पकड़े हैं जिस पर अल्ला ताला बैठा है व सारी सृष्टि का संचालन कर रहा है। उस तखत पर अल्लाह ताला के बराबर ही एक किताब रखी है जिसके चार भाग हैं। उसका नाम वुद है। जब प्रलय होगा तब अल्लाह ताला उसी किताब के माध्यम से सृष्टि की रचना व श्रेष्ठ मानवों के राज्य की स्थापना करेगा—प्रथम तो परमेश्वर यदि सृष्टि का सचालक है तब वह एक स्थान पर बैठकर यह सारा कार्य नहीं कर सकता उसे सर्व व्यापी होना ही चाहिये दूसरा यह कि वुद वास्तव में वेद का अपभ्रन्श है अरबी भाषा में मात्राएं बड़ी अजीब लगती हैं और व वा में कोई अन्तर नहीं यह धोखे से वाओं लग गया जबर के स्थान पर वेद से वुद हो गया। चार भाग केवल वेद के ही हैं। यह बात कि प्रलय के बाद उस पुस्तक को उतारेगा बाद की जोड़ी गई बातें हैं। हां एक बात है आजकल प्रजातंत्र का युग है सन् ७६ में जनता ने इन्दिरा को सत्ता से उलट दिया था हमें भय है कि कहीं फरिश्ते अल्लाह ताला का तखता पलट कर कहीं अल्ला ताला को तखते के नीचे दबा न दें फिर इस सृष्टि का संचालन कौन करेगा हमारा चिन्तित होना तो स्वाभाविक है। किन्तु

इस प्रकार की बुद्धि विरोधी बातों से लाभ क्या है। मात्र यह ही नहीं कहा जाता है कि पहले हाथ का पंजा मुड़ता नहीं था एक बार किसी काफिर ने हजरत मोहम्मद को थप्पड़ मार दिया, बस थप्पड़ मारते ही उस व्यक्ति का हाथ टूटकर धरती पर गिर गया वह रोने लगा मोहम्मद साहब तो बेचारे बड़े दयालु थे उन्होंने तुरन्त उस व्यक्ति का हाथ का पंजा धरती से उठाया अपना थूक लगाकर जोड़ दिया तभी से पंजा मुड़ने लगा। मेरी पूज्य माता जी ने मुझे यह घटनाएं बचपन में सुनाई थी। अब जब मैं युवा हो गया हूं तब मैं यह सोचता हूँ कि यदि मोहम्मद साहब के थूक में इतनी शक्ति थी कि हड्डी जुड़ सकती थी तब हड्डी विभाग बनाने की आवश्यकता ही नहीं थी। बस जब तक मोहम्मद साहब जीवित थे उन्हें सारे कार्यों से दूर रखकर दिन भर उन से थूकवा कर उनका थूक डब्बों में बन्द करवाकर रख लिया जाना चाहिये था। जिससे किसी की भी हड्डी टूटने पर तुरन्त बिना किसी पीड़ा एक्सरे जांच व अन्य लफड़े के थूक लगाकर जोड़ दिया जाता हल्दी लगी न फिटकरी रंग चोखा आये या यह कि जो मुल्ला मौलवी इन बातों का प्रचार करते है उनसे इसके प्रत्यक्ष प्रमाण मांगे जायें या उनसे कहा जाये कि हजरत मोहम्मद के बाद आप सब नायब रसूल हैं। आप अपने थूक से हड्डी जोड़िये तब इस गप्प की सत्यता स्वयं ही प्रकट हो जायेगी। लेकिन इस घटना में अंश मात्र भी सत्यता होती तो कुछ न कुछ तो सामने होता ही ! इन सारे गपोड़ों व बुद्धि हीन कथाओं से लाभ तो कुछ भी नहीं इस प्रकार की आदतों या घटनाओं से तो यही लगता है कि कुरआन परमेश्वर द्वारा नहीं अपितु किन्हीं बुद्धि हीन व निरक्षर व्यक्तियों की रचना मात्र है जो विज्ञान व बुद्धि के पूर्णतया विपरीत है, व चमत्कार दिखा या बताकर लोगों को अपनी ओर आकर्षित करना चाहती है, कुरआन के रचनाकार ने इसी भय से कुरआन में अकल के दखल वाले सिद्धान्त को पूर्व हो बता दिया है। बस जो कुछ हम कर रहे हैं वही सही है इसमें बुद्धि लगाने की आवश्यकता नहीं किन्तु विज्ञान के इस युग में किस प्रकार कोई पढ़ा लिखा बुद्धि जीवी व्यक्ति इस प्रकार की बातों को स्वीकार करे वास्तव में हमारे पंड़े पुजारी व मुल्ला मौलवी अपने धन्धे को निरन्तर चलाने हेतु इस प्रकार की कपोल रचनाओं को धर्म ग्रन्थों में जोड़ देते हैं। आज भारत में कई भगवान हैं कोई हाथ उठाता है तो घड़ी उत्पन्न हो जाती है कोई अन्य प्रकार के चमत्कारों द्वारा भोले भाले लोगों को फंसाता है एक भगवान ऐसा भी

है जो वासना से ही साधना की प्राप्ति बताता है। समय आया है कि बुद्धि जीवी वर्ग जागृत हो व इन कपोल चमत्कारों का भंडाफोड़ करे व बुद्धि व विज्ञान की कसौटी पर खरी उतरने वाली बात को ही स्वीकार करें। अनेकों वर्षों से कठ मुल्ले नीम हकीम हमें मूर्ख बनाकर अपने जन्मजात धन्धे को चला रहे हैं। हमें सत्य को स्वीकार कर बुद्धि से कार्य लेना होगा तभी तो हमारा समाज उत्थान के मार्ग पर अग्रसर होगा आवश्यकता है मानव समाज को विज्ञान बुद्धि, तर्क व सत्य को बताने की जिससे पाखण्डों का खण्डन कर के हमारा मानव समाज उत्थान के पथ का पथिक बने व इस प्रकार के उपदेश देने वाले धर्म ग्रन्थों पर अंश मात्र भी विश्वास न करें !

—●—

क्या कुरआन मानवीय उपदेश देता है ?

कुरआन जो आज धरा के करोड़ो मानवों का धर्म ग्रन्थ बना हुआ है। क्या वास्तव में मानव कल्याण का उपदेश देता है ? इस विषय पर चर्चा करते हैं, कुरआन शब्द का प्रारम्भिक अर्थ है पढ़ना, इस कारण कुरआन धर्म ग्रन्थ नहीं हो सकता, कुरआन कृ धातु से बना अर्थात करना, धर्म धृ धातु से बना है अर्थात जो धारण करने योग्य हो वही धर्म, धर्म का अर्थ है आत्मसात करना-प्राणी मात्र का कल्याण करना, मानवों को बुद्धि व सत्य मार्ग दर्शाना, नैतिकता प्रदान करना, किन्तु आज जिस सम्प्रदाय को करोड़ों मानव धर्म मानते हैं, उसमें कोई भी बात धारण करने योग्य नहीं जो धारण करने योग्य है उसका खण्डन वह ग्रन्थ स्वयम् ही करता है, वास्तव में धर्म, सम्प्रदाय व रिलिजन में बहुत बड़ा अन्तर है। किन्तु तथाकथित समाज ने इन शब्दों को एक दूसरे का पर्याय मान लिया है, धर्म का अर्थ धारण करना व प्राणीमात्र को कल्याणकारी सन्देश देना। सम्प्रदाय का अर्थ है मात्र एक समुदाय का संचालन करना या मानवों में एक गुट बना देना या मानवों के मनों व विचारों का विभाजन कर देना। रिलिजन सम्प्रदाय का ही पूरक है, अर्थात मानवों में सभ्यता का अन्तर उत्पन्न करना, इस्लाम सम्प्रदाय

तो हो सकता है, किन्तु धर्म नहीं, स्वयं कुरआन ने अपने आप को एक सम्प्रदाय माना है देखें—

कुल या अय्योहल काफिरूना ला आबुदु मा ताबूदूना वला अन्तुम आबिदूना मा आबुद बन्ना अना आबिदुम मा अबत्तुम वला अन्तुम आबिदूना मा आबुद लकुम दीनों कुम वलय्या दीना (काफिरून १-६)

अर्थ—कह दो हे काफिरों (इस्लाम को न मानने वाले) मैं उसकी इबादत (उपासना) करता नहीं जिस की इबादत तुम करते हो, और न तुम उसकी इबादत करते हो जिसकी इबादत मैं करता हूं। और-और न मैं उसकी इबादत करने का जिसकी इबादत तुम करते आये और न तुम उसकी इबादत करने के जिसकी इबादत मैं करता हूँ तुम्हारे तुम्हारा दीन-मेरे लिए मेरा दीन।

यह है इस्लाम का साम्प्रदायिक दृष्टिकोण जिसमें मानव मानव के वीच दरार उत्पन्न कर दी गई है, मैं किस नाम से ईश्वर को पुकारता हूं या किस प्रकार उपासना करता हूं इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता मेरे मन में भावना शुद्ध है या नहीं-यह सोचना आवश्यक है कि फिर परमेश्वर तो सृष्टि के कण-कण में विराजमान है। देखें एकता का वैदिक सूत्र—

भावार्थ—एकम् सद्विप्रा वहुधा वदन्ति !

परमेश्वर एक हैं किन्तु विद्वान उसे अलग-अलग नामों से सम्बोधित करते हैं। अर्थात ईश्वर एक ही है। हम उसे अलग-अलग नामों से जानते हैं। यह है वेद का पवित्र उपदेश जिसमें स्पष्ट है कि परमेश्वर एक ही है। एक ही रहेगा एक ही था वह अकेला है उसका कोई साथी संगी मित्र या परिवार नही। वह एक है। उसके नाम अनेक हैं कोई ओ३म् कहता है ! कोई भगवान तो कोई खुदा, कोई गौड कहता है तो कोई अल्लाह किन्तु यह सारे ही शब्द एक दूसरे के पर्याय हैं। खुदा अर्थात जो स्वयं भू हो सृष्टि का संचालन कर्त्ता हो, अल्लाह जो परिपूर्ण हो, भगवान जो रक्षक हो ! ओ३म् जो सकल सृष्टि में व्याप्त हो। गौड जो अकेला हो रक्षक हो क्या यह सब एक ही ईश्वर के पृथक पृथक नाम नहीं किन्तु वह तो एक ही है सारे जगत् का रचनाकार व संचालन कर्त्ता

ईशा वास्यमिदम् सर्वम्। यजुर्वेद

भावार्थ—परमेश्वर सृष्टि के कण कण में समाया है।

वह है वेद का पवित्र सन्देश धरा पर बसने वाली मानव जाति के प्रत्येक घटक के मानने वालों के लिए जो मानव जाति को एकता के सूत्र में पिरोकर धरा पर मानवीय सन्देशों का प्रचार प्रसार कर मानव कल्याण कारक कार्य करने का उपदेश देता है। किन्तु इसके विपरीत कुरआन (जिसे ईश्वर द्वारा प्रदत्त ग्रन्थ माना जाता है) ने मानव एकता के विरोध में एक नहीं अनेकों आयतें लिख दी हैं। तब कैसे विश्वास करें कि कुरआन परमेश्वर द्वारा अवतरित ग्रन्थ है या अन्तिम पुस्तक है व मानवता चाहता है। कुरआन ने अपने उद्देश्य को स्पष्ट कर दिया कि कुरआन परमपिता परमेश्वर के पवित्र सन्देशों का खण्डन ही करता है देखें—

अल खलकु अयालुल्लाह !

अर्थ—इस सारी कायनात (संसार) का परिवार अल्लाह का है। कुरआन की यह आयत वैदिक सूक्ति का अरबी रूपान्तर मात्र ही है देखें—

वसुधैव कुटुम्बकम् !

भाव—यह सारा कुटुम्ब परमेश्वर का ही है !

किन्तु कुरआन ने आगे की आयतों में उपरोक्त आयत का खण्डन कर दिया है, एक ओर तो सारे ससार की मानव जाति को कुरआन ने अल्लाह का परिवार माना है। किन्तु आगे क्या लिखा है। देखें.....
और वे पहले से काफिरों के मुकाबले विजय की प्रार्थना कर रहे थे तो इन काफिरों पर अल्लाह की फिटकार है ! (बकर—८९)
जो कोई अल्लाह उसके फरिश्तों और उसके रसूल का शत्रु हुआ तो ऐसे काफिरों का शत्रु अल्लाह है (बकर—९८)
यह है कुरआन का सन्देश जिसमें काफिर अर्थात गैर मुस्लिमों का शत्रु अल्लाह है। क्या अल्लाह किसी भी मानव का शत्रु हो सकता है ? जिस अल्लाह ने सृष्टि की उत्पत्ति की मानव को उत्पन्न किया जो स्वयं एक ओर समस्त प्राणियों का पालक, रक्षाकार व रचनाकर कहाता है। क्या वह इतना मूर्ख हो सकता है कि स्वयं ही अपनी सन्तानों का शत्रु बन जाये ! पिता तो पिता ही है शत्रु तो नहीं हो सकता ! वह तो स्पष्ट कहता है कि मैं सभी का रक्षक हूं सभी का कल्याण करने वाला हूं वेदों में उपदेश है।

सनो बन्धु र्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा !

(यजु० ३२-१०)

भावार्थ— हे मनुष्यों वह परमात्मा अपने लोगों का भ्राता के समान सुख दायक, सकल जगत का उत्पादक वह सब कार्यों का पूर्ण करने हारा सम्पूर्ण लोक मात्र नाम, स्थान जन्मों को जानता है ! वही परमात्मा अपना गुरू, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है।

यह वेदोपदेश जो सत्य भी है बुद्धि सम्मत भी। अब आप स्वयं निर्णय करें कि जिस ग्रन्थ में परमेश्वर को मानवों का शत्रु बताया गया हो क्या वह ग्रन्थ परमेश्वर द्वारा रचित ग्रन्थ हो सकता है हमारे मुल्ला मौलवी बड़ा सीना ठोंक कर मानवता की दुहाई देते हैं क्या यही है वह मानवता का मुखौटा जिसमें सकल जगत् के पिता अल्लाह (परिपूर्ण ईश्वर) को मानवों का शत्रु बता दिया गया है। वह तो सबका रक्षक है। दाता है, स्वामी है। सब कुछ देता ही है। फिर क्या कभी आपने सुना कि उसने कम्युनिस्टों को भोजन, वायु या जल न दिया हो ? क्या कभी सुना कि उसने हिन्दुओं को भोजन न दिया हो, कुरआन का यह दृष्टिकोण कि अल्लाह केवल मुसलमानों का ही रक्षक व पिता है बुद्धि-हीनता का परिचायक है। अल्लाह तो सबका है सबका था, सबका रहेगा वह तो मन की भावनाओं को देखता है। हमारे आचरण, व्यव-हार व कर्मो का फल उचित रूप से देता है। यदि वह वर्ग वादी या साम्प्रदायिक बन जायेगा तब तो संसार समाप्त ही हो जायेगा। उस परमेश्वर ने हमें धरती पर उत्पन्न किया विशेषता यह है कि हमें अशरफुल मखलूकात अर्थात प्राणियों में श्रेष्ठ बनाया और अपनी पवित्र वाणी द्वारा हमें उपदेश दिया।

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। ऋ०

भाव०-अपनी बाधाओं को हटाकर अपने मन में प्राणि मात्र की कल्याण कारी इच्छाओं को बढ़ाकर प्रथम स्वयं श्रेष्ठ बनो तब सकल विश्व के मानवों को श्रेष्ठ बनाओ।

यह है उस परम पिता की वाणी कि स्वयं भी श्रेष्ठ बनो व जगत् के अन्य मानवों को भी श्रेष्ठ मानव बनाओं वह परमेश्वर सबका रक्षक हो सकता है शत्रु। नहीं कुरआन का उपरोक्त आदेश उचित नहीं। इसका अर्थ यह है कि कुरआन ईश्वर द्वारा रचित नहीं ! ईश्वर ने प्राणियों को कर्म क्षेत्र मे उतारा है हम कर्म करने में स्वतन्त्र हैं किन्तु। आज मानव समाज में एक बहुत बड़ी भ्रान्ति यह है कि कोई चोरी करे तब ईश्वर

को दोष डकैती हो बलात्कार हो दुर्घटना हो सबका दोष ईश्वर के सर मढ़ दिया जाता है शुभ हो तब ईश्वर को कोई स्मरण नहीं करता। जब अशुभ होता है तब ईश्वर को दोष कि ईश्वर ने यह कर दिया वह कर दिया। अरे मूर्ख ईश्वर क्यों करता? जो कुछ करना था तूने किया तेरे ही कर्मों का फल तो तुझे मिला तू ईश्वर को दोष देता है ! ईश्वर ने अपने धर्म (धारण करने योग्य) ग्रन्थों (वेदादि शास्त्रों) में मानव की या नव एकता व प्राणी मात्र के कल्याण करने हेतु उपदेश दिये हैं ! किन्तु कुरआन बाईबिल, लूका, इन्जील जैसे साम्प्रदायिक ग्रन्थों मे मानव जीवन में एक विष घोल दिया है। जिसका दुष्परिणाम हमारे सामने है कि मानव का शत्रु मानव बन गया है। फिर कुरआन का ईश्वर तो स्वयं ही सारे काफिरों का शत्रु बन बैठा है तब क्या वास्तव में कुरआन ईश्वरीय ग्रन्थ हैं। क्योंकि ईश्वर कभी किसी का शत्रु नहीं हो सकता वह तो सबका पिता, रक्षक, स्वामी, न्यायाधीश, शुभचिन्तक है ! देखें—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव !

(श्लोक)

भाव—तुम्हीं हो माता पिता तुम्हीं हो, तुम्हीं हो बन्धु सखा तुम्हीं हो, तुम्हीं हो रक्षक, पालक तुम्हीं हो !

भद्रं भद्रं न आ भरा ईषं ऊर्जं शत क्रतो
यदिन्द्र अऽयासि न (सामवेद)

भाव—हे हजारों प्रकार के कल्याण करने वाले प्रभु देव हमारी आत्माओं को प्राणी मात्र के कल्याण कारक विचारों से भर दे, हमें शक्ति दे नाथ कि हम मानव कल्याण के कार्यों को करते हुये संसार में जियें।

अब आप स्वयं ही तुलना करें वेद मन्त्रों व कुरआन की आयतों की क्या उचित हैं क्या अनुचित, आप स्वयं ही समझ जायेंगे। किन्तु मात्र इतना ही नहीं, कुरआन ने इस प्रकार के अनेकों आदेश दिये हैं। इस्लाम को न मानने वालों के लिये कुरआन का एक और आदेश—

ये बहरे हैं, गूंगे हैं, अन्धे हैं, अब यह लौटने वाले नहीं !

(बकर–१८)

अन्धा बहरा, गूंगा उन काफिरों को कहा गया है जो इस्लाम को नहीं मानते या यह कहिये कि मोहम्मद साहब की सत्ता को नहीं मानते परमेश्वर को तो सभी मानते हैं, यह बात दूसरी है कि परमेश्वर के

दलाल के रूप में हम किसी को मानते हैं या नहीं। वेद आदि आर्य ग्रन्थों में परमेश्वर को अकेला व एक माना गया है। तब हम कैसे मान लें कि मोहम्मद अल्लाह के अन्तिम दूत हैं, ईश्वर एक है—यह बात तो ठीक है। अब यदि मोहम्मद साहब की सत्ता को नहीं माना जाता तो खिसयानी बिल्ली खम्बा नोचे—हमें अन्धा, बहरा, गूंगा न लौटने वाला सम्बोधित किया जाता है। किन्तु ईश्वर की दृष्टि में मानव जाति का एक स्थान है व होना चाहिये तब तो उचित लगता है किन्तु यदि ईश्वर ही अलग अलग सम्प्रदाय देखेगा तब क्या होगा मानव जाति का, हम कुरआन के इस आदेश से अंश मात्र भी सहमत नहीं—न इस को स्वीकार कर सकते हैं। क्या आज के युग में कोई बुद्धि जीवी इन सारी कपोल रचनाओं को मानेगा? हमारे मुस्लिम बन्धु सीना ठोंक कर कुरआन को मानवीय ग्रन्थ व परमेश्वर द्वारा भेजी गई अन्तिम पुस्तक कहते नहीं थकते—किन्तु कुरआन के यह उपदेश कि जो मोहम्मद का शत्रु है अल्लाह उसका शत्रु है जो मोहम्मद की सत्ता को न माने—अन्धा बहरा गूंगा है यह साबित करते हैं कि कुरआन ईश्वरीय या मानवीय ग्रन्थ नहीं कुरआन एक सम्प्रदाय मात्र का ग्रन्थ है—कुरआन के उपदेश सार्वभौम नहीं मात्र मोहम्मद की सत्ता को मानने वालों के लिये ही है। कुरआन अल्लाह की रचना नहीं मोहम्मद साहब की रचना है। प्रथम या अन्तिम किताब होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। कुरआन को प्रस्तुत करने का ढंग कितना बेढगा है आपने स्वय ही देख लिया इन सारे आदेशों से कुरआन का असली चेहरा सामने आ गया—इससे मात्र यही लगता है कि कुरआन भय दिखाकर मानवों को मोहम्मद की सत्ता को मानने के लिये वाध्य करता है—अल्लाह की सत्ता को मानने का तो कोई सवाल ही नहीं उठता! और आगे देखिये इस्लाम व कुरआन का शान्ति व मानव एकता का आदेश—

अल्लाह के मार्ग में लड़ो उनसे जो तुमसे लड़ते हों—मार डालो तुम उनको जहाँ पाओ कत्ल से बुरा कुफ्र है। यहाँ तक लड़ो कि कुफ्र न रहे और होवे दीन अल्लाह का (बकर-१९०) अल्लाह (ईश्वर) जो शान्ति, एकता व कल्याण का सन्देश वाहक कुरआन में अपनी प्रथम आयत में माना, अब उसे लड़ने की क्या आवश्यकता पड़ गई, क्या जोर जबर्दस्ती किसी ने किसी मजहब को माना है, हां जो बुजदिल व

कायर होगा वह तो तलवार के भय से इस्लाम को या अन्य मजहबों को स्वीकार कर लेगा किन्तु जो निर्भय है—परमेश्वर के उपदेशानुसार सत्य पथ पर है—वह क्यों भय रखेगा—आत्मा तो अमर है। शरीर नश्वर है उसे तो नष्ट होना ही है और हमें पुनर्जन्म लेना ही है, तब कैसा भय ! किन्तु हम यह नहीं समझ पा रहे कि यह कुरआन का अल्लाह वास्तव में इतना साम्प्रदायिक है या निहित स्वार्थ वश मोहम्मद साहब व उनके गुट ने अल्लाह को साम्प्रदायिक बना दिया है—क्योंकि कहीं तो कुरआन मानव एकता, व प्राणी कल्याण की बात करता है। कहीं काफिरों को कत्ल करने व उनसे लड़ने की बात करता है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि कुरआन अपनी प्रत्येक आयत का खण्डन स्वयं ही करता है, और कुरआन परमेश्वर का ग्रन्थ नहीं हो सकता, हमारे मुस्लिम बन्धु बड़े मानवता वादी बनते हैं, किन्तु सत्य यह है कि इस्लाम का आधार ही बुद्धि हीनता अमानवीयता, अनाचार व बलात्कार के बल पर रखा गया है। इस्लाम ने अपने शैशव काल से ही साम्प्रदायिकता व खण्डन का विष मानव जीवन में घोला है, उसी के दुष्परिणाम आज हमें भुगतने पड़ रहे हैं, कि विश्व में नित्य प्रति दंगे, फसाद, बलात्कार व चोरी डकैती होती है। प्रमाण के रूप में अरब के शेखों द्वारा भारत की मासूम मुस्लिम बहनों को खरीद कर उनसे निकाह कर अरब ले जाकर उनसे वैश्या वृति कराना, अरब में भोले भाले हिन्दुओं व अन्य मजहब के लोगों को बहकाकर, लालच से बहु विवाह झांसा देकर उनका धर्मान्तरण करना! चार विवाह तो करना ही साथ में कुरआन के आदेशानुसार लौंडी (रखैल) रखना, मुता अर्थात अश कालिक विवाह करना—यह सारी प्रथाऐं कुरआन के माध्यम से ही फैली हैं ! क्योंकि कुरआन में चार विवाहों का आदेश तो है ही—धन के बल पर अन्य महिलाओं को प्राप्त करने का आदेश भी है स्त्रियों के सम्बन्ध में कुरआन का दृष्टि कोण एक प्रतिशत भी उचित नहीं—हम तो सोचते थे कि यह मुस्लमान इतने लड़ाकू क्यों होते हैं लेकिन जैसे जैसे कुरआन पढ़ते गये वैसे वैसे सारी बातें आंखों के सामने खुलती गईं, अमानवीयता के इस नगे राक्षसी नाच को बन्द करना होगा कुरआन की जो जो आयतें सर्व हितकारी व बुद्धि सम्मत नहीं उन आयतों में परिवर्तन करना इस्लाम के हित में ही होगा यदि इस्लाम को सत्य मार्ग पर चला कर

सारे विश्व में फैलाना है तो इस्लाम के वैदिक स्वरूप को स्वीकार करना ही होगा अनन्त वर्षो के प्रवाह मान वैदिक संस्कृति के पुनरोदय का समय आ गया है। वैदिक संस्कृति जगत् के कल्याण का प्राणियों में सद्भावना का सन्देश देती है। हमें कुरआन, बाईबिल व पुराणों जैसे साम्प्रदायिक व बुद्धि विज्ञान विरोधी ग्रन्थों की किसी भी बात पर विश्वास नहीं करना—हमें तो मानव एकता व विश्व कल्याण के सूत्र को लेकर चलना है।

मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्। ऋ० १०-३५-६

भाव—मानव बनों और मानव बन कर दिव्य जनों जन्म को दो। यह है वैदिक संस्कृति का मूल मन्त्र जिसमें साम्प्रदायिकता या विश्व द्रोह की भावना नहीं अपितु मानव बनकर अपनी सन्तानों को भी मानव बनाने का सन्देश है बुद्धि व विज्ञान की दृष्टि में यह उपदेश खरे उतरते हैं। आज आवश्यकता है कि मानव समाज इन सन्देशों को मनसा-वाचा-कर्मणा मन वचन व कर्म से स्वीकारे व आचरण करे-तभी विश्व का कल्याण सम्भव है, आज विश्व के अणु-परमाणु बम, का भय, शस्त्रों का भय, व अन्य प्रकार के दूषित विचार पनप रहे हैं। वैदिक संस्कृति के सूर्य पर जो काली बदलियां छाई है। उन बदलियों को सूर्य से हटा कर पुनः वैदिक संस्कृति की मान्यताओं का तीव्र संचार मानव जीवन में करना होगा—आज जो मानव मानव का शत्रु बना है। यह शत्रुता तभी समाप्त होगी जब हम सब वैदिक—वांगमय में रंग जायेंगे—

पुमान पुमांसं परिपातु विश्वतः ऋ० ६-१२

भ.व—एक मनुष्य सब ओर से दूसरे मनुष्य की रक्षा करे। यदि इस प्रकार के उपदेश मानव जीवन में घोल दिये जायें तो विश्व में मानव एकता व कल्याण का वातावरण शीघ्र ही तैयार किया जा सकता है ! मैं मुस्लिम, ईसाई, हिन्दू कम्युनिस्ट व अन्य समुदायों के बन्धुओं से आवाहन करता हूँ कि समय कि पुकार को सुनें वैदिक संस्कृति धरा के प्रत्येक संकट का निदान करने में समर्थ है। कोल कपोल व झूठे ग्रन्थों की मान्यताओं को त्याग कर आओ अपने सत्य सनातन करोड़ों वर्ष पुराने धर्म को स्वीकारो—बुद्धि व विज्ञान, सत्य व तर्क के मार्ग पर वापस आओ—जागो हे मानव जागो—यदि अब भी न जागे तो

पछताओगे यह अन्तिम निवेदन है सुनो समझो अपनाओ। सही तो वेद मार्ग ही है वापस वेद मार्ग पर आओ !

—★—

मुस्लिम हिन्दू व सभी मानवों को सत् परामर्श

वास्तव में यदि इतिहास को देखा जाये तो भारत के ९९% मुस्लिम बन्धु कभी न कभी आर्य ही थे—उन्हें प्रलोभन, भय या अन्य कारणों से मुसलमान बनना पड़ा। इतिहास में हमने पढ़ा है कि औरंगजेब ने कितने जुल्म ढाये, महमूद गजनवी ने क्या किया—मौहम्मद गौरी ने क्या गुल खिलाये किन्तु इस सारी अल जुलूल से उबर कर हम सब यदि बुद्धि पूर्वक विचारें, तो हम सब एक पिता अर्थात परमात्मा=खुदा=गोड़ की ही सन्तान हैं।

वसुधैव कुटुम्बकम (वैदिक सूक्ति)
अलखलकु अयालुल्लाह (इस्लामी सूक्ति)

यह दोनों वेद व कुरआन की सन्देश शिक्षाएं हमें यही सन्देश देती हैं कि हम सब एक हैं हमारी पूजा करने के ढंग अलग-अलग हो सकते हैं किन्तु खून का रंग अलग-अलग नहीं हो सकता—यह एक कटु सत्य है कि संसार का प्रत्येक मानव आपस में भाई है यदि वेद के इस दर्शन को हम सब मिलकर स्वीकार कर लें व मनसा, वाचा कर्मणा (मन वचन व कर्म से) आचरण में ढाल लें तो संसार की प्रत्येक समस्या का निराकरण हो सकता है। अणु बम, परमाणु बम, अग्नेय अस्त्र अन्य प्रकार के भय समाज में विद्यमान हैं इन सारे संकटों से संघर्ष मात्र मानव को करना है कारण ईश्वर ने प्राणियों में श्रेष्ठ (अशर फुल मखलुकात) मानव को चुना है उसे बुद्धि (अकल) विवेक (सलाहियत) व विज्ञान (साइन्स) दिया है—पशु पक्षियों में यह संगम नहीं—यदि मानव मात्र इस महत्व पूर्ण विषय पर चिन्तन मनन कर ले तो सारा संसार एक छत्र (नेता) के नीचे रहे-परम पिता परमेश्वर उसका शासक हो, हम सब उसकी प्रजा। कितना आनन्द दायक होगा वह वातावरण !

मुझे विश्वास है कि हमारे भाई इस विषय पर विचारेगें व करोड़ो वर्षों पुराने मानव धर्म वेद को पुनः मानव मात्र के हृदय में

प्रतिष्ठापित कर संसार में कल्याण (भलाई) एकता (एक जहती) व सुबुद्धि (सल्फहियत) का त्रिसूत्र फैलायेंगे।

धर्म तो मात्र एक ही है केवल मानवता (इन्सानियत) और मानवता की समुचित व्याख्या मात्र वेद में ही है। अतः कुरान बाइबिल गीता, पुराण को धर्म ग्रन्थ न मानकर इतिहास व सद् गुरुओं के उपदेश माने, पवित्र पावन वेद के आदर्शों से अपने जीवन में स्वीकारें ! मानवता संकट में है। मात्र लिखने से या कह देने सुन लेने से तो इसका कल्याण होना नहीं है संघर्ष सामूहिक होगा–तो उसका प्रतिफल उत्तम होगा—इसलिये हमें धर्म सम्प्रदाय व जाति से पहले इन्सानियत (मानवता) को देखना है व मानवों में एकता, बुद्धि व विज्ञान को फैलाना है—यही इस युग की मांग है। हम स्वयम् श्रेष्ठ बनें व दूसरों को श्रेष्ठ बनाएं यही वेद माता का प्रथम उपदेश है।

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम—

हे परमेश्वर हमें शक्ति दो कि हम अपनी बाधाओं को हटाकर अपने मन में प्राणी मात्र की कल्याणकारी इच्छाओं को बढ़ा कर प्रथम स्वयं श्रेष्ठ बने तब सकल विश्व के मानवों को श्रेष्ठ बनायें।

श्रेष्ठ या आर्य एक दूसरे का पर्याय हैं, आर्य किसी मजहब या सम्प्रदाय का नाम नहीं–मानवों में उत्तम कर्म करने वाले सभी प्राणियों को समान यथायोग्य सम्मान देने वाले—सभी ग्रन्थों का अध्ययन कर तुलनात्मक निचोड़ निकालते वाले ही सच्चे आर्य हैं केवल आर्य लिखने से इन्सान आर्य नहीं बनता—अच्छे कर्म करने से आर्य बनता है आर्य कोई भी हो सकता है हिन्दू, मुस्लमान, ईसाई, पारसी आदि आदि।

आशा है संसार का मानव मात्र इस निवेदन को स्वीकारेगा व बुद्धि विज्ञान व विवेक की इस क्रान्ति को सफल बनाकर मानवता को प्रतिष्ठापित कर सकल विश्व में मानव एकता के सूत्र को फैलायेगा व सभी में सद्भावना—विवेक विज्ञान व तर्क की नीति को पनपाने का कार्य करेगा।

ओ३म् शम्

———

डॉ. कुँवर आनन्द सुमन
(वैदिक प्रवक्ता)

३० अगस्त १९८१ को आर्य समाज कीर्ति नगर नई दिल्ली में जन्म ! प्रथम वक्तव्य 'यज्ञो पवीत की रक्षा के लिये जीवन दे दूंगा आज मेरा जन्म हुआ है'। ३० अगस्त १९८१ को वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार हेतु प्रचारक के रूप में जीवन समर्पित। वाणी में सरस्वती एवं क्रान्ति का समन्वय, लेखनी ओजमय क्रान्ति प्रस्विनी ! अब तक चल रहे धर्मान्तरण व अन्य कुरीतियों के प्रत्युत्तर में एक सबल अभियान 'वैदिक क्रान्ति अभियान' एवं 'पुनर्मिलन अभियान' के संयोजक ! अनेकों भूले भटकों को पुनः वैदिक धर्म में वापस लाकर उनका पुनर्मिलन, विगत् चार वर्षों में आर्ष राष्ट्र भाषा एवं वैदिक आर्ष ग्रन्थों का गम्भीर मनन, चिन्तन, स्वाध्याय, अनेकों मतमतान्तरों के शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन। वैदिक धर्म एवं आर्ष, मानवीय संस्कृति के विश्व में प्रसार प्रचार हेतु निरन्तर प्रयत्नशील, भारत में लगभग पांच सहस्त्रों सभाओं सम्मेलनों, गोष्ठियों में क्रान्तिकारी, प्रेरणास्पद उद्‍बोधन। साहित्य जगत् में दस अनुपम शोधपूर्ण मार्ग दर्शक रत्नों के लेखक।

ममृतीय राष्ट्रवादी समाज में निष्पक्ष तुलनात्मक एवं सांस्कृतिक, आध्यात्मिक विषयों पर निर्भीक एवं प्रखर प्रवक्ता ! आपके विचारों, बौद्धिकों एवं पुस्तकों से मानव समाज में वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात।

वैदिक सार्वभौम वैचारिक आन्दोलन को सबल बनाने हेतु एक मात्र उपाय डा० आनन्द सुमन को यथा शक्ति सहयोग—जिससे वह निरन्तर संघर्ष करते रहें।

प्रो० राज नाथ "सरल

राष्ट्र के नाम

स्वामी दयानन्द का सन्देश

[पाकिस्तान की मांग करने वाले हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ सत्ता में भागीदार बने हुए हैं और इसके साथ इस देश की हिन्दू पहचान को खत्म करने तथा इसे पाकिस्तान जैसा दारुल- इस्लाम बनाने के उनके पक्के मनसूबे भी बन चुके हैं। यह हैहमारे सिर पर मँडराती हुआ अस्तित्व का खतरा। हिन्दुस्तान में हिन्दू अपने लिए जीवनदान की भीख मांगे, त्राहि- माम् त्राहिमाम् करे इससे बढ़कर राजनीतिक दिवालिया पन का और क्या नमूना हो सकता हे ? अपनी उचित; न्याय- संगत मांगों के लिए हिन्दुस्तान में हिन्दू फरियाद करे, आन्दोलन करे, मानो कोई बिदेशी सरकार हो जिसे समझाना पड़े, जिसके सामने गिड़गिड़ाना पड़े। यह कैसी राष्ट्रीय सरकार? यह स्थिति क्यों उत्पन्न हुई-इसके कारण और निवा- रण की जानकारी के लिए भीतर के पृष्ठों का अवलोकन करें।]

|||

जन-जागरण समिति, कलकत्ता

दो शब्द

किसी अवसर पर महामना प० मदन मोहन मालवीय ने आर्य समाज के प्रति अपने हृदय का उद्गार इन मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया था-तुम चलते रहना, तुम रुक गये तो हिन्दू बैठ जाएगा तुम बैठ गये तो हिन्दू लेट जाएगा, तुम लेट गये तो हिन्दू सो जाएगा, तुम सो गये तो हिन्दू मर जाएगा। सजग, सावधान, सतर्क प्रहरी के रूप में आर्य समाज का यह चित्र आँखों के सामने आ जाता है। कितना विश्वास, कितनी श्रद्धा व आस्था थी मालवीय जी के दिल में आर्यसमाज के प्रति। उनकी आशा के विपरीत आचरण करना कितना विश्वास घात होगा। आज आर्य समाज बिभिन्न विचार धाराओं वाले राजनीतिक नेताओं का आश्रय स्थल बन चुका है - जो अपने स्वार्थों के लिए आर्य समाज का उपयोग करने में संलग्न हैं। परिणाम स्वरूप आर्य समाज निरन्तर दुर्वल और जर्जरित होता जा रहा है। स्वतत्र भारत में सभी प्रकार के अत्याचारों को वह चुपचाप सहता चला जा रहा है। कुछ दिनों पूर्व पश्चिम बंगाल की पुलिस कतिपय विधर्मियों के इशारे पर जब आर्य समाज के पण्डाल से सत्यार्थ प्रकाश की सारी प्रतियाँ उठा ले गई तो आर्य नेताओं को अनुनय विनय के लिए बाध्य होना पड़ा दो दिन की बड़ी दौड़ धूप के बाद वे प्रतियाँ प्राप्त हुई। यदि यह प्रहरी सावधान न रहा तो कोई आश्चर्य नहीं इससे भी अधिक अपमान झेलना पड़े। जिस जाति का अपने ही देश की राजनीति पर नियंत्रण नहीं, अधिकार नहीं, उसे कोई भी पद दलित, अपमानित कर सकता है, आंख दिखा सकता है।

हमारे ही बहुमत से केन्द्रीय सरकार बनती है और हम ही उपेक्षित रहते हैं—इसका एक मात्र कारण है हम राजनीतिक रूप से छिन्न भिन्न हैं, असंगठित हैं।

शासक वर्ग का सीधा संबंध शक्ति से है। शासक वर्ग को ज्ञात है हिन्दू वोट बिभाजित हैं और मुस्लिम वोट अविभाजित हैं, संगठित हैं। अत: मुस्लिम वोट की कीमत है। उस वर्ग को कौन पूछेगा जिसकी वोटशक्ति विभाजित है। हमारी इस कमी को दूर करने के लिए हिन्दू संगठनों के नेताओं को एक मंच पर लाना समय की पहली मांग है। सम्मिलित प्रयास ही हमें बचा सकेगा। क्या इस दिशा में आर्यसमाज पहल करेगा? यदि इस कार्य में विलम्ब हुआ, इसकी उपेक्षा की तो हम खण्डित भारत को भी बचा न सकेंगे। आज की आशंका कल की वास्तविकता बन कर सामने आ सकती है। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का उद्घोष लगाने वाला आर्य समाज कम से कम इस खण्डित भारत को आर्यावर्त्त के रूप में क्या रख न सकेगा? यदि हम इसमें चूक गये तो हमारे साप्ताहिक सतसग तथा भव्य पण्डालों में लगने वाले बिशाल वार्षिकोत्सव निरर्थक सिद्ध होंगे।

—(प्रो०) शिवनाथ चौबे

ॐ

राष्ट्र के नाम
स्वामी दयानन्द का संदेश

आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह की समाप्ति पर मंच पर रखा हुआ स्वामी दयानन्द सरस्वती का भव्य चित्र यों बोल उठा :—

"छत्तीस वर्ष पूर्व भारत स्वतंत्र हुआ परन्तु स्वधर्म के अनुसार सुराज की स्थापना का स्वप्न अभी तक साकार नहीं हो पाया। तुम मार्ग में भटक गये और इसीलिए अनेक समस्याओं के कंटीले जंगल में अटक गये। तुम इस बात को भूल गये व्यक्तिगत दैनिक जीवन का आधार राजधर्म हुआ करता है। राजधर्म बिगड़ जाय तो साधारण जनों का क्या कहना, बड़े-बड़े तपस्वियों को भी व्यक्तिगत जीवन-यापन में कठिनाई पड़ जाती है। परिष्कृत राज-व्यवस्था की रक्षा और विकृत राज व्यवस्था का सुधार इसीलिए आवश्यक हुआ करता है। जरासन्ध आदि शासक विदेशी नहीं थे परन्तु उनका हनन इसलिए आवश्यक हुआ कि उन्होंने राज: व्यवस्था को बिगाड़ रखा था।

सत्यार्थ—प्रकाश के छठे समुल्लास की रचना मैंने कलम घिसाई के लिए नहीं की थी। तुम क्यों भूल गये धर्म का ही अंग राजधर्म है। अंग्रेजी सत्ता के चले जाने पर राज सत्ता में सुधार करने और शासन संभालने का समय आया तो न जाने क्या सोच कर तुम पीछे हट गये। इस कर्त्तव्य से मुंह मोड़ना तुम्हारी भूल थी। उसी भूल का दण्ड आज तुम भोग रहे हो- तुम्हारे बच्चों को विकृत इतिहास पढ़ाया जा रहा है। तुम्हारी संस्कृति पर चारों ओर से प्रहार हो रहा है। तुम्हारी सारी शक्ति रक्षात्मक उपाय सोचने में खर्च हो रही है। तुम सृजनात्मक, रचनात्मक काम कुछ भी नहीं कर पा रहे हो। राम और कृष्ण को कपोल कल्पित बताया जा रहा है। पेट्रोडालर की सहायता से होने वाले

कुकर्म को तुम रोक नहीं सकते। गो-वध अबाध गति से बढ़ रहा है। संस्कृत पाठ्य-क्रम से हटाई जा रही है। जगह-जगह अरबी विश्वविद्यालय खुल रहे हैं। ध्वनिविस्तारक यंत्र से मस्जिदों से दिन में पाँच-पाँच बार अरबी चीत्कार गूंजती है। सारा वायु मंडल तुम्हारे प्रतिकूल हो रहा है। संख्या में तुम घट रहे हो, देश की सीमाएं घटती जा रही हैं। सीमाओं की बात छोड़ो, तुम्हारा घर ही उजड़ने लगा है क्या तुम्हारी आंखों पर मोतिया बिन्द का जाला पड़ गया है जिस कारण यह चुपके-चुपके आने वाली मौत तुम्हें दिखाई नहीं पड़ रही है।

देखो तुम्हारी सारी समस्याएं शासन के दोष से उत्पन्न हुई हैं। तुम्हारे अस्तित्व पर खतरा पैदा करने वाला कौन है? कान खोल कर सुन लो - यह दूषित राज नीति का परिणाम है। जिस वर्ग विशेष की इस देश के प्रति प्रथम निष्ठा नहीं, वफादारी नहीं, उस वर्ग को भी पूर्ण नागरिकता के अधिकार प्राप्त हैं। आज देश में टके सेर भाजी और टके सेर खाजा वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। कौन देश भक्त है, कौन देश द्रोही है इसके लिए कोई माप दण्ड नहीं। इस देश का कोई राष्ट्र रूप नहीं रह गया है, यह भानू मती का पिटारा बन गया है। घुसपैठियों से, अराष्ट्रीय तत्वों से यह देश भरा पड़ा है। तुम्हारा संविधान इतना ढीलाढ़ाला और पोचा है कि यहाँ कोई भी नागरिक बन सकता है, मताधिकार प्राप्त कर सकता है तथा पूर्ण निरक्षर, चरित्रहीन, लम्पट व्यक्ति भी पैसे और बाहुबल के सहारे चुनाव में विजयी होकर लोकसभा में जा सकता है और तुम्हारा भाग्य विधाता बन सकता है। क्या इसी लोकतंत्र के लिए तुम लालायित थे?

यदि तुम समझते हो तुम अपनी समस्याओं को सभाएं बुलाकर, वार्षि-कोत्सव मनाकर, माइक पर भाषण देकर समाप्त कर लोगे तो यह तुम्हारी भूल है आर्यसमाज एक संस्था है शासन की शक्ति और संस्था की शक्ति की भला क्या तुलना। तुम्हारा उपदेशक कहीं वर्ष भर में एक बार एक ग्राम में पहुंच कर मांस और अण्डे के विरुद्ध प्रचार कर पाता है। परन्तु सरकारी रेडियो प्रतिदिन दो बार मांस और अण्डे का प्रचार कर डालता है-घर-घर सदेश सुना देता है।

'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का उद्घोष तो तुम लगाते हो, परन्तु क्या कभी तुमने यह भी सोचा है कि जब तुम अपने देश की राज सत्ता को अपने अधिकार में नहीं कर सके, इसे नहीं संभाल सके तो विश्व को आर्य कैसे बना पाओगे? तुम राजनीति में भाग लेने से कतराते रहे, इससे दूर रहे परिणाम यह हुआ दूषित राजनीति चुपके चुपके तुम्हारे शासन-तन्त्र में घुस आ गई। देश विभाजनकारी, भारत माता को बेरहमी से आरे से चीरने वाली, क्रूरता, नृशंसता, बर्बरता का नंगा नाच नाचने वाली वही मुस्लिम लीग सरकार से मान्यता प्राप्त कर आज देश की राजनीति को प्रभावित कर रही है, राजसत्ता पर हावी हो रही है। सभी राजनीतिक दलों में योजना-बद्ध ढंग से लीग के भाई बन्धु घुसे हुए हैं। अपने हित साधन में सभी एक जुट हो जाते हैं। तुम्हारी चाणक्य नीति, भीष्म-पितामह द्वारा राज धर्म पर दिया हुआ उपदेश सब कुछ धरा रह गया। तमने राजनीति के महत्व को क्यों भुला दिया?

सर्वा विद्या राजधर्मेषु युक्ताः
सर्वे लोकाः राजधर्मे प्रविष्टाः
सर्वे धर्माः राजधर्म प्रधानाः।

(महा-भारत शान्तिपर्व) आर्य—संस्कृति को जड़ मूल से नष्ट कर देने वाले तुम्हारी राजसत्ता को प्रभावित करते रहते हैं। तुम्हें लज्जा नहीं आती? तुम गफलत में पड़े रहे और देश सन् ४७ से पूर्व की स्थिति में पहुंच गया और उससे भी बदतर हालत में। अदूरदर्शी हिन्दू नाम धारी, वास्तव में हिन्दू-द्वेषी नेताओं के हाथ राजनीति तुमने सौंप दी, उसी का यह परिणाम है।

तुम्हारी मौत का सारा सरंजाम इन हिन्दू नामधारी नेताओं ने तुम्हारे संविधान में रख दिया है। देश को एक राष्ट्र का रूप न देकर इसे बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक में बांट दिया है। संविधान की कई धाराएं विधर्मियों को तरह तरह की छूट देती है जिनके बल पर इनकी अनाप-शनाप संख्या-वृद्धि हो रही है। तुम्हें अपने ही देश में अल्प संख्यक बनाने का षड्यंत्र राज सत्ता की

छत्र-छाया में, धर्म निरपेक्षता की आड़ में सफल हो रहा है। किसी भी राज-नीतिक पार्टी का ध्यान इस गम्भीर विषय की तरफ नहीं जा रहा है। सभी मूक दर्शक बने बैठे हैं। सभी को भय है यदि इस विषय में कुछ बोलेंगे तो साम्प्रदायिक बन जाने का कलंक लग जावगा और मुसलमान बिदक जायेंगे, उनके वोटों से वंचित होना पड़ेगा। यही कारण है कि कोई भी पार्टी अपने घोषणा पत्र में यह उल्लिखित नहीं करती कि हिन्दुओं के किसी वर्ग को मुसलमान तथा ईसाई बनाने पर कानूनी प्रतिबन्ध लगे। मैं फिर चेतावनी देता हूँ इनकी अनाप-शनाप संख्या वृद्धि पर अंकुश न लगा तो वह दिन दूर नहीं या तो भारत फिर खण्डित होगा या इस्लामियत इसे समूचा निगल जाएगी। इस खण्डित भारत में रहने वाले हिन्दुओं का वही हाल होगा जो पाकिस्तान अथवा बंगला देश में बचे खुचे हिन्दुओं का हुआ है और हो रहा है। खदेड़े जाने पर तुम शरणार्थी बनकर कहाँ जाओगे ? कहाँ है तुम्हारा ठौर ठिकाना है ? आर्य समाज तथा सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगेगा। लाहोर आदि नगरों में तुम्हारे आर्य समाज मन्दिरों एवं हवन कुण्डों की तुम्हें याद आती है ? कहाँ गये वे सब ? क्या हुआ उनका ?

जन साधारण के मुँह से यही बात निकलती है--यह देश बचने वाला नहीं यही भवितव्यता है, यही होनी है, इसे कौन टाल सकता है ? कोई बात अकारण नहीं होती। यह नैराश्यपूर्ण स्थिति किस कारण उत्पन्न हुई ? आज हिन्दू जाति नेतृत्व हीन है। आज दो विचारों में संघर्ष चल रहा है-नेता का निर्माण समाज करता है, अथवा समाज का निर्माण नेता करता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार नेता ही समाज कानिर्माण करता है।

> कालो वा कारणं राज्ञः राजा वा काल कारणम्
> इति ते संशयो मा भूत राजा कालस्य कारणम्। —महाभारत

यहाँ काल का अर्थ समाज है और राजा का अर्थ नेता है। प्रश्न यह खड़ा हुआ-समाज नेता के निर्माण का कारण है अथवा नेता ही समाज के निर्माण का कारण है। इसमें तुम्हें शंका नहीं करनी

चाहिए—राजा कालस्य कारणम्-राजा ही काल का कारण है, नेता ही समाज के निर्माण का कारण है। नेता का संकल्प सबका संकल्प, नेता का बल सबका बल। प्रधानता नेता की है। भेड़ों का नेता यदि शेर हो तो वह भेड़ों को शेर बना देगा, यदि शेरों का नेता भेड़ हो तो वह शेरों को भेड़ बना देगा। हमारे यहाँ कहावत है-'यथा राजा तथा प्रजा' यह कहावत नहीं है-यथा प्रजा तथा राजा।

समाज अच्छा नहीं है, इसलिए नेता भी अच्छे नहीं हैं। ऐसा कहने से काम नहीं चलेगा। प्रभावशाली नेतृत्व होगा तो वह समाज को बदल देगा। अतः वेद व्यास आदि हमारे पूर्वजों ने राजा कालस्य कारणम् के सिद्धांत को प्रतिपादित किया। इसमें राजा शब्द नेता को लक्ष्य कर प्रयुक्त हुआ है। नेता कैसा होना चाहिए इस सम्बन्ध में पराशर कहता है - नेता के जीवन में पुष्प की सी सुगन्ध तथा दूर दृष्टि होनी चाहिए। केवल वर्तमान समस्याओं के ऊपर पैबंद मारने वालेको नेता नहीं कहते। शत्रु से भयभीत न होने वाला प्रभाव शाली नेता हो, वह तेजस्वी हो, सिद्धान्त के साथ समझौता करने वाला न हो। समाज के निर्माण में तीन शक्तियाँ काम करती हैं! विचार शक्ति, वित्त शक्ति, वपु-शक्ति (शारीरिक शक्ति)। केवल विचार शक्ति से काम नहीं बनता। अर्थ की भी आवश्यकता है - अर्थ मूलोहि धर्मः। समाज के धनिक वर्ग का कर्तव्य है कि वे अपने धन का समाज के कल्याण के लिए सदुपयोग करें।

आर्यसमाज एक संगठन है- यह लोगों की भीड़ नहीं है। प्रत्येक आर्य समाज मन्दिर में ऋग्वेद की यह पंक्ति रोज पढ़ी जाती है संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। संगठन कोई निर्जीव जड़ पदार्थ नहीं है इसमें समान आदर्श, समान लक्ष्य, समान विचार वालों की सम्मिलित इच्छा-शक्ति काम करती है। मुट्ठी भर संगठित लोग असंगठित लाखों, करोड़ों लोगों पर शासन कर सकते हैं—इतिहास इस बात का साक्षी है। आज समय की पहली मांग है है राजनीतिक रूप से संगठित हो जाओ। तुम अपनी वोट शक्ति को एकत्र करो, सुदृढ़ करो लोकसभा में तुम्हारे पक्षकी बात कहने वाला एक भी व्यक्ति नहीं। कितनी भयावह स्थिति है। विधान सभा, लोकसभा में तुम्हारा भारी बहुमत हो तभी तुम

संविधान की गड़बड़ियों को दूर कर सकोगे। तुम यह मत सोचो यह असंभव है। आज आवश्यकता है बिखरी हुई हिन्दू वोट शक्ति को एकत्र करने वाले नेतृत्व की, संगठनकी। हिन्दुस्तानमें रहने वाली हिन्दूजाति अपने लिएजीवन-दान की भीख मांगे-त्राहिमाम् त्राहिमाम् करे-यह क्यो इन हिन्दू सगठनों के नेताओं के लिए कम शर्म की बात है? पाकिस्तान की मांग करने वाले हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ सत्ता में भागीदार बने हुए हैं और साथ ही इस देश की हिन्दू पहचानको खत्म करने के उनके मनसूबेभी बनचुके हैं। क्या उनकेइन घिनौने मनसूबों के खिलाफ आवाज उठाने वाला कोई नहीं?

तुम्हारे नेताओं ने 'स्वराज' का अर्थ यही समझा अपने देशवासियों द्वारा चुने हुए लोगों द्वारा शासन। स्वराज्य के अन्तर्गत अपनी पहचान, अपनी भाषा, अपनी संस्कृति अपनी मर्यादा, अपनी परंपरा आदि सब कुछ आ जाता है इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसकी अवहेलना की गई। परिणाम स्पष्ट है हमारे देश वासी अपनी राष्ट्रीय सरकार के प्रति वैसे ही दुखी हैं और उसकी वैसी ही कटु आलोचना करते हैं जैसी कि वे किसी दूसरी सरकार की करते।

उनकी उचित न्याय संगत मांगे भी ठुकराई जाती हैं। मैं फिर याद दिलाता हूं राजनीति से अलग रहकर तुम अपना ही नहीं, आने वाली पीढ़ी का भी अहित करोगे। सही अर्थ में स्वराज्य की स्थापना के कार्य में जुट जाओ। राजसभा में, लोकसभा में, विधान सभा में, तुम्हारे सच्चे प्रतिनिधि भारी संख्या में पहुंचे - इसी में तुम्हारा कल्याण है।

मेरे इस संदेश को घर-घर पहुंचाओ, इसकी चर्चा करो, इसे साकार रूप देने के लिए कटिबद्ध हो जाओ। प्रभु तुम्हारे इस राष्ट्रहित के कार्य में सहायक हो। यही मेरी हार्दिक कामना है। मेरी इस कामना को पूर्ण करने में सफल होओ। यही मेरा आशीर्वाद हैं।

राष्ट्र - व्यापी संकट की घड़ी में क्या आर्य समाज पीछे रहेगा ?

आर्य बन्धु,

सप्रेम नमस्ते। आपके विचारार्थ यह पत्र भेजा जा रहा है। मैं काफी मनन चिन्तन के बाद इस नतीजे पर पहुंचा हूँ यदि इन दो बातों पर ध्यान नहीं दिया दिया गया तो हिन्दुस्तान में हिन्दुओं की समाप्ति सुनिश्चित है- आज नहीं कुछ वर्ष बाद ही सही :—

[१] काँग्रेस की यही धारणा रही है कि इस देश की सस्कृति मिली जुली संस्कृति है, यह मिला जुला राष्ट्र है, गांधी जी के खुद के ये शब्द हैं—Indian culture is neither Hindu culture nor Muslim culture, but fusion (मिश्रण) of all मुसलमानों को खुश करने के लिए गांधी जी ने कम्पोजिट कलचर, कम्पाजिटनेशन के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। परन्तु मुसलमानों ने इस सिद्धान्त को नहीं माना और इस देश की धरती पर दो इस्लामी राज्य कायम कर लिये। वास्तव में देखा जाय तो जिस दिन देश का विभाजन हुआ उसी दिन कम्पोजिटनेशन का सिद्धान्त मर गया। आज देश में जितनी पार्टियां हैं वे सभी कांग्रेस की उक्त धारणा को ही मानती हैं। कोई भी पार्टी जपा या भाजपा यह घोषित करने को तैयार नहीं- भारत हिन्दू राष्ट्र है। (हिन्दू कोई मजहब नहीं, कोई सम्प्रदाय नहीं यह एक विशिष्ट जीवन पद्धति का नाम है और इसके अन्तर्गत भारत में उत्पन्न हुए सभी पंथ, सम्प्रदाय आ जाते हैं। मिले जुले राष्ट्र की कल्पना में विघटन एव अलगाव का भाव छिपा हुआ है। मिले जुले या मिश्रित राष्ट्र के लिए समान कानून नहीं बन सकता - सच्ची राष्ट्रीयता नहीं पनप सकती। यह द्वि- राष्ट्र, त्रि-राष्ट्र सूचक है।

मिली जुली संस्कृति, मिले-जुले राष्ट्र के मानने वालों का कहना है-हिन्दुस्तान तो एक गुलदस्ते के समान है जिस तरह गुल दस्ते की शोभा उसमें लगे रंग

बिरंगे फूलों से होती है, उसी तरह हिन्दुस्तान की शोभा हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाइयों से है। इसमें किसी एक फूल की महत्ता का प्रश्न नहीं। यह कथन सुनने में बड़ा सुहाबना है। जब खेल में हिन्दुस्तान हारता है और पाकिस्तान जीतता है तब इस गुल दस्ते का एक फूल उछलता है, नाचता है, खुशी मनाता है। वन्देमातरम् की ध्वनि इस गुल दस्ते के एक फूल को उत्तेजित कर देती है - आगबवूला कर देती है। जिस दिन यहां हिन्दू अल्पसंख्यक बन जाएगा उस दिन इस गुलदस्ते का क्या स्वरूप रह जाएगा इसकी भी कल्पना कर लेनी चाहिए।

हमें यह निश्चय करना है-भारत मिला-जुला राष्ट्र है या हिन्दू राष्ट्र। इस देश की संस्कृति का ताना बाना, इसकी रीड की हड्डी हिन्दू संस्कृति है या मिली-जुली संस्कृति जो प्राचीन संस्कृति हमें धरोहर रूप में मिली है, जिसकी हमें हर कीमत पर रक्षा करनी है वह संस्कृति आर्य अथवा हिन्दू संस्कृति है या मिली जुली खिचड़ी संस्कृति ? यदि मिली जुली संस्कृति की धारणा एक दो दशक तक बनी रही तो इस देश की हिन्दू पहचान खतरे में पड़ जाएगी।

[२] हिन्दू विरोधी दूसरी गड़बड़ी सेक्यूलरिजम (धर्म निरपेक्षता) के रूप में सामने आई है संसार भरमें सेक्यूलरस्टेटकी यही परिभाषा मान्य है A Secular state is that state that makes no difference between one citizen and another on the basis of religion सेक्यूलर स्टेट में मजहब के आधार पर नागरिक नागरिक में कोई अन्तर नहीं माना जाता कानून की दृष्टिमें सभी नागरिक समान हैं, किसी को विशेषाधिकार नहीं दिया जाता। यहां वोटों की खातिर कांग्रेस सरकार ने अल्पसंख्यकों-विशेषत: मुसलमानों को मजहब के नाम पर छूटें दी हैं, विशेषाधिकार दिये हैं-यथा-बहु विवाह की छूट हरिजन आदि के धर्म परिवर्तन करने की छूट। भारतीय सेक्यूलरिजम के अनुसार equal respect for all religious groups सभी मतावलंबियों के प्रतिसमान सम्मान - किसी धार्मिक समुदाय ने मांगा-हमारे धार्मिक ग्रन्थ ४ बीबियां रखने की छूट देते हैं, हमें यह छूट दो नहीं तो हम नर्क में जायंगे। भारत सरकार कहती है—तथास्तु। तुम जरूर चार बीबियां रखो।

प्रो० बलराज मधोक के शब्दों में आज का भारतीय राज्य सेक्यूलर राज्य नहीं है। यह अल्प-संख्यकों, विशेष रूप से मुसलमानों को, राष्ट्रीय एकता की कीमत पर तुष्ट करने वाला एक विकृत साम्प्रदायिक राज्य है। सेक्यूलरवाद की पहली आवश्यकता है सभी नागरिकों के लिए समान कानून।

यदि यह विकृत, दूषित, राष्ट्रघाती सेक्यूलरिजम इस देश में दो तीन दशक तक चलता रहा तो हिन्दू जनसंख्या-सन्तुलन बिगड़ जाएगा, हम अल्पसंख्यक बन कर नारकीय जीवन भोगेंगे।

इस स्थिति से बचने के लिए राष्ट्र व्यापी आंदोलन किया जाय—

सही अर्थ में इस देश को सेक्यूलर स्टेट बनाओ

जैसे ग्रेटब्रिटेन घोषित क्रिश्चियन स्टेट है, फिर भी यह सेक्यूलर स्टेट है-वहां सबके लिए समान कानून है-वहां कोई मुसलमान नहीं कह सकता मुझे शरियत के अनुसार चार बीबियाँ रखने की छूट दी जाय। यहां सुप्रीम कोर्ट के फैसले को भी ताक में रखकर परसनल लॉ को मान्यता दी जाती है। आज देश में कांग्रेस के विकल्प की चर्चा जोरों पर है। कोई पार्टी अपने चुनावी घोषणा पत्र में उन मुद्दों को स्थान नहीं दे रही है जिनके आधार पर हिन्दुस्तान की हिन्दू पहचान अक्षुण्ण बनी रह सकती है। हिन्दुओं को अल्प संख्यक बनाने का जो षड्यंत्र चल रहा है उसे किस तरह निरस्त किया जाय इस बारे में सभी पार्टियां मौन हैं। जो पार्टी हिन्दुओं को अल्पसंख्यक बनकर समाप्त होने से बचने केलिए निम्नलिखित बातों केलिए प्रतिबद्ध हो और अपने मेनीफेस्टो (चुनावी घोषणापत्र) में इनका स्पष्ट उल्लेख करे उसी पार्टी को राष्ट्रीय पार्टी माना जाय और उसे ही हिन्दू मात्र का समर्थन मिले :—

१. हिन्दुस्तान के सभी नागरिकों के लिए समान लॉ (कानून) कायम करना, बहु बिवाह सबके लिए वर्जित करना तथा परिवार नियोजन सभी सम्प्रदाय के लोगों पर समानरूप से लागू करना।

२. हिन्दुओं का मुसलमान एवं ईसाई बनाने पर कानूनी प्रतिबन्ध लगाना

यह धर्मान्तरण राष्ट्रान्तरण में बदलता है। (मुस्लिम देशों में किसी भी मुसलमान का धर्म परिवर्तन असंभव है। वहाँ इसके लिए मौत की सजा है।

३. सामाजिक कार्यों के नाम पर धर्म परिवर्तन के लिए बाहर से आनेवाले धन पर प्रतिबन्ध लगाना।

४. अल्प संख्यक आयोग को भंग कर उसकी जगह मानव अधिकार आयोग का गठन करना।

५. पाकिस्तान तथा बंगला देश से आने वाले घुसपैठियों को कड़े दण्ड देने की व्यवस्था करना तथा नागरिकता प्रदान करने हेतु नियमों में उचित सुधार करना।

[उपर्युक्त पांचों बातें हिन्दुओं को अल्प संख्यक होने से बचा सकती हैं। इनके अलावा अन्य बातों का भी समावेश होना चाहिए जैसे- केन्द्रीय कानून द्वारा सम्पूर्ण गोवंश की हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना, संस्कृत को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाना आदि।]

हिन्दुओं के बहुमत से ही केन्द्रीय सरकार बनती है- फिर भी हिन्दुओं की अवहेलना हो रही है। उनकी उचित मांगें भी ठुकराई जाती हैं-कारण स्पष्ट है हिन्दू राजनीतिक रूप से असंगठित हैं—ये लक्ष्यहीन, नेतृत्वहीन हैं क्षुद्र स्वार्थों में लिप्त हैं। जिन्होंने पाकिस्तान की मांग की वे हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ सत्ता में भागीदार बने और इतना ही नहीं उन्होंने तो इस खण्डित भारत को भी इस्लाम के तले ले आने का पक्का मनसूबा बना लिया है और इसकी वे खुले आम घोषणा भी कर चुके हैं। इस स्थिति से बचने के लिए कोई राजनीतिक पार्टी सामने नहीं आ रही है। सभी पार्टियां हमें रोटी कपड़ा मकान दिलाने की बातें करती हैं। वे तो शरीर की आवश्यकता पूर्ति के साधन हैं। यदि रोटी कपड़ा मकान ही सब कुछ होता तो सर्वस्व खोकर हिन्दू पाकिस्तान से यहां शरणार्थी बनकर नहीं आते ही। अब बचने का उपाय एक ही है हिन्दुओं के वोट इधर

उधर बिखर न जायँ—उसी पार्टी की झोली में हिन्दुओं के वोट पड़े जो इस देश की हिन्दू पहचान को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए प्रतिबद्ध हो।

अगामी आम चुनाव में १५-१६ महीने बाकी हैं। इस समय का पूरा-पूरा उपयोग किया जाय। हिन्दू मतदाताओं को चेताया जाय, उन्हें समझाया जाय—केवल वर्तमान में मिलने वाली सुविधा पर नजर मत रखो, आने वाली पीढ़ी का भी खयाल रखो। वोट डालना जैसा सरल, सुरक्षित, निरापद साधन तुम्हारे हाथ में है। यदि इसका सदुपयोग राष्ट्र हित में नहीं किया तो ब्रह्मा भी तुम्हें बचा न सकेगा। हिन्दू मतदाता को जागरूक किया जाय-मीटिंगों द्वारा पोस्टरों द्वारा, कैसटों द्वारा, घर-घर पहुंचने वाले स्वयंसेवकों द्वारा। सभी साधन काम में लिये जायँ। यह एक महान् कार्य होगा यही राजसूय यज्ञ होगा। हरियाणा में कई आर्य समाज-मन्दिर हैं। यदि आर्य समाज हरियाणा क्षेत्रको गोद ले ले यहीं यह लहर फैलादे-घर घर उपर्युक्त पञ्चसूत्री प्रोग्राम पहुंचा दे एक लाख वोटरों को प्रतिज्ञाबद्ध कर दिया जाय तो कल देवीलाल आपकी बात को सुनने के लिए तैयार हो जायगा अपने मैनी फेस्टो (चुनावी घोषणा पत्र) में आपकी बातों को स्थान देगा। यदि हिन्दू वोट बैंक का निर्माण हो गया तो इसका प्रभाव अन्य राज्यों पर भी पड़ेगा। धीरे-धीरे समूचे देश में यह लहर फैल सकती है। देवीलाल तैयार हो गया तो अडवाणी और वी० पी० सिंह कहां जायँगे ? छः मास के भीतर काया कल्प हो सकता है। नीति एवं सिद्धांत पर आधारित राष्ट्रीय विकल्प तैयार हो सकता है। वैदिक यति मण्डल से सम्बन्धित साधु संन्यासी यह बीड़ा उठा ले तो समूचे देश में यह लहर फैल जाएगी। आवश्यता है दृढ़ संकल्प की। दृढ़ संकल्प के सामने कोई बाधा टिक नहीं सकती। वोटर लिस्ट हस्तगत की जाय और घर घर पहुचा जाय! आर्य समाज राजनीतिक संस्था नहीं है, यह संस्था न चुनाव लड़ सकती है, न चुनाव लड़ना इसके लिए सम्भव है। परन्तु राजनीतिक दशा प्रदान करना, सही मार्ग दिखाना, अन्धकार में पड़े लोगों को प्रकाश में लाना इसका पावन कर्तव्य है। आशा है संकट की इस घड़ी में आर्य समाज कर्त्तव्य-च्युत नहीं होगा।

बी० एल० श्रीमाली, एम० ए०
२२ शिवठाकुर लेन
कलकत्ता-७०००७

विनत
प० सत्यनारायण शर्मा
आर्यसमाज उपदेशक

राजनेताओं, यह गजब मत ढाओ

इस नकली, राष्ट्र - घाती सेक्यूलरिजम का शिकार हमें क्यों बना रहे हो ? कौन से अपराध का तुम हमें यह दण्ड दे रहे हो ? छाती पर हाथ रख कर अपने दिल से पूछो- क्या भारत सही, सच्चे अर्थ में एक सेक्यूलर स्टेट है ? यदि तुम्हें 'हिन्दू राज' में साम्प्रदायिकता की बू नजर आती है तो कम से कम हमें नकली नहीं असली सेक्यूलर-राज तो दिलाओ। अपनी अन्तरात्मा से पूछो-क्या हमारी यह माँग अनुचित है ? तुम्हारी सुविधा के लिए असली सेक्यूलरिजम की रूप रेखा नीचे दे दी गई है।

SECULARISM

1. Webster's New World Dictionary, Second College Edition—
Secularism—a system of doctrines and practices that disregards or rejects any form of religious faith.

(सेक्यूलरिजम- धर्म निरपेक्षवाद-उन सिद्धान्तों तथा आचरणों की योजना है जो सभी प्रकार के मजहबी विश्वासों की उपेक्षा करती है तथा इनका बहिष्कार करती है।)

2, The Chamber's Twentieth Century Dictionary (1972)
Secularism - the belief that the state should be independent of religion.

सेक्यूलरिजम - वह धारणा है जिसके अनुसार राज्य का मजहब से कोई लेना देना नहीं है।

3. Funk & Wagnale New Standard Dictionary of the English Language (1963)

Secularist -one who believes that religion should not be introduced into the management of public affairs.

सेक्यूलरिस्ट (धर्म निरपेक्षवादी) की धारणा है कि जनता के कार्यों के संचालन में मजहब का समावेश न किया जाय।

4. Webster's Third New International Dictionary Unabridged (1971)

Secularism—a view of life based on the premise that religion and religious considerations should be ignored or purposely excluded.

सेक्यूलरिजम—वह जीवन दृष्टि-कोण जिसका आधार है—मजहब तथा मजहब सम्बन्धी विचारों की अवहेलना की जाय तथा सप्रयोजन, जानबूझ कर इनका बहिष्कार किया।

Is India A Secular State ?

क्या भारत सेक्यूलर स्टेटहै ?

Prof. Balraj Madhok : " The Indian State to-day is anything but secular. In practice it is a communal state biased in favour of some minority religious groups ..A secular state does not discriminate between its citizens on the basis of religion. They should all be governed by the same laws and must be eqnal before the law. This is the essence of Secularism ......The national alternative must make it clear that it will strictly adhere to Secularism as practised in modern countries like Britain......Britain has its uniform laws for all its citizens, the same educational policy for all. (The Statesman dated June 20, 1988)

प्रो० बलराज मधोक :— आज का भारतीय राज्य किसी भी अर्थ में सेक्यूलर स्टेट नहीं है। व्यवहार में यह एक साम्प्रदायिक राज्य है जो किसी धार्मिक अल्पसंख्यक के प्रति पक्षपाती है सेक्यूलर स्टेट मजहब के आधार पर

नागरिकों में भेद भाव नहीं मानता। सभी नागरिकों के लिए एक सा कानून और कानून के सामने सभी नागरिक एक समान— यही सेक्यूलरिजम का मूल तत्व है, निचोड़ है। आज देश में कांग्रेस के विकल्प की खोज हो रही हैं। राष्ट्रीय विकल्प का स्वरूप ऐसा हो जो उस सेक्यूलरिजम को अक्षरशः अंगीकार करे जिसका प्रचलन ब्रिटेन जैसे सभी आधुनिक देशों में है-ब्रिटेन एक सेक्यूलर स्टेट है जहाँ सभी नागरिकों के लिए एक समान कानून है, सभी के लिए एक समान शिक्षा सम्बन्धी नीति है।"

यह विघटनकारी, राष्ट्रघाती धर्मनिरपेक्षता का ढोल हमारे गले में डाल दिया गया है। हम कब तक इसे पीटते रहेंगे ? इस देश का हूलिया बिगाड़ने में हमारे नेताओं ने कोई कसर नहीं रखी है।

डा० कृष्णवल्लभ पालीवाल—सभी नागरिकों के लिए समान आचार संहिता व समान कानून बनाने का राष्ट्रव्यापी आंदोलन किया जाय। (आर्य जगत्, २६ मई १९८८)

लक्ष्मी प्रिंटर्स, १६, शिवठाकुर लेन, कलकत्ता-७ द्वारा मुद्रित
प्रचारार्थ आर्थिक सहयोग स्वरूप— १ रुपया

नागरिकों में भेद भाव नहीं मानता। सभी नागरिकों के लिए एक सा कानून और कानून के सामने सभी नागरिक एक समान— यही सेक्यूलरिजम का मूल तत्व है, निचोड़ है। आज देश में कांग्रेस के विकल्प की खोज हो रही हैं। राष्ट्रीय विकल्प का स्वरूप ऐसा हो जो उस सेक्यूलरिजम को अक्षरशः अंगीकार करे जिसका प्रचलन ब्रिटेन जैसे सभी आधुनिक देशों में है-ब्रिटेन एक सेक्यूलर स्टेट है जहाँ सभी नागरिकों के लिए एक समान कानून है, सभी के लिए एक समान शिक्षा सम्बन्धी नीति है।"

यह विघटनकारी, राष्ट्रघाती धर्मनिरपेक्षता का ढोल हमारे गले में डाल दिया गया है। हम कब तक इसे पीटते रहेंगे? इस देश का हुलिया बिगाड़ने में हमारे नेताओं ने कोई कसर नहीं रखी है।

डा० कृष्णवल्लभ पालीवाल—सभी नागरिकों के लिए समान आचार संहिता व समान कानून बनाने का राष्ट्रव्यापी आंदोलन किया जाय। (आर्य जगत्, २६ मई १६८८)

लक्ष्मी प्रिंटर्स, १६, शिवठाकुर लेन, कलकत्ता-७ द्वारा मुद्रित
प्रचारार्थ आर्थिक सहयोग स्वरूप— १ रुपया

स्वर्ण हंस

त्रैमासिक पत्रिका

अंक १३ – मई २००१

स्वर्ण हंस

त्रैमासिक पत्रिका

अंक १३, मई २००१

संस्थापिका-संपादिका-प्रकाशिका : श्याम कुमारी

सह-संपादिका : कमलेश कपूर

संपादकीय
चलचित्र और दूरदर्शन १

प्रार्थना
ओ मेरे मन! ६

सत्य कथा
नलिनी, श्री अरविन्द के मानसपुत्र ७

मधुर कहानियाँ
श्री माँ के पास १५

कहानी
त्रासदी २१

जाको राखे साँइयाँ
मौत आती ही नहीं २६

कविता
अपनी ही सुगंध २७

पर्यावरण
सावधान २८

नमन
ऐसे भी इन्साँ होते हैं ३१

विदेश से
बांगलादेश की दयनीय दशा ३३

मत भूलो कुर्बानी
भारत के लिये ३७

नारी की बात
नारी नये युग में ४१

स्वास्थ्य और रोग
आशा की शक्ति ४५

विविध
झरोखे ४९

श्री अरविन्द की वाणी
चेतना द्वारा आश्रम का विकास ५६

श्री माँ की वाणी
श्री माँ - विवाह के विषय में ५८

जीने की कला
काम-वासना पर विजय ५९

बाल तरुण मंच : दो कविताएँ
प्रश्न और सैनिक ६१

बाल तरुण मंच : सुन्दर हिन्दी बोलिये
साहित्यिक हिन्दी बोलने का शिक्षण ६२

बाल-तरुण मंच : कहानी
"वरदान माँग लो" ६४

आपके पत्र ६६

आवरण चित्रकार : सुशांत

वे सब रचनाएँ जिनमें लेखक का नाम नहीं है संपादिका द्वारा रचित हैं।

शुल्क : प्रति अंक : १५ रु. (Rs.15), वार्षिक : ५० रु. (Rs.50), आजीवन (१४ वर्ष के लिए) : ५०० रु. (Rs.500) • चंदा : संभव हो तो नाम व पता अंग्रेजी में लिखें। मनिऑर्डर या ड्राफ़्ट *स्वर्ण हंस* के नाम हो। आउटस्टेशन चैक हम स्वीकार नहीं करेंगे। • विदेशी शुल्क (हवाई डाक द्वारा) : वार्षिक : US$ 20, आजीवन (१४ वर्ष के लिए) : US$ 200. Foreign subscribers should pay by banker's or cashier's cheques. • पता : स्वर्ण हंस, श्याम कुमारी, द्वारा श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी ६०५००२ (Swarna Hansa, Shyam Kumari, C/o Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry 605002, India) • संपादिका : श्याम कुमारी, द्वारा श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी ६०५००२ • मुद्रक : सफल झुनझुनवाला, ऑल इंडिया प्रैस, कैनेडी नगर, पांडिचेरी ६०५००१ •

© २००१ सर्वाधिकार श्याम कुमारी

चलचित्र और दूरदर्शन

(एक चेतावनी)

आज से लगभग ३५ वर्ष पूर्व सिनेमा की वर्तमान प्रवृत्तियों को देख कर एक अवसर पर श्री माँ ने खेद प्रकट करते हुए कहा था, "जब भगवान ने मानवजाति को सिनेमा और टी.वी. प्रदान किए थे तब उन्हें आशा थी कि वे (मानव) इनका अधिक अच्छा उपयोग करेंगे।"

मानव भगवान के इन अमूल्य उपहारों का उपयोग, भागवत उद्देश्य की सिद्धि के लिए नहीं, वरन् आसुरी प्रभाव को बढ़ाने के लिए कर रहा है। प्रतिदिन यह अधोगामी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। हिन्दी सिनेमा एक आसुरी संस्कृति का यंत्र बनता जा रहा है। अबोध बालकों और अशिक्षित जनता के विचारों और भावों पर सिनेमा के प्रभावशाली नायक एवं खलनायक एक गहरी और दूषित छाप छोड़ते जा रहे हैं। "शोले" जैसी फिल्मों ने घर-घर, स्कूल-स्कूल, हाट-डगर सब के सामने डाकुओं के सरदार गब्बरसिंह का ऐसा सजीव चित्रण किया कि उसके नायक आदर्शवादी ठाकुर साहब को तो दर्शक कुछ वर्षों बाद भूल जाता है, किंतु गब्बरसिंह के संवाद कभी नहीं भूलता। कच्ची उम्र के बच्चे और किशोर इन सब अपराधी चरित्रों से बेहद प्रभावित होते हैं। हिंसा, भद्दी यौन-लिप्सा, अतिरंजित प्रेम-कहानियाँ और कुत्सित अंग-प्रदर्शन से भरपूर इन फ़िल्मों एवं धारावाहिकों को बार-बार देख कर जनता की, और विशेषतया किशोर और युवा वर्ग की ऊँची भावनाएँ, अभीप्साएँ और उद्देश्य मर जाते हैं। आज यदि समाज के एक बड़े अंग का लक्ष्य अपनी काम्य वस्तुओं की उपलब्धि मात्र बनता जा रहा है तो एक बड़ी सीमा तक इसका उत्तरदायित्व हमारी फिल्मों और दूरदर्शन को जाता है।

आज से ५० वर्ष पूर्व लोग चोरों और खूनियों की चर्चा करना भी उचित नहीं समझते थे, रिश्वत लेने वाले हेय दृष्टि से देखे जाते थे, सज्जन और सन्तजनों, त्यागी और आदर्शवादी व्यक्तियों का सम्मान होता था। आज खूनी और चोर हमारे राष्ट्र-निर्माता और कर्णधार बन गए हैं। समाज उनकी सत्ता और वैभव के सामने नतमस्तक है।

भगवान ने हमें फ़िल्म और टी.वी. जैसे अद्भुत और सशक्त साधन दिए थे

कि इनके द्वारा हम अपनी चेतना ऊँची उठाएँ, इन्हें शिक्षा का साधन बनाएँ और उच्च कोटि के मनोरंजन के द्वारा आनन्द-प्राप्ति के साथ-साथ प्रगति करें। कितने दुख की बात है कि इस ईश्वर कृपा को हमने विषपान का साधन बना लिया है। कोई गन्दा, घिनौना व्यक्ति या कोई चोर या खूनी हमारे घर में घुस आए तो हम पूरी शक्ति लगा कर उसे घर से निकाल देते हैं, यदि स्वयं न निकाल सकें तो पुलिस को बुलाते हैं। किन्तु दुर्भाग्य से फ़िल्मों और धारावाहिकों के माध्यम से अनेक चोर, डाकू, खूनी और कुत्सित खलनायकों एवं नायिकाओं ने हमारे घर में प्रवेश कर लिया है। इसी कारण जन-जीवन में हिंसा और अनैतिकता रक्तबीज की तरह बढ़ती जा रही हैं।

आज स्कूल-स्कूल, गाँव-गाँव, शहर-शहर में लड़कियों और स्त्रियों की बेइज्ज़ती होना एक आम बात हो गई है। उत्तर प्रदेश की एक महिला ने मुझे बताया कि अब उत्तर प्रदेश में सवेरे-शाम की रेलगाड़ियों से यात्रा करना मुसीबत को न्योता देना है, क्योंकि इन गाड़ियों से गाँवों के लड़के शहर के विद्यालयों में पढ़ने आते-जाते हैं और जिन डिब्बों में ये उत्पाती तरुण और युवक चढ़ते हैं उनमें किसी सभ्य परिवार की तरुणियाँ और युवतियाँ सुरक्षित नहीं रहतीं। दुर्भाग्यवश एक दिन यह महिला और उनके पति अपनी दो तरुणी पुत्रियों के साथ संध्या को एक ऐसी रेल में सफ़र कर रहे थे जिसमें विद्यार्थियों का एक दल चढ़ आया। रेल चल चुकी थी, अतः उतरने का सवाल नहीं था। फिर तो एक घंटे तक, अगला स्टेशन आने तक, इन भ्रष्ट-चरित्र युवकों ने उन दो तरुणियों की जो नख-शिख आलोचना की वह इतनी शर्मनाक थी कि हृदय को गरम पिघले हुए सीसे की तरह जला रही थी। चारों प्राणी चूँ किए बिना, सिर झुका कर इस विष को पीते रहे क्योंकि उनके पास आत्म-रक्षा के लिए कोई पिस्तौल-बंदूक तो थी नहीं और फिर विरोध में मुँह खोलने पर, बलात्कार और हत्या होनी निश्चित थी। उस दिन उन दोनों तरुणियों की मासूमियत पर एक काली कूँची फिर गई। उन्होंने ऐसी अश्लील भावनाओं और भाषा की सपने में भी कल्पना नहीं की थी। जैसे उनके कौमार्य का अपहरण कर लिया गया हो। प्रश्न उठेगा कि इस परिवार ने विरोध का साहस क्यों नहीं किया? उन्हीं महिला ने अपने शहर की एक घटना सुनाई। उनकी पुत्री की एक सखी गलती से अकेली विद्यालय से लौट पड़ी। सामान्यतः युवतियाँ दलों में चलने लगी हैं, क्योंकि दल में वे अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित अनुभव करती हैं। दो विद्यार्थी पीछे से आए और इस लड़की के वक्ष पर हाथ रख गर्हित भाषा में टीका-टिप्पणी करने लगे। युवती की आँखों से आँसू बहने लगे। किंतु वह ज़हर का घूँट पीकर रह गई। किसी प्रकार का विरोध करने पर वे युवक उसके वस्त्र फाड़ कर चिंदियाँ उड़ा देते।

यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इसी शहर के ऐसे ही दरिन्दों के हाथ एक

सरल नवविवाहिता पड़ गई। आभूषणों से सजी यह युवती स्त्रियों के लिए आरक्षित डिब्बे में बैठी थी। अन्य यात्री उतर गए। प्लेटफॉर्म पर घूमते विद्यार्थियों के दल ने तुरंत एक योजना बना ली और जैसे ही रेल स्टेशन के बाहर पहुँचने लगी वे उसी डिब्बे में चढ़ गए। उस भोली कली को सब तरह से कुचल कर वस्त्राभूषण उतार कर इन राक्षसों ने उसे चलती रेल में से एक नाले में फेंक दिया। उनके दुर्भाग्य से वह युवती मरी नहीं और एक गुमटी वाले ने उसे बचा लिया। वे युवक पकड़े अवश्य गए किंतु दंडित हुए या नहीं मुझे ज्ञात नहीं। प्रश्न है कि ये युवक किसी प्राचीन युग की राक्षस जाति की संतति नहीं हैं। ये तो हमारे-आपके बेटे और भाई हैं। इनके इस अधःपतन का उत्तरदायी कौन है?

निश्चय ही फिल्में और दूरदर्शन के धारावाहिक इसके लिये उत्तरदायी हैं जिनके द्वारा नग्न और कुत्सित यौन दृश्य और हिंसा और क्रूरता दिन-रात दिखाये जाते हैं। हमारे तरुण और युवक इन विकृतियों को सामाजिक सत्य मान बैठते हैं। वे सोचते हैं कि लड़कियों को छेड़ना उनका अधिकार है तथा लड़कियाँ मन-ही-मन इस प्रकार के व्यवहार से प्रसन्न होती हैं, जबकि सत्य इससे बिलकुल उलटा है। कुछ अपवादों को छोड़ कर अधिकांश युवतियाँ इस प्रकार के व्यवहार से घृणा करती हैं। तमिल नाडु की एक युवती ने कुछ ही दिन पूर्व दो गुंडों की छेड़खानी से मर्माहत होकर आत्म-हत्या कर ली।

एक अखबार में ५ अक्तूबर २००० की एक खबर छपी कि बंबई के १५ वर्ष की आयु के दो किशोर, नीरज कांतिलाल परमार तथा योगेन्द्र राजीव राव ने रूपाली नाम की १७ वर्षीय नौकरानी की जला कर हत्या कर दी थी, क्योंकि उसने अपने मालिक को उनकी १४ वर्ष की पुत्री से इन तरुणों के प्रेम-संबंधों की बात बता दी थी। परिणामस्वरूप लड़की के पिता ने अपनी कन्या पर इन लड़कों से मिलने पर रोक लगा दी थी।

विदेशों की स्थिति तो इससे भी खराब है। अमरीका की "न्यूज़ वीक" नामक पत्रिका ने सितंबर १९९८ के अंक में कुछ दहलाने वाली घटनाएँ प्रस्तुत की हैं। ४ अक्तूबर, १९९४ को १९ वर्ष की मध्यम वर्ग की एक युवती रे से उसके २३ वर्ष के मित्र आंद्रे मौपिन ने पुलिस अफ़सरों की बन्दूकें चुराने का प्रस्ताव किया। मौपिन दर्शन शास्त्र का विद्यार्थी था। रे ने बिना कुछ सोचे-समझे हामी भर दी और दोनों ने पेरिस के बाहर जाकर कुछ अफ़सरों की बन्दूकें चुरा लीं। उन्होंने एक टैक्सी ड्राइवर को उन्हें लेकर भागने को विवश किया। जब टैक्सी एक पुलिस कार से टकरा गई तो मौपिन ने टैक्सी ड्राइवर को गोली मार दी और एक दूसरी कार चुरा कर पुलिस वालों पर गोली चलानी शुरू कर दी। जब गोलियों का धुँआ हटा तो देखा गया कि तीन पुलिस अफ़सर तथा मौपिन या तो मर चुके थे या अंतिम साँसें ले रहे थे। यद्यपि गोलियाँ मौपिन ने चलाई थी किन्तु दर्शकों का कथन है कि जब मौपिन गोली चला रहा था तब रे उसे

उकसा रही थी, "मारो इसे, मारो इसे!" योरोप के लोग समझते थे कि इस प्रकार की घटनाएँ केवल अमरीका में होती हैं, किंतु अब ज्ञात हुआ है कि इस तरह की अकारण और निरर्थक हत्याएँ सभी देशों में हो रही हैं।

रे और मौपिन के कमरे में अमरीका के ऑलिवर स्टोन की हत्या से भरपूर फिल्म "नैचुरल बॉर्न किलर" का बड़ा सा इश्तहार लगा हुआ था।

सरकार और समाजशास्त्रियों के लिए सब से चिंता का विषय है कि रे और मौपिन सामान्य युवक-युवती थे। ऐसे युवक-युवतियों की एक पूरी पीढ़ी अंधकार में भटक रही है। वे बर्बर हो गए हैं। रे की गिरफ़्तारी के दो वर्ष बाद पैरिस के एक उपनगर में एक तरुण जोड़े ने अपने एक मित्र को मार कर उसके टुकड़े-टुकड़े करके बाग में दफ़ना दिया। हत्या का कारण था कि उस मित्र का व्यवहार इस जोड़े को पसन्द न था। गत वर्ष गर्मियों में १० से १६ साल की कुछ लड़कियों ने बड़ी-बड़ी कैचियाँ लेकर फ्रांस के दक्षिण के तुलौन नामक बन्दरगाह में अपनी अनेक हमउम्र लड़कियों पर हमले किए। हमले का कारण था कि उन्हें इन लड़कियों के तरीके पुरातन पंथी (orthodox) लगते थे।

श्री राजीव गाँधी के निर्देश पर दूरदर्शन ने "रामायण" और "महाभारत" धारावाहिक दिखाए थे। तब कुछ समाचारपत्रों ने हिन्दुत्व को बढ़ावा देने वाले इन धारावाहिकों को दिखाने के लिए दूरदर्शन की आलोचना की थी, किंतु हर तरह की नग्न अश्लीलता और चरम क्रूरता एवं गर्हित पशुता द्वारा हमारे मासूम बालक-बालिकाओं, तरुण-तरुणियों और युवक-युवतियों के विचार-जगत और भावनाओं को दूषित और विकृत करने वाले धारावाहिकों और चलचित्रों का ये समाचार-पत्र क्यों विरोध नहीं करते? क्यों नहीं हम जला देते इन भयावह फ़िल्मी पोस्टरों को जिन्हें देख कर हर सभ्य व्यक्ति की आँखें शर्म से झुक जाती हैं? क्यों नहीं नारे लगाते, जलूस निकालते इन सब फ़िल्मों और धारावाहिकों के विरोध में जो हमारी सभ्यता और संस्कृति की जड़ें खोद रहे हैं, हमारे बच्चों को पशुवत् बना रहे हैं?

अमरीका के फ्लिन्ट नामक शहर में १ मार्च सन् २००० को सात वर्ष के बालक डैड्रिक ने कक्षा की एक ६ वर्षीया बालिका केयला रोलैंड की गोली मार दी। पिछले १ वर्ष में फ्लिन्ट के स्कूलों में विद्यार्थियों द्वारा गोली चलाने की यह तीसरी घटना थी। डैड्रिक केयला रोलैंड से इसलिये नाराज़ था क्योंकि जब उसने केयला के डैस्क पर थूका तो केयला ने उसे डाँटा था।

विश्व के विभिन्न देशों में इस प्रकार की घटनायें समाचार पत्रों में प्रायः पढ़ने को मिलती हैं। क्या कारण है नन्हें मुन्नो में हिंसा की इस प्रवृत्ति का? श्री गावरियल वीसमैन ने अपनी पुस्तक "कम्यूनिकेटिंग अनरियालिटी" में आँकड़े देकर सिद्ध किया है कि अमरीकी जनता के एक प्रतिशत का एक तिहाई भाग ही अपराध करता है जबकि अमरीकी दूरदर्शन के कार्यक्रमों के ६४.४ प्रतिशत

हिंसक पात्र हिंसक घटनाओं में भाग लेते दिखाये जाते हैं। इस प्रकार अमरीकी दूरदर्शन पर वास्तविकता से २०१ गुणा अधिक हिंसक पात्र दिखाये जाते हैं। साथ ही इन धारावाहिकों में खलनायक प्रायः बच जाता है और जो व्यक्ति उसके साथ जूझते हैं उनका पराभव होता है। इस प्रकार दर्शकों को अपरोक्ष रूप से यह संदेश मिलता है कि आक्रामक तथा हिंसक होने से लाभ होता है।

श्री गावरियल वीसमैन ने पुस्तक में इस ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित किया है कि चलचित्रों, दूरदर्शन के धारावाहिकों तथा समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं में हिंसा की भरमार से यह भ्रम उत्पन्न होता है कि मृत्यु अधिकांश रूप से हिंसा या हत्या के कारण होती है। यह एक झूठ है। अमरीका के अधिकतर मनुष्य नैसर्गिक कारणों से मरते हैं। लेखक ने इस पुस्तक में बताया है कि तरुणों और युवकों के लिये बनाये कार्यक्रमों में भुतहे रंगमंच होते हैं, बेतुकी पोशाकें होती हैं – यह एक सूनी, विचित्र और डरावनी दुनिया है। दूरदर्शन वालों को ज्ञात है कि २५ से ४५ वर्ष की आयु के नागरिक दिल खोल कर खर्च करते हैं अतः अधिकांश पात्र इसी आयु के दिखाये जाते हैं। केवल तीन प्रतिशत पात्र ६५ वर्ष से अधिक की आयु के दिखाये जाते हैं जबकि अमरीका के १२ प्रतिशत व्यक्ति इस वर्ग में आते हैं। हमने अपना नैतिक भविष्य व्यवसायियों के हाथ में सौंप दिया है जो अपने वर्तमान व्यवसायिक हित के लिये हिंसा का प्रचार करके मानवता का सर्वनाश करने पर तुले हैं।

उत्तरी लंदन के साबरमाई प्राइमेरी स्कूल संघ के विद्यार्थियों ने ही शिकायत की है कि अमरीका का "साउथ पार्क" नाम का दूरदर्शन धारावाहिक बच्चों के चारित्रिक अधःपतन के लिये उत्तरदायी है तथा उसे देखने वाले बच्चों का व्यवहार और भाषा कुत्सित होते जा रहे हैं।

मायामी अमरीका के एक विद्यालय के अधिकारियों ने सातवीं कक्षा की १२-१३ वर्ष आयु की अपनी तीन छात्राओं को कैद किया क्योंकि इन लड़कियों ने अपनी तीन प्रतिद्वंद्वियों को डंडो से पीटकर तथा गला काटकर हत्या करने की योजना बनाई थी। प्रथम तो विद्यालय के अधिकारियों ने इसे गंभीरता से नहीं लिया किन्तु जब उन्हें एक थैले में ढेरों उस्तरे, चाकू तथा गले में ठूँसने के लिये बैटरियाँ मिली तब उन्होंने इन छात्राओं को गिरफ़्तार किया।

लेकवर्ग मिडल स्कूल में मई २७ को अमरीका के फ्लोरिडा राज्य के लेकवर्थ नगर का ७वीं कक्षा का एक विद्यार्थी नैथानियल ब्राज़ील, कक्षा में पानी भरे गुब्बारे अन्य विद्यार्थियों पर फेंक कर कक्षा में उपद्रव कर रहा था। उसके ३५ वर्षीय शिक्षक बैरी ग्रूनों ने उसे घर भेज दिया। इस विद्यालय में ११ से १५ वर्ष की आयु के १५३५ विद्यार्थी हैं। दोपहर में नैथानियल वापस स्कूल आया और शिक्षक के ऊपर वाक्यवाण छोड़े और फिर जेब से एक छोटी बन्दूक निकाल कर उन्हें गोली मार कर उनकी हत्या कर दी और फिर पुलिस को

आत्म-समर्पण कर दिया। इस तरह की अनेक घटनायें अमरीकी विद्यालयों में हो रही है। इस संदर्भ में नीचे दिये आंकड़े विचारणीय है। अमरीका इस समय संसार के देशों में सर्वाधिक शक्तिशाली और विकसित राष्ट्र है। बाल अपराधों और बाल हत्यारों से पूरा राष्ट्र चिंतित है, फिर भी इन घटनाओं के बावजूद वहाँ के राइफ़ल एसोसियेशन के सदस्यों की संख्या बढ़ती जा रही है और अब ३६ लाख हो गयी है। नागरिकों के पास २३ करोड़ निजी बन्दूकें हैं। और एक आश्चर्य की बात है कि संसार के देशों में अमरीकी नागरिक, वहाँ की जनसंख्या के अनुपात में, सर्वाधिक संख्या में जेल में हैं। रूस और चीन में कैदियों की संख्या घटती जा रही है। सन् १९७८ में अमरीका के प्रति १ लाख नागरिक़ों में २३० जेल में थे, १९८९ तक यह संख्या ४२६ हो गयी। अमरीका अपराधों के नियंत्रण पर प्रतिवर्ष ३५ अरब डॉलर खर्च करता है। अमरीका में प्रतिवर्ष ३०,००० व्यक्तियों की बंदूकों से हत्या होती है। पिछले सात वर्षों में १४ अमरीकी विद्यालयों में हत्याकांड हुए हैं। फिर भी अमरीका में बन्दूकें खुले आम बिकती है।

प्रश्न है कि हम एतराज़ क्यों नहीं करते? बहिष्कार क्यों नहीं करते? हम अपनी अमूल्य निधि – अपने परिवार और अपने राष्ट्र के चरित्र का हनन करने वाली इन फिल्मों और धारावाहिकों को क्यों देखते हैं और अपने निष्पाप बच्चों को क्यों देखने की अनुमति देते हैं? क्यों उन्हें अपराधी, भोगी और कामी बनाते हैं? क्यों हम अपना उज्ज्वल भविष्य नष्ट कर रहे हैं?

प्रार्थना

ओ मेरे मन!

दूरियाँ बाहरी हैं, भीतरी नहीं। अंतर की गहराइयों में अखंड एकत्व का सागर लहरा रहा है – अद्वैत प्राप्त कर, अद्वैत चेतना में निवास कर।

साधक! भगवान तेरे अहंकार पर हँस रहे हैं। सावधान! तेरी विजय की उच्च पताकाओं को वे अपने एक इंगित से धराशायी कर सकते हैं। माध्यम कोई भी हो, उपकरण कोई भी हो, विजय सदा भगवान की होती है। पराजित कोई भी हो, आहत सदा भगवान होते हैं। हानि या क्षति सदा भगवान की है, लाभ और सफलता भी उन्हीं की है। तू आराम से एक ओर बैठ कर उनका खेल देख। दर्शक बन जा।

मधु सब में है ; हार में भी, जीत में भी। हार कर मुस्कुराना सीख!

नलिनी, श्री अरविन्द के मानसपुत्र

(फ़रवरी अंक से आगे)

अलीपुर जेल

हमने २ मई १९०८ से ६ मई १९०९ तक पूरा एक वर्ष, विचाराधीन बंदियों के रूप में अलीपुर जेल में व्यतीत किया। इस काल को चार विभिन्न अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। इन चार अवस्थाओं में हमें रहने को भिन्न-भिन्न प्रकार के स्थान मिले, कहीं पर हम अधिक समय रहे और कहीं पर कम।

जो वार्ड हमें पहले मिला उसे "४४ डिग्री" कहते थे। वहीं पर हम कैद के आरंभ में और बाद में अधिक समय तक रहे। इस वार्ड को "४४ डिग्री" इसलिये कहते थे क्योंकि इसमें ४४ कमरे थे। वस्तुतः ये कमरे नहीं कोठरियाँ थी, वैसे ही दड़बे और ओसारे जिनमें कुत्ते तथा मुर्गियाँ रखी जाती हैं। जो भी कुछ करना होता था उन्हीं सँकरी और अंधेरी दीवारों के अंदर करना होता था। वहाँ कोई परदा या ओट नहीं थी। सामान्यतया इन कोठरियों में एक-एक खूनी या डाकू को रखा जाता था। किन्तु हमें न जाने किस कारण से तीन-तीन को एक-एक कोठरी में रखा गया था। शायद उन्होंने सोचा होगा कि यदि हममें से एक आत्महत्या का प्रयत्न करेगा तो दूसरे उसे रोक लेंगे। इन ४४ डिग्रियों में हमने जो जीवन जिया उससे यह सिद्ध हो जाता है कि मनुष्य किस प्रकार मनुष्य को पूर्णतया पशु से भी बदतर अवस्था में पहुँचा सकता है। वर्ड्सवर्थ के पास यह लिखने का कोई संगत कारण रहा होगा,

और हो जाता है बहुत दुखित
मेरा हृदय यह सोचकर
कि मानव ने मानव की
कर दी है कैसी दुर्दशा।

किन्तु हम इस जेल जीवन को अपने प्रशिक्षण और अनुशासन का एक अच्छा

अवसर मान सकते थे ; अधिक अशुभ में से ही अधिक शुभ का आगमन होता है। कहा जाता है कि जो लज्जा और भय और जुगुप्सा पर विजय नहीं पा सकते, वे आध्यात्मिक जीवन के योग्य नहीं हैं और अपने जेल-जीवन में हमें इन तीनों का, बिना किसी सोच-विचार के परित्याग करना पड़ा। मेरे लिये तो तीन व्यक्तियों का एक कोठरी में रहना सौभाग्य सिद्ध हुआ। यह मेरा सौभाग्य ही था कि मेरे साथी मेरे अनुकूल थे और उनका साहचर्य मेरे लिये पूर्णतया लाभदायक और सुखद रहा। उनमें से एक उपेन बनर्जी थे और दूसरा था सचिन सेन गुप्ता जो मेरे छोटे भाई के समान था। सचिन हमारे दल का सबसे अल्प वयस्क सदस्य था – वह अभी १६ वर्ष का भी नहीं हुआ था। वह ढाका के क्रांतिकारी नेता मक्खन सेन का भतीजा था। सचिन का स्वर बहुत मधुर था तथा वह एक अच्छा गायक था। उसके अधिकांश गीत राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत थे। वह उन्हें इतनी मधुरता से भावविभोर होकर गाता था कि उसे सुनने में आनन्द आता था, विशेषतया हमारी कारावास की उस स्थिति में। मैं उसके साथ स्वर मिलाकर गाने का प्रयत्न करता था और कुछ गीत सीख भी लिये थे। जेल-जीवन की यह मेरी प्रथम उपलब्धि थी। जेल से मुक्त होकर सचिन बेलूर मठ में श्री रामकृष्ण मिशन का सदस्य बन गया और वहाँ अल्पायु में ही उसकी मृत्यु हो गयी।

उसी का समवयस्क था प्रसिद्ध सुशील सेन, जिसे मजिस्ट्रेट किंग्सफ़ोर्ड ने कोड़े मारने का आदेश दिया था। यहाँ मैं सुशील के विषय में तुम्हें एक मनोरंजक घटना सुनाता हूँ। हमारे मुकद्दमें के अंत में न्यायाधीश ने हम सबको वैयक्तिक रूप से आमंत्रित किया, जिससे कि यदि हमें कोई बयान देना हो तो दे सकें। सुशील ने कटघरे में खड़े होकर घोषणा की कि वह न्यायाधीश के सम्मुख कुछ कहना नहीं चाहता क्योंकि, "मैं जो भी कहूँगा उसे तोड़-मरोड़ कर कानून बना दिया जायेगा।" यह सुनकर सारी अदालत अट्टहास कर उठी।

उपेन-दा गुरू और नेता के पद पर आसीन थे। मानिकतल्ला बाग में उन्होंने ही हमें गीता पढ़ाई थी। यहाँ जेल में, उनके संसर्ग में रहने के कारण मैंने उनसे बहुत सी चीजें सीखीं। उन्होंने मुझे साहस और ऊर्जा और उत्साह एवं बहुत अच्छा परामर्श दिया। मैं इन सब के लिये उनका कृतज्ञ हूँ। उनके हृदय में मेरे लिये विशेषतया कोमल स्थान था, शायद इसलिए क्योंकि उनकी पत्नी का नाम भी नलिनी था। उन्होंने मुझे सलाह दी कि मैं अदालत में किस प्रकार अपने पक्ष में बयान दूँ। "तुम्हें कहना चाहिये कि तुम कुछ नहीं जानते, कि तुम संयोगवश मुझसे अपने छात्रावास के भोजनालय में मिले थे और वहाँ बातचीत के दौरान जब मुझे यह ज्ञात हुआ कि तुम्हें भारतीय दर्शन में रुचि है तब मैंने ही तुम्हें अपने गीता-पाठ में सम्मिलित होने के लिये निमंत्रित किया था। तुम्हारा कोई अन्य उद्देश्य या निंदनीय इरादा नहीं था।" उपेन-दा ने मुझे ध्यान करने की कुछ

विधियाँ बताई थीं और इससे मुझे जेल में समय व्यतीत करने में सहायता मिली।

जेल में हमारा पहला महीना बहुत खराब नहीं रहा। और जब बाद में मुकद्दमा सुनवाई के लिये न्यायाधीश के सामने आया, तब हमारा समय बहुत अच्छी तरह बीतने लगा। क्योंकि उस समय से हमें अन्य लोगों से मिलने और बात करने का अवसर मिलने लगा। हम साथ-साथ गाड़ी में, खूब शोर मचाते हुए अदालत जाते थे तथा दिन का अधिकांश भाग हम सब अदालत में अधिकतर साथ बिताते थे ; और हम घोड़ागाड़ी में साथ ही वापस लौटते थे। हमें प्रफुल्लित रखने के लिये इतना ही पर्याप्त था।

हमारे जेल-जीवन का यह पहला दौर डेढ़ महीने में समाप्त हो गया। अब तो दृश्य और भी उज्ज्वलतर संभावनाओं से परिपूर्ण हो गया। जब अधिकारियों को ज्ञात हुआ कि हमारे इरादे खराब नहीं थे और हम पूर्णतया अच्छे लड़के थे तब उन्होंने हमें रहने के लिये अपेक्षाकृत अच्छा स्थान दिया। यह एक विशाल हॉल था जो तीन भागों में विभाजित किया गया था और जिसके सामने एक बरामदा और आँगन भी था और वहाँ हमारे शौच आदि दैनिक कृत्य बाहर होने लगे। हमारे जेल-जीवन का यह दूसरा दौर सचमुच ही विलक्षण था। अदालत के बाहर हम सबसे मिलते थे। वापस जेल में आकर हम दिन और रात में किसी भी समय किसी से भी मिल सकते थे। धीरे-धीरे हमारे दल ने एक विशेष रूप और आकार लेना आरंभ किया। हम अपनी-अपनी रुचि और स्वभाव के अनुसार दलों में बँट गये। इस प्रकार हॉल के तीन भाग तीन विभिन्न दलों में बँट गये। श्री अरविन्द ने हॉल के एक विशेष कमरे में निवास किया। उस समय तक उन्हें हमारे से बिलकुल अलग रखा गया था, और अब पहली बार वे हमारे मध्य में आये। उनके कमरे में वे सब एकत्रित हो गये जिनकी आध्यात्मिक जीवन, साधना और ध्यान में अभिरुचि थी। बारीन इसी दल में सम्मिलित हुए। मध्य कक्ष में वे लोग एकत्रित हुए जिन्हें बौद्धिक विकास में रुचि थी। ये अधिक "प्रज्ञाशील" व्यक्ति माने जाते थे। यहाँ उपेन ने नेतृत्व किया और मैं भी उनके कारण अपना अधिकांश समय इसी दल के साथ बिताने लगा। तीसरा दल नास्तिकों और तर्कबुद्धिवादियों का, एवं तथाकथित व्यावहारिक लोगों का था। यहाँ पर हेमदास और उनके प्रमुख युवा शिष्य कृष्ण जीवन का राज्य था। ये दल परस्पर खूब हास-परिहास करते थे, किन्तु उनमें सद्भावना और स्नेह की कभी कमी नहीं हुई।

इसी दौर में हमें पुस्तकें पढ़ने की अनुमति मिली, और कुछ ग्रंथ हमारे हाथों में आये। मेरे परिजनों ने मेरे लिये बेकन के "निबंध" तथा शेक्सपीयर के "किंग जॉन" की प्रतियाँ भेजीं – मुझे ये ही दो नाम याद हैं – तथा हमारे पाठ्यक्रम में जिस प्रकार की पुस्तकें पढ़ाई जाती थीं, उस प्रकार की अन्य पुस्तकें भी। विवेकानन्द की कुछ पुस्तकें भी आयीं और बसुमति संस्करण में ब्रह्मवैवर्त तथा

विष्णुपुराण भी। हमने ये पुस्तकें अनगिनत बार पढ़ीं, क्योंकि नयी पुस्तकें सहज में नहीं मिलती थीं।

किंतु मन में प्रश्न भी उठने लगा : अब आगे क्या होगा? क्या हमें शेष जीवन जेल में सड़ना होगा, दस या बीस वर्ष? और मान लो कि हममें से कुछ को फाँसी हो गई? यह भी जीवन का कोई विशेष वांछनीय अंत नहीं प्रतीत हो रहा था। बारीन के मन में विचार आया कि हम जेल से भाग जायें। उसका तर्क था कि हमारे जीवन बर्बाद तो होने ही थे, अतः सब कुछ खोने से पहले क्यों न कुछ कर गुज़रें? उसने अन्य लोगों से परामर्श किया और अपनी योजनायें बनानी आरंभ कर दीं। नक्शे और चार्ट भी बनाये गये और शिशिर घोष के नेतृत्व में कार्य कर रहे चंदननगर के दल के समान बाहर के हमारे सहकर्मियों से संपर्क भी स्थापित कर लिया गया। विचार था कि संध्या के समय जब हमें अपने वार्ड के आँगन में, किसी विशेष निगरानी के बिना स्वतंत्र छोड़ दिया जाता था, उस समय हम बच निकलने की चेष्टा करें। हाथ में पिस्तौलें लेकर हमें आँगन की दीवार की ओर भागना था। बाहर हमारे मित्र खड़े होंगे जो बाहर से रस्सियाँ और सीढ़ियाँ फेंकेंगे। हम दीवार पर चढ़ते समय गोलियाँ चलाते जायेंगे और दूसरी तरफ़ कूद पड़ेंगे। वहाँ से हम घोड़ागाड़ियों में पूर्व निर्धारित रास्ते से भाग निकलेंगे – उन दिनों कारों का प्रचलन नहीं हुआ था – और नदी तट पर पहुँच जायेंगे, जहाँ नौकायें हमारी प्रतीक्षा कर रही होंगी। और नदी के नीचे की ओर नौका बढ़ाते हुए, बंकिम के उपन्यास देवी चौधरानी की कहानी के समान, हम सुंदरवन के घने जंगलों में चले जायेंगे।

बहुतों को बारीन की यह रूमानी योजना जँची नहीं। किन्तु मैं तो एक नगण्य कार्यकर्ता था और चाहे जो भी आदेश मिले उसका पालन करने को तैयार था। क्योंकि यह हमारे जीवन का आदर्श था :

नहीं था उनका काम प्रश्न उठाना,
उनका उत्तरदायित्व तो था बस करना और मर जाना :

मैं कवि के उन शब्दों को उद्धृत कर रहा हूँ जिनके द्वारा जेल से मुक्त होने के बाद कॉलेज में मेरे साथियों ने मेरा स्वागत किया था। हम स्वयं भी तो बारंबार गाते आ रहे थे :

हे माता! चिन्ता क्या
यदि करते हुए बन्देमातरम् का गान,
तेरी सेवा में हो जाये यह जीवन बलिदान।

किन्तु श्री अरविन्द ने बारीन की योजना में भाग लेना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। उन्होंने कहा, "जहाँ तक मेरा संबंध है, मैं मुकद्दमें का सामना करूँगा।"

तीन-चार व्यक्तियों के एक दूसरे दल ने गुप्त रूप से एक दूसरी ही योजना बनाई। इसमें कनाई दत्त और सत्येन थे। संभवतः हेमदास को भी इसके विषय में ज्ञात था, और उपेन और उल्लास को भी। किन्तु उन्होंने अपनी योजना के विषय में एक शब्द भी नहीं कहा वरन् जो करना था उसे करके दिखा दिया। हमारे जेल-जीवन के इस दूसरे दौर के बाद ही तीसरा दौर आरंभ हो गया। अधिकारियों को इतने दिनों के हमारे व्यवहार से विश्वास हो गया था कि हम कोई दंगा-फ़साद नहीं करने वाले थे, यहाँ तक कि सामान्य कैदियों के समान अनुशासन-विहीनता भी नहीं। वह एक बड़ा सा हॉल था जिसमें हम ४० कैदी एक साथ रहते थे। सबका अपना-अपना सुनिश्चित स्थान था, अपनी "वेदी।" अर्थात मिट्टी का एक चबूतरा या ढेर जो पलंग का काम देता था और जिस पर एक कंबल बिछा रहता था। इस ढेर का एक सिरा कुछ ऊँचा होता था जो तकिये का काम देता था। मेरे मन में पहले मिट्टी के इस ढेर के प्रति मात्र अवज्ञा थी, किन्तु बाद में मुझे उसका मूल्य समझ में आया, जिसका वर्णन मैं अभी करूँगा। हॉल के बाहर एक बहुत बड़ा आँगन था जहाँ पर पानी के नल थे और एक तरफ़ बेकार पानी के लिये एक बड़ा गड्ढा भी था जिसमें हम स्नान भी कर सकते थे। रसोई पास ही थी और उसकी सुगंध चारों ओर फैली रहती थीं। ऊपर खुला आकाश था। दिन में हम किसी भी समय बाहर आ सकते थे ; संतरी भी बहुत अधिक भद्र थे। हमें बाहर से सब्जियाँ सदैव मिलती रहती थीं और मांस-मछली भी। हमें कभी-कभी स्वयं खाना बनाने की अनुमति भी मिल जाती थी। हॉल के अंदर तरह-तरह के खेल और विनोद चलते रहते थे – एक पूरा मेला ही लगा रहता था। अभिनय और स्वाँग, गीत और काव्य-पाठ, एक अन्तहीन आमोद-प्रमोद।

इस सब के बीच में श्री अरविन्द, एक ओर अपने छोटे से कोने में बैठे रहते थे। वे अधिकतर अपनी साधना और ध्यान में लीन रहते थे। किन्तु कभी-कभी वे हमारे बचकाने आमोद-प्रमोद में भाग लेने से हिचकिचाते नहीं थे। एक दिन मैंने उनके सामने यूनानी भाषा में कुछ सुनने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने हमें होमर की दस-बारह पंक्तियाँ सुनाईं। उस दिन हमने प्रथम बार यूनानी भाषा सुनी।

यह थी हमारे वाह्य जीवन की झाँकी। किन्तु आंतरिक भावनाओं के विषय में क्या कहें! एक ज्वाला धधक रही थी। बारीन ने सुझाव दिया था कि हमारे लिये जेल से भाग निकलना अधिक सुगम होगा क्योंकि हम अहाते की दीवार के पास आँगन में टहला करते थे और संतरी भी अधिक सजग प्रतीत नहीं होते थे। हमने रिवॉल्वर एकत्रित करने शुरू कर दिये – किस प्रकार – यह मैं बाद में

बताऊँगा। किन्तु हम उन्हें किस प्रकार छिपाते थे? उनमें से एक को छिपाने का दायित्व मुझे मिला। जिस मिट्टी के ढेर पर मैं सोता था उसमें मैंने एक गड्ढा बना लिया। किसी को खबर न लगे और संतरियों को ज्ञात न हो इसके लिये मैं गड्ढे की ओर कमर करके नंगे हाथों से पीठ पीछे छेद करता रहता था। जो मिट्टी निकलती थी उसे मैं दोनों ओर फैला कर कंबल से ढक देता था। इस प्रकार पिस्तौल मेरे "बिस्तर" में छुपी थी। छेद को गीली मिट्टी से लेपकर एक टीन की तश्तरी से ढक दिया था। उस पिस्तौल का, जिसे मैंने इस प्रकार छुपाया था, बाद में क्या हुआ, यह मैं नहीं जानता। क्योंकि जिस समय ये योजनायें और तैयारियाँ चल रही थीं, उस समय एक अप्रत्याशित घटना हुई, एक जलप्लावन जिसने हम सब को ताश के पत्तों से बने घर के समान बहा दिया। यह कार्य कनाई और सत्येन ने किया।

मैं सत्येन को अधिक नहीं जानता था। हमें बताया गया था कि वह बीमार है और उसे जेल के अस्पताल में रखा गया है। कनाई भी अधिक मिलनसार नहीं था। किन्तु हम उसे कभी-कभी यह कहते हुए सुनते थे, "जेल मेरे लिये नहीं है। मैं अंग्रेज सरकार से बच निकलूँगा।" हम उसके शब्दों पर हँसा करते थे।

यहाँ पर मुझे श्री अरविन्द के विषय में इसी प्रकार की एक घटना की चर्चा कर लेने दो। एक दिन जब हम अदालत में अपने पिंजरे में बैठे थे, एक अधिक साहसिक संतरी – वह एक अंग्रेज था – श्री अरविन्द के पास आया और मज़ाक में बोला, "अबरिन्दो (वह ऑरोबिन्दो नहीं कह पाता था), आखिरकार तुम पकड़ लिये गये हो," श्री अरविन्द ने तुरन्त तीखा उत्तर दिया, "और फिर भी मैं बच निकलूँगा, और फिर भी मैं बच निकलूँगा।"

हाँ, कनाई की बात करें। वह अधिकांश समय बिस्तर में अपने को सिर से पाँव तक ढककर लेटा रहता था। अगर कोई कुतूहलवश उससे इस प्रकार लेटे रहने का कारण पूछता तो वह उत्तर देता, "ओह। मैं अंतर्लोकों में जाने की चेष्टा कर रहा हूँ।" एक दिन एक जेल वार्डर ने आकर उसे समाचार दिया कि वह बी. ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया है – परीक्षाफल तभी घोषित हुए थे। कनाई हमारे कार्यकलापों में अपनी परीक्षा के दौरान सम्मिलित हुआ था। इसके बाद उसके विषय में अगला समाचार हमने सुना कि वह बीमार था तथा उसे अस्पताल भेज दिया गया था। और फिर . . .

एक संध्या, अचानक, जेल की खतरे की घंटी बज उठी। उग्र निनाद वाली यह घंटी केवल गंभीर खतरे के समय बजाई जाती थी। उसी समय एक कैदी वहशियों की तरह दौड़ते हुए चिल्लाने लगा, "नरेन गोसाँई ठंडा हो गया, नरेन गोसाँई ठंडा हो गया।" इससे पहले कि हम सोच-समझ सकते कि क्या हुआ, सिपाहियों के दल के दल तनी हुई संगीनों वाली राइफ़लें लिये हुए, आँगन में,

जहाँ हम सांध्य-भ्रमण कर रहे थे, आ गये। उन्होंने भेड़ों के झुंड के समान हमें हमारे क्वार्टरों में ढकेल दिया, मानों हम बलि के पशु हों। प्रत्येक की तलाशी हुई और हमारे साथ कुछ अशिष्ट धक्का-मुक्की भी हुई। हमें एक पंक्ति में खड़ा कर दिया गया और वहीं बिठा दिया गया और फिर आदेश हुआ, "अब चलो ४४ डिग्री।"

कनाई और हमारे कुछ अन्य साथी नरेन गोसाँई से छुटकारा पाना चाहते थे, मात्र इसलिये नहीं कि वह एक देशद्रोही था, वरन् इसलिये भी कि उसके मरने से सेशन अदालत में उसकी गवाही रद्द हो जाये, क्योंकि यदि उसकी गवाही की जिरह में परीक्षा न हो सके, तो उस गवाही का कोई मूल्य नहीं रहेगा। उसकी हत्या करके कनाई ने हम सब को कम से कम कानून के चंगुल से तो बचा लिया।

अब हम फिर वहीं आ गये जहाँ हम आरंभ में थे। यह दौर पहले दौर के ही समान था, अंतर बस इतना था कि अब तीन-तीन को एक कोठरी में रखने के स्थान पर हमें अलग-अलग अकेले रखा गया। क्योंकि अब अधिकारियों ने समझ लिया था कि बाहर से सौम्य दिखाई पड़ने पर भी हम किस धातु के बने थे। इसके साथ ही हमारे जेल-जीवन का स्वर्ण काल समाप्त हो गया। हमारी सभी विशेष सुविधायें और रियायतें छीन ली गयीं। अब अदालत ही एकमात्र स्थान था जहाँ हम मिल सकते थे।

मुकद्दमा काफ़ी समय तक खिंचता गया, कई महीने। और मुकद्दमा समाप्त होने के बाद चरम एकाकीपन का काल आया। अब हम केवल फ़ैसले की प्रतीक्षा ही कर सकते थे। अंधरात्रि का यह काल लगभग दो महीने तक चला। इस दौर में कभी-कभी मैं भी अवसादग्रस्त हो जाता था, "क्यों और क्या, और कहाँ, और किस दिशा में?" ये प्रश्न उठ कर मन को आच्छादित कर देते थे। अंतिम दिनों में विवेकानन्द की एक पुस्तक मिली "कोलम्बो से अल्मोड़ा" जिसे पढ़ कर मैंने कुछ सांत्वना पायी। कैसी श्रद्धा और विश्वास, कैसा साहस प्राप्त होता था उनके शब्दों और उनकी शैली से! लगता था कि सब सुस्पष्ट होता जाता था, विशेषतया जब मैं उस पुस्तक में उद्धृत वेद और उपनिषदों के मंत्रों का पाठ करता था। यथा :

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वातमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

"मैं सूर्य की भाँति देदीप्यमान इस महत् पुरुष को जानता हूँ, जो समस्त तम से परे खड़ा है, केवल जिसे जानकर ही मृत्यु को पार कर परे जाया जा सकता है ; महान यात्रा के लिये अन्य कोई मार्ग नहीं है।"

अथवा

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।।

"वहाँ सूर्य नहीं चमकता और चाँद में कोई ज्योति नहीं है और नक्षत्र अंध हैं ; जहाँ बिजलियाँ नहीं कौंधतीं, तब कैसे प्रज्ज्वलित होगी यह पार्थिव अग्नि? जो सब चमकता है इसी ज्योति की छाया है ; यह समस्त विश्व उसी की ज्योति से ज्योतित हैं।"

या

यस्यैते हिमवन्तो महित्वा –
हिमवान के हिम जिसकी महिमा का घोष करते हैं।

किसी शाश्वत सत्य वस्तु का कितना सीधा स्पर्श है ! विवेकानन्द के शब्दों से एक अपराजेय शरणस्थली, एक निर्भीक अवस्था और अकंपित आधार प्राप्त हुआ। वे व्यक्ति को वास्तव में ही आत्मा के समीप ले आते हैं और शक्ति प्रदान करते हैं, "आत्मदा, बलदा"। बाद में मैंने ऑस्कर वाइल्ड की पुस्तक "द प्रोफ़ैंडिस" में उनके जेल-जीवन के अनुभव पढ़े। जब भी मैं अवसाद के किसी गहन गर्त में डूबता हुआ प्रतीत होता था, तुरन्त अन्तर गहराइयों से ऊँचाइयों के लिये एक अभीप्सा उमड़ पड़ती थी। मेरे लिये यह वास्तव में उषा से पूर्व की गहनतम रात्रि थी।

एक दिन जब मैं भाराक्रांत मन से गहरी चिंता में डूबा हुआ था, अचानक किसी स्पष्ट, ज्योतिर्मय और शांत वस्तु की अनुभूति हुई :

"क्षितिज कांतिमान हो गये, वायु सुखमय हो गई" "दिशः प्रसेदु मरुतः ववूः सुखाः"। मुझे अनुभव हुआ कि अब चिंता की कोई बात नहीं थी। मेरी मुक्ति निर्धारित थी, एक मुक्ति जो मेरे अंतर में, आकाश में और वायु में अभी से प्रकट हो रही थी।

जेल में मेरा अंतिम दिन था। अदालत में हमें फ़ैसला सुनने के लिये बुलाया गया। एक-एक करके उन सबके नाम पुकारे गये जिन्हें सजा मिली थी। मेरा नाम उनमें नहीं था, अर्थात् मैं मुक्त हो गया। मुझे कोई आश्चर्य या उल्लास नहीं हुआ।

जो हुआ था वह पूर्णतया स्वाभाविक था, जो हुआ वह होना ही था। मैंने इतने दिनों के अपने मित्रों और साथियों से बिदा ली, उन्हें अलविदा कहा और धीरे-धीरे मुक्त आकाश की स्वतंत्रता में बाहर आया, मेरा मन शांत था। एक वर्ष बीत गया था।

श्री माँ के पास

जब माँ सामूहिक ध्यान कराती थीं, उदाहरण के लिये आश्रम की क्रीड़ास्थली में, उस समय उनके चतुर्दिक एकत्रित लोगों के साथ-साथ एक दूसरी प्रकार के लोग भी आकर एकत्रित हो जाते थे – ये लोग थे – दूसरे लोकों के प्राणी, देवता और देवदूत। भगवान का पृथ्वी पर एक पार्थिव मानवीय शरीर में आना – यह दूसरे लोकों की इन अशरीरी सत्ताओं के लिये एक इतना बड़ा प्रलोभन था ; यह भगवान के पार्थिव वातावरण में होने का एक इतना महान अवसर था। वास्तव में यह एक सौभाग्य था, भौतिक शरीर में होने का सौभाग्य। केवल मानव प्राणियों को यह सौभाग्य प्राप्त है कि वे प्रभु के भौतिक शरीर का स्पर्श पा सकें। अतः ये प्राणी (देवता तथा देवदूत) वेग पूर्वक नीचे आते थे और पृथ्वी पर भगवान की दैहिक उपस्थिति की आनन्दमयी सुनहरी धूप सेकने के लिये पृथ्वी के जितना संभव हो उतना समीप आने का प्रयत्न करते थे।

कहा जाता है कि जब माँ अपना आर्गन बजाती थीं, यही घटित होता था ; उनके चतुर्दिक अदृश्य श्रोताओं की एक भीड़ होती थी ; इतना ही नहीं, स्वयं माँ ने यह रहस्य उद्‌घाटित किया है कि कुछ सत्ताएँ, यहाँ तक कि मृत संगीतकार भी, उनसे प्रार्थना करते थे कि वे उन्हें अपनी अगुँलियों द्वारा आर्गन बजाने दें – वे भगवान का उपकरण बनने के स्थान पर भगवान को अपना उपकरण बनाते थे।

माँ अपने शरीर में चमत्कारों का एक घर थीं।

(S A I C E, श्री नलिनी कान्त गुप्त, भाग ६, पृ. २६०)

श्री माँ की घड़ी

यह उन दिनों की बात है जब आश्रम के एक विशिष्ट साधक लालजी भाई हिंडोचा किसी कार्य से प्रतिदिन उदार पिंटो के साथ पांडिचेरी के आसपास के ग्रामीण क्षेत्र में जाया करते थे। जैसे ही वे चलने को तैयार होते, उदार कहते थे, ''ज़रा रुकिये। मुझे माँ की घड़ियों और दीवार घड़ियों में चाबी देनी है।'' उदार को यह कार्य दिया गया था और इसका एक निश्चित समय था।

एक बार अपनी एक विदेश यात्रा के समय लालजी भाई अपने एक जौहरी मित्र की दूकान पर गये जो घड़ियाँ बेचते थे। उन्होंने अपने मित्र से अपने संग्रह की घड़ियाँ दिखाने को कहा। मित्र ने उन्हें बहुत सी सुंदर घड़ियाँ दिखायीं। उनमें से एक घड़ी ने लालजी भाई को विशेष रूप से आकर्षित किया। उन्हें लगा जैसे सोने की यह रोलेक्स घड़ी उनसे अनुरोध कर रही थी कि वे उसे खरीद लें। जब वे अन्य घड़ियाँ देख रहे थे तब भी यह घड़ी उन्हें पुकारती रही। अन्त में उन्होंने उसे खरीदने का निर्णय कर लिया।

पांडिचेरी लौटने पर जब वे श्री माँ के पास गये उन्होंने कहा, "माँ, मैं आपके लिये एक घड़ी लाया हूँ जिसमें चाबी नहीं देनी पड़ती।" श्री माँ ने हर्ष से कहा, "यह तो बहुत अच्छी बात है।" तब उन्होंने अपना हाथ आगे बढ़ा कर कहा, "लो, मुझे पहना दो।" आनन्दविभोर होकर लालजी भाई ने घड़ी श्री माँ की कलाई में बाँध दी। उन्होंने देखा कि फ़ीता कुछ ढीला था अतः कहा, "माँ, अच्छा रहेगा अगर मैं फ़ीता छोटा करा लाऊँ जिससे यह आपकी कलाई पर ठीक बैठे।" श्री माँ ने उत्तर दिया, "नहीं, इस पर गुह्य क्रिया की जा चुकी है और उसमें विघ्न डालना या उसे नष्ट करना उचित न होगा। कोई क्षण या उसका स्पंदन बीतने के बाद कभी पहले जैसा नहीं होता – यहाँ तक कि कुछ क्षण बाद भी नहीं।"

इसके बाद श्री माँ ने केवल इसी घड़ी का उपयोग किया। एक बार उन्होंने लालजी भाई से इस घड़ी के विषय में कहा, "यह घड़ी इतनी संवेदनशील है कि जब मैं ध्यानमग्न हो जाती हूँ यह भी रुक जाती है।"

(श्री माँ के एक फ़ोटो में मैंने इस घड़ी को देखा था जो माँ की कलाई तक ढुलकी हुई थी। मुझे आश्चर्य होता था कि माँ इतने ढीले फ़ीतेवाली घड़ी क्यों बाँधती हैं। लालजी भाई से यह कथा सुनकर मेरी शंका का समाधान हुआ। श्री माँ कहा करती थीं कि प्रत्येक वस्तु में एक संवेदना होती है। इसका प्रमाण है श्री अरविन्द अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र की वह बड़ी घंटा घड़ी जो १७ नवम्बर, १९७३ की संध्या को चलते-चलते उसी क्षण रुक गयी जिस क्षण श्री माँ ने देहत्याग किया।

उपरोक्त कथा मुझे लालजी भाई ने सुनायी थी और सर्वप्रथम मेरी पुस्तक More Vignettes of Sri Aurobindo and the Mother में प्रकाशित हुई थी। – श्याम कुमारी)

माँ द्वारा सहायता एवं रक्षा

भारतीयों की चिरकाल से मान्यता रही है कि भक्त के द्वारा सच्ची पुकार सुन कर भगवान तुरंत दौड़े चले आते हैं। यह एक चिरंतन सत्य है। नीचे लिखी

घटनायें यह प्रमाणित करती हैं।

एक ऐसा दिव्य समय था जब श्री माँ दिन में कई बार आश्रमवासियों और बाहर से आने वाले शिष्यों को एकाधिक बार प्रणाम का अवसर देतीं, उन्हें पुष्प तथा आशीर्वाद देतीं। कभी-कभी ऐसा होता था कि श्री माँ किसी भक्त को आशीर्वाद देते समय समाधि अवस्था में चली जाती थीं। कभी-कभी वे किसी के शीश पर हाथ रखे हुए एक घंटे तक ध्यान मग्न रहतीं। क्योंकि उन्हें अन्तर्जगत में सहायता की कोई पुकार सुनाई पड़ती थी और वे सूक्ष्म शरीर में सहायता करने के लिये चली जाती थीं और पार्थिव शरीर जिस मुद्रा में होता था वैसे ही रह जाता था। द्वितीय महायुद्ध के समय ऐसा प्रायः ही होता था। जाना या अनजाना – जो भी व्यक्ति उन्हें पुकारे वे उसकी सहायता के लिये सूक्ष्म रूप में तुरंत पहुँच जाती थीं।

एक शिष्य की एक विचित्र आदत थी। वे श्री माँ को प्रणाम के समय एक पाँव पीछे मोड़ लेते थे और एक पाँव पर खड़े रहते थे। एक दिन वे इसी प्रकार माँ के सम्मुख खड़े थे। माँ ने उनके हाथ अपने हाथों में थाम रखे थे। अचानक श्री माँ ध्यानमग्न हो गयीं और लगभग १० मिनट तक ये साधक एक टाँग पर बिना हिले खड़े रहे। वे न तो अपना मुड़ा पाँव खोल सकते थे और न ही अपने हाथ हिला सकते थे क्योंकि माँ की समाधि टूटने का भय था।

जब श्री माँ ध्यान से बाहर आयीं तो खिलखिला कर हँसीं। साधक ने पूछा, "माँ, आप हँस क्यों रही हैं?" "तुम्हारी हालत देख कर," श्री माँ ने उत्तर दिया। वे इन साधक की एक पाँव पर खड़े होने की विचित्र आदत के विषय में जानती थीं। साधक ने कहा, "हाँ माँ, मैं एक पाँव पर खड़ा रह गया। किन्तु आप अचानक ध्यानमग्न क्यों हो गयीं?"

श्री माँ ने उत्तर दिया, "किसी ने मुझे सहायता के लिये पुकारा था।"

'उन्होंने मेरी प्राण रक्षा की'

बँगाल निवासी भक्त श्री नरेश चंद्र के पेट में एक फोड़ा हो गया। उन्हें निरन्तर बेचैनी और भयानक पीड़ा का अनुभव होता था। वे कुछ भी पचाने में असमर्थ थे, अतः केवल दूध पीकर रहते थे।

सन् १९४५ में वे आश्रम आये। एक दिन प्रातःकाल जब श्री माँ पुष्प वितरण कर रही थीं उन्होंने श्री माँ से प्रार्थना की, "मधुर माँ, पाँच वर्ष से मैं इस फोड़े से उत्पन्न भयानक पीड़ा को सहन कर रहा हूँ। कभी-कभी तो पीड़ा असहनीय हो जाती है। माँ, मुझे स्वस्थ कर दीजिये।"

श्री माँ ने बलपूर्वक कहा, "कोई दवा तुम्हें ठीक नहीं कर सकती। तुम पूरी तरह शारीरिक और मानसिक विश्राम लो।" बेचारे नरेश चंद्र श्री माँ के शब्द

सुनकर विचलित हो गये। निस्सहायता और दुख से उन्होंने उत्तर दिया, "माँ, मैं अपने भाई-बहिनों में सब से बड़ा हूँ। हम लोग गरीब हैं और छोटा-मोटा व्यापार करते हैं। मैं किस प्रकार पूर्ण विश्राम ले सकता हूँ?"

श्री माँ नरेश चंद्र की ओर देख कर मुस्कायीं और उन्हें एक आशीर्वाद पुष्प दिया। उसी दिन से नरेश चंद्र रोगमुक्त हो गये। वे सामान्य भोजन करने लगे और गत ५० वर्षों में उन्हें कभी इस रोग ने नहीं सताया। फोड़ा पूरी तरह विलुप्त हो गया। नरेश चंद्र आँखों में आँसू भर कर कहते हैं, "माँ ने मेरी प्राण रक्षा की।"

महाकाली की कार्यप्रणाली

१. दाँत की सूजन

आश्रम की सरल साधिका कृष्णा को लोग मौसी कहते हैं। इनका व्यक्तित्व अकृत्रिम है और आश्रम में आरंभिक जीवन में इनकी प्रतिक्रियाएँ बड़ी तीव्र होती थीं। एक बार जब कृष्णा युवती थी उनके एक दाँत में कीड़ा लग गया और गाल सूज गया। उन्होंने श्री माँ को तथा आश्रम के सेक्रेटरी नलिनी कांत गुप्त को इस बात की सूचना दे दी। जब कृष्णा श्री माँ को प्रणाम करने गयीं तब श्री माँ ने कृष्णा के दोनों हाथ अपने एक हाथ में थाम लिये और दूसरे हाथ से उसके सूजे हुए गाल पर एक तमाचा मारा। इस अप्रत्याशित आघात से कृष्णा विचलित और क्रोधित हो गयीं। उन्होंने सोचा, "माँ मेरी दुश्मन हैं। मैं अगली रेल से आश्रम छोड़कर चली जाऊँगी।" क्षोभ से उबलती हुई वह श्री माँ के कक्ष से नीचे आयीं। नलिनी तथा अमृत ध्यानकक्ष में खड़े थे। उन्होंने कृष्णा को देखकर आश्चर्य से कहा, "अरे! तुम्हारी सूजन कहाँ चली गयी?" कृष्णा ने अपने गाल पर हाथ रखा तो पाया कि सूजन और दाँत का दर्द गायब हो गया था।

(यह कथा मुझे सुश्री कृष्णा ने स्वयं सुनाई।)

२. तीव्र ज्वर

उन दिनों श्री माँ आश्रम की क्रीड़ाभूमि में नित्यप्रति सभी आश्रमवासियों को टॉफ़ी या मूँगफली-वितरण करती थीं। सब आश्रमवासी पंक्ति बनाकर श्री माँ के सामने से गुज़रते तथा उनके कर कमलों से प्रसाद पाते।

एक भक्त दूसरी बार आश्रम आये थे। प्रसाद वितरण के समय उनके सामने उनकी परिचित एक वरिष्ठ साधिका थी। साधिका ने शॉल ओढ़ रखा था और काँप रही थीं। इन भक्त ने उनका हाथ छूकर देखा तो पाया कि उनका बदन

ज्वर से तप रहा था। उन्होंने कोमलता से कहा, "दीदी, आपको इतने बुखार में आना नहीं चाहिये था।" अपनी बारी आने तक इन्होंने उन महिला को हल्के से सहारा दिया।

कुछ ही मिनटों में वे श्री माँ के सामने आ पहुँचे। वे साधिका जब श्री माँ के सम्मुख आयीं तब उसके शॉल की ओर इशारा करते हुए माँ ने उन महिला को कस कर डाँटते हुए कहा, "यह क्या है?" और प्रसाद की टॉफ़ी एक तरह से उनके ऊपर फेंक दी। साधिका मर्माहत हो गयीं। उनकी आँखें आँसुओं से भर गयीं। उन्होंने धीमे स्वर में कहा, "माँ, तेज बुखार है," यह कहते हुए वे आगे बढ़ गयीं। बाहर से आये हुए भक्त को श्री माँ की कठोरता असहनीय लगी। किन्तु जब इन महिला के बाद वे स्वयं श्री माँ के सम्मुख आये तब माँ की मुद्रा एकदम बदल गयी। उनका मुखमंडल मुस्कान से दीप्त हो गया। समस्त कठोरता विलुप्त हो गयी किन्तु इन भक्त को उनके व्यवहार से इतनी ठेस लगी थी कि उन्होंने श्री माँ की दी हुई टॉफ़ी अनिच्छा से ही हाथ में ली। फिर वे उस महिला को सहारा देकर उसके घर ले गये। उन्होंने पूछा, "श्री माँ ने आपको क्यों इस प्रकार डाँटा?" महिला कुछ बोले बिना अन्दर चली गयीं। उस समय रात के आठ बजे थे।

अगले दिन सबेरे जब ये भक्त आश्रम से बाहर आ रहे थे तब उन्होंने इन साधिका को श्री अरविन्द अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र में जाते हुए देखा जहाँ वे शिक्षिका हैं। ये भक्त तेजी से उनके पास गये और पूछा, "दीदी, आज आप बाहर क्यों निकली हैं? कल तो आपको इतना तीव्र ज्वर था।" महिला ने उत्तर दिया, "पिछली संध्या श्री माँ ने मुझे नहीं वरन् ज्वर को डाँटा था। रात ११ बजे ज्वर अचानक उतर गया और मैं बिल्कुल स्वस्थ हो गयी।"

भगवान को आत्मसात् कर लेने दो . . .

इन साधिका के जीवन में वास्तव में अनेक जटिल समस्याएँ तथा कठिन परिस्थितियाँ थीं। आश्रम में बहुत वर्षों से निवास करने के उपरांत भी वे इन समस्याओं से स्वयं जूझने का प्रयत्न कर रही थीं – अवश्य ही श्री माँ की सहायता से, किन्तु मुख्यतः अपनी क्षमता द्वारा। नतीजा यह हुआ कि समस्याएँ तो ज्यों की त्यों बनी रहीं परन्तु वे स्वयं गंभीर रूप से बीमार हो गयीं। उन्हें एक प्रकार के स्नायु-ज्वर ने जकड़ लिया। डॉक्टर या दर्दनाशक दवायें उनको पीड़ा मुक्त न कर सके। अन्ततोगत्वा उन्होंने हताश होकर अपने गले की माला तथा उसमें लटकता श्री माँ का प्रतीक (सिंबल) इस प्रार्थना के साथ श्री माँ के पास भिजवाया कि वे उसमें अपनी शक्ति भर दें। श्री माँ ने उनकी प्रार्थना सुनी और उस माला और प्रतीक को कुछ समय के लिये अपने हाथों में लिये रखा, फिर

उन्हें सावधानी से एक लिफ़ाफ़े में बन्द करके इन महिला को भिजवा दिया।

जैसे ही इन महिला को लिफ़ाफ़ा मिला, उन्होंने अपने दुर्बल हाथों से प्रतीक चिह्न को अपने हृदय स्थल पर रख लिया। वे अत्यधिक दुर्बल हो गयी थीं और उनमें इतनी शक्ति भी नहीं थी कि वे गरदन उठा कर माला को गले में पहन सकतीं। किन्तु हृदय स्थल पर प्रतीक का स्पर्श होते ही उन्हें अनुभूति हुई कि उस नन्हें से प्रतीक ने वह असहनीय पीड़ा जैसे सोख ली। उनके हाथ-पाँव की अँगुलियों से, बाँहों और टाँगों में से और सिर के ऊपर से निकल-निकल कर वह पीड़ा उस प्रतीक में प्रवेश करने लगी और उसमें समाहित हो गयी। कुछ ही क्षणों में ये महिला पूरी तरह पीड़ामुक्त हो गयीं।

अत्यंत कृतज्ञता से भरकर उन्होंने श्री माँ को धन्यवाद के कुछ शब्द लिखे। श्री माँ ने प्रत्युत्तर दिया कि उसे अपनी सांसारिक समस्याओं को भी भगवान को आत्मसात् कर लेने देना चाहिये।

अधिकांश कठिनाइयों का कारण

मनुष्यों की अधिकांश कठिनाइयों का कारण है अपने कार्यों पर नियंत्रण का अभाव और दूसरों के कार्यों पर उनकी प्रतिक्रियाएँ।

अपनी-अपनी प्रकृति और कमज़ोरियों के अनुसार, व्यक्ति को अपने लिये एक अनुशासन निर्धारित कर लेना चाहिये जिसका अनिवार्यतः पालन करना चाहिये : उदाहरण के लिये : कभी झगड़ा नहीं करना, जब कोई अप्रिय बात कहे या (अप्रिय) कार्य करे तब कभी उत्तर न देना, जब किसी से असहमत हो तो कभी बहस न करना। स्पष्ट है कि जब व्यक्ति और वस्तुएँ ऐसी नहीं होती हैं जैसी हम चाहते हैं तब व्यक्ति को कभी झल्लाना नहीं चाहिये।

स्वाभाविक है कि अगर व्यक्ति को आत्म-नियंत्रण का अभ्यास नहीं है, तो इसकी आदत डालने के लिये उसे काफ़ी प्रयत्न करना होगा। किन्तु अगर व्यक्ति कुछ भी प्रगति करना चाहता है तो यह करना अनिवार्य है।

राह लंबी है। इस कारण व्यक्ति में धैर्य और अपने प्रति एक अजेय निष्कपटता होनी आवश्यक है।

दूसरों के साथ शांति से रह सकने के लिये, आत्म-नियंत्रण आवश्यक है और इसका अभ्यास उन सब को भी करना चाहिये जो रूपांतर की अभीप्सा नहीं करते।

– श्री माँ

१२ दिसम्बर १९७१

(बुलेटिन, नवम्बर १९९९, पृष्ठ १९-२१)

त्रासदी

सुछन्द की माँग है कि आप एक दुखान्त कहानी लिखिये। न जाने क्यों, मुझे त्रासदियों को शब्दबद्ध करना ऐसा लगता है मानों वर्णन के द्वारा उन्हें बढ़ावा एवं गौरव दिया जा रहा हो। वस्तुतः त्रासदी की मेरी परिभाषा सामान्य से कुछ भिन्न है। किसी का रोग या मृत्यु, किसी का अपहरण या शीलहरण, किसी प्राकृतिक विभीषिका के द्वारा जन्मी वेदना और उसके अनगिनत रूप – सामान्यतः इसी श्रेणी की घटनायें त्रासदी की श्रेणी में गिनी जाती हैं। सुख के सुंदर परिधान पर दुख की ये काली बिंदियाँ हमें असह्य लगती हैं। किन्तु एक और प्रकार की त्रासदी भी होती है जिसमें बाहर सब कुछ सामान्य रहता है किन्तु कहीं हमारे अन्दर का देवता मर जाता है और असुर जीत जाता है। वही होता है वास्तविक कारण जो देवताओं को हमसे विरक्त करता है और असुरों को विजयी बनाता है। त्रासदियों के विषय में लिखने का उत्साह न होने पर भी अपने चारों ओर बिखरी त्रासदियों की उपेक्षा भी नहीं कर सकती। एक छोटी सी त्रासदी मेरी आँखों के सामने से गुज़री।

कल की बात है सुमित टंडन अपने मित्र के यहाँ पार्टी में जा रहा था। बहुत उत्साह था उसके मन में। मित्र ने वादा किया था कि "उसे" भी बुलायेगा, जैसे भी हो पकड़ लायेगा। विनीता सुमित को बहुत अच्छी लगती थी किन्तु वह उस तक पहुँच नहीं पाता था। एक कंपनी की जनरल मैनेजर विनीता को प्रेम करने का तो क्या, प्रेम के सपने देखने का भी समय नहीं था। आज लंदन में कान्फ्रेंस है, कल सिंगापुर में कंपनी के शेयर होल्डर्स की मीटिंग है, परसो हाँगकाँग में किसी समझौते पर हस्ताक्षर करने हैं। सफलता की सहयोगिनी होती है व्यस्तता ; इन दोनों ने मिल कर विनीता को काम के पिंजरे में इस प्रकार बंदी कर दिया था कि सुमित उस तक पहुँच ही नहीं पाता था। आज उसके दोस्त मनीष के घर पार्टी थी और विनीता मनीष की चचेरी बहन थी। वस्तुतः मनीष की छोटी बहन के विवाह के समय ही पहले-पहल उसने विनीता को देखा था। उसके बाद वही हुआ जो प्रेम में होता है और कवि और उपन्यासकार जिसका युगों-युगों से वर्णन करते आये हैं। सुमित को सोते-जागते विनीता की ही स्मृति सताती रहती थी। यूँ वह अपनी फ़र्म का चीफ़ एक्ज़ीक्यूटिव था। दर्जनों स्टैनों-टाइपिस्ट उसके इशारों पर नाचती रहती थीं। किंतु विनीता के पास आने पर वह एक लजीले

किशोर के समान हो जाता था।

आज उसने बड़े जतन से साज-सज्जा की थी। कुर्ते में पेरिस से मँगाया ऑर्किड लगाया था। वह सपना देख रहा था कि यह ऑर्किड विनीता के बालों में लगा देगा। एक सिहरन सी व्याप्त हो रही थी उसके तन-मन में। उसे ज्ञात था कि विनीता को ऑर्किड बहुत अच्छे लगते हैं। मनीष ने एक दिन बताया था। उसी दिन उसने ५००० रुपयों के ऑर्किडों का एक खूबसूरत गुलदस्ता विनीता के घर भिजवाया था। एक नाज़ुक जादुई आवाज़ ने फ़ोन पर उससे कहा था, "बहुत-बहुत शुक्रिया। मुझे ऑर्किड बेहद अच्छे लगते हैं।" उसकी आवाज़ सुन कर सुमित इतना स्वप्निल हो उठा था कि विनीता से यह भी नहीं कह सका, "तुम्हारा हर शौक, हर पसन्द मुझे मालूम है विनीता," बस इतना ही कहा, "नॉट एट ऑल। (यह तो कुछ नहीं।)" विनीता ने सोचा था वह कुछ और कहेगा। मनीष उसे बता चुका था कि सुमित उसका दीवाना है ; पागलपन की सीमा तक उसे चाहता है। विनीता ने उसके बारे में सब कुछ जान-सुन कर उसे मन ही मन पसन्द भी कर लिया था किन्तु पिछले एक वर्ष से सफलताजन्य व्यस्तता ने अनंग के वाणों को निष्फल-सा कर दिया था। कामदेव उसकी व्यस्तता में प्रवेश करने का अवसर ही नहीं पा रहे थे, किन्तु गत वर्ष उसकी लाड़ली चचेरी बहन के विवाह के अवसर पर एक साँझ उसके लिये मनचाहा वरदान लेकर आई और वहीं कामदेव को अवसर मिल गया था। आज प्रेम का उदय दोनों ओर से हुआ था, किन्तु विनीता अपने भाव छिपाने में कुशल थी। इसी कारण सुमित को अंदाज़ ही नहीं हुआ कि उसका प्रेम एकतरफ़ा नहीं है। विनीता की अपने भाव छिपाने की इसी कुशलता के कारण उसके द्वारा किये गये करोड़ों के सौदों में भी उसकी फ़र्म को कभी घाटा नहीं हुआ था। इसी कारण अरबों के सौदे और साझे करने के लिये फ़र्म के मालिक उसे ही भेजते थे। किन्तु अपने हितों की रक्षा करते हुए भी विनीता दूसरों को नुकसान नहीं पहुँचाती थी। उसके स्वभाव में एक न्यायप्रियता थी। अनुचित लाभ के पक्ष में नहीं थी वह। न्याय के लिये वह फ़र्म के मालिकों से भी लड़ पड़ती थी। उसे अमरीकी किस्म की प्रतिद्वंद्विता पसंद नहीं थी जिसमें विपक्षी को मिटा कर हर्ष होता है। वह दूसरों को निगलने के पक्ष में नहीं थी। उसका कहना था स्वयं भी फूलिये-फलिये और दूसरों को भी जीने दीजिये। उसके इसी रवैये के कारण विपक्षी व्यापारी संस्थान भी उसके बनाये समझौतों पर बिना

उसकी आवाज़ सुन कर सुमित इतना स्वप्निल हो उठा था कि विनीता से यह भी नहीं कह सका, "तुम्हारा हर शौक, हर पसन्द मुझे मालूम है विनीता।"

हिचक हस्ताक्षर कर देते थे। इसी कारण अन्य संस्थान भी कभी-कभी अपने विवादों में मध्यस्थता के लिये उसे माँग लेते थे। महालक्ष्मी का सा वातावरण था उसके चतुर्दिक। जहाँ जाती मुस्कानें बिखेरती जाती थी।

आज विनीता की अपनी फ़र्म से कॉन्ट्रैक्ट की अवधि समाप्त हो रही थी। पिछले सात वर्षों से अथक परिश्रम और अपनी तीव्र मेधा के बल से उसने देश-विदेश में सूचना-तकनीक के क्षेत्र में अपनी एक पहचान बना ली थी। किन्तु अब वह कुछ वर्ष अपने लिये जीना चाहती थी। विवाह और एक शिशु – बस पाँच वर्ष घर पर काम करेगी। बच्चा छः वर्ष का होने पर उसे दून स्कूल भेज देगी और फिर अपना निजी संस्थान खोलेगी। सुमित उसके भाई मनीष के साथ दून स्कूल में पढ़ा था। सब तरह से उसके योग्य था और सर्वोपरि वह उसका दीवाना था। कोई सुन्दर, सफल पुरुष किसी युवती को पागलपन की सीमा तक प्यार करे तो उसके हृदय को तृप्ति होती है। विनीता ने सोच लिया था कि आज यदि सुमित विवाह-प्रस्ताव करेगा तो वह स्वीकार कर लेगी। यह उसने मनीष भैया से कह भी दिया था। मनीष ने सुमित को इशारा कर दिया था, अतः सुमित का रह-रहकर मुस्कराना और गुनगुनाना स्वाभाविक ही था।

विनीता ने अपनी फ़र्म के मालिक मल्कानी साहब से कह दिया था कि वह अब कुछ वर्षों के लिये अवकाश लेगी तथा विवाह करेगी। मल्कानी साहब के हाथों के तोते उड़ गये थे और उन्होंने विनीता को हर प्रकार का प्रलोभन दिया था। यहाँ तक कि अंत में फ़र्म में साझी बनाने का प्रस्ताव भी किया था। मल्कानी साहब ने विनीता को सदैव अपनी बेटी के समान माना था। उनकी इच्छा थी कि अपने पुत्र सुतप से विनीता का विवाह करके इस रत्न को सदैव के लिये अपने परिवार का अंग बना लें। सुतप तीन साल से अमरीका में था। वह हार्वर्ड से बिज़नेस मैनेजमैंट का कोर्स करके कुछ ही दिन पहले लौटा था। किन्तु उसके आने से पहले ही विनीता ने सुमित का चुनाव कर लिया था। मल्कानी जी ने विनीता से अपने मन की बात कभी नहीं कही थी। वे सोचते थे कि सुतप आये तो दोनों काम करते हुए स्वाभाविक रूप से निकट आ जायेंगे। इसी बीच सब कुछ उलट-पुलट गया। इतनी ही ग़नीमत थी कि मलकानीजी ने सुतप से कुछ नहीं कहा था।

सुमित गुनगुनाता हुआ अपनी मर्सिडीज़ कार चला रहा था। उसने सोचा था पार्टी के बाद विनीता को लेकर रिज की तरफ़ निकल जायेगा। अतः ड्राइवर को छुट्टी दे दी थी। आज उसने विनीता की प्रिय चैनल सुगंध लगाई थी। उस मोहक सुगंध से वह स्वयं ही मस्त हो रहा था। आज के लिये बड़ा दामी कुर्ता सिलवाया था। देखने में सीधे-सादे उस कुर्ते-पायजामें के डिज़ाइन बनाने और सिलने में एक बड़ी दुकान के दर्जी ने अपनी सारी कुशलता लगा दी थी। उसे पहनकर सुमित की छवि ही बदल गई थी। कुछ-कुछ राजीव गाँधी के समान लग रहा था।

अचानक उसकी चेतना को एक करारा झटका लगा। एक ट्रक तेजी से पीछे से आया और एक बच्चे को टक्कर मार कर पल भर में निकल गया। यह सब पलक झपकते ही हो गया। सुमित ने ब्रेक मारा। दस-बारह वर्ष का एक लड़का साइकिल सहित एक ओर जा गिरा था। मासूम-सा बच्चा तड़प रहा था। बच्चे की पुरानी साइकिल और मैले कपड़ों से स्पष्ट था कि गरीब घर का है। संभवतः दूध लेकर जा रहा था क्योंकि पास ही एलम्यूनियम के एक घिसे हुए डिब्बे में से दूध बह रहा था। सुमित उसकी तरफ़ झुका तो बच्चे ने कराहकर आँखें खोल दीं। बुझने से पहले चेतना की लौ धधक उठी। सुमित ने पूछा, "बच्चे तुम्हारा घर कहाँ है?" "साबजी! पास के चमारटोले में मेरी अंधी माँ रहती है। उसको बुखार है। मैं उसके लिये दूध ले जा रहा था। हाय! अब मेरी माँ को कौन देखेगा? आप उसे दूध दे आओ। आह. . . ", एक कराह के साथ बच्चा बेहोश हो गया।

सुमित असमंजस में पड़ गया। बच्चे को उठा कर अस्पताल ले जाता है तो कपड़े खून से तर हो जायेंगे। अस्पताल और पुलिस के चक्कर में देर हो जायेगी और विनीता रूठ जायेगी। मनीष ने उसे बताया था कि विनीता समय की बड़ी पाबन्द है। देर करना उसे सहन नहीं, न अपने द्वारा, न औरों के द्वारा। यदि वह रूठ गयी तो? सुमित की सारी खुशियाँ आज की इसी मुलाकात पर निर्भर करती थीं। फिर कुछ ही देर में कोई अन्य कार इधर से अवश्य आयेगी और वे लोग बच्चे को अस्पताल अवश्य पहुँचा देंगे। इस तरह अपने विवेक पर परदा डाल कर सुमित कार में बैठ गया। इसी समय बच्चे को फिर होश आया और उसने समझा साबजी उसकी माँ को लाने जा रहे हैं। वह बोला, "जल्दी ले आइये मेरी माँ को। देर हुई तो साबजी मैं मर जाऊँगा।" सुमित की चेतना ने फिर उसे सचेत किया। उसके अंतर में बैठा हुआ कोई कह रहा था, "यह बच्चा किसी विधवा का एकमात्र सहारा है। भूल जाओ पार्टी, भूल जाओ विनीता को। तुम मनुष्य हो, दया करो इस मासूम पर।"

किन्तु इसी काम-वासना के वश में त्रेतायुग में सुग्रीव श्री राम को दिये वचन को भूल गये थे। अतः दो वर्ष से विनीता को हृदय से लगाने के लिये आतुर सुमित आज यदि एक अनजान बच्चे को मरता छोड़कर अपनी मर्सिडीज़ में बैठ कर चल दिया तो क्या आश्चर्य!

हम उल्लेख कर चुके हैं कि विनीता मन ही मन सुमित को अपनाने का निश्चय कर चुकी थी। आज इस प्रेमी युग्म के एकान्त में कोई बाधा नहीं पड़ी। दोनों प्रथम बार खुलकर बातें कर रहे थे। दोनों की पसन्द में आश्चर्यजनक समानता थी। फूलों में ऑर्किड के प्रेमी, सुगंधों में चैनल के चाहने वाले, दोनों को नौका-बिहार और तैराकी का शौक, दोनों की कारों का रंग हल्का हरा, दोनों को कोल्हापुरी चप्पलें पसंद थीं, दोनों को आइसक्रीम से अधिक कुल्फ़ी का

शौक, बेले के गजरे और इसराज पर जयजवन्ती सुनने की ललक, विश्व के नगरों में पेरिस और संग्रहालयों में लूव्र के प्रशंसक, – एक नहीं अनेक शौक मिलते गये। दोनों को साहिर लुधियानवी की गजलें पसंद थीं, पॉप संगीत और डिस्को नाच से चिढ़ थी। दोनों इसराज बजाते थे। ऐसे सफल, सुरम्य, सुसंस्कृत, समस्वर व्यक्तित्व मिलने कठिन हैं। रात के बारह बज गये और वे दोनों एक दूसरे में अपना प्रतिबिंब देखते रहे। प्रतीत होता था मानों देवताओं ने उन्हें एक-दूसरे ही के लिये बनाया था। मनीष के सुंदर बगीचे में रात की रानी के महकते झाड़ के नीचे वे दोनों सपनों का रुपहला-सुनहला जाल बुनते रहे। मनीष भोजन के लिये उन्हें ढूँढ़ता हुआ आया तो विनीता की सलज्ज मुस्कान ने सारा रहस्य खोल दिया। भोजन के बाद सुमित ने विनीता का हाथ पकड़ते हुए कहा, "चलिये, आज हम आप को छोड़ देंगे।" विनीता नई-नवेली की तरह उसकी कार में बैठ गयी और शोफ़र को अपनी कार वापस ले जाने का आदेश दे दिया।

रात के बारह बज गये और वे दोनों एक दूसरे में अपना प्रतिबिंब देखते रहे। प्रतीत होता था मानों देवताओं ने उन्हें एक-दूसरे ही के लिये बनाया था।

कार उसी रास्ते से लौटी। जब हैडलाइट उस बालक के रक्त-सिंचित शरीर पर पड़ी तब विनीता बोल उठी, "रोको सुमित, कोई दुर्घटना हो गई प्रतीत होती है। देखो कौन पड़ा है!" सुमित को स्वप्नलोक की सी मदहोशी भरी उस संध्या में एक बार भी इस बालक की याद नहीं आयी थी। कार रुकते ही विनीता तेज़ी से उतरी और अपनी कीमती साड़ी की चिन्ता किये बिना घुटनों के बल बैठ कर बच्चे की नब्ज देखने की कोशिश करने लगी। किन्तु स्पष्ट था कि बच्चा मर चुका था। प्राण का कोई चिह्न नहीं था। उसकी आँखें तरल हो गयीं, "हे भगवान! बेचारा न जाने कौन है। सैलफ़ोन से पुलिस को खबर दे दो।" सुमित एकांत का अभिलाषी था। आज उसे संसार की कोई चिंता नहीं थी। वह किसी भी समस्या का सामना नहीं करना चाहता था। उसने कहा, "अब पुलिस के चक्कर में मत फँसो विनीता। यह दुर्घटना मेरे सामने ही हुई थी। मैं उतरकर आया तो लड़के को होश था। उसने बताया था कि उसकी अंधी विधवा माँ घोसीपुरा में रहती है। पर आज तो मैं कहीं भी, किसी के लिये भी नहीं रुक सकता था। मैंने सोचा था कि कोई और बचा लेगा। बैडलक था कि कोई और इधर से नहीं गुज़रा!" अनुराग भरे नेत्रों से विनीता की तरफ़ देखते हुए वह बोला।

सुमित की बात सुनकर विनीता का चेहरा क्रोध से लाल हो गया। उसने

कड़ी दृष्टि से सुमित को देखते हुए कहा, "सुमित, तुम इतने बेदर्द, इतने पाषाण-हृदय हो कि एक मासूम को मरने को छोड़ गये? चार घंटे तक तुम मुझसे प्रेमालाप करते रहे और तुम्हें एक अंधी विधवा के कलेजे के टुकड़े का ख्याल भी नहीं आया? तुम इंसान नहीं पत्थर हो। मैं कभी तुम्हें अपना जीवन साथी नहीं बना सकती, कभी नहीं। शायद कानूनन तुम हत्यारे न हो किन्तु मेरे लिये तुम एक खूनी से कम नहीं हो। चलो, पता करो घोसीपुरा कहाँ हैं और वहाँ चलकर उस अंधी विधवा को बताओ कि तुम उसके पुत्र को मरने के लिये छोड़ गये थे।" "विनीता, सुनो, मैं केवल तुम्हारे लिये . . .।" "मेरा नाम मत लो सुमित। मैं आज के बाद तुमसे कोई संबंध नहीं रखना चाहती।" विनीता ने सुमित की ओर ऐसी तिरस्कार भरी दृष्टि से देखा मानों वह कोई घृणित निकृष्ट जीव हो।

दशरथ के शब्दभेदी वाण से श्रवणकुमार की मृत्यु हुई थी। उनके माता-पिता ने उन्हें शाप देकर दंडित किया था। आज सुमित के लिये विनीता द्वारा इस प्रकार तिरस्कृत होने से बढ़कर कौन सा दंड हो सकता था!

सुछन्द इस दंड से संतुष्ट नहीं है। वह चाहता है कि सुमित या तो दुर्घटना में मर जाये या आत्महत्या कर ले। भोला है, अतः यह नहीं समझता कि सुमित तो उसी समय मर गया था जब वह उस मरणासन्न बालक की सहायता किये बिना प्रेमिका से मिलने चला गया था। अब यदि वह जीवित भी रहे तो मृतक के समान होगा क्योंकि उसके भीतर की मनुष्यता मर चुकी है। वास्तव में एक मनुष्य के लिये उसके भीतर की मानवता मर जाये, इससे बड़ी त्रासदी और क्या हो सकती है!

जाको राखे साँइयाँ

मौत आती ही नहीं

कभी-कभी मृत्यु बुलाने से भी नहीं आती। बेल्जियम की एक ३७ वर्षीया महिला ने ब्रूसेल्स नगर में २७ मंजिले एक मकान की छत से कूद कर आत्महत्या करने का प्रयत्न किया। वे ८७ मीटर नीचे एक कार की छत पर आ गिरीं। उनके गिरने से वोल्वो ४८० नाम की यह कार पिचक गयी। किन्तु इन महिला के हाथ-पैर की कुछ हड्डियाँ मात्र ही टूटीं परंतु मृत्यु ने उनका वरण नहीं किया।

अपनी ही सुगंध

तुम तीखे काँटे के समान चुभे,
पर मैंने तो तुम्हें फूल समझ कर तोड़ा था।
रंग-रूप, पंखड़ियों ने मुझे भरमाया था
किन्तु तुमने चुभ-चुभ कर मेरे अंगों को
छलनी कर दिया, पर मैं माया की बंदिनी,
अंधों की तरह, चुभन की परवाह न कर,
अनजानी सुगंध और कोमल परस की
प्रत्याशा में तुम्हें हृदय से लगाए रही।
आज तुम्हारी कुटिलता ने बूँद-बूँद कर
मेरे समस्त रक्त को शेष कर दिया है।
आज हर मोह से मुंक्ति पाने पर,
मेरी निर्जीव देह में खिल आए हैं
नव आशा के फूल
जिनका मूल मैं स्वयं हूँ।
अब मुझे किसी अन्य की रूप-प्रत्याशा
काँटा बन कर नहीं चुभेगी।

मैं डूबी हूँ अपनी ही सुगंध में
मेंहदी के समान रच-बस गई है
जो मेरे तन-प्राण में।

पर्यावरण

सावधान

अणु संकट

मनुष्य ने अणु ऊर्जा का उपयोग करके एक भीषण संकट मोल ले लिया है। अणु-परमाणु संस्थानों में होने वाली दुर्घटनायें लाखों लोगों को प्रभावित करती हैं। जापान एक ऐसा देश है जहाँ अणु बमों से झुलसे हुए हिरोशिमा और नागासाकी नगर अणुशक्ति के कुप्रभाव के साक्षी हैं। फिर भी वहाँ के टोकाइमुरा अणु संस्थान में २ साल पहले भी कर्मचारियों की असावधानी से एक दुर्घटना हुई थी और गत वर्ष फिर एक दुर्घटना हुई जिसके कारण जापान अपनी अणुनीति पर पुनर्विचार करने को बाध्य हो गया है।

भारत के मनीषी राजनीतिज्ञ सी. राजगोपालचारी ने अपनी भविष्यदर्शी दृष्टि से देख लिया था कि अणु शक्ति संस्थान समस्त मानवता का विनाश कर सकते हैं, अतः वे अपनी वृद्धावस्था में विभिन्न देशों की सरकारों को चेतावनी देने के लिये विश्व भ्रमण पर निकल पड़े।

किन्तु उनकी चेतावनी व्यर्थ सिद्ध हुई। चरनोबिल अणु-संस्थान की भयंकर दुर्घटना से तो लोग परिचित हैं किन्तु कम ही लोग जानते हैं कि रूस के दक्षिणी यूराल पर्वतीय क्षेत्र में स्थित चेल्याबिन्स्क नाम का अणु-संस्थान मजदूरों से बेगार में निर्मित कराया गया था। चेल्याबिन्स्क रूस का अणु-परमाणु अस्त्र-शस्त्र बनाने का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण कारखाना है। इसमें पाँच प्लूटोनियम रियेक्टर हैं। सन १९९१ तक किसी अन्य देश के नागरिक ने इस संस्थान में कदम भी नहीं रखा था। मार्क हट्सगार्ड नाम के एक विदेशी पहली बार इस संस्थान में गये। इस व्यक्ति ने बताया कि इस संस्थान में चरनोबिल के रियेक्टर के पिघलने से भी भयानक तीन अणु-दुर्घटनायें हो चुकी हैं, जिन्हें सबसे छिपाया गया। पचास वर्ष पूर्व अणु संस्थानों से निकले हुए रेडियोधर्मी कूड़े को, पास प्रवाहित होने वाली टेचा नदी में बहा दिया जाता था। किन्तु १९५६ में टेचा में यह रेडियोधर्मी कूड़ा बहाना बंद करना पड़ा। अब इसे जिस स्थान पर एकत्र करके रखा गया वहाँ २९ सितम्बर १९५७ में एक भयानक विस्फोट हुआ। इस विस्फोट से उद्भूत ८० प्रतिशत १ करोड़ ८ लाख क्यूरी रेडियोधर्मिता पृथ्वी पर गिरी और शेष १० प्रतिशत अर्थात बीस लाख क्यूरी

रेडियोधर्मिता की आधा मील ऊँची एक कलँगी सी बन गयी और चेल्याबिन्स्क क्षेत्र में फैल गयी। विस्फोट के बाद के १८ महीनों में २० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के सभी देवदार वृक्ष मर गये और इस विस्फोट से इतनी ही रेडियोधर्मिता विकीर्ण हुई जितनी १९८६ में चरनोबिल की दुर्घटना में हुई थी जिसमें ७ लाख ५० हज़ार विपद ग्रस्त व्यक्तियों को जीवन और स्वास्थ्य की हानि सहनी पड़ी थी।

चेल्याबिंस्क संस्थान में सन् १९६७ में एक अन्य बड़ी दुर्घटना हुई जब कराचे की झील के, जिसमें रेडियोधर्मी कूड़ा फेंका गया था, चारों ओर भयंकर चक्रवात आया। उसके बाद उस क्षेत्र में अपंग तथा मानसिक रोग ग्रस्त बच्चों का भारी संख्या में जन्म होने लगा। किन्तु सोवियत संघ ने कड़े प्रतिबंधों द्वारा अपने देश की खबरें बाहर पहुँचने ही नहीं दीं। एक लौह आवरण (जिसे आयरन कर्टेन कहा जाता है) द्वारा इन तथ्यों को दबाया-छिपाया गया। इसी लौह आवरण से १९८६ में चरनोबिल में हुई दुर्घटना को ढक दिया जाता, किन्तु स्वीडन तथा अन्य पड़ोसी राज्यों के रेडियोधर्मी यंत्रों ने पर्दा फाश कर दिया।

सबसे बड़ी समस्या है इन संस्थानों से निकला हुआ रेडियोधर्मी कूड़ा। जब तक इस कूड़े को सुरक्षित रूप से जमा रखने की समस्या का समाधान नहीं होगा तब तक समस्त मानवता का भविष्य संकट में रहेगा।

भारत का समृद्ध वनस्पति और पशु जगत

भारत में अद्भुत जैव वैविध्य है। देश में लगभग ४५,००० वनस्पति-प्रजातियाँ पाई जाती हैं और ८१, २५१ पशु-प्रजातियाँ हैं। ये विश्व में उपलब्ध वनस्पति प्रजातियों का ७ प्रतिशत और प्राणी प्रजातियों का ६.५ प्रतिशत है। भारत संसार के प्राचीनतम कृषि प्रधान देशों में से है और यहाँ कम से कम १६६ प्रकार की फ़सलें उगाई जाती हैं।

मर रहे हैं दूषित वायु के कारण भारत के नागरिक

भारत की औद्योगिक राजधानी मुंबई में प्रति वर्ग किलोमीटर में ५०० वाहन हैं तथा स्थिति को गंभीरतर बना रहे हैं प्रतिदिन पंजीबद्ध होने वाले ३०० नये वाहन। अतः वहाँ पर वायु प्रदूषण दिन दूना रात चौगुना बढ़ता जा रहा है। १९८० में हवा में तैरते हुए द्रव्य कण प्रति क्यूबिक मीटर २५० माइक्रोग्राम होते थे, १९९० में यह अनुपात २६० माइक्रोग्राम और १९९७ में २९८ माइक्रोग्राम हो गया। शहर के एक क्षेत्र माहिम जंक्शन पर यह मात्रा बढ़कर ३,१७० माइक्रोग्राम हो गयी। विश्व स्वास्थ्य संघ की १९६० की एक रिपोर्ट के अनुसार मुंबई में छोटे कणों की मात्रा सुरक्षित सीमा से छः गुनी है। नाइट्रोजन ऑक्साइड की मात्रा भी

चिन्ता का विषय है। यह मात्रा जो १९८१ में प्रति क्यूबिक मीटर में २५ माइकोग्राम थी १९९३ में बढ़कर ४६ माइकोग्राम हो गयी। यातायात के वाहन इसमें से ६९ प्रतिशत प्रदूषण के लिये उत्तरदायी हैं। इसके कारण मुंबई के ६० प्रतिशत पुलिस कर्मचारी श्वास-रोगों से पीड़ित हैं और इन रोगों में फेफड़ों का कैंसर भी सम्मिलित है। नगर के २,२०००० बच्चों को पुराना श्वासरोग है।

बंगाल में स्थिति और भी गंभीर है। हवा में लटके हुए द्रव्य कण १९८० में प्रति क्यूबिक मीटर में १४४ माइकोग्राम होते थे, १९९० में २३७ माइकोग्राम और १९९५ में ३५४ माइक्रोग्राम हो गये। नाइट्रोजन ऑक्साइड की मात्रा १९९० में २२५ माइकोग्राम और १९९२-९३ में ३०० माइक्रोग्राम हो गयी। बंगाल में इस प्रदूषण के कारण १९९५ में १०,००० व्यक्तियों की असामयिक मृत्यु हुई।

यही स्थिति भारत के अन्य नगरों की है। बंगलौर में डॉक्टर परमेश ने जो आँकड़े एकत्रित किये हैं उनके अनुसार डीजल-पेट्रौल से चलने वाले वाहनों की संख्या बढ़ने के कारण बंगलौर के बच्चों में दमे का रोग तिगुना हो गया है। १९७९ तक १८ वर्ष से कम के बच्चों में केवल ९ प्रतिशत को दमा था १९८४ में १०.५ प्रतिशत को और १९८९ तक यह १८.५ प्रतिशत को हुआ। इस बीच सरकार ने उद्योग-धंधों को अनेक सुविधायें दीं, फलस्वरूप अनेक नये कारखाने खुले और अब १९९९ में बच्चों और तरुणों में दमे का अनुपात २९.५ प्रतिशत हो गया है।

("इंडिया टुडे" जुलाई ३१, २००० से साभार)

बालकों की पुकार

लोभी मानवजाति पृथ्वी के पर्यावरण को नष्ट करके अपनी भावी पीढ़ियों का भविष्य नष्ट कर रही है। इसके विरोध में पुकार कर रहे हैं धरती के बालक। इंगलैंड के ईस्टबॉर्न नामक नगर में मई २००० को "मिलैनियम इंटरनैशनल कांफ्रेंस" हुई जिसमें ११० देशों के ८०० बच्चों ने भाग लिया। इन बच्चों ने विभिन्न देशों के अध्यक्षों से प्रार्थना की है कि वे पृथ्वी के पर्यावरण की रक्षा करें। वे विश्व के ९० देशों के अध्यक्षों के पास व्यक्तिगत रूप से कुछ चुनौतियाँ लेकर जायेंगे। ये चुनौतियाँ हैं : प्लास्टिक के थैलों का कोई विकल्प खोजना, इनके पुनर्नवीकरण (रिसाइक्लिंग) को निरापद बनाना, बच्चों के लिये एक पर्यावरण नैटवर्क स्थापित करना तथा थोड़ी दूर की यात्रा के लिये मोटर गाड़ियों के उपयोग पर प्रतिबंध लगाना।

तीन दिन तक, १० से १२ वर्ष तक के इन बालकों ने इस विषय पर विचार-विमर्श करके चिन्ता प्रकट की कि वयस्क लोग अपनी अदूरदर्शी नीतियों से भावी पीढ़ियों का भविष्य नष्ट कर रहे हैं। समस्त पृथ्वी संकट में है।

हमें इन बच्चों से बहुत कुछ सीखना है।

ऐसे भी इन्साँ होते हैं

रंगराव विठोबा पवार नौ वर्ष की आयु में ही अनाथ हो गये थे। अनाथ बालक ने स्कूल छोड़ दिया और दर-दर भटकने लगा। बालक रंगराव ने पत्थर काटने का, सीमेंट की भारी बोरियाँ उतारने का, खेतों में मज़दूरी करने का, मिल मज़दूरी का, चाय की दूकानों में प्याले धोने का – हर तरह का छोटा-बड़ा, ऊँचा-नीचा, जो भी काम मिला, किया। एक बार भूख के कारण यह हालत हो गई कि उसने आत्महत्या का निश्चय किया। एक बार पीलिया से ग्रस्त होकर उज्जैन के एक मंदिर में पड़ा रहा और प्रसाद खाकर जिया। एक बार एक पुलिसवाले ने उसे चोर कहा तो बालक विठोबा को इतना आघात लगा कि उसने अपनी खाकी पैंट में पत्थर भर लिये और पैंट को पेट से बाँधकर पहाड़ी से नदी में कूदने ही वाला था कि एक फ़िल्मी गाना, "दुनिया में आये हो तो जीना ही पड़ेगा," याद आया और वह पहाड़ी की चोटी से हटकर जीवन का सामना करने चल दिया, पर भूख से प्राण निकल रहे थे। लोगों ने उसे पीटा और अपमानित किया। उन दिनों महाराष्ट्र के उमेरखेत के निवासी हरिभाऊ मने ने उसको आश्रय दिया।

अब जब रंगराव पर लक्ष्मी की कृपा है, वे अपने पुराने दुख के काँटों को नहीं भूलना चाहते जो उनको बचपन में चुभे थे। वे नंगे पाँव ही चलते हैं। यद्यपि उनके डॉक्टर इससे काफी चिंतित रहते हैं क्योंकि उन्हें मधुमेह (डाइबिटीज) है और पाँव में घाव होने पर खतरनाक हो सकता है।

रंगरावजी को कम सुनाई पड़ता है अतः वे टी.वी. पर प्रसारित खबरें नहीं सुन सकते और न ही समाचार पत्र पढ़ सकते हैं। दूरदर्शन पर जब उन्होंने मृत सैनिकों के आँसू बहाते बच्चों को देखा तो उन्हें लगा कि जब इतने परिवार अनाथ हो गये हैं तब अपनी पुत्री का विवाह शान-शौकत से मनाना कितना अनुचित होगा। अतः उन्होंने अपनी पुत्री के विवाह के लिये जो ५ लाख रुपये बचाये थे वे कारगिल के अपंग सैनिकों के लिये दान कर दिये। उनकी पुत्री योगिता को उदारता अपने पिता से विरासत में मिली है – उसने अपनी मँगनी की अंगूठी इस कोष में दे दी और उसके मंगेतर ने भी यही किया। उनके बड़े दामाद श्री ध्यानेश्वर पाटिल ने भी कारगिल फंड में ५१००० रु. दान दिये।

श्री रंगराव जी का कथन है कि जब उन्होंने क्षत-विक्षत, अंग-भंग हुए

सैनिकों के शवों के थैले देखे तो उन्हें यह अनुभूति हुई कि लोग "जय किसान, जय जवान" कहते अवश्य हैं किन्तु सैनिकों के बलिदान का मूल्य और उनके परिवारों की व्यथा नहीं समझते।

रंगराव पवार के समान दानी बिरले ही होते हैं। वे अपने को "घाटी" (देहाती शब्द का बंबइया पर्याय) कहते हैं। उन्होंने गरीब परिवारों के बच्चों के लिये दसवीं तक का एक स्कूल खोला है तथा गुजरात के भिवंडी क्षेत्र में, जहाँ वे रहते हैं, कई मंदिर बनवाये हैं। वे मंदिर-मेलों में प्रसाद और भोजन बँटवाते हैं तथा उन्होंने दो एंबुलेंस गाड़ियाँ चलाई हैं जो गरीब रोगियों को भिवंडी से बंबई के अस्पतालों तक ले जाती हैं।

आज उनकी सईंनाथ प्राइवेट कंपनी खूब सफलता से चल रही है। उनका हाथ इतना खुला है कि उन्हें अपनी कमाई का हिसाब लगाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। जब लातूर में भूकंप आया तब वे डॉक्टरों, दवाओं, भोजन और वस्त्रों सहित वहाँ पहुँच गये। वे गरीब लोगों के लिये हृदय रोग का मुफ़्त इलाज कराने के लिये एक अस्पताल खोल रहे हैं। इस कार्य के लिये उन्होंने एक करोड़ रुपये में ८०,००० वर्गफुट ज़मीन खरीद ली है। इस योजना के ऊपर उनका १३ करोड़ रुपया व्यय होगा। उनका कथन है कि गरीबी के दिनों में अपनी सहायता करने वालों को धन्यवाद देने का उनका यह अंतिम प्रयास होगा। अपने अनेक दान-कार्यों के लिये उन्होंने कभी किसी से सहायता स्वीकार नहीं की।

वे तीर्थ यात्रियों को शिरडी ले गये तो स्वयं भी उनके साथ ८ दिन पैदल यात्रा की।

धन्य हैं ऐसे कर्मवीर और दानवीर।

("आउटलुक" नामक पत्रिका के १२ जुलाई १९९९ के अंक में प्रकाशित श्री शमीम अख्तर के एक लेख पर आधारित।)

गुब्बारे में उत्तरी ध्रुव की यात्रा

मई २९, २००० को इंगलैंड के अभियानी ४४ वर्षीय व्यापारी श्री डेविड हैंप्लमैन ने गुब्बारे द्वारा उत्तरीध्रुवीय समुद्र और उत्तरी ध्रुव पार करके इस क्षेत्र में तीन नये कीर्तिमान स्थापित किये। उनसे पहले कोई भी व्यक्ति गुब्बारे में उत्तरी ध्रुव की यात्रा नहीं कर सका था। श्री डेविड हैंप्लमैन १३ घंटे तक गुब्बारे में रहे, जो स्वयं एक नया कीर्तिमान है। यद्यपि नॉर्वे के स्वालबार्ड द्वीपसमूह से उड़ान आरम्भ करते समय उनके गुब्बारे को चलाने वाले सभी यंत्रों ने काम करना बंद कर दिया था पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और बिना यंत्रों की सहायता के उड़ान जारी रखी और सफल हुए। धन्य हैं यह साहसी अभियानी।

बांगलादेश की दयनीय दशा

बांगलादेश की जनता ने सन् १९७१ में पाकिस्तान से पृथक स्वतंत्र बांगलादेश की स्थापना की थी। पाकिस्तानी सेना ने हथियार डालने से पहले बांगलादेश की जनता पर जो अत्याचार किये उस वीभत्स क्रूरता के इतिहास में कम उदाहरण हैं। ३० लाख व्यक्तियों के हत्याकांड की कीमत देकर प्राप्त की गयी इस स्वतंत्रता से क्या बांगलादेश को सुख-चैन मिला?

"हिन्दू" के १० अप्रैल सन् २००० के अंक में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार बांगलादेश की पुलिस, रक्षक होने के स्थान पर जनता की भक्षक बन गयी है। हत्या, बलात्कार तथा लूट-खसोट की बढ़ती हुई घटनाओं ने सुरक्षा-तंत्र की उपयोगिता एवं विश्वसनीयता पर एक प्रश्न-चिह्न लगा दिया है। बांगलादेश "मानवीय अधिकार प्रवर्तन समिति" (बी. एस. इ. एच. आर.) ने ढाका पुलिस का एक सर्वेक्षण करने के बाद बताया कि अधिकतर पुलिस अधिकारी अपने वेतन से ६०० से १००० गुना अधिक कमाते हैं। यह धन उन्हें रिश्वत से या बलात् रुपया वसूलने से मिलता है।

इस सूचना के अनुसार पुलिस के भ्रष्ट अधिकारियों ने करोड़ों रुपये जमा कर लिये हैं और इस समय बांगलादेश की पुलिस वहाँ के सबसे धनी वर्ग का अंश है। ये पुलिस अफ़सर बहुत शान-शौकत से रहते हैं। कानून और नैतिकता उनके लिये कोई माने नहीं रखते।

इस समिति ने एक सभा में अपने सर्वेक्षण के आँकड़े घोषित करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री शेख हसीना को भी दी। पिछले दो साल में ढाका में ही कम से कम ४० पुलिस अधिकारी और निम्नस्तरीय कर्मचारी गिरफ़्तार किये गये हैं और उनके ऊपर मुकदमे चल रहे हैं। उनके ऊपर हत्या, बलात्कार और बलात् रुपया लेने के आरोप हैं।

इस सर्वेक्षण के अनुसार डी. आई. जी. से लेकर इंस्पेक्टरों तक सभी पदाधिकारियों के पास अपनी आमदनी से कहीं बढ़ कर जमीन-जायदाद है। २० इंस्पेक्टरों से लेकर कांस्टेबुलों तथा अन्य पुलिस कर्मियों पर बलात्कार के मुकदमे चल रहे हैं जबकि ढाका के ब्रिटिश दूतावास के अंग्रेज उच्चायुक्त ने सरकार को अर्जी दी है कि एक अंग्रेज महिला जब एक पुलिस चौकी पर चोरी की शिकायत दर्ज कराने गयी तो वहाँ के पुलिस कर्मियों ने उसके साथ

बलात्कार किया।

सरकार ने इन गंभीर आरोपों को ध्यान में रखते हुये खुफ़िया शाखा के कर्मियों की संख्या तथा अधिकारों में कटौती करने का निश्चय किया। आगे से सादे कपड़े वाले पुलिस कर्मियों के अपने जाँच-कक्ष नहीं होंगे। चारों ओर से यह आरोप भी लगाया जा रहा है कि खुफ़िया पुलिस सोने तथा नशीले पदार्थों की तस्करी द्वारा तथा धमका कर धन वसूल करने में व्यापक स्तर पर भाग ले रही है। इस संस्था ने कुछ आँकड़े प्रकाशित किये हैं, जिनके अनुसार ढाका के ८० पुलिस अफ़सरों में से हरएक के पास २० करोड़ टका धन है। बांगलादेश की सरकार ने ढाका विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी की हत्या की खोजबीन करने के लिये एक न्यायिक जाँच कमीशन बनाया है। खुफ़िया विभाग के कम-से-कम २० अधिकारी और इतने ही अन्य छोटे पदों पर आसीन कर्मचारियों पर एक टैक्सी चालक की हत्या के आरोप में मुकदमा चल रहा है।

समाजिक स्तर पर भी पाशविकता का राज्य है। २२ मई १९९९ के "हिंदू" में छपे एक समाचार के अनुसार मई १४, १९९९ को बांगलादेश के सिलहट जिले के एक गाँव में एक मुल्ला के हुक्म के अनुसार बेदी बेगम नाम की एक महिला को कमर तक मिट्टी में गाड़ दिया गया। फिर उसको बाँस की बेंत से १०१ बार इतना पीटा गया कि उसकी मृत्यु हो गई। बेचारी बेदी बेगम विवाह से पूर्व गर्भवती हो गयी थी और उसने अपनी इज्ज़त बचाने को गर्भपात करा दिया था। उसका प्रेमी बेदाग़ छूट गया। बेदी बेगम के परिवार को इतना डराया गया कि उन्होंने पुलिस को खबर भी नहीं दी।

बांगलादेश में स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार पढ़ कर आँखों में आँसू आ जाते हैं। ८ नवम्बर के "न्यू इंडियन एक्सप्रेस" में एक समाचार छपा है जिसमें कुछ लोमहर्षक आँकड़े दिये गये हैं। बांगलादेश की पुलिस के अनुसार प्रतिमाह १४ से २४ वर्ष तक की आयु की लगभग २० स्त्रियों के ऊपर एसिड फेंका जाता है। उनमें से अधिकांश अंधी हो जाती हैं। अनेक पीड़ित महिलायें आजीवन असहनीय शारीरिक और मानसिक यातनायें सहती हैं, जो मृत्यु या अपंगता से भी अधिक पीड़ादायी होती है। पिछले पाँच वर्षों में कई सौ स्त्रियों के ऊपर एसिड फेंका गया है। "एनो सलिशी केंद्र" नाम की एक समाज सेवी संस्था के अनुसार पिछले पाँच वर्षों में एसिड फेंकने के कारण नौ स्त्रियों की मृत्यु हो गई। नवयुवतियों के ऊपर इस प्रकार के आक्रमण अधिक होते हैं। इन आक्रमणों के मुख्य कारण पारिवारिक शत्रुता, प्रेम या विवाह प्रस्तावों को ठुकराना, दहेज की माँग, स्त्रियों का व्यापार, अपहरण या बलात्कार हैं।

यद्यपि बांगलादेश में दफ़ा ४ के अनुसार एसिड फेंकने वालों को मृत्युदंड या आजन्म कैद की सज़ा देने का प्रावधान है। किन्तु अभी तक बहुत कम लोगों को दंडित किया गया है। ढाका में स्थापित एसिड पीड़ितों की एक संस्था

का कहना है कि १९९५ के बाद एसिड फेंकने वाले अपराधियों में से केवल ३१ को दंडित किया गया है। इन ३१ में से केवल दो को मृत्यु दंड मिला है, शेष को आजन्म करावास या कुछ ही वर्ष की सजा हुई है और कुछ अपराधियों को केवल जुर्माना देना पड़ा। इन अभागी स्त्रियों के चेहरे भयानक रूप से विरूप हो जाते हैं। स्पेन की एक गैर सरकारी समाजसेवी संस्था ने इनमें से सात महिलाओं की अपने खर्चे से स्पेन लेजाकर प्लास्टिक शल्य-चिकित्सा कराने का निर्णय किया है।

इस घने अंधकार में भूली-भटकी आशा की किरणें भी फूट रही हैं। तीन जनवरी के "न्यू इंडियन एक्सप्रैस" में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार बांगलादेश के उच्च न्यायालय ने इस्लामी कानून पर आधारित मुल्लाओं के सभी फ़तवों को गैर कानूनी घोषित कर दिया है। इसमें तीन बार मौखिक तलाक बोल कर दिया जाने वाला तलाक भी सम्मिलित है। इनमें से अधिकांश फ़तवे अशिक्षित या अर्धशिक्षित मुल्लाओं द्वारा घोषित किये जाते हैं। न्यायमूर्ति गोलाम रब्बानी एवं न्यायमूर्ति नज़मुन सुल्ताना ने, जो बाँगलादेश की प्रथम महिला जज हैं, मौलाना अज़ीज़ुल इस्लाम नाम के एक मुल्ला की गिरफ़्तारी का आदेश भी दिया है जिसने एक दंपति को तलाक देने को विवश कर दिया क्योंकि पति ने क्रोध में तीन बार "तलाक" शब्द का उच्चारण कर दिया था। यद्यपि मुल्लाओं ने इस निर्णय का घोर विरोध किया है और इन दोनों न्यायमूर्तियों को "इस्लाम का शत्रु" घोषित कर दिया है, किन्तु आशा है कि प्रधान मंत्री शेख हसीना के प्रगतिशील नेतृत्व में बांगलादेश में स्त्रियों का उत्पीड़न कम हो जायेगा। "एमनेस्टी इंटरनैशनल" नाम की संस्था ने इस निर्णय की सराहना की है।

बांगलादेश की वर्तमान प्रगतिशील प्रधान मंत्री शेख हसीना ने कुछ ऐसे कदम उठाये हैं जिनसे भारत भी शिक्षा ले सकता है। अधिकांश मुस्लिम देशों के पिछड़ेपन का कारण है वहाँ का शिक्षा-तंत्र। सामान्यतः बच्चों को मदरसों में भेज दिया जाता है जहाँ उन्हें कुरान पढ़ाई जाती है परन्तु किसी प्रकार की आधुनिक शिक्षा नहीं दी जाती। अतः वे एक मध्यकालीन मानसिकता में बंदी होकर जीवन में पिछड़ जाते है। बांगलादेश की सरकार ने बच्चों को आधुनिक शिक्षा देने वाले स्कूलों में जाने के लिये प्रोत्साहित करने के लिये यह नियम बनाया है कि गाँवों में स्कूल जाने वाले प्रत्येक लड़के को प्रतिमाह १० सेर चावल दिया जायेगा और लड़कियों को १५ सेर। इस प्रकार ये बच्चे मदरसों से निकलकर आधुनिक शिक्षा पाने को प्रवृत्त होंगे।

बांगलादेश में ग्रामीण बैंकों द्वारा स्त्रियों को ऋण देकर आत्मनिर्भर बनाने के बहुत हद तक, सफल प्रयास का संसार के अनेक देश अनुकरण कर रहे हैं।

बांगलादेश में आये दिन हड़तालें होती हैं। हड़ताल और हड़ताल-विरोधी

आन्दोलनों के कारण बाँगलादेश का सामान्य जीवन ठप्प हो जाता है। हिंसा और आगजनी की घटनायें सामान्य बात है। देश की त्रसित जनता को मुक्ति देने के लिये वहाँ के उच्चतर न्यायालय ने हड़ताल और हड़ताल-विरोधी हड़तालों को "गैरकानूनी अपराध" घोषित कर दिया है। उन्होंने पुलिस को तथा फौजदारी अदालतों को आदेश दिया कि वे इस नियम के अनुसार कार्य करें। यद्यपि बांगलादेश के उच्चतम न्यायालय ने इस कानून को लागू होने से फ़िलहाल रोक दिया है। कितना शुभ होगा वह दिन जब भारतीय उपमहाद्वीप के देशों में हड़तालें जुर्म मानी जायेंगी।

बांगलादेश को एक अन्य भयानक संकट का सामना करना पड़ रहा है, वह है कुँओं के जल में संखिया के विष का मिश्रण होना। १९८० के बाद वहाँ पर लाखों नागरिकों में संखिया का कुप्रभाव दृष्टिगोचर होना आरंभ हुआ तथा अन्य लाखों को इस विष से खतरा है। इस विष के कारण साँस लेने में कठिनाई, त्वचा का बदरंग होना, घाव, कैंसर आदि बीमारियाँ हो रही हैं जिनसे ग्रसित होकर अनेक व्यक्तियों की अकाल मृत्यु हो रही है।

बांगलादेश की इस सामूहिक विषाक्तता को "न्यूयॉर्क टाइम्स" ने "इतिहास की सबसे बड़ी सामूहिक विषमयता" कहा है। यह सामूहिक विषमयता की विभीषिका सन् १९७० में बड़ी नादानी से आरंभ हुई। उस वर्ष यूनीसेफ़ ने बांगलादेश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ पेय जल उपलब्ध कराने के लिये लगभग १० लाख कूएँ खुदवा दिये क्योंकि वहाँ उपलब्ध सतही जल दूषित था। गाँव वालों ने उनका अनुकरण करके अपने खर्च से ३० लाख कूएँ खोद डाले जिनका जल अधिकतर सिंचाई के लिये काम में आता था। कोई कल्पना ही नहीं कर सकता था कि इन कूओं के जल में भूमिगत संखिया मिली है और उनके जल का संखिया के लिये कोई परीक्षण ही नहीं हुआ। अब वैज्ञानिकों को खोज द्वारा ज्ञात हुआ है कि वह विष भूमिगत जल स्रोत के चारों ओर की चट्टानों के लौह ऑक्साइड से आ रहा है। संसार के अनेक देशों में वैज्ञानिक इस विष को निर्मूल करने के उपाय खोज रहे हैं।

भगवान से प्रार्थना है कि बांगलादेश की इस संकट से उबरने में सहायता करें।

हार नहीं मानी

नैपाल के ८३ वर्षीय श्री दल बहादुर कर्की ने ५० बार दसवीं की परीक्षा दी और असफ़ल रहे। इस बार काठमांडू से २६० किलोमीटर पूर्व में स्थित सोलूखुबु नामक स्थान पर नैपाल के अन्य २५०,००० विद्यार्थियों के साथ, जो उनके पौत्र-पौत्रियों की उम्र के हैं, श्री दल बहादुर ने पुनः दसवीं की परीक्षा दी है।

भारत के लिये

शौर्य का प्रतीक - "दो राजपूताना राइफ़ल दल"

तोलोलिंग के शिखर पर २० जून को १९९९ को भारत का झंडा गाड़कर, १८२ वर्ष पुराने "दो राजपूताना राइफ़ल" सैन्य दल के, कर्नल रवीन्द्रनाथ ने अपने उच्चतर अधिकारी को फ़ोन किया, "सर, हमने तोलोलिंग पर अधिकार कर लिया है।" उस समय तोलोलिंग की बर्फ़ीली हवायें हड्डियों को चीर रही थीं। वायु इतनी पतली थी कि साँस लेना कठिन था। विजय की सूचना अपने अधिकारी को देते समय कर्नल रवीन्द्रनाथ के स्वर में विजय का गर्व और उल्लास तो था किन्तु साथ ही उनका हृदय विदीर्ण हो रहा था क्योंकि उनके इर्द-गिर्द उनके शहीद साथियों के शव पड़े थे। यह एक गहरा आघात था। इस टुकड़ी के ८६ वीरों ने आत्म बलिदान किया।

तोलोलिंग अभियान में अपने शौर्य के लिये लेफ़्टिनेन्ट कर्नल रवीन्द्रनाथ को कर्नल का पद मिला किन्तु उन्होंने इस विजय को पाने में खोये थे अपने दल के चार अफ़सर, दो जूनियर अफ़सर और १७ सैनिक। ७० सैनिक घायल हुए थे जिनमें से छः अपंग हो गये थे, और २० इस बुरी तरह घायल हुए थे कि पुनः युद्ध में भाग नहीं ले सकेंगे।

"दो राजपूताना राइफ़ल" के रण-बाँकुरे प्राण हथेली पर रखकर ऐसे अदम्य साहस और अविश्वसनीय वीरता से लड़े कि भारतीय सेना की जिन सात सेना-टुकड़ियों को हमारे महासेनापति ने अद्‌भुत वीरता दिखाने के लिये सम्मानित किया उनमें "दो राजपूताना राइफ़ल" प्रथम है। इस वीर दल के जिन ३० सैनिकों को विशेष सम्मान के लिये चुना गया है उनमें से केवल आठ जीवित हैं।

इन महावीरों में से मुख्य हैं शहीद मेजर विवेक गुप्ता, जो असाधारण शौर्य का प्रदर्शन कर और वीरता का एक नया आदर्श स्थापित कर, चोटी से पाँच मीटर नीचे मारे गये ; मेजर पद्‌मपाणि आचार्य, जो बारूदी सुरंगों से अटे एक क्षेत्र से तो बच निकले किन्तु चोटी पर हथगोलों से मारे गये ; लैफ़्टिनेन्ट निकेजहाकुओ, जो एक मशीनगन कमर पर लाद कर चोटी तक चढ़ गये और वहाँ पहुँचकर जिन्होंने दुश्मन पर गोली चलाना शुरू कर दिया, किन्तु बाद में

गोली खाकर १०० फुट नीचे गिर कर मर गये ; हवलदार रणवीर सिंह, जिनके सभी साथी मारे गये किन्तु जो फिर भी टस से मस नहीं हुए। इसी चोटी के एक बंकर को नष्ट करने के बाद सूबेदार शिव नायक ने नीचे फ़ोन किया कि उस ठिकाने पर तोपों से गोलाबारी की जाये, जबकि तोपों के ये गोले उनसे कुछ मीटर दूर ही गिरे, परन्तु उन्होंने आत्मरक्षा को कोई महत्व ही नहीं दिया। कहा जाता है कि द्रास युद्ध-क्षेत्र, जहाँ हमारी "दो राजपूताना राइफ़ल" ने युद्ध किया, संसार के सबसे ठंडे क्षेत्रों में दूसरे स्थान पर है। वहाँ का तापमान -- ६० डिग्री है। द्रास में घायल हुए वीर नायक दिगेन्द्र सिंह। किन्तु इस शूरवीर ने, हाथ में कई गोलियाँ लगने और तीन चार उँगलियाँ उड़ने पर भी, अपनी प्रारंभिक चिकित्सा पहले नहीं कराई। बहुत पीड़ा होने पर भी उन्होंने कहा कि पहले उनके साथियों की चिकित्सा की जाये। विशेष पराक्रम दिखाने के लिये उन्हें महावीर चक्र प्राप्त हुआ। जब चिकित्साकर्मी घायल भारतीय सिपाहियों को नीचे ले आते थे तो ये जोशीले वीर विरोध करते थे और कहते थे कि घायल होने पर भी उन्हें युद्ध करने दिया जाये। वे अपने साथियों के साथ अंतिम साँस तक लड़ना चाहते थे।

"दो राजपूताना राइफ़ल दल" का रसोइया और बढ़ई तक पीछे नहीं रहे। बढ़ई उत्तम सिंह को रात्रि में दिखाई नहीं पड़ता, किन्तु वे गोला-बारूद लेकर अपने से ऊपर वाले सैनिक को पकड़ कर चढ़ते गये और इस प्रकार पहाड़ी के ऊपर पहुँचे। रसोइया भी गोला-बारूद ले जाने में घायल हुआ। उसके हृदय में गोले का एक टुकड़ा घुस गया। अब वह अस्पताल में है।

इन सैनिकों और सैनिक अधिकारियों के लिये उनकी रेजीमेंट का सम्मान जीवन से बढ़कर है। अपनी रेजीमेंट के गौरव के लिये वे घर से दूर बर्फ़ीली चोटियों पर मरने को तैयार हैं और वे अपने पुत्रों को भी सेना में जाने को उत्साहित करते हैं। कुछ सैनिकों की पाँच पीढ़ियाँ इसी सैन्य दल का अंग रही हैं। इन सिपाहियों के लिये रेजीमेंट उनका परिवार है, उनके जीने का आधार। हमारा देश इतना विशाल है कि सैनिकों को प्रेरित करने के लिये कोई समीपवर्ती आधार चाहिये। पलटन का संगठन सैनिकों को यही भावनात्मक आधार प्रदान करता है। यदि उनसे पूछा जाये कि तुम किसके लिये मरोगे तो उनका उत्तर होगा, "पलटन के लिये, पलटन की इज्ज़त के लिये।"

दो जुलाई को इसी पलटन की इज्ज़त के लिये लड़ने को तत्पर ३०० जवानों को, जो अपने साथियों के साथ आगे बढ़कर लड़ने को आतुर थे, उनके ब्रिगेडियर प्रकाश चौधरी ने बड़ी कठिनाई से शांत किया और इसी "पलटन की इज्ज़त" के लिये हज़ारों अवकाशप्राप्त सैनिकों के पत्र "दो राजपूताना राइफ़ल" के दफ्तर में आये। वे सभी देश के लिये फिर लड़ना चाहते थे। अवकाशप्राप्त लैफ़्टिनेंट कर्नल विश्वास राव ने बंबई से लिखा कि उन्हें पुनः युद्ध का अवसर

दिया जाये, भले ही पलटन कमांडर, सैक्शन कमांडर या राइफ़ल मैन के रूप में ही क्यों न हो। हैदराबाद के पठान, बाबू मियाँ ११ वर्ष पूर्व सेवा-निवृत्त हो चुके हैं। वे गंभीरता से कहते हैं, "मैं फिर से सेना में आकर युद्ध करना चाहता हूँ।" ८५ वर्ष के हवलदार छोगसिंह का कहना है कि उनका दिल आज भी उन्हें पलटन की ओर खींचता है।

"दो राजपूताना राइफ़ल" का गठन सन् १८१७ में बड़ौदा में हुआ। उनका युद्ध का नारा है "राजा रामचन्द्र की जय" तथा उनका आदर्श वाक्य है, "वीर भोग्या वसुंधरा"। इस सैन्य दल में मुख्यतया राजपूत एवं जाट सैनिक हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अहीर, गुज्जर और मुसलमान भी हैं।

"दो राजपूताना राइफ़ल" के अतिरिक्त छः अन्य सैन्य-दलों को वर्तमान युद्ध में अभूतपूर्व बहादुरी दिखाने के लिये विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

("इंडिया टुडे" में १९, जुलाई, १९९९ को प्रकाशित श्री हरिन्दर बवेजा के एक लेख पर आधारित।)

क्या वे जीवित हैं?

क्या सैनिकों के परिवारों के लिये युद्ध क्षेत्र में अपने प्रियजनों की मृत्यु होने से भी अधिक दुखद कुछ हो सकता है? पाठक को यह प्रश्न निरर्थक लगेगा। मृत्यु की क्रूरता के शूल से मर्मांतक कौन सा आघात हो सकता है? होता है एक ऐसा आघात। होती है अनन्त वेदना उन सैनिकों के परिवारों को जिनके प्रियजन युद्ध में लापता घोषित कर दिये जाते हैं। जिनका न शरीर मिलता है और न ही जिनका युद्धबंदियों की सूची में नाम होता है।

युद्ध में जिन वीरों की मृत्यु होती है उनके परिवार उस आघात को समय के साथ-साथ साहस से झेल लेते हैं, किन्तु जिनका पता ही न हो, जिनकी न मृत्यु का प्रमाण हो और न जीने का, उनके घरवाले क्या करें? और उनसे भी अधिक तड़पन उन लोगों के भाग्य में पल-पल होती है जिन्हें यह संदेह हो कि उनके प्रियजन जीवित हैं और शत्रु की जेलों में उन्हें यंत्रणायें दी जा रही हैं।

भारत पाकिस्तान के १९७१ के युद्ध में लैफ़्टिनेन्ट ए. के. सूरी को मृत घोषित कर दिया गया किन्तु चार वर्ष बाद उनके परिवार को एक पत्र मिला जिसमें उन्होंने लिखा था, "सरकार से हमारे विषय में संपर्क करने का प्रयास करो। हम २० अफ़सर यहाँ हैं।" उन्हीं के साथ मृत घोषित किये गये स्क्वैड्रन लीडर एम. के. जैन की पत्नी का विश्वास है कि उनके पति पाकिस्तान में कैद हैं। खोजबीन करने की माँग के उत्तर में पाकिस्तान के भूतपूर्व हाई कमिश्नर एज़ाज़ खोका ने कहा, "भारतीय जेलों की खराब स्थिति आप जानते हैं। पाकिस्तान की जेलों की हालत भी वैसी ही है। यह व्यर्थ की बात है कि कोई

युद्ध बंदी अब तक जीवित होगा।''

आइये, हम सब प्रार्थना करें कि यदि हमारे वे सेनानी जीवित हैं और युद्धबंदी हैं भगवान कृपा करके कैद से मुक्त होने में उनकी सहायता करें और इस प्रकार इस पल-पल की पीड़ा से उन्हें व उनके परिवारों को मुक्ति दें। ईश्वर-कृपा से असंभव भी संभव हो जाता है।

बड़बोला

बाँगलादेश के स्वतंत्रता संग्राम के समय पाकिस्तान के सैनिकों ने तीस लाख निरपराध बाँगलादेशी नागरिकों की चरम क्रूरता से हत्या करके तैमूरलंग को भी मात दे दी थी। निरीह नागरिकों की हत्या की वीरता दिखाकर ९३,००० सशस्त्र सैनिकों के साथ जनरल नियाज़ी ने भारतीय सेना के सामने आत्मसमर्पण कर दिया था। अब मई २००० में करांची की एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए इन्हीं नियाज़ी ने डींग मारी है कि वे बाँगलादेश से हारनेवाले नहीं थे परन्तु जनरल याहिया खान ने आदेश दिया था कि पाकिस्तानी सेना आत्मसमर्पण कर दे। उनका दावा है कि यदि उन्हें ७०,००० सैनिक दे दिये जायें तो वे एक सप्ताह में कश्मीर को जीत सकते हैं। बेचारे नियाजी! लगता है सठिया गये हैं।

सावधान

निरन्तर सतर्कता ही देश की स्वतंत्रता की रक्षा कर सकती है। आतंकवादी सिरफिरे इस्लामी जेहादियों के अविवेक की कीमत कारगिल के युद्ध में हमने बरबस चुकाई। कारगिल की शर्मनाक पराजय के बाद भी ये धर्मांध शक्तियाँ भारत विजय के सपने देख रही हैं। लश्करे तोयबा के मुखिया हाफ़िज मुहम्मद सईद ने एक भाषण में कहा है कि कश्मीर का फ़ैसला बातचीत से नहीं जेहाद से होगा। पत्रकार हमीद निज़ामी ने कहा कि वे लोग पाकिस्तान सरकार को कश्मीर में सेना दाखिल करने को मजबूर कर देंगे और यह जेहाद दिल्ली पर कब्जा करके ही खत्म होगा।

दिल्ली विजय की अपनी इसी महत्वाकांक्षा की पूर्ति करने के लिये पाकिस्तान ने अपने गुप्तचरों का जाल भारत में फैला दिया है। आज प्रत्येक नागरिक को सचेत रहने की आवश्यकता है, क्योंकि हमारे देश में जयचन्द के पदचिह्नों पर चलनेवालों की कोई कमी नहीं है।

नारी नये युग में

प्रगति का मूल आर्थिक स्वतंत्रता

श्री माँ ने कहा है कि लड़कियों को आर्थिक रूप से स्वनिर्भर और स्वतंत्र होने के बाद ही विवाह करना चाहिये। आज भारत की अनेक संस्थाएँ स्त्रियों को स्वनिर्भर बनाने के लिये प्रयत्नशील हैं।

राजस्थान के डूँगरपुर जिले के पाँच ताल्लुकों की ८६ प्रतिशत जनता आदिवासी है तथा उसमें से ६० प्रतिशत गरीबी की सीमा रेखा के नीचे जी रही है। सूखाग्रस्त इन गाँवों में बिजली, शुद्ध पेयजल आदि के सरकारी कार्यक्रम पहुँचे ही नहीं हैं। एक तरह से वे राज्य के अन्य क्षेत्रों से कटे हुए हैं। यदि गाँव का कोई निवासी बीमार हो जाये तो गाँव वाले उसे चारपाई पर लादकर १०-१२ मील दूर गुजरात के देहगाँव के अस्पताल ले जाते हैं। अक्सर रोगी रास्ते ही में दम तोड़ देता है।

दैनिक उपयोग की किराने की वस्तुएँ खरीदने भी ग्रामीण देहगाँव जाते थे। इसी माहौल में इनमें से एक गाँव की एक अनपढ़ महिला अत्तीवीरजी ने गाँव में ही एक किराने की दुकान खोलने का साहस दिखाया। वह पैदल देहगाँव जाती है और दूकान के लिये सामान खरीदकर ऊँट पर लदवा लाती है। वह गाँव वालों से प्रतिवस्तु ५० पैसे अधिक लेती है और गाँव वाले १२ मील की पदयात्रा के श्रम से बचने की एवज़ यह अतिरिक्त ५० पैसे प्रसन्नता से देते हैं।

किन्तु अत्तीवीरजी को दूकान खोलने के लिये पैसे कहाँ से मिले? इसके पीछे एक उत्साहवर्धक कहानी है। सन् १९८८ में "जन शिक्षा एवं विकास संगठन" नाम की एक गैर सरकारी संस्था ने इन अशिक्षित महिलाओं को संगठित करना आरम्भ किया। इस संगठन ने इन अशिक्षित महिलाओं को पशुपालन, खेती और दूकानदारी आदि के लिये छोटे-छोटे ऋण देने आरम्भ किये। उनका लक्ष्य था इन महिलाओं में आत्म-विश्वास जगाना। इसी उद्देश्य से उन्होंने ५००० महिलाओं को आत्म-सहायक दलों (सैल्फ़-हैल्प ग्रुप) में संगठित किया। आज ये स्त्रियाँ, जिन्हें समाज ने विकास की दृष्टि से नगण्य माना था, सामाजिक विकास की सशक्त कड़ी मानी जाने लगी हैं। अपनी बचत में से तथा दिल्ली के "राष्ट्रीय महिला कोष" में से प्राप्त ऋणों से अब ये आत्मविश्वास से

भरपूर, स्वजीवी महिलायें जीविकोपार्जन के लिये तरह-तरह के काम कर रही हैं। उनका कथन है कि दिल्ली के "राष्ट्रीय महिला कोष" ने ही उन्हें प्रेरणा और अवलम्बन दिया है। १९९३ में ३१ करोड़ की राशि से स्थापित यह संस्था किसी प्रकार के विज्ञापन के बिना स्त्री-पुनरुत्थान के लिये ठोस कार्य कर रही है। विभिन्न समाज सेवी गैर सरकारी संस्थायें "राष्ट्रीय महिला कोष" के सम्मुख अपने प्रस्ताव रखती हैं और इस संस्था से प्राप्त ऋण को ९ से १२ प्रतिशत ब्याज पर ५० रु. से २०,००० तक की ऋण-राशि देती हैं। ये गैर सरकारी संस्थायें महिलाओं के आत्म-सहायक दलों को ऋण देती हैं। फिर ये दल ठोक-बजा कर, देख-परख कर सदस्य महिलाओं को ऋण हस्तांतरित करते हैं। प्रत्येक महिला अपने आत्म-सहायक दल को प्रतिमाह १ रुपया चन्दा देती है। इस प्रकार प्राप्त धन के द्वारा ये स्त्रियाँ परस्पर न केवल अपने दल के उन सदस्यों की ऋण चुकाने में सहायता करती हैं जो उस समय किसी संकटवश असमर्थ स्थिति में होने के कारण ऋण नहीं चुका पातीं, वरन् उन्हें भूखों मरने से भी बचाती हैं। इस सभी आदान-प्रदान में ९३ प्रतिशत ऋण वसूल हो जाते हैं।

आज इन सभी अशिक्षित महिलाओं के बच्चे स्कूल पढ़ने जाते हैं। उनका कहना है कि अब उनके पति पहले कि तरह उनको नहीं पीटते क्योंकि ऐसा होने पर वे अपने आत्म-सहायक दल के सामने शिकायत करती हैं और दल दुर्व्यवहार करने वाले पुरुषों को बुलाकर उनकी भर्त्सना करता है और उन पर जुर्माना ठोकता है। इस प्रकार की योजनाओं ने स्त्रियों में नई आशा का संचार किया है।

अधिकांश सरकारी योजनाओं में पुरुषों को ऋण देने के स्थान पर सहायता राशि वितरित कर दी जाती है। वे उसको गुलछर्रे उड़ाने और शराब पीने में खर्च कर देते हैं। परन्तु इस योजना से ३ लाख पचास हजार महिलाओं के द्वारा यह लाभ पूरे परिवार को मिलता है। किन्तु आवश्यकता है भारत की ३० करोड़ महिलाओं के उत्थान की। श्री अरविन्द ने कहा था कि भारत के उत्थान के लिये निःस्वार्थ कार्यकर्ताओं की एक पूरी सेना की आवश्यकता है।

("हिन्दू" में १५ और १६ मार्च, २००० को प्रकाशित सोमा बसु के लेख पर आधारित।)

महिला दल एवरेस्ट पर

अब तक पुरुषों के समूह एवरेस्ट पर चढ़ने का प्रयास करते रहे हैं। कुछ गिनी-चुनी स्त्रियों ने ही यह साहसिक कार्य किया है। अब नेपाल की ३३ वर्षीया भिगमा चाँगजे नाम की एक महिला, जो होटल चलाती हैं, के नेतृत्व में पाँच शरपा महिलाओं ने दल बना कर सन् २००० की बसन्त ऋतु में कई दर्जन

विदेशी पर्वतारोही दलों के साथ एवरेस्ट के शिखर पर चढ़ने का निश्चय किया। इससे पूर्व एवरेस्ट विजय करनेवाली एकमात्र शरपा महिला हैं पसांग दलमाहू। उन्होंने यह दुस्तर आरोहण १९८३ में किया था।

नगर-निगम-प्रमुख

भारत में विजयवाड़ा के नगर निगम की प्रमुख २३ वर्षीय सुश्री पंचमार्थी अनुराधा भारत की सबसे कम आयु की नगर-निगम-प्रमुख है।

प्रथम महिला रेल चालक

बत्तीस वर्ष की सुश्री सुरेखा यादव भारत की यात्री-रेल चलाने वाली प्रथम महिला ड्राइवर हैं। अभी भारतीय रेलों की १४७ वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में संतोष यादव ने मुबंई में डोंबिविली से शिवाजी स्टेशन तक रेल चलाई। सुश्री यादव दो बच्चों की माँ हैं। उनके पति पुलिस विभाग में हैं। संतोष ने महाराष्ट्र के सतारा जिले में झराद के सरकारी पोलीटेक्नीक में इलैक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा लिया था और १९८६ से रेलवे में सहायक-ड्राइवर के रूप में कार्यरत थीं। पिछले दस वर्षों से वे माल गाड़ियाँ चला रही थीं। उनको अपने परिश्रम का पुरस्कार मिला यात्री-रेल चलाने के अवसर के रूप में।

अकेले समुद्र पार

अमरीका के कैन्टको नामक स्थान की सुश्री टोरी मुरडेन विश्व की प्रथम महिला हैं जिन्होंने अकेले २३ फुट की पतवार से चलने वाली एक खुली नाव में, किसी पाल या मोटर के बिना, किसी सहायक के बिना अटलांटिक महासागर को अपने बाहुबल से अकेले पार किया। टोरी नित्य लगभग ५६ किलोमीटर नाव चलाती थीं। उन्होंने ४७६५ किलोमीटर की अपनी जल-यात्रा १३ सितम्बर १९९९ को कैनेरी द्वीप से आरंभ की और ३ दिसम्बर को फ्रांस के कैरेबियन द्वीप के बा द्यू फोर्ट बन्दरगाह पर समाप्त की।

लड़कियाँ लड़कों से बढ़कर

तमिलनाडु में मई २००० को निकले परीक्षाफलों के अनुसार उत्तीर्ण होनेवाली लड़कियों की संख्या में ४.६४ प्रतिशत की वृद्धि हुई है और ८३.२९ प्रतिशत लड़कियाँ उत्तीर्ण हुई हैं, जबकि उत्तीर्ण होने वाले लड़कों की संख्या में

कोई वृद्धि नहीं हुई है, वरन् यह ४ प्रतिशत घटकर ७८.६९ प्रतिशत रह गयी है। केरल के वर्ष २००० के परीक्षाफल में ५९.७४ प्रतिशत लड़कियाँ उत्तीर्ण हुई हैं जबकि केवल ५०.५० प्रतिशत लड़के सफल हुए हैं।

फिर भी भारत के माता-पिता पुत्रों को पुत्रियों से बढ़कर क्यों मानते हैं?

स्त्रियों के लिये अलग बसें

बैंगकॉक में वेतन मिलने की तारीखों पर घर लौटती हुई स्त्रियों पर बहुत आक्रमण होते हैं। चोर-लुटेरे उनका वेतन लेने के लिये उनसे ज़ोर-ज़बरदस्ती करते हैं। अब बैंगकॉक के अधिकारियों ने उनपर होने वाले आक्रमणों से उनकी रक्षा के लिये अलग स्त्री-बसें चलाने का निर्णय किया है।

हमें युद्ध करने दो

तीन जनवरी के 'न्यू इंडियन एक्सप्रैस' में समाचार पढ़ने को मिला कि सन् २००१ से जर्मन सेना ने स्त्रियों को रणक्षेत्र में जाने की अनुमति दे दी है। अब तक जर्मनी की महिला सैनिकों एवं अधिकारियों को मात्र चिकित्सा टुकड़ियों एवं मनोरंजन की संगीत टुकड़ियों में कार्य करने का अवसर मिलता था।

कलाबाज़ ज़ाकी द क्रीड

कार चालन के अनोखे और रोमहर्षक प्रदर्शन में सिद्धहस्त ज़ाकी द क्रीड दो पुत्रियों की माता हैं। वे एक अभिनेत्री भी हैं और दुस्साहसी कारचालक (स्टंट ड्राइवर) भी। १९८३ में कार से हवा में २३२ फुट की उछाल लेकर ज़ाकी ने एक विश्व कीर्तिमान स्थापित किया था। एक दिन उनकी बेटियों ने माँ से फ़रमाइश की कि वे उन्हें दो पहियों पर कार चलाकर विद्यालय ले जायें। ज़ाकी ने पहले ग्लाउचैस्टशायर के चैल्टेनहैम नामक स्थान की नगरपालिका से सार्वजनिक सड़क पर यह करतब दिखाने की अनुमति ली। तत्पश्चात् दोनों बेटियों को शीशरक्षक टोप पहनाकर खुली छत वाली कार में पीछे की गद्दी पर खड़ा करके, अपने घर में बनाये ढलान से कार चालू की और ४५ डिग्री के कोण पर कार को दो पहियों पर चलाकर विद्यालय ले गयीं।

ज़ाकी का संदेश है कि कलाबाजी के क्षेत्र में स्त्रियाँ श्रेष्ठ हो सकती हैं। अब उन्होंने बच्चों के लिये एक स्टंट स्कूल आरंभ किया है।

आशा की शक्ति

श्री माँ की वाणी

"व्यक्ति को कभी आशा या आस्था नहीं खोनी चाहिये – कोई भी रोग असाध्य नहीं है, और भगवान की शक्ति को किसी सीमा में नहीं बाँधा जा सकता।".

(कलैक्टेड वर्क्स आफ़ दी मदर, भाग १६, पृ. १९५.)

"हाँ, तुम्हारा आशावान होना उचित है। आशा ही सुखी भविष्यों का निर्माण करती है।"

(कलैक्टेड वर्क्स आफ़ दी मदर, भाग १६, पृ. १९५.)

आशा-निराशा

अमरीका के प्रसिद्ध मेयो क्लिनिक के डॉक्टर टोशिहिको मारुटा के एक अध्ययन-सर्वेक्षण के परिणाम बहुत चौंकाने वाले हैं। इसके अनुसार आशावादी व्यक्तियों को निराशावादियों की तुलना में अकाल-मृत्यु का भय कम है। यह सर्वेक्षण बताता है, "मन और शरीर एक दूसरे से संबंधित हैं और रोग के अंतिम परिणाम पर हमारे दृष्टिकोण का प्रभाव होता है।"

१९६२ और १९६५ के बीच मेयो क्लिनिक के मनोवैज्ञानिकों और मनोरोग-वैज्ञानिकों ने ८३९ व्यक्तियों का एक व्यक्तित्व-सर्वेक्षण किया था। इस दल में से १२४ को आशावादियों की श्रेणी में, १९७ को निराशावादियों की और ५१८ को मिश्रित श्रेणी में रखा गया। ३५ वर्ष बाद शोधकर्ताओं ने पाया कि जिस दल में सबसे अधिक निराशावादी थे उनमें से १९ प्रतिशत अधिक व्यक्तियों की अकाल मृत्यु हुई।

डॉ. बर्नी सीगल के अनुसार, "आशा आँकड़ों को बदल सकती है।" अमरीका में किये गये एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि आशावादी व्यक्तियों की रोग-प्रतिरोधक शक्ति निराशावादियों से ६० प्रतिशत अधिक होती है। इसी कारण यह आवश्यक है कि कैंसर के रोगी आशावादी दृष्टिकोण बनायें और अपने को ट्यूमर से अधिक शक्तिशाली मानें। उन्हें आँकड़ों को नज़रअंदाज कर देना चाहिये। आज चिकित्सक स्वयं रोगियों का मनोबल तोड़ देते हैं। अमरीका के

श्री जे. के पेट में फोड़ा था जिसमें कैंसर हो गया। प्रसिद्ध कैंसर-चिकित्सकों ने उनसे कहा कि उन्हें अपनी वसीयत बना देनी चाहिये। श्री जे. ने एक निर्णय लिया। उन्हें विश्व-भ्रमण की इच्छा थी किन्तु वे कभी काम छोड़ कर निकल नहीं पाये थे। अब उन्होंने अपनी इच्छा पूरी करने का निश्चय किया। उनके चिकित्सकों ने उन्हें चेतावनी दी कि वे समुद्र यात्रा के समय मर जायेंगे। श्री जे. ने एक ताबूत खरीद कर जहाज कंपनी से समझौता किया कि यदि यात्रा के दौरान उनकी मृत्यु हो गयी तो उनका शरीर बर्फ़ में रख दिया जाये और यात्रा पूरी होने पर शरीर को स्वदेश ले आया जाये। यात्रा में श्री जे. ने हर प्रकार का खाना खाया, जिसे खाने का निषेध था। उन्हें इतना आनंद आया कि वे यह भूल-सा गये कि उन्हें पेट का कैंसर था तथा छः माह बाद वे पूरी तरह स्वस्थ होकर लौटे।

प्रार्थना का प्रभाव

विलियम एस. हैरिटप नामक एक शोधकर्ता के नेतृत्व में अमरीका के एक दल ने केन्साज़ शहर में एक शोध सर्वेक्षण द्वारा सिद्ध कर दिया है कि जिन रोगियों के लिये प्रार्थना की जाती है उन्हें, जिनके लिये प्रार्थना नहीं की जाती, उन रोगियों से १० प्रतिशत अधिक लाभ होता है। कैनसाज् के शोधकर्ताओं ने हृदय धमनी रोग (कॉरोनरी केयर यूनिट) के १००० रोगियों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला। इस शोध के परिणाम "आर्काइव्ज़ आफ़ इंटरनल मैडिसिन" नामक पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। एक विश्वविद्यालय से संबंधित अस्पताल के हृदय रोगियों में से आधों के नाम अटकलपच्चू लेकर एक ऐसे दल को दे दिये गये जो अस्पताल से संबंधित नहीं था और जिसने ४ सप्ताह तक नित्य इन रोगियों के लिये प्रार्थना की।

डॉक्टरों तथा परिचारकों को यह ज्ञात नहीं था कि किन रोगियों के विषय में प्रार्थना हो रही है। दोनों दलों के रोगियों की रोग स्थिति और उन्हें दी गयी चिकित्सा में कोई अंतर नहीं था फिर भी जिन रोगियों के लिये कुछ अजनबी प्रार्थना कर रहे थे वे जल्दी स्वस्थ हो गये।

भारत में भी गंभीर रूप से बीमार रोगियों के लिये 'रेकी' चिकित्सक इस प्रकार के प्रयोग कर रहे हैं।

सावधान

अमरीका के प्रतिष्ठित "जॉन हॉपकिन औषधि संस्थान" ने एक नये शोध के द्वारा यह पता लगाया है कि कोका कोला प्रभृति पेय-पदार्थों में

कैफ़ीन होती है। कैफ़ीन से कोला के स्वाद में कोई अंतर नहीं होता किंतु वह पीने वालों को इन पेय पदार्थों का व्यसन लगा देती है। अधिकांश वयस्क जब ये कोला पेय पीते हैं उन्हें इसमें मिली कैफ़ीन का स्वाद ही नहीं आता क्योंकि वह अति अल्प मात्रा में मिलाई जाती है किंतु उसके कारण पीने वालों को कोला की लत पड़ जाती है। यद्यपि कोला निर्माता यह अस्वीकार करते हैं कि वे पीने वालों को व्यसनी बना रहे हैं किन्तु यह एक तथ्य है कि वे लाखों लोगों को कैफ़ीन की लत लगा रहे हैं।

शाकाहारी बनिये

वाशिंगटन के "राष्ट्रीय फेफड़े और रक्त संस्थान" का कथन है कि जो लोग अधिक फल और सब्जी खाते हैं तथा कम चीनी एवं कम माँस खाते हैं उनका रक्तचाप तो कम रहता ही है उनके अंदर होमोस्टीन नाम का अमिनो एसिड कम निर्मित होता है जिसकी अधिकता के कारण हृदय रोग अधिक होते हैं।

रूस में आयुर्वेद का अभ्युदय

रूस की त्रैमासिक चिकित्सा पत्रिका "द न्यू थीम" में प्रकाशित एक लेख के अनुसार वहाँ का "नम्मी औषधि शोध संस्थान" भारत की आयुर्वेदिक चिकित्सा का समर्थन कर रहा है और संस्था के विशेषज्ञों का सुझाव है कि सभी डॉक्टरों को आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली का शिक्षण देना चाहिये और सारे देश में आयुर्वेद चिकित्सा संस्थानों की एक श्रृंखला होनी चाहिये। लेख के अनुसार "चरनोबिल अणु संस्थान" में हुए भीषण विस्फोट के कारण अणु प्रदूषण से रोगग्रस्त ८५ रोगियों की आयुर्वेदिक चिकित्सा से वहाँ के डॉक्टर बहुत प्रभावित हुए हैं। अब रूस के स्वास्थ्य और चिकित्सा मंत्रालय ने डॉक्टरों को अनेक पुराने रोगों की चिकित्सा आयुर्वेद के पंचकर्म और क्षारसूत्र द्वारा करने की अनुमति दे दी है। पंचकर्म में गरम तेल द्वारा उपचार से गठिया तथा स्पांडिलाइटिस प्रभृति रोगों की चिकित्सा में बहुत लाभ हुआ है।

रूसी चिकित्सक आयुर्वेद के विज्ञान और मूल सिद्धांतों के अतिरिक्त उसकी चिकित्सा की प्रणाली से भी बहुत प्रभावित हुए हैं। अब मॉस्को के "चिकित्सा-सामाजिक पुनर्वास संस्थान" में डॉक्टरों को यह ज्ञात कराने के लिये कि आयुर्वेद क्या है उन्हें आयुर्वेद का प्रशिक्षण भी उपलब्ध कराया गया है।

दीर्घायु का रहस्य

अमरीका के डॉ. नार्मन वाकर का देहान्त १०९ वर्ष की आयु में हुआ। वे आजीवन स्वस्थ रहे और इतनी अधिक आयु तक भी सब्जियाँ उगाते रहे तथा पुस्तकें लिखते रहे। उनकी दीर्घायु का रहस्य था नैसर्गिक भोजन — फल और सब्जियाँ खाना। डॉ. नार्मन का कथन था कि भोजन यदि १३० डिग्री फॉरेनहाइट से अधिक तापमान पर पकाया जाता है तब उसके एनज़ाइम मर जाते हैं तथा उसका जीवन तत्व नष्ट हो जाता है। कच्ची सब्जियाँ तथा फल खाने पर उनमें निहित एनज़ाइम हमें सब प्रकार की बीमारियों से बचाते हैं।

चीन के श्री युनकिंग १४२ वर्ष तक साइकिल चलाते थे। जब उनसे उनके भोजन के विषय में पूछा गया तब उन्होंने कहा, "मैं मक्का, चावल, शकरकन्द तथा अन्य फल और सब्जियाँ खाता हूँ।"

डॉ. एलेक्जेंडर नाम के एक वैज्ञानिक संसार के सबसे दीर्घायु लोगों की खोज में निकले। उन्हें पता लगा कि पृथ्वी पर रूस के अबकाजिया, इकुआडोर के विलकंबन तथा पाकिस्तान के हुंजा क्षेत्र के निवासी १०० वर्ष से अधिक तक जीवित ही नहीं, पूर्णतया स्वस्थ रहते हैं। इन सब ही के भोजन में ७० से ८० प्रतिशत फल एवं सब्जियाँ होती हैं तथा वहाँ मोटापे, कैंसर या हृदयरोग का नाम-निशान भी नहीं है।

सावधान

मनुष्य दूसरों को कितना ठग सकता है इसकी कोई सीमा नहीं है। राशन की दूकानों को आटा उपलब्ध कराने वाली हरियाना की कुछ आटा मिलें आटे में से शक्तिदायी तत्व मैदा और सूजी निकाल लेती हैं।

दूध में पानी

जयपुर में उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के लिये संगठित एक गैरसरकारी संस्था "सी. ए. एन. एस." ने, १४ मई २००० को "दूध का दूध पानी का पानी" नाम का एक सर्वेक्षण आरंभ किया है। संस्था ने जयपुर के मालवीय नगर में दूध का परीक्षण आरंभ किया। बीस दिन में उन्होंने १६,००० घरों से संपर्क साध कर दूध के ८०६ नमूनों का परीक्षण किया जिनमें से ६६९ अर्थात ८३ प्रतिशत में पानी मिलाया गया था।

झरोखे

भारत का गौरव : दृष्टिहीन गणितज्ञ रामकुमार

पाँच वर्ष की अवस्था में बालक रामकुमार की दृष्टि क्षीण होने लगी थी। यद्यपि उस समय उपचार से उनकी दृष्टि लौट आयी किन्तु दुर्भाग्यवश सात वर्ष की अवस्था में एक दुर्घटना में पुनः उनकी दृष्टि चली गयी। तब से वे परनिर्भर हो गये। किन्तु चेन्नई के "श्री सीताराम मैट्रिकुलेशन विद्यालय" की नौंवी कक्षा के विद्यार्थी रामकुमार अपनी अक्षमता के कारण हतोत्साहित नहीं हुए। उन्होंने गणित की समस्याओं को सुलझाने के लिये नवीन विधियों का आविष्कार करना आरंभ कर दिया है। उन्होंने तीन अंकों की संख्याओं का अन्य तीन अंकों की संख्या से गुणा करने का तथा उसका वर्गमूल निकालने का एक नवीन और सरल तरीका खोज निकाला है। प्रतीत होता है कि एक नवीन रामानुजम् का विकास हो रहा है। अक्षमता को पराजित करने वाले इस गणितज्ञ का अभिनन्दन है।

सोने की चिड़िया भारत

भारत को आज भी सोने की चिड़िया कहा जा सकता है। पश्चिमी देशों के नागरिक अपनी बचत का उपयोग सैर-सपाटे और ऐशो-आराम के लिये करते हैं। प्रति-परिवार दो-दो कारें रखते हैं, देश-विदेश घूमते हैं, शानदार बंगले बनाते हैं। वे हम भारतीयों की सोना खरीदने की प्रवृत्ति को मूर्खता समझते हैं, वे ही क्या सारा संसार भारतीयों की सोना खरीदने की प्रवृत्ति को एक मूर्खता नहीं तो सनक अवश्य समझता है।

बहुत कम लोग जानते हैं कि भारतीयों के पास लगभग ३ लाख टन सोना जमा है जिसका मूल्य लगभग ३००० अरब अमरीकी डॉलर है। भारत में संचित सोने का मूल्य अमरीका के व्यवसायिक संस्थानों की कुल पूँजी का १/३ भाग है। इसमें से २०००० टन अनगढ़ा सोना है जिसका मूल्य २०० अरब अमरीकी डॉलर या ८.९ लाख करोड़ रुपये है। यह सब सोना काला धन है क्योंकि ५० साल से सोने का विक्रय तस्करों के हाथों में रहा है। प्रसिद्ध लेखक श्री एस.

गुरुमूर्ति का कथन है कि यदि भारत सरकार बैंकों में सोना रखने वालों को संचित सोने पर संपत्ति-कर से छूट दे दे तो ५००० से १०००० टन छुपा हुआ सोना बाहर आ जायेगा जिसका मूल्य ५० से १०० अरब अमरीकी डॉलर होगा। इससे भारत की विदेशी मुद्रा स्थिति सुधर जायेगी और विश्व भर के सोने का व्यापार भारत के नियंत्रण में आ जायेगा तथा ब्याज की दर कम हो जायेगी। आज जो सोना हमारी अर्थ व्यवस्था के ऊपर भार है वही हमारी पूँजी बन जायेगा।

भारतीयों की हर ओर माँग

संसार के अमरीका और जर्मनी सदृश विकसित देशों में भारतीय वैज्ञानिकों की इतनी माँग है कि ये राष्ट्र भारतीय वैज्ञानिकों को बुलाने के लिये तरह-तरह के प्रलोभन दे रहे हैं। जर्मनी की सरकार कह रही है कि वह भारतीय वैज्ञानिकों को आरम्भ में ही हरा कार्ड देने को तैयार है, जो वहाँ कम से कम तीन साल रहने के बाद मिलता है। आरम्भ में वे यह कार्ड १०,००० विशेषज्ञों को देने को तैयार हैं। इस प्रकार भारतीयों के लिये अनेक देशों में द्वार खुले रहे हैं। अमरीका में इस समय ३२ लाख से अधिक भारतीय हैं। अमरीका के ३८ प्रतिशत डॉक्टर , १२ प्रतिशत वैज्ञानिक, अन्तरिक्ष केन्द्र "नासा" के ३६ प्रतिशत वैज्ञानिक और "आइ. बी. एम" के २८ प्रतिशत कार्यकर्ता भारतीय हैं।

मेधावी भारतीय

अमरीका की "बिज़नेस वीक मैगज़ीन" ने अमरीका के ३० सर्वाधिक वेतन पाने वाले मैनेजिंग डायरेक्टरों की सूची प्रकाशित की है, जिनमें २ भारतीय मूल के हैं। "कंप्यूटर एसोशियेट इंटरनेशनल" के संजय कुमार को १९९९ में ३५९०.२० लाख डॉलर वेतन मिला। इस प्रकार वे सर्वाधिक वेतन पाने वाले इन तीस व्यक्तियों में से दूसरे नंबर पर हैं। इस सूची में भारतीय मूल के दूसरे व्यक्ति हैं अनिल सिंह जो "याहू" नाम की कम्प्यूटर कंपनी के लिये काम करते हैं।

अमरीका में रहने वाले भारतीय मूल के व्यक्ति अमरीका के सबसे अधिक अर्जन करने वाले ७ प्रतिशत नागरिकों में हैं। २५ वर्ष से अधिक आयु के भारतीयों में अमरीका के गोरे निवासियों की तुलना में तिगुने स्नातक हैं तथा १८ से २४ वर्ष की आयु के भारतीयों में गोरों से पाँच गुना ग्रैजुएट हैं।

अमरीका में अधिकांश भारतीय बुद्धिजीवी हैं। अनेक अमरीकी विश्वविद्यालयों में विभिन्न विभागों के अध्यक्ष भारतीय हैं, या फिर वे शिक्षण के

अन्य उच्च पदों पर हैं। सहसा विश्वास नहीं होता कि सिलीकॉन वैली के व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में ७४० प्रतिष्ठान भारतीय मूल के नागरिकों के हैं।

बिल क्लिंटन भारत के प्रशंसक

मार्च ३०, २००० को एक भाषण में अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने कहा कि दक्षिण एशिया बदल रहा है। उन्होंने बताया कि वे भारत के एक छोटे से दरिद्र गाँव में गये जहाँ पंचायत अधिकारियों में ३० प्रतिशत स्त्रियाँ थीं और जहाँ के दुग्ध संघ (डेयरी) का हर एक कारबार स्त्रियों द्वारा कंप्यूटर पर दर्ज किया जाता है।

भारत यात्रा पर आये अमरीका के राष्ट्रपति को कुछ टी-शर्ट उपहार देते हुए आंध्र प्रदेश के मुख्य मंत्री चन्द्रबाबू नायडू ने उन्हें बताया कि उनकी प्रिय 'कटर' और 'बक' नाम की ये टी-शर्ट हैदराबाद में बनती हैं । बिल क्लिंटन गोल्फ़ खेलते समय ये ही टी-शर्ट पहनते हैं। उन्हें ज्ञात नहीं था कि उनकी मन पसन्द टी-शर्ट भारत में बनती हैं।

पशु-मित्र

मुंबई के मुलुंड नामक स्थान के निवासी श्री त्रिकामजी देवजी ठक्कर पिछले ३० वर्षों से अपने मुहल्ले के कौओं को खाना खिलाते आ रहे हैं। सबेरे जैसे ही वे घर से निकलते हैं करीब ५०० कौवे उन्हें घेर लेते हैं। कौवे उनसे डरते नहीं, कुछ उनके कंधों पर बैठ जाते हैं तथा कुछ हाथों पर, और उनके द्वारा दिया दाना खाने लगते हैं। कुछ घंटों बाद जब वे काम पर जाते हैं तो पुनः कौवों को खिलाते हैं। उन्हें विश्वास है कि कौवों को खिलाने से उनके पितरों की आत्मायें तृप्त होंगी। किन्तु यह दया-कार्य केवल पितरों की तृप्ति के लिये नहीं है। वे पास-पड़ोस के कुत्तों को भी खिलाते हैं।

पक्षी मित्र

यह अगस्त २००० की घटना है। पूना के सोमवारपेठ क्षेत्र में एक पीपल के वृक्ष में अटकी हुई पतंग की डोर में एक कोयल उलझ गयी। दमकल वालों को सूचना दी गयी। वे दमकल लेकर तुरंत वहाँ पहुँच गये। १५ मिनट के लिये सड़क पर यातायात बंद कर दिया गया। तीन दमकल कर्मचारी दमकल की पतली सीढ़ी द्वारा १५० फ़ुट ऊँचे चढ़ कर कोयल तक पहुँचे जो डोर से छुटने की कोशिश में और भी उलझती जा रही थी। कर्मचारियों ने कोयल को डोर से

मुक्त करके नीचे उतार लिया। ऐसी विरल घटनायें पढ़कर लगता है कि हमारी मानवता मरी नहीं है।

भारतीय भाषाएँ

आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि भारत में ३५ भाषायें ऐसी हैं जिन्हें १० लाख से अधिक व्यक्ति बोलते हैं और इन सभी भाषाओं की उपबोलियों की संख्या गिनी जाये तो भारत में २२ हज़ार बोलियाँ बोली जाती हैं। इनमें से १८ भाषाओं को संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त हुई है। १९६१ की मतगणना में ५००० व्यक्तियों ने संस्कृत को अपनी मातृभाषा बताया। संविधान में संस्कृत को देश की महत्वपूर्ण भाषाओं में से एक माना गया है। देश में अंग्रेजी बोलने वालों की संख्या केवल २ प्रतिशत है जबकि १०-१२ प्रतिशत नागरिक अंग्रेजी पढ़-लिख लेते हैं।

स्वर्ण मयूर पर्यावरण मैनेजमैंट पुरस्कार

कपूरथला स्थित रेल कोच फैक्ट्री (आर. सी. एफ़.) को विश्व पर्यावरण संस्थान (वर्ल्ड एनवायरनमैंट फाउंडेशन) ने सन २००० का स्वर्ण मयूर पर्यावरण मैनेजमैंट पुरस्कार प्रदान किया।

प्रतिभा को पंख मिले

मदुराई निवासी वीरपांडियन नाम के एक गरीब विद्यार्थी के पिता गणेशन फेरी लगाते हैं। वे सिर पर लाद कर गली-गली बर्तन बेचते हैं। उसकी माँ पेरुमल्लका "अरविन्द नेत्र हस्पताल" में सफ़ाई का काम करती है, छोटा भाई चपरासी है और बहन दसवीं में पढ़ती है। वीरपांडियन विद्यालय से आकर एक ढाबे में पराठें बनाकर ३० रु. रोज कमाते हैं। यदि घर का कोई भी व्यक्ति एक दिन को भी बीमार पड़ जाये तो फ़ाके करने पड़ते हैं। हालत इतनी ख़राब है कि कुछ समय पहले गरीबी से तंग आकर वीरपांडियन के पिता ने आत्महत्या का प्रयास किया था।

इन सब कठिनाइयों से बिना घबराये वीरपांडियन अथक परिश्रम से अध्ययन करता रहा। बारहवीं की परीक्षा में उसे भूगोल में २०० में से १९२ अंक प्राप्त हुए। जिसका श्रेय उनके भूगोल-शिक्षक अंबुसेलवन को है जिन्होंने वीर-पांडियन सहित छः विद्यार्थियों को विशेष प्रशिक्षण दिया और इस वर्ष इन छहों को भूगोल की परीक्षा में २०० में से १९० अंक प्राप्त हुए।

वीरपांडियन का सपना है एक आई. ए. एस. अफ़सर बनने का, जो एक दिवास्वप्न लगता था क्योंकि उनके पास १२वीं कक्षा से आगे पढ़ने का कोई साधन ही नहीं था।

किन्तु कभी-कभी सपने साकार हो जाते हैं। समाचार पत्रों ने पराँठे बनाते हुए इस तरुण की सचित्र कहानियाँ छापीं और केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री श्री मुरली मनोहर जोशी तथा तामिलनाडु के मुख्य मंत्री श्री करुणानिधि ने वीर-पांडियन को उच्च शिक्षा के लिये हाथ खोलकर सहायता दी। अन्य कुछ संस्थाएँ तथा दानी व्यक्ति भी उसकी सहायता को प्रस्तुत हैं।

शस्य श्यामला

भारत भूमि आज भी कितनी उर्वर है यह इस बात से प्रकट होता है कि भारत सरकार के गोदामों में २५१ लाख टन गेहूँ भरा है जबकि केवल ४० लाख टन अनाज रखने का प्रावधान था। सरकारी गोदाम अनाज से अटे पड़े हैं। उनके रख-रखाव की समस्या से सरकार बहुत चिंतित है। इस २५१ टन अनाज में से १०० लाख टन तो सरकारी दूकानों के द्वारा गरीबी की सीमारेखा के नीचे जी रहे लोगों को कम दाम पर वितरित हो जायेगा किन्तु शेष १५१ लाख टन को संचित रखने का वार्षिक मूल्य २७०० करोड़ रुपये होगा। महालक्ष्मी की इस कृपा को हम अपनी सीमित क्षमता के कारण संभाल ही नहीं पा रहे हैं।

एक अद्‌भुत प्रतिभाशील व्यक्ति की दुखद कहानी

कन्याकुमारी जिले के पार्थीविल्लैर नामक स्थान के निवासी ३३ वर्षीय एस. कुमारेसन एक विलक्षण व्यक्ति हैं। उन्हें भरपेट भोजन कठिनाई से ही मिलता है। वे नारियल की पत्तियों से चारपाइयाँ बुनकर बेचते हैं। छः दिन के कठिन परिश्रम से एक चारपाई बनाने पर उन्हें २०० रु. मिलते हैं।

गरीब घर में जन्मे कुमारेसन ने छोटे-छोटे काम करके जैसे-तैसे तामिल में एम.ए. पास किया। १९९२ में उन्होंने ससम्मान एम. फ़िल की उपाधि पाई। अध्ययन की तीव्र इच्छा के कारण कुमारेसन ने बी. एड. और तत्पश्चात् एम. एड. किया। इतनी उपाधियाँ लेने के बाद भी उन्हें शिक्षण कार्य नहीं मिला। किन्तु कुमारेसन ने हार नहीं मानी। उन्होंने पत्रकारिता में डिप्लोमा लिया, तत्पश्चात भाषा विज्ञान में भी डिप्लोमा लिया और भारतीय संस्कृति पर एक उपाधि प्राप्त की।

वे अपनी पत्नी और तीन बच्चों को साथ नारियल की पत्तियों की चारपाई बुनते हैं। तथा नगरकोयल रेडियो स्टेशन में कुछ समय काम करके १००० रु.

प्रतिमाह अर्जित करते हैं। अब वे डॉक्ट्रेट पाने के लिये शोध कर रहे हैं। उन्होंने बेरोजगार स्नातकों का एक संघ भी बनाया है। इतनी उपाधियाँ प्राप्त करने पर भी उनकी सरल सी इच्छा है एक शिक्षक बनने की किन्तु उन्हें कहीं भी अवसर नहीं मिला, कोई भी द्वार नहीं खुला।

ये चिरंतन विद्यार्थी दिन-रात परिश्रमरत रहने पर भी अपने शोधकार्य के लिये अध्ययन का समय निकाल ही लेते हैं।

चिर यौवन

जापान में १०७ वर्षीया सुश्री किन नारिटा की १६ जनवरी २००० रविवार को मृत्यु हुई। अपनी जुड़वाँ बहन के साथ किन नारिटा जापानी दूरदर्शन के दर्शकों में बहुत लोकप्रिय थीं। वे अक्सर दूरदर्शन के वार्तालाप कार्यक्रमों में भाग लेती थीं और जनता को अपनी तीव्र मेधा तथा जीवन के प्रति अपने साहसी और सकारात्मक दृष्टिकोण से प्रभावित करती थीं। वे अपने अंतिम दिनों तक सक्रिय रहीं।

भारतीय फिल्में

जापान और इज़राइल में भारतीय फिल्में इतनी लोकप्रिय हो रही हैं कि अनेक इज़राइली युवक अपनी अनिवार्य सैनिक सेवा पूरी करके भारत आते हैं।

छठा संवेद

भारतीय मूल के लेखक फिल्म निर्देशक मनोज न. श्यामलन की चित्रपट संवाद कथा "छठा संवेद" (दी सिक्स्थ सैंस) को अमरीका के लेखक संघ ने अपने ५२ वें अधिवेशन में सर्वश्रेष्ठ चित्रपट नाटकं पुरस्कार दिया है।

पड़ोसी हो रहे हैं पराये

इंगलैड के बरमिंघम विश्वविद्यालय के इतिहास शिक्षक डॉ. कार्ल चिन ने इस नगर के मोहल्लों का सर्वेक्षण करके पता लगाया कि वर्तमान काल में नगर के एक तिहाई लोग या तो अपने घर के बाजू में रहने वाले पड़ोसियों से मिले ही नहीं हैं और जो लोग पड़ोसी को जानते भी हैं वे शायद ही उनसे बोलते हैं।

सर्वेक्षण द्वारा ज्ञात हुआ कि १९५० तक पड़ोसी बगिया के बाड़े के आर-पार

या बियर खानों में एक-दूसरे से प्रतिदिन कम से कम एक घंटे बात करते थे किन्तु अब काम के घंटे बढ़ जाने के कारण पड़ोसी अजनबी बनते जा रहे हैं। पहले गरीब पड़ोसियों में बहुत घनिष्टता होती थी, पर अब लोग अपने-आप में ही खोये रहते हैं।

अदम्य साहस

अमरीका और जापान के लगभग २०० कैंसरग्रस्त रोगियों ने ३७७६ मीटर ऊँचे फुज़ी नामक पर्वत पर चढ़ने की योजना बनाई। इस अभियान का उद्देश्य एक-दूसरे की आशा तथा संकल्प बढ़ाना था तथा रोगियों में इस भावना की वृद्धि करना था कि वे रोग पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। वक्ष-कैंसर निधि के संस्थापक ने सितंबर २००० को सैनफ्रैन्सिस्को में कहा, "हम यहाँ उन सब परिवारों का हाथ थामने आये हैं जिन्होंने कैंसर का सामना किया है।" ४ सितम्बर २००० को १६० कैंसरग्रस्त जापानियों ने इस उच्च शिखर पर आरोहण किया।

दौड़ने वाला आदमी

कंधे पर लाल थैला लटकाये एक व्यक्ति यदि आपको दौड़ता हुए मिले तो शायद आप उसे नहीं पहचानेंगे। इंगलैंड के ३३ वर्षीय रॉबर्ट गारसाइड ७ महाद्वीपों के ५५ देशों में ६८००० किलोमीटर की दौड़ पर निकले हैं वे मार्च २००० तक २५ देशों में ३२००० किलोमीटर दौड़कर यात्रा कर चुके हैं। उनका लक्ष्य है दौड़कर (चलकर नहीं) संसार की यात्रा करने वाले प्रथम व्यक्ति का खिताब पाना। वे प्रतिदिन ६० किलोमीटर दौड़ते हैं। अब वे योरोप, एशिया और ऑस्ट्रेलिया को पार करके दक्षिणी अमरीका पहुँच गये हैं। उनके लाल थैले में एक जोड़ी कपड़े, साबुन, ब्रश आदि के अतिरिक्त है उनका वीडियो और अचल कैमरा, एक नन्हा कंप्यूटर तथा कागज़ और कलम। रॉबर्ट हर ८० मिनट बाद अपनी फ़िल्म लेते हैं तथा दर्शकों से प्रमाण पत्र लेते हैं कि उन्होंने रॉबर्ट को दौड़ते देखा है। अपनी दौड़-विश्व-यात्रा समाप्त करने तक रॉबर्ट ३५ वर्ष के हो जायेंगे।

जेब में ३० डॉलर लेकर यात्रा को निकले रॉबर्ट को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पाकिस्तान में वे लूटे गये, रूस में उन्हें गोली मारी गयी और चीन में जेल में ठूँसा गया । किन्तु इसके विपरीत अमरीका उनके स्वागत के लिये उनकी राह देख रहा है। अमरीका में हजारों धावक उनका स्वागत करके उनके साथ अमरीका के एक किनारे से दूसरे किनारे तक दौड़ेंगे।

श्री अरविन्द की वाणी

चेतना द्वारा आश्रम का विकास

मुझे यह स्पष्ट करना अधिक महत्वपूर्ण लगता है कि यहाँ वस्तुएँ किस प्रकार निष्पादित होती हैं। वास्तव में बहुत कम व्यक्ति ही यह समझते हैं और उनमें से भी बहुत कम इसका अनुभव करते हैं।

यहाँ (आश्रम के विकास के विषय में) कभी भी, पूर्वनिश्चित कोई मानसिक योजना, कोई निर्धारित कार्यक्रम या संगठन नहीं रहा। सब कुछ, चेतना (चित्-तपस) के एक संचलन द्वारा जन्मा, पनपा और विकसित हुआ तथा निरंतर पोषित, प्रवर्द्धित और पुष्ट हुआ। जैसे-जैसे चित्त शक्ति जड़ तत्व में उतरती और विकीर्ण होती है, वह अपने को अभिव्यक्त और प्रकट करने के उपयुक्त यंत्रों (साधकों) को खोजती है। यह तो स्पष्ट ही है कि साधक जितना अधिक खुला हुआ, ग्रहणशील और नमनीय होगा, परिणाम उतने ही श्रेष्ठतर होंगे। साधकों के माध्यम से अबाध और सामंजस्यपूर्ण कार्य करने की राह में जो दो बाधायें आती हैं, वे हैं :

(१) पूर्व निर्धारित धारणायें और मानसिक रचनायें जो चित्त शक्ति के प्रभाव और कार्य के मार्ग को अवरुद्ध करती हैं।

(२) प्राण की अभिरुचियाँ और आवेग जो अभिव्यक्ति को विकृत तथा झूठे रूप में प्रस्तुत करते हैं।

ये दोनों वस्तुएँ अहं की स्वाभाविक उपज हैं। यदि ये दोनों बीच में न आयें तो मुझे वाह्य रूप से हस्तक्षेप न करना पड़े। . . .

जो शक्ति और चेतना कार्य कर रही है उसका (मुझे) स्पष्ट और सुनिश्चित ज्ञान है और जब भी अपनी कार्यवाही में यह शक्ति विकृत हो जाती है या चेतना धूमिल हो जाती है, मुझे हस्तक्षेप करना पड़ता है और प्रेरणा को सुधारना होता है। अधिकांश स्थितियों में वस्तुएँ मिश्रित होती हैं। और वहाँ भी मुझे विकृत प्रतिलेखन को विशुद्ध से पृथक करने के लिये हस्तक्षेप करना पड़ता है।

अन्यथा यहाँ सभी को कार्य करने में बहुत स्वतंत्रता दी गई है, क्योंकि चित्त शक्ति अपने को अनगिनत रूपों में अभिव्यक्त कर सकती है और अभिव्यक्ति की पराकाष्ठा और परिपूर्णता के लिये कोई भी तरीका पहले से ही निषिद्ध नहीं

करना है, अक्सर चुनाव करने से पहले एक परीक्षणात्मक प्रयोग किया जाता है।

(The Aims and Ideals of Sri Aurobindo Ashram, pp. 10-11)

मतप्रचार (Propaganda)

जहाँ तक मतप्रचार का संबंध है, मैंने देखा है – वह हमारे लिये पूरी तरह निरर्थक है। अगर कोई प्रभाव है भी, तो वह बहुत नगण्य और तुच्छ प्रभाव है, उसके लिये किये गये प्रयत्न के योग्य नहीं। अगर सत्य अपने को फैलाना चाहता है, वह इस कार्य को अपनी गति से करेगा ; ये सब बातें (मतप्रचार) अनावश्यक हैं।

और फिर मैं किताबों आदि के अलावा अन्य किसी वस्तु के लिए विज्ञापन में विश्वास नहीं करता और मतप्रचार (propaganda) केवल राजनीति और पेटेन्ट दवाओं के लिये। किन्तु गंभीर कार्य के लिये यह एक विष है। इसका अर्थ है या तो एक इश्तहारबाजी या धमाका – और इश्तहारबाजी या धमाके अपने शिखर पर जिस वस्तु को ले जाते हैं उसे अशक्त कर देते हैं और उसे निष्प्राण और खंडित करके कहीं का नहीं छोड़ते – या फिर इसका अर्थ है एक आंदोलन। मेरे कार्य के समान कार्य के विषय में आंदोलन का अर्थ है किसी पंथ या मत की स्थापना या फिर इसी प्रकार की कोई मूर्खता। इसका अर्थ है कि सैकड़ों, हज़ारों फ़ालतू के व्यक्ति आ जुड़ेंगे और कार्य को भ्रष्ट कर देंगे, और उसे एक आडंबरपूर्ण स्वांग में बदल देंगे जिसके कारण जो सत्य नीचे आ रहा था, वह अपनी गुह्यता और नीरवता में लौट जायेगा। ऐसा ही "धर्मों" के साथ हुआ है और उनकी असफलता का कारण है। मैं अपने विषय में, थोड़ा कुछ लिखा जाना सहन कर लेता हूँ तो केवल इसलिये कि वह आकारहीन जन-मस्तिष्क की अव्यवस्था में उस शत्रुता के विरुद्ध प्रति-संतुलन लाये, जो इस अज्ञानमय ज़गत में सदैव ही एक नवीन गतिशील सत्य के विरुद्ध उठ खड़ी होती है। किन्तु उसकी उपयोगिता बस यहीं समाप्त हो जाती है और अधिक विज्ञापन करने पर यह उद्देश्य पराजित हो जायेगा। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अपने तरीकों में पूरी तरह "बुद्धिसंगत" हूँ, और मैं केवल प्रसिद्धि की किसी व्यक्तिगत अरुचि से मतप्रचार का विरोध नहीं कर रहा। मतप्रचार अगर सत्य की कुछ सेवा कर सके तो मैं उसे सहन करने के लिये तैयार हूँ ; किन्तु प्रचार के लिये प्रचार को मैं वांछनीय नहीं मानता।

(२ अक्टूबर, १९३४)

(The Aims and Ideals of Sri Aurobindo Ashram, pp. 61-62)

श्री माँ - विवाह के विषय में

अपने भौतिक जीवनों को, अपने सांसारिक हितों को संयुक्त करना, कठिनाइयों और सफलताओं का, जीवन की विजयों और पराजयों का साथ-साथ सामना करने के लिये जीवन-साथी बनना – यही है विवाह का वास्तविक आधार, किन्तु तुम पहले से ही जानते हो कि यह पर्याप्त नहीं है।

अपनी संवेदनाओं में संयुक्त होना, समान कलात्मक अभिरुचियाँ तथा सुखों का उपभोग करना, एक जैसी वस्तुओं के लिए समान रूप से स्पंदित होना, एक दूसरे के द्वारा एवं एक दूसरे के लिए – यह अच्छा है, यह आवश्यक है ; किन्तु यह पर्याप्त नहीं है।

अपनी गहनतर भावनाओं में एक होना, पारस्परिक स्नेह एवं सहृदयता को बनाये रखना, जो जीवन के समस्त आघातों के बावजूद भी परिवर्तित न हो, और जो हर क्लांति, हर क्षोभ और हर हताशा को झेल सके ; हमेशा और हर अवसर पर प्रसन्न, बहुत प्रसन्न रहना, साथ रहना, हर परिस्थिति में एक दूसरे में शांति और हर्ष पाना, यह अच्छा है, यह बहुत अच्छा है, यह अनिवार्य है, किन्तु यह पर्याप्त नहीं है।

अपने मनों को एक करना, अपने विचारों में सामंजस्य लाना, उन्हें एक दूसरे का पूरक बनाना, अपनी बौद्धिक पूर्वधारणाओं एवं अन्वेषणों को परस्पर बांटना, संक्षेप में अपने मानसिक क्रियाकलाप के क्षेत्र में एकरूपता लाना, उसमें दोनों के द्वारा एक ही समय में प्राप्त, एक सा विस्तार एवं समृद्धि लाना – यह भी अच्छा है, यह पूर्णतया आवश्यक है, किन्तु यह पर्याप्त नहीं है।

इन सब से परे, गहराइयों में, केन्द्र में, सत्ता के चरम शिखर पर, सत्ता का एक परम सत्य है, एक शाश्वत ज्योति जो जन्म, देश, परिवेश एवं शिक्षा जनित समस्त परिस्थितियों से स्वतंत्र है, वही है हमारे आध्यात्मिक विकास का मूल स्रोत, कारण एवं स्वामी, वही है जो हमारे जीवन को स्थायी दिशा देता है, वही है जो हमारी नियति निर्धारित करता है; उसी की चेतना के अन्दर तुम्हें जुड़ना होगा। अभीप्सा और आरोहण में एक होना, एक ही आध्यात्मिक पथ पर, एक ही गति से अग्रसर होना, यही है स्थायी मिलन का रहस्य।

काम-वासना पर विजय

एक गृहस्थ भक्त हमसे मिलने आये। उनके समान उदार व्यक्ति बिरले ही होते हैं। भगवान के लिये उनका प्रेम तथा आध्यात्मिक जीवन की ओर उनका आकर्षण निर्विवाद है। अभी ये भक्त अपने सांसारिक दायित्वों से तथा दायित्व-बोध से मुक्त नहीं हुए हैं। काम-वासना से ग्रस्त होने पर ग्लानि से भर जाते हैं। कितु गृहस्थ जीवन में रहते हुए कामना-वासना से मुक्त रहना क्या सहज है! इस प्रकार के भक्त-साधक क्या साधना के अधिकारी नहीं हैं? क्या वे प्रगति नहीं कर सकते? यदि कर सकते हैं तो हर व्यक्ति गृहस्थी में रह कर ही साधना करे, फिर गृहत्याग की आवश्यकता ही क्या है? यदि नहीं कर सकते तो क्या गृहस्थों के लिये गृहत्याग के क्षण तक आध्यात्मिक प्रगति संभव नहीं है? इस प्रकार के अनेक प्रश्न उन्हें आलोड़ित कर रहे थे।

इनका उत्तर है कि प्रगति अवश्य संभव है। वास्तव में सच्ची भक्ति-भावना अपने में ही एक बहुत बड़ी प्रगति है। बिना गुरू और भगवान् की कृपा के भक्ति होना संभव ही नहीं, अतः किसी सच्चे भक्त के लिये निराश होने का प्रश्न ही नहीं उठता। यदि कोई भगवान् से सच्चा प्रेम करता है तो उसकी प्रगति कौन रोक सकता है? माया कैसा भी जाल क्यों न फैलाये, एक न एक दिन भगवान अपने भक्त को विशुद्ध आचरण और चरित्र प्रदान अवश्य करेंगे।

श्री माँ ने कामावेग पर विजय पाने के अनेक उपाय बताये हैं। हम यहाँ उनमें से दो व्यावहारिक निर्देशों का उल्लेख कर रहे हैं। आशा है ये पाठकों को इस कठिन समस्या का सामना करने में पथ-निर्देश देंगे :

"सामान्यतया काम-वासना के समान अंतर्वेगों को शक्ति इस कारण प्राप्त होती है कि लोग उनकी ओर बहुत ध्यान देते हैं; वे उनका बहुत बलपूर्वक विरोध करते हैं और वे बलपूर्वक दमन करने का प्रयत्न करते हैं, वे उन्हें अपने अंदर दबा कर उनपर बैठने की कोशिश करते हैं। किन्तु तुम किसी वस्तु के विषय में जितना सोचते हो और कहते हो, "मैं इसे नहीं चाहता, मैं इसे नहीं चाहता," तुम उससे उतना ही अधिक बंध जाते हो। तुम्हें करना यह चाहिये कि तुम अपने को उस वस्तु से अलग कर लो, उससे नाता तोड़ लो, उस पर जितना हो सके उतना कम ध्यान दो और, अगर तुम उसके विषय में सोचने भी लगो तो

तटस्थ और उदासीन बने रहो।"

(*Collected Works of the Mother*, Vol. 3, p. 5)

"जब मैं छोटी थी, उन दिनों लोग इस विषय (काम-वासना) पर कोई बात नहीं करते थे। मैं नहीं चाहती थी कि यहाँ (आश्रम में) इस विषय पर चर्चा हो। इसी कारण हम यहाँ शारीरिक शिक्षा और व्यायाम करते हैं। इस प्रकार ऊर्जाओं का उपयोग शक्ति, सौंदर्य और कार्य-कौशल तथा इस प्रकार के अन्य विकास कार्यों में होता है और व्यक्ति आत्म-नियंत्रण में अधिक योग्य हो जाता है। तुम देखोगे कि जो लोग खूब शारीरिक व्यायाम, कसरत आदि करते हैं वे अपने अंतर्वेगों पर नियंत्रण करने में कहीं अधिक समर्थ होते हैं।"

(*Collected Works of the Mother*, Vol. 12, p. 379)

आपका प्रश्न : श्री माँ का उत्तर

इस अंक से हम एक नया स्तम्भ आरम्भ कर रहे हैं जिसमें हम पाठकों के प्रश्नों का उत्तर श्री माँ के शब्दों में देने का प्रयास करेंगे।

प्रश्न : अपनी अंतरात्मा से संपर्क स्थापित करने में आप हमारी क्या मदद कर सकती हैं?

उत्तर : श्री माँ ने अंतरात्मा से संपर्क स्थापित करने के लिये किसी शिष्य को एक प्रार्थना दी थी। आप इसे सच्चे भाव से निरन्तर दोहरायें तो सफलता अवश्य प्राप्त होगी।

प्रार्थना इस प्रकार है :

"हे प्रभु! मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ कृपा करके मेरी अंतरात्मा और मेरी वाह्य चेतना के मध्य संबंध स्थापित कर दे।"

एक साधक को जन्मदिन का संदेश

मैं जो देखती हूँ वह है आने वाला कल, किन्तु गुज़रा हुआ कल अभी तक जीवित है और अभी कुछ और समय तक जीवित रहेगा। पुरानी व्यवस्थाओं को जब तक उनमें जीवन है तब तक चलने दो।

पृथ्वी पर परिवर्तन धीमे-धीमे आते हैं।

— श्री माँ

प्रश्न

प्रश्न एक आता है मन में,
लड़ते हैं क्यों हम आपस में?

हिल-मिल कर यदि काम करें हम,
सुख-दुख में यदि साथ चलें हम,
सब का यदि सम्मान करें हम,
सब से मीठी बात करें हम --
यह जीना तब जीना होगा।
हर दिन सुन्दर सपना होगा।
हमको अब कुछ करना होगा,
एक साथ मिल चलना होगा,
भेद-भाव से लड़ना होगा,
सच के पथ पर बढ़ना होगा --
हर मानव जब अपना होगा,
जीवन सुख का झरना होगा।

सैनिक

देश पर संकट आया आज,
छोड़ कर जीवन के सब काज,
सजा सैनिक सुन्दर रण-साज,
लुटा दे निज प्राणों को आज।

याद कर रजपूती अंदाज,
झपट दुश्मन पर बन कर बाज,
शत्रु को दहला दे आवाज,
टूट पड़ उन पर बन कर गाज।

देश का तू ही है सरताज,
देश को तुझ पर होगा नाज,
उठा ले सच का झंडा आज,
बचा ले भारत माँ की लाज।

छोड़ दे जीवन के सब काज,
देश पर संकट आया आज।

साहित्यिक हिन्दी बोलने का शिक्षण

जाने-पहचाने शब्दों की सहायता से सुंदर हिन्दी बोलना सीखिये

यह अभ्यास 'नीरस' और 'सरस' इन दो शब्दों से आरंभ करते हैं।

विशेषण : मदमाती, सजल, सकरुण

क्रियाएँ : लजाई, बौराई, इठलाई, भरमाई, सजाई, मचाई

यह अंक आपके हाथ में आने तक फागुन आ जायेगा। इस ऋतु में एक मादकता है जो नीरस हृदयों को भी सरस बना देती है। शुष्क हृदयों में रस संचार होता है। कठोर व्यक्ति सदय हो जाते हैं।

१. वन में पलाश के वृक्षों से फूल झर-झर कर गिर रहे थे। एक शिकारी शिकार के लिये भटक रहा था। वन पुष्पों की भटकती सुगंध ने शिकारी को मस्त कर दिया। उसका मन न जाने कैसी अनजानी ममता से भर उठा। उसे वह वनराजि, वे पुष्पित तरु-लतायें न जाने कौन सा मधुर संदेश सुना रहे थे। अचानक उसकी दृष्टि एक हिरणी पर पड़ी। हिरणी नवजात शिशु को लेकर भागने में असमर्थ थी। उसने करुणामयी आँखों से अपने प्राणों की भीख माँगी। वह चाहती तो वायु-वेग से भागकर अपने प्राण बचा सकती थी किन्तु कुछ ही देर पहले जन्मा उसका शिशु भागने में असमर्थ था। हिरणी के नयनों की करुण भाषा ने शिकारी का मन पिघला दिया। वह हिरणी और उसके शिशु को स्नेह से देख कर आगे बढ़ गया।

२. फागुन मास है। अमराई में आमों की बौराई डालों पर भौंरे और मधुमक्खियाँ रस पीकर गुन-गुन गुंजार रहे हैं। कुछ बालक-बालिकाएँ आम्र कुंज में आमोद-प्रमोद कर रहे हैं। उस सुन्दर वातावरण ने उन्हें भी काव्यमय बना दिया।

शिवानी : देखो! आमों की डालें बौराईं, झूम रहा पवन, पुष्पित डालें इठलाईं।

मधुकर : अहा! बेला महका, महकी जूही, माधवी लता मनभाई।

रेखा : लो! कलियाँ चटकीं, सुगंध भटकी, टेसू बौराया, मन भरमाया।

दिवाकर : आज मेरे मन में तरंग है, होली का रंग है, पुलक रहे अंग हैं।

ममता : खनक रही बालियाँ, विहँस रहीं डालियाँ, गुन-गुन भौंरो ने धूम मचाई,

राधिका : दूर कहीं बजती शहनाई, फागुन की ऋतु आई।

'मैंगो' शब्द का उद्‌गम

तमिल में आम को 'मंगाइ' या 'मंगकाइ' कहते हैं। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि 'मैंगो' शब्द का जन्म इन्हीं तमिल शब्दों से हुआ है। जब पुर्तगाली तमिलनाडु से आम के वृक्ष योरोप ले गये तो वे इसे 'माँगा' कहने लगे और यही विकृत हो कर अंग्रेजी में 'मैंगो' बन गया।

शून्य

भारत ने शून्य (०) का आविष्कार किया। जिसका अर्थ है खाली। अरबी लोगों ने शून्य को 'सिफ्र' कहा और वही अंग्रेजी में 'साइफ़र' या 'ज़ीरो' बन गया।

अन्न भगवान

प्रसिद्ध तमिल काव्य *तिरुक्कुराल के* रचयिता कवि वल्लुवार ने अपनी पत्नी वासुकि से कहा कि वह जिस केले के पत्ते पर उनका भोजन परोसे उसके पास एक सूई भी रख दिया करे। वासुकि ने बिना कारण पूछे सदैव उनकी आज्ञा का पालन किया। पति की मृत्यु से पहले वासुकि ने पूछा, "मैंने सदैव आपके भोजन के पास एक सूई रख दी क्योंकि मैं जानती थी कि आपका कोई कार्य अकारण नहीं होता, किन्तु मेरे मन में सदैव यह जिज्ञासा बनी रही कि इसका क्या रहस्य है। कवि ने उत्तर दिया, "मैंने सूई इसलिये माँगी कि यदि परोसते समय भोजन के कुछ कण इधर-उधर गिर जायें तो सूई से उठाकर खा सकूँ। क्योंकि हमें भोजन को कभी फेंकना नहीं चाहिये।"

दंत शक्ति

ताइपी में अप्रैल २००० को भारत के नरिन्दर सिंह ने ३५ टन वजन का रेल का डिब्बा १० मीटर तक अपने दाँतों से खींचा।

बाल-तरुण मंच : कहानी

"वरदान माँग लो"

नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) की विश्वविद्यालय की पढ़ाई खत्म हो चुकी थी। उन्होंने श्री रामकृष्ण के साथ रह कर साधना करने का निश्चय कर लिया। उसी समय उनके पिता की मृत्यु हो गई। पिता बड़े उदार थे। दिल खोल कर खर्च करते थे। इस कारण उन्होंने कुछ बचा कर नहीं रखा था। दूसरी तरफ उनके मरते ही लालची रिश्तेदारों ने सब जायदाद हड़प ली। मुकदमेबाज़ी होने लगी। उसमें घर का बचा-खुचा धन भी चला गया। नरेन्द्र ने पहले कभी धन की कमी नहीं देखी थी। अब एक साथ ही विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा।

नरेन्द्र छोटी-मोटी नौकरी की तलाश में कलकत्ते में भटकने लगे। पर कोई नौकरी नहीं मिली। घर की हालत बिगड़ती जा रही थी और कभी-कभी तो खाने को भी न मिलता था। एक दिन घर में दाना भी न था। सब लोगों को भूखे ही सोना पड़ा। सवेरे उठ कर नरेन्द्र ने भगवान का नाम लिया तो उनकी माँ ने दुख से कहा, "नरेन्द्र, तेरा भगवान कैसा है जो हम लोगों को दो रोटी भी नहीं दे सकता ?"

माँ की बात सुन कर नरेन्द्र को बहुत धक्का लगा। वे दौड़े-दौड़े दक्षिणेश्वर गए और श्री रामकृष्ण से बोले, "अब मैं अपनी माँ और भाई-बहनों को भूख से तड़पते नहीं देख सकता। आप कहते हैं माँ काली सब कुछ कर सकती हैं। तब आप उनसे प्रार्थना कीजिए कि वे मेरे घर की दरिद्रता दूर कर दें।"

श्री रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "नरेन्द्र, प्रथम तो तुम्हें माँ में विश्वास ही नहीं है और दूसरी बात यह है कि मैंने माँ से कभी धन-सम्पत्ति नहीं माँगी।"

नरेन्द्र ने श्री रामकृष्ण के चरण पकड़ कर कहा, "आज आपको अपने लिए नहीं, मेरे लिए माँ से वरदान माँगना होगा।"

श्री रामकृष्ण ने गम्भीर स्वर में उत्तर दिया, "नरेन्द्र, माँ से तुम्हें अपने लिए स्वयं ही प्रार्थना करनी होगी।"

नरेन्द्र मूर्ति-पूजा में विश्वास नहीं करते थे, फिर भी श्री रामकृष्ण की आज्ञा पाकर वे काली-मन्दिर की ओर गए। आश्चर्य की बात है कि जैसे ही वे मूर्ति के सामने पहुँचे उन्हें मूर्ति में साक्षात जगदम्बा दिखाई दीं। उन्हें रोमांच हो आया, शरीर काँपने लगा। हृदय एक दिव्य आनन्द से भर गया और वे एकटक माँ के उस मधुर रूप को देखने लगे। आँखों से प्रेम के आँसू बहने लगे। करुणामयी माँ

ने उनसे वर माँगने को कहा। नरेन्द्र भक्ति से विभोर हो गए थे। वे अपने घर की गरीबी और माँ, भाई, बहनों की भूख, सब भूल गए। उन्होंने काली माँ से भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का वरदान माँगा।

बहुत देर बाद नरेन्द्र को सुध आई। माँ तब तक अन्तर्धान हो गई थीं। आनन्द से भरे नरेन्द्र श्री रामकृष्ण के पास लौटे।

श्री रामकृष्ण ने पूछा, "क्यों, माँ से परिवार के लिए धन-धान्य माँग लिया ?"

अब नरेन्द्र को याद आई कि वे किस उद्देश्य से माँ के पास गए थे। उन्होंने कुछ लजाते हुए कहा, "मैं माँ के सामने जाकर ये सब बातें भूल गया था।"

श्री रामकृष्ण ने आज्ञा दी, "तुम फिर जाओ और माँ से अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए वरदान माँगो।"

नरेन्द्र कुछ सकुचाते हुए फिर माँ की प्रतिमा के सामने पहुँचे। उन्हें फिर से मूर्ति में जीवित माँ के दर्शन हुए। माँ के दिव्य दर्शन से वे फिर सुध-बुध खो बैठे और फिर से ज्ञान, भक्ति, विवेक का वरदान माँग कर लौटे।

तीसरी बार फिर श्री रामकृष्ण ने उन्हें माँ के पास भेजा और तीसरी बार फिर नरेन्द्र माँ को देख कर संसार की बातें भूल गए। लौटने पर श्री रामकृष्ण ने पूछा, "तुम माँ से अपने परिवार के लिए धन क्यों नहीं माँग सके ?"

नरेन्द्र ने उत्तर दिया, "माँ से संसार की सामान्य वस्तुएँ माँगना, किसी राजा से हीरे-मोती न माँग कर, आलू-बैंगन माँगने के समान होता।"

श्री रामकृष्ण ने नरेन्द्र को वरदान दिया, "तुम्हारे परिवार को साधारण भोजन-कपड़ा मिलता रहेगा।"

उस दिन से नरेन्द्र को कोई-न-कोई काम मिल जाता था और ईश्वर कृपा से उनके घरवालों को कभी भूखा नहीं रहना पड़ा।

स्वर्ण हंस पत्रिका के बारे में सूचना :

१. प्रकाशन स्थान : पांडिचेरी • २. प्रकाशन काल : त्रैमासिक • ३. मुद्रक का नाम : सफल झुनझुनवाला • राष्ट्रीयता : भारतीय • पता : ऑल इंडिया प्रेस, कैनेडी नगर, पो. बॉ. ५१, पांडिचेरी ६०५००१ • ४. प्रकाशक का नाम : श्याम कुमारी • राष्ट्रीयता : भारतीय • पता : द्वारा श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी ६०५००२ • ५. संपादक का नाम : श्याम कुमारी • राष्ट्रीयता : भारतीय • पता : द्वारा श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी ६०५००२ • ६. उन व्यक्तियों के नाम एवं पते जिनका पत्रिका में एक प्रतिशत से अधिक स्वत्व है : श्याम कुमारी, द्वारा श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी ६०५००२

मैं, श्याम कुमारी, घोषित करती हूँ कि ऊपर लिखा हुआ विवरण मेरी सूचना के अनुसार पूर्णतया सत्य है।

श्याम कुमारी

पांडिचेरी, मई २००१

आपके पत्र

(कुछ पुराने अंकों के विषय में प्रसिद्ध लेखकों के दो अप्रकाशित पत्रों से इस स्तंभ का आरंभ कर रहे हैं।

शुभे,

नमन।

पत्रिका का मई अंक देख कर हृदय हर्ष विभोर हो गया। "स्वर्ण हंस" का स्वर्ण सूर्य की ओर आरोहण श्री अरविन्द के भूमि के स्वर्गीकरण या स्वर्ग के भूमिकरण के सर्वथा अनुरूप लगा। रचनाएँ मानवतावाद के अनुरूप हैं। साहित्य की विविध विधाओं के साथ न्याय प्रशंस्य है। किंतु मुखपृष्ठ तो विलक्षण ही है : मूलतः कला का प्राण 'कल' (सौंदर्य) है, चाहे चित्र में व्यक्त हो या शब्द में। मेरे पास बहुत पत्रिकाएँ आती हैं, हिन्दी जगत की कृपा। किंतु "स्वर्ण हंस" की विशिष्टता संदेहरहित है। 'पंत' से 'कोकिल' तक पांडिचेरी हिन्दी-तीर्थ भी है — आप इस तीर्थ परंपरा की अधुनातन प्रतीक हैं।

मुझे विश्वास है कि "स्वर्ण हंस" की दिव्य उड्डयन-शक्ति क्षीण न होगी।

सादर-राम प्रसाद मिश्र

(अनेक पुरस्कारों से सम्मानित ९४ ग्रंथों के मूर्धन्य लेखक)

दिल्ली, १६.५.१९९८

आदरणीय श्याम कुमारी जी,

सादर प्रणाम।

आपके द्वारा भेजा "स्वर्ण हंस" का प्रथम अंक पाया। ध्यानपूर्वक आदि से अंत तक पढ़ गया। बड़ी ही उपयोगी सामग्री इसमें दी गई है। "क्या मानवता आत्म-विनाश की ओर बढ़ रही है?" लेख सामयिक तो है ही, आँखें खोलने वाला है। निश्चय ही यह अंक पाठकों को दृष्टि देगा। सुसंपादन के लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें। . . .

आपका,

रामेश्वर दयाल दुबे

(अनेक सम्मानों, पुरस्कारों से अलंकृत प्रसिद्ध वयोवृद्ध लेखक-कवि-आलोचक)

लखनऊ, १.६.१९९८

आदरणीय दीदीजी

पत्रिका का ग्यारहवाँ अंक मिला। 'संपादकीय लेख' आपका इस अंक की सर्वश्रेष्ठ सामग्री रही। "भारतीय भाषाओं का विरूपीकरण" नामक लेख अन्तरात्मा को झकझोरता व प्रकाशित करता चला गया। इसके लिए आपको बहुत-बहुत साधुवाद और कोटिशः वन्दन, नमन। संपादक को निर्भीक, सत्यप्रेमी होना ही चाहिए। ऐसे मर्मभेदी लेखों से ही सरकारी आखें खुलेंगी। 'साहित्यिक हिन्दी बोलने का शिक्षण' नियमित रूप से राष्ट्र की एक महान सेवा होगी और भविष्य आपका कृतज्ञ रहेगा। श्री माँ, श्री अरविन्द की कृपा से आप चिरंजीवी हों, सदा स्वस्थ एवं प्रसन्न रहें तथा आपका "स्वर्णहंस" चिन्तन के मानसरोवर से सदा अनुपम, अनूठे मोती अभीप्सावानों को प्रदान करता रहे।

मातृ सेवा में,

जय सिंह चौहान
अयोध्या

प्रिय श्यामकुमारीजी,

सप्रेम मातृ स्मरण।

"स्वर्ण हंस" का अंक ११ नवम्बर २०००, प्राप्त हुआ। विगत अंकों की परंपरा में प्रस्तुत अंक भी राष्ट्रीय, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना की प्रेरणामयी साहित्यिक सामग्री से समृद्ध है। "भगवान का फ़ोन नंबर" शीर्षक कहानी विशेष मर्मस्पर्शिनी है और शिशु हृदय की सहज भागवत निष्ठा की परिचायक है।

सदैव श्री मातृचरणाश्रित,

देवकीनन्दन श्रीवास्तव, शकुन्तला श्रीवास्तव
श्री अरविन्द साधना केंद्र, वल्लभ विद्यानगर

आदरणीय दीदी,

हम सबको आपकी पत्रिका "स्वर्ण हंस" बहुत अच्छी लगती है। हर कहानी से कुछ न कुछ सीखने को मिलता है। आपकी

कविता
लैंसडाउन

आदरणीय दीदीजी,

सादर नमस्कार।

काफ़ी समय पूर्व आपकी आत्मीय कृपा से "स्वर्ण हंस" की एक प्रति सुलभ हो पाई थी। आपकी अनुपम चिंतन दृष्टि से परिपूर्ण प्रतिभात्मक रचनाओं

से अभिभूत हूँ। आपकी संपादकीय कुशलता से पत्रिका सुंदर बन पड़ी है।

सादर आपका,

जयप्रकाश बाबु
प्रधान संपादक "युग मानस" गुंतकल

प्रिय श्याम कुमारी जी,

स्वर्ण हंस का ११ वा अंक पढ़ा। बहुत प्रेरणाप्रद लगा।

आपके 'संपादकीय' का तो कहना ही क्या। आपका लेख स्वयं में एक उद्घोष है, एक शंखनाद है वैचारिक जाग्रति का। इन लेखों की विवेक ऊर्जा इस युग के लिये बम के धमाके से कम नहीं ; जिससे अनृत भस्म हो सकता है। लेकिन कब? यह केवल परम प्रभु ही जानते हैं। 'ओ दाता' में 'मेरी अभीप्साएं भी सम्भवतः एक लोभ हैं,' वाक्य बड़ा सुन्दर लगा। नलिनी कान्त गुप्त के क्रान्तिकारी रूप का दर्शन करके मन उनके प्रति नतमस्तक हो जाता है। 'मधुमय आँसू' तथा 'तू मुझसे ना रूठे' बड़े भावपूर्ण और संगीतमय भजन हैं।

युगों से पराश्रित नारी सचमुच एक कैदी चिड़िया की तरह उड़ना भूल गई है। घर में घोर परिश्रम करती है, पर स्वावलम्बी नहीं है। त्याग, क्षमा और प्रेम के नाम पर तो वह प्रवंचनाओं का शिकार ही है। आपने कमाल किया जो इस समस्या को सामने रखा और समाधान भी बताया। लिंगभेद के कारण जो सामाजिक और आर्थिक विषमंता है वह निश्चय ही मानवीयता के विरुद्ध है।

'मत भूलो कुरबानी' में 'दुःख की बात' पढ़कर हृदय विदीर्ण हो गया। सैनिक और सेनाओं को तो सबसे अधिक वेतन और सुख-सुविधायें मिलनी चाहियें। 'पर्यावरण' के सुझाव बड़े उपयोगी हैं।

अपने दोषों से छुटकारा, परम प्रभु के प्रति समर्पण और कृतज्ञता द्वारा ही संभव है। पृष्ठ ५८ की यह प्रेरणा एक साधक के लिये संजीवनी बूटी से कम नहीं। 'झरोखे' शीर्षक में सामान्य ज्ञान की अनेक बाते हैं। पृष्ठ ६१ की अन्तिम पंक्तियों का प्रश्न स्वयं ही उत्तर है। ऐसे वाक्य मुझे बहुत सुन्दर लगते हैं।

पत्रिका में यत्र-तत्र सर्वत्र परमपूज्य श्री अरविन्द तथा श्री माँ की दिव्य वाणी का तेज छिटका हुआ है, जो पाठकों को सहज ही आत्मदान प्रदान करता है।

आपकी,

पुष्पा सक्सेना
दिल्ली

In Thy Light we shall see, in Thy Knowledge we shall know, in Thy Will we shall realise.

The Mother

INDIAN SILK HOUSE
College Street Market, Calcutta 700 007

It is not what others think of you that matters, but what you are yourself.

Sri Aurobindo

AUROSONS
314 Prasad Chambers
Opera House
Bombay 400 004

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

INDIAN TEA STORAGE AGENCY

(The Most Tried, Trusted and Tested Tea Warehouse of Entire Tea Trade)

Head Office:

Shivangan 2C
53/1/2 Hazra Road
Calcutta - 700 019

Tel: 474 2059 / 2060
Fax: 476 - 2348

Warehouse - 1/1 Transport Depot Road, Calcutta.
Tel: 479 2017

With best compliments from

JCL INTERNATIONAL LIMITED

(Formerly known as JAY CYLINDERS LIMITED)

We are one of the leading companies in the parallel marketing sector engaged in the business of (1) LPG bottling and distribution, with No.1 Rating, as per the mandatory rating requirement of the MoP&G, (2) Manufacture of high quality LPG cylinders with ISO 9002 certification for our manufacturing facility, and (3) Design, Supply, Erection & Commissioning of Bulk LPG installations and bottling plants.

In line with our corporate philosophy we also provide environmentally friendly urban solutions in the following areas: Design, Supply, Erection & Commissioning of Fully Automatic Multilevel Car parking systems and Setting up of AutoLPG dispensing stations, retrofitting of Vehicles for AutoLPG.

JCL INTERNATIONAL LIMITED

206, South Ex Plaza, 389 Masjid Moth, South Extension Part II, New Delhi 110049

Phone: 00-91-11-6254511, 6252532, 6259209. Fax: 00-91-11-6251574

E-mail: jaycl@ndb.vsnl.net.in Grams: SUVIDHA JAY

Offices at: AHMEDABAD, PUTTUR, MUMBAI

The Word that touches the heart and finds the soul.
The Word that ushers the divine experience.

Savitri

VAK

The Spiritual Bookshop

16, J.N. Street
P.O. Sri Aurobindo Ashram
Pondicherry 605002 India
Tel: 331962. E-mail: himatsingka@auroville.org.in

With best compliments from:

BIHAR MERCANTILE UNION LIMITED

MANUFACTURERS & EXPORTERS OF SILK FABRICS
(RECOGNISED EXPORT HOUSE)

Registered Office:
15, BRABOURNE ROAD, CALCUTTA - 700 001
Phones: 242-7723, 242-9197 Fax: 91-33-242-2159
Cable: PUSHING

Works:
13/22, ANAND CHIKITSALAYA ROAD
BHAGALPUR - 812 002

21, HOSPITAL ROAD, BANGALORE - 560 053

Registered with the Registrar of Newspapers for India R.N. 685

Catch hold of a peace deep within and push it into tl
of the body. With the peace will come back the he
The

Black Diamonds from the Mines of Techno
Polyester Cord / Free Match Set

AUROFLEX 'V' BELTS (Gimpex's)
Raw Edge Cogged Belts
Hiltons Transmission Belting
and
POLYESTER CORD for 'V' Belts Manufac

Wanted Distributors/Dealers Areawise
Contact:

NEETI SALES CORPORATI
MIRRAMBIKA HOUSE
B - 26, ASHOKA NIKETAN, OPP. VIGYAN V
I.P. EXTENSION - II, NEW DELHI - 1100
Tel.: 2154389. Tel./Fax: 2169053
E-mail: auroflex@usa.net

मू